लोकोदय ग्रन्थमाला ग्रन्थांक-७९
सम्पादक एवं नियामक
लक्ष्मीचन्द्र जैन



Lokodaya Series Title No 79

GUNAHON KA DEVATA

(Novel)

Dr Dharmaveer Bharti

Bharatiya Jnanpith
Publication

Eleventh Edition 1970

Price Rs 8 00



भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

प्रधान एवं विक्रय कार्यालय
३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली ६

प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५

ग्यारहवाँ संस्करण १९७०
मूल्य ८ ००

सन्मति मुद्रणालय,
वाराणसी-५

मामाजी, लल्ला
और अपनी पन्ना जिज्जी
को

इस उपन्यास के नये सस्करण पर दो शब्द लिखते समय मैं समझ नही पा रहा हूँ कि क्या लिखूँ ? अधिक से अधिक मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता उन सभी पाठको के प्रति व्यक्त कर सकता हूँ जिन्होने कलात्मक अपरिपक्वता के बावजूद इस को पसन्द किया है। मेरे लिए इस उपन्यास का लिखना वैसा ही रहा है जैसा पीडा के क्षणो मे पूरी आस्था से प्रार्थना करना, और इस समय भी मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मैं वह प्रार्थना मन-ही-मन दोहरा रहा हूँ, बस

गुनाहो का देवता

अगर पुराने जमाने की नगर-देवता की और ग्राम-देवता की कल्पनाएँ आज भी मान्य होती तो मैं कहता कि इलाहाबाद का नगर-देवता जरूर कोई रोमैण्टिक कलाकार है। ऐसा लगता है कि इस शहर की बनावट, गठन, जिन्दगी और रहन-सहन में कोई बँधे-बँधाये नियम नही, कही कोई कसाव नही, हर जगह एक स्वच्छन्द खुलाव, एक बिखरी हुई-सी अनियमितता। बनारस की गलियो से भी पतली गलियाँ, और लखनऊ की सडको से भी चौडी सडकें। यार्कशायर और ब्राइटन के उपनगरो का मुकाबला करने वाली सिविल लाइन्स और दलदलों की गन्दगी को मात करने वाले मुहल्ले। मौसम में भी कही कोई सम नही, कोई सन्तुलन नही। सुबहें मलयजी, दोपहरें अगारा, तो शामें रेशमी! धरती ऐसी कि सहारा के रेगिस्तान की तरह बालू भी मिले, मालवा की तरह हरे-भरे खेत भी मिलें और ऊसर और परती की भी कमी नहीं। सचमुच लगता है कि प्रयाग का नगर-देवता स्वर्ग-कुजो से निर्वासित कोई मनमौजी कलाकार है जिस के सृजन में हर रग के डोरे हैं।

और चाहे जो हो, मगर इधर क्वार, कातिक तथा उधर वसन्त के बाद और होली के बीच के मौसम से इलाहाबाद का वातावरण नैस्टर्शियम और पैंजी के फूलो से भी ज्यादा खूबसूरत और आम के बौरो की खुशबू से भी ज्यादा महकदार होता है। सिविल लाइन्स हो या अल्फ्रेड पार्क, गगातट हो या खुशरूबाग, लगता है कि हवा एक नटखट दोशीज़ा की तरह कलियों के आँचल और लहरो के मिजाज़ से छेडखानी करती चलती है। और अगर आप सर्दी से बहुत नही डरते तो जरा एक ओवरकोट

डाल कर सुवह-सुवह घूमने निकल जाये तो इन खुली हुई जगहो की फिज़ाँ इठलाकर आप को अपने जादू में वाँध लेगी। खास तौर से पौ फटने के पहले तो आप को एक बिलकुल नयी अनुभूति होगी। वसन्त के नये-नये मौसमी फूलो के रग से मुकावला करनेवाली हलकी सुनहली, वाल-सूर्य की अँगुलियाँ सुवह की राजकुमारी के गुलावी वक्ष पर विखरे हुए भौंराले गेसुओ को धीरे-धीरे हटाती जाती हैं और क्षितिज पर सुनहली तरुनाई बिखर पडती है।

एक ऐसी ही खुशनुमा सुबह थी, और जिस की कहानी मैं कहने जा रहा हूँ, वह सुवह से भी ज्यादा मासूम युवक, प्रभाती गाकर फूलो को जगाने वाले देवदूत की तरह अल्फ्रेड पार्क के लान पर फूलो की सरज़मी के किनारे-किनारे घूम रहा था। कत्थई स्वीटपी के रग का पश्मीने का लम्बा कोट, जिस का एक कालर उठा हुआ था और दूसरे कालर में सरो की एक पत्ती वटन होल में लगी हुई थी, सफेद मक्खन जीन का पतला पैण्ट और पैरो मे सफेद जरी की पेशावरी सैण्डिलें, भरा हुआ गोरा चेहरा और ऊँचे चमकते हुए माथे पर झूलती हुई एक रूखी भूरी लट। चलते-चलते उस ने एक रग-विरगा गुच्छा इकट्ठा कर लिया था और रह-रह कर वह उसे सूँघ लेता था।

पूरब के आसमान की गुलावी पाँखुरियाँ विखरने लगी थी और सुनहले पराग की एक बौछार सुवह के ताजे फूलो पर बिछ रही थी। "अरे सुवह हो गयी!" उस ने चौंक कर कहा और पास की एक वेंच पर वैठ गया। सामने से एक माली आ रहा था। "क्यो जी, लाइब्रेरी खुल गयी?" "अभी नही वावूजी!" उस ने जवाव दिया। वह फिर सन्तोष से वैठ गया और फूलो की पाँखुरियाँ नोच कर नीचे फेंकने लगा। ज़मीन पर बिछाने वाली सोने की चादर परतो पर परते बिछाती जा रही थी और पेडो की छायाओ का रग गहराने लगा था। उस की वेंच के नीचे फूलो की चुनी हुई पत्तियाँ बिखरी थीं और अब उस के पास सिर्फ एक फूल

वाकी रह गया था। हलके फालसई रग के उस फूल पर गहरे वैजनी डोरे थे।

"हलो कपूर !" सहसा किसी ने पीछे से कन्धे पर हाथ रख कर कहा—"यहां क्या झक मार रहे हो सुवह-सुवह !"

उस ने मुड कर पीछे देखा—"आओ ठाकुर साहव ! आओ वैठो यार, लाइब्रेरी खुलने का इन्तज़ार कर रहा हूं।"

'क्यो, युनिवर्सिटी लाइब्रेरी चाट डाली, अव इसे तो शरीफ लोगो के लिए छोड दो !"

"हां, हां शरीफ लोगो ही के लिए छोड रहा हूं, डॉक्टर शुक्ला की लडकी है न, वह इस की मेम्वर वनना चाहती थी तो मुझे आना पडा, उसी का इन्तज़ार भी कर रहा हूं।"

"डॉक्टर शुक्ला तो पॉलिटिक्स डिपार्टमेण्ट मे हैं।"

"नही, गवर्नमेण्ट साइकोलॉजिकल व्यूरो में।"

"और तुम पॉलिटिक्स में रिसर्च कर रहे हो !"

"नही, इकनॉमिक्स में !"

"वहुत अच्छे ! तो उन की लडकी को सदस्य वनवाने आये हो ?" कुछ अजव स्वर में ठाकुर ने कहा।

"छि !" कपूर ने कुछ हँसते हुए, कुछ अपने को वचाते हुए कहा—"यार, तुम जानते हो कि मेरा उन से कितना घरेलू सम्वन्ध है। जव से मैं प्रयाग में हूं उन्ही के सहारे हूं और फिर आजकल तो उन्ही के यहाँ पढता-लिखता भी हूं · · ·"

ठाकुर साहव हँस पडे—"अरे भाई, मैं डॉक्टर शुक्ला को जानता नही क्या ? उन का सा भला आदमी मिलना मुश्किल है। तुम सफ़ाई व्यर्थ मे दे रहे हो।"

ठाकुर साहव युनिवर्सिटी के उन विद्यार्थियो में से थे जो वरायनाम विद्यार्थी होते हैं और कव तक वे युनिवर्सिटी को सुशोभित करते रहेंगे,

इस का कोई निश्चय नही। एक अच्छे खासे रुपये वाले व्यक्ति थे और घर के ताल्लुकेदार। हँसमुख, फब्तियाँ कसने में मजा लेने वाले, मगर दिल के साफ निगाह के सच्चे। बोले—

"एक बात तो मैं स्वीकार करता हूँ कि तुम्हारी पढाई का सारा श्रेय डॉ० शुक्ला को है! तुम्हारे घर वाले तो कुछ खर्चा भेजते नही?"

"नही, उन से अलग ही हो कर आया था। समझ लो इन्होने किसी-न-किसी बहाने मदद की है।"

"अच्छा आओ तब तक लोटस-पाण्ड (कमल-सरोवर) तक ही घूम ले। फिर लाइब्रेरी भी खुल जायेगी!"

दोनो उठ कर एक कृत्रिम कमल-सरोवर की ओर चल दिये जो पास ही में बना हुआ था। सीढ़ियाँ चढ़ कर ही उन्होने देखा कि एक सज्जन किनारे बैठे कमलो की ओर एक टक देखते हुए ध्यान में तल्लीन है। दुबले-पतले छिपकली-से, बालो की एक लट माथे पर झूलती हुई—

"कोई प्रेमी हैं, या कोई फिलासफर हैं, देखा ठाकुर?"

"नही यार, दोनो से निकृष्ट कोटि के जीव हैं—ये कवि है। मैं इन्हे जानता हूँ। ये रवीन्द्र बिसरिया हैं। एम० ए० मे पढता है। आओ मिलाये तुम्हें।"

ठाकुर साहब ने एक बडा-सा घास का तिनका तोड कर पीछे से चुपके मे जा कर उस की गरदन गुदगुदायी। बिसरिया चौंक उठा—पीछे मुड कर देखा और बिगड गया—"यह क्या बदतमीजी है ठाकुर साहब! मैं कितने गम्भीर विचारो मे डूबा था।" और सहसा बडे विचित्र स्वर मे आँख बन्द कर बिसरिया बोला—"आह! कैसा मनोरम प्रभात है। मेरी आत्मा में एक घोर अनुभूति हो रही थी..."

कपूर बिसरिया की मुद्रा पर ठाकुर साहब की ओर देख कर मुसकराया और इशारे में बोला—"है यार गजब की चीज। छेडो जरा!"

ठाकुर साहब ने तिनका फेंक दिया और बोले—"माफ करना भाई

विसरिया। बात यह है कि हम लोग कवि तो है नही, इसलिए समझ नही पाये। क्या सोच रहे थे तुम ?"

विसरिया ने आँख खोली और एक गहरी साँस ले कर बोला—"मैं सोच रहा था कि आखिर प्रेम क्या होता है ? क्यो होता है ? कविता क्यो लिखी जाती है ? फिर कविता के सग्रह उतने क्यो नही बिकते जितने उपन्यास या कहानी-सग्रह ?"

"बात तो गम्भीर है।" कपूर बोला—"जहाँ तक मैं ने समझा और पढ़ा है—प्रेम एक तरह की बीमारी होती है, मानसिक बीमारी, जो मौसम बदलने के दिनो मे होती है, मसलन क्वार-कातिक या फागुन-चैत। उस का सम्बन्ध रीढ की हड्डी से होता है और कविता एक तरह का सन्निपात होता है। मेरा मतलब आप समझ रहे है मि० सिवरिया ?"

"सिवरिया नही विसरिया ?" ठाकुर साहब ने टोका।

विसरिया ने कुछ उजलत, कुछ परेशानी और कुछ गुस्से से उन की ओर देखा और बोला—"क्षमा कीजिएगा, आप या तो फ्रायडवादी है, या प्रगतिवादी और आप के विचार सर्वदा विदेशी हैं। मैं इस तरह के विचारो से घृणा करता हूँ।"

कपूर कुछ जवाब ही देने वाला था कि ठाकुर साहब बोले—"अरे भाई, बेकार उलझ गये तुम लोग, पहले परिचय तो कर लो आपस में। ये है श्री चन्द्रकुमार कपूर, विश्वविद्यालय में रिसर्च कर रहे हैं और आप हैं श्री रवीन्द्र विसरिया, इस वर्ष एम० ए० में बैठ रहे है। बहुत सुन्दर कवि।"

कपूर ने हाथ मिलाया और फिर गम्भीरता से बोला—"क्यो साहब, आप को दुनिया में और कोई काम नही रहा जो आप कविता करते है ?"

विसरिया ने ठाकुर साहब की ओर देखा और बोला—"ठाकुर साहब, यह मेरा अपमान है। इस तरह के सवालो का आदी नही हूँ।" और उठ खड़ा हुआ।

"अरे बैठो-बैठो !" ठाकुर साहब ने हाथ खींचकर बिठा लिया—"देखो, कपूर का मतलब तुम समझे नही। उस का यह कहना है कि तुम में इतनी प्रतिभा है कि लोग तुम्हारी प्रतिभा का आदर नही करना जानते। इसलिए उन्होने सहानुभूति मे तुम से कहा कि तुम और कोई काम क्यो नही करते। वरना कपूर साहब तुम्हारी कविता के बहुत शौकीन है। मुझ से बराबर तारीफ करते है।"

बिसरिया पिघल गया और बोला—"क्षमा कीजिएगा। मैंने गलत समझा, अब मेरा कविता-सग्रह छप रहा है, मैं आप को अवश्य भेंट करूंगा।" और फिर बिसरिया ठाकुर साहब की ओर मुड कर बोला—"अब लोग मेरी कविताओ की इतनी मांग करते है कि मैं तो परेशान हो गया हूं। अभी कल त्रिवेणी के सम्पादक मिले। कहने लगे अपना चित्र दे दो। मैं ने कहा कि कोई चित्र नही है तो पीछे पड गये। आखिरकार मैंने आइडेण्टिटी कार्ड उठाकर दे दिया।"

"वाह !" कपूर बोला—"मान गये आप को हम ! तो आप राष्ट्रीय कविताएँ लिखते है या प्रेम की।"

"जब जैसा अवसर हो !" ठाकुर साहब ने जड दिया—"वैसे तो यह वार-फण्ट का कवि-सम्मेलन, शराब बन्दी कॉन्फ्रेन्स का कवि-सम्मेलन, शादी-ब्याह का कवि-सम्मेलन, साहित्य-सम्मेलन का कवि-सम्मेलन सभी जगह बुलाये जाते हैं। बडा यश है इन का।"

बिसरिया ने प्रशसा से मुग्ध हो कर देखा, मगर फिर एक गर्व का भाव मुँह पर ला कर गम्भीर हो गया।

कपूर थोडी देर चुप रहा—फिर बोला—"तो कुछ हम लोगा को भी सुनाइए न"।

"अभी तो मूड नही है।" बिसरिया बोला।

ठाकुर साहब जो बिसरिया को पिछले पाँच साल से जानते थे, वे अच्छी तरह जानते थे कि बिसरिया किस समय और कैसे कविता सुनाता है।

लत बोले—"ऐसे नहीं कपूर, आज शाम को आओ। ज़रा गगाजी चले, कुछ बोटिंग रहे, कुछ खाना-पीना रहे तब कविता भी सुनना।"

कपूर को बोटिंग का बेहद शौक था। फौरन राजी हो गया और शाम का विस्तृत कार्यक्रम बन गया।

इतने मे एक कार उधर से लाइब्रेरी की ओर गुजरी। कपूर ने देखा और बोला—"अच्छा ठाकुर साहब, मुझे तो इजाजत दीजिए। अब चलूं लाइब्रेरी मे। वो लोग आ गये। आप कहां चल रहे है?"

"मैं जरा जिमखाने की ओर जा रहा हूं। अच्छा भाई तो शाम की पक्की रही।"

"बिलकुल पक्की!" कपूर बोला और चल दिया।

लाइब्रेरी के पोर्टिको में कार रुकी थी और उस के अन्दर ही डॉक्टर साहब की लडकी बैठी थी।

"क्यो सुधा, अन्दर क्यो बैठी हो।"

"तुम्हें ही देख रही थी चन्दर।" और वह उतर आयी। दुबली-पतली, नाटी-सी साधारण-सी लडकी, बहुत सुन्दर नही, केवल सुन्दर, लेकिन बातचीत में बहुत दुलारी।

"चलो, अन्दर चलो।" चन्दर ने कहा।

वह आगे बढी, फिर ठिठक गयी और बोली—"चन्दर, एक आदमी को चार किताबें मिलती है?"

"हां, क्यो?"

"तो तो।" उस ने बडे भोलेपन से मुसकराते हुए कहा—"तो तुम अपने नाम से मेम्बर बन जाओ और दो किताबें हमें दे दिया करना बस, ज्यादा का हम क्या करेंगे?"

"नही!" चन्दर हँसा—"तुम्हारा तो दिमाग खराब है—खुद क्यो नही बनती मेम्बर!"

"नही, हमें शरम लगती है, तुम बन जाओ मेम्बर हमारी जगह पर।"

"पगली कही की !" चन्दर ने उस का कन्धा पकड कर आगे ले चलते हुए कहा—"वाह रे शरम ! अभी कल व्याह होगा तो कहना, हमारी जगह तुम बैठ जाओ चन्दर ! कॉलेज में पहुँच गयी लडकी, अभी शरम नही छूटी इस की ! चल अन्दर !"

और वह हिचकती, ठिठकती, झेपती और मुड-मुड कर चन्दर की ओर रूठी हुई निगाहो से देखती हुई अन्दर चली ।

थोडी देर वाद सुधा चार किताबे लादे हुए निकली । कपूर ने कहा—"लाओ मैं ले लूँ !" तो बाँस की पतली टहनी की तरह लहरा कर बोली—"सदस्य मैं हूँ ! तुम्हें क्यो दूँ किताबें ?" और जा कर कार के अन्दर किताबें पटक दी । फिर बोली—"आओ बैठो चन्दर !"

"मैं अब घर जाऊँगा ।"

"ऊँ हूँ, यह देखो !" और उस ने भीतर से कागजो का एक बण्डल निकाला और बोली—"देखो यह पापा ने तुम्हारे लिए दिया है । लख-नऊ में कॉन्फ्रेन्स है न । वही पढ़ने के लिए यह निवन्ध लिखा है उन्होंने । शाम तक यह टाइप हो जाना चाहिए । जहाँ संख्याएँ हैं वहाँ खुद आप को बैठ कर बोलना होगा । और पापा सुवह से ही कही गये हैं । समझे जनाव !" उस ने विलकुल अल्हड बच्चो की तरह गरदन हिला कर शोख स्वरों में कहा ।

कपूर ने बण्डल ले लिया और कुछ सोचता हुआ बोला—"लेकिन डॉक्टर साहब का हस्तलेख, इतने पृष्ठ, शाम तक कौन टाइप कर देगा ?"

"इस का भी इन्तजाम है"—और अपने ब्लाउज में से एक पत्र निकाल कर चन्दर के हाथ में देती हुई बोली—"यह कोई पापा की पुरानी स्टूडेंट छाया है । टाइपिस्ट । इस के घर में तुम्हें पहुँचाय देती हूँ । मुकर्जी रोड पर रहती है यह । उसी के यहाँ टाइप करवा लेना और यह खत उसे दे देना ।"

"लेकिन अभी मैं ने चाय नहीं पी ।"

"समझ गये, अब तुम सोच रहे होगे कि इसी बहाने सुधा तुम्हें चाय भी पिला देगी। सो मेरा काम नही है जो मैं चाय पिलाऊँ। पापा का काम है यह। चलो आओ।"

चन्दर जाकर भीतर बैठ गया और किताबें उठा कर देखने लगा—"अरे चारो कविता की किताबें उठा लायी—समझ में आयेंगी तुम्हारे? क्यो सुधा?"

"नही।" चिढाते हुए सुधा बोली—"तुम कहो तुम्हें समझा दें। इकनॉमिक्स पढने वाले क्या जानें साहित्य?"

"अरे मुकर्जी रोड ले चलो ड्राइवर।" चन्दर बोला—"इधर कहाँ चल रहे हो।"

"नही, पहले घर चलो!" सुधा बोली—"चाय पी लो तब जाना!"

"नही, मैं चाय नही पिऊँगा।" चन्दर बोला।

"चाय नही पिऊँगा वाह! वाह!" सुधा की हँसी में दुधिया बचपन छलक उठा—"मुँह तो सूख कर गोभी हो रहा है, चाय नही पियेंगे।"

बँगला आया तो सुधा ने महराजिन से चाय बनाने के लिए कहा और चन्दर को स्टडी रूम में बिठा कर प्याले निकालने के लिए चल दी।

वैसे तो यह घर, यह परिवार चन्द्र कपूर का अपना हो चुका था, जब से वह अपनी माँ से झगड कर प्रयाग भाग आया था पढ़ने के लिए, यहाँ आ कर बी० ए० में भर्ती हुआ था और कम खर्च के खयाल से चौक में एक कमरा लेकर रहता था, तभी से डॉक्टर शुक्ला उस के सीनियर टीचर थे और उस की परिस्थितियो से अवगत थे। चन्दर की अँगरेजी

"पगली कहीं की !" चन्दर ने उस का कन्धा पकड कर आगे ले चलते हुए कहा—"वाह रे शरम ! अभी कल व्याह होगा तो कहना, हमारी जगह तुम बैठ जाओ चन्दर ! कॉलेज में पहुँच गयी लडकी, अभी शरम नही छूटी इस की ! चल अन्दर !"

और वह हिचकती, ठिठकती, झेंपती और मुड-मुड कर चन्दर की ओर रूठी हुई निगाहो से देखती हुई अन्दर चली ।

थोडी देर वाद सुधा चार किताबे लादे हुए निकली । कपूर ने कहा—"लाओ मैं ले लूँ !" तो वाँस की पतली टहनी की तरह लहरा कर वोली—"सदस्य मै हूँ ! तुम्हें क्यों दूँ किताबें ?" और जा कर कार के अन्दर किताबें पटक दी । फिर वोली—"आओ बैठो चन्दर !"

"मैं अब घर जाऊँगा ।"

"ऊँ हूँ, यह देखो !" और उस ने भीतर से कागजों का एक बण्डल निकाला और वोली—"देखो यह पापा ने तुम्हारे लिए दिया है । लख-नऊ में कॉन्फ्रेन्स है न । वही पढ़ने के लिए यह निबन्ध लिखा है उन्होने । शाम तक यह टाइप हो जाना चाहिए । जहाँ सख्याएँ हैं वहाँ खुद आप को बैठ कर वोलना होगा । और पापा सुबह से ही कहीं गये हैं । समझे जनाव !" उस ने विलकुल अल्हड वच्चो की तरह गरदन हिला कर शोख स्वरों में कहा ।

कपूर ने वण्डल ले लिया और कुछ सोचता हुआ वोला—"लेकिन डॉक्टर साहव का हस्तलेख, इतने पृष्ठ, शाम तक कौन टाइप कर देगा ?"

"इस का भी इन्तजाम है"—और अपने ब्लाउज में से एक पत्र निकाल कर चन्दर के हाथ में देती हुई वोली—"यह कोई पापा की पुरानी ईसाई छात्रा है । टाइपिस्ट । इस के घर मैं तुम्हें पहुँचाये देती हूँ । मुकर्जी रोड पर रहती है यह । उसी के यहाँ टाइप करवा लेना और यह खत उसे दे देना ।"

"लेकिन अभी मैं ने चाय नही पी ।"

"समझ गये, अब तुम सोच रहे होगे कि इसी बहाने सुधा तुम्हें चाय भी पिला देगी। सो मेरा काम नही है जो मैं चाय पिलाऊँ। पापा का काम है यह। चलो आओ!"

चन्दर जाकर भीतर बैठ गया और किताबें उठा कर देखने लगा—"अरे चारो कविता की किताबें उठा लायी—समझ में आयेगी तुम्हारे? क्यो सुधा?"

"नही।" चिढाते हुए सुधा बोली—"तुम कहो तुम्हें समझा दें। इकनॉमिक्स पढने वाले क्या जानें साहित्य?"

"अरे मुकर्जी रोड ले चलो ड्राइवर।" चन्दर बोला—"इधर कहाँ चल रहे हो।"

"नही, पहले घर चलो!" सुधा बोली—"चाय पी लो तब जाना।"

"नही, मैं चाय नही पिऊँगा।" चन्दर बोला।

"चाय नही पिऊँगा वाह! वाह!" सुधा की हँसी में दुधिया बचपन छलक उठा—"मुँह तो सूख कर गोभी हो रहा है, चाय नही पियेंगे।"

बँगला आया तो सुधा ने महराजिन से चाय बनाने के लिए कहा और चन्दर को स्टडी रूम में बिठा कर प्याले निकालने के लिए चल दी।

वैसे तो यह घर, यह परिवार चन्द्र कपूर का अपना हो चुका था, जब से वह अपनी माँ से झगड कर प्रयाग भाग आया था पढने के लिए, यहाँ आ कर बी० ए० में भर्ती हुआ था और कम खर्च के खयाल से चौक में एक कमरा लेकर रहता था, तभी से डॉक्टर शुक्ला उस के सीनियर टीचर थे और उस की परिस्थितियों से अवगत थे। चन्दर की अँगरेजी

वहुत ही अच्छी थी और डॉ० शुक्ला उस से अकसर छोटे-छोटे लेख लिखवा कर पत्रिकाओ मे भेजवाते थे। उन्होने कई पत्रो के आर्थिक स्तम्भ का काम चन्दर को दिलवा दिया था और उस के वाद चन्दर के लिए डॉ० शुक्ला का स्थान अपने सरक्षक और पिता से भी ज्यादा हो गया था। चन्दर शरमीला लडका था, वेहद शरमीला, कभी उस ने युनिवर्सिटी के वज़ीफे के लिए भी कोशिश न की थी, लेकिन जव वी० ए० में वह सारी युनिवर्सिटी मे सर्व प्रथम आया तव स्वय इकनोमिक्स विभाग ने उसे युनिवर्सिटी के आर्थिक प्रकाशनो का वैतनिक सम्पादक वना दिया था। एम० ए० में भी वह सर्वप्रथम आया और उस के वाद उस ने रिसर्च ले ली। उस के वाद डॉ० शुक्ला युनिवर्सिटी से हट कर व्यूरो में चले गये थे। अगर सच पूछा जाये तो उस के सारे कैरियर का श्रेय डॉ० शुक्ला को था जिन्होने हमेशा उस की हिम्मत वढायी और उस को अपने लडके से वढ कर माना। अपनी सारी मदद के वावजूद डॉ० शुक्ला ने उस से इतना अपनापन वनाये रखा कि कैसे धीरे-धीरे चन्दर सारी गैरियत खो वैठा, यह उसे खुद नही मालूम। यह वंगला, इस के कमरे, इस के लान, इस की कितावें, इस के निवासी, सभी कुछ जैसे उस के अपने थे और सभी का उस से जाने कितने जन्मो का सम्वन्ध था।

और यह नन्ही दुवली-पतली रगीन चन्द्रकिरन-सी सुधा। जव आज से वर्षों पहले यह सातवाँ पास कर के अपनी वुआ के पास से यहाँ आयी थी तव से ले कर आज तक कैसे वह भी चन्दर की अपनी होती गयी थी, इसे चन्दर खुद नही जानता था। जव वह आयी थी तव वह वहुत शरमीली थी, वहुत भोली थी, आठवें में पढने के वावजूद वह खाना खाते वक्त रोती थी, मचलती थी तो अपनी कापी फाड डालती थी और जव तक डॉक्टर साहव उसे गोदी में विठा कर नही मनाते थे वह स्कूल नही जाती थी। तीन वरस की अवस्था में ही उस की माँ चल वसी थी और दस साल तक वह अपनी वुआ के पास एक गाँव मे रही थी। जव तेरह वर्ष की

होने पर गाँव वालो ने उस की शादी पर जोर देना और शादी न होने पर गाँव की औरतो ने हाथ नचाना और मुँह मटकाना शुरु किया तो डॉक्टर साहब ने उसे इलाहाबाद बुला कर आठवे मे भर्ती करा दिया। जब वह आयी थी तो आधी जगली थी, तरकारी मे घी कम होने पर वह महराजिन का चौका जूठा कर देती थी और रात में फूल न तोड कर लाने पर अकसर उस ने माली को दांत भी काट खाया था। चन्दर से जरूर वह बेहद डरती थी, पर न जाने क्यो चन्दर भी उस से नही बोलता था। लेकिन जब दो साल तक उस के ये उपद्रव जारी रहे और अकसर डॉक्टर साहब गुस्से के मारे उसे न साथ खिलाते थे और न उस से बोलते थे, तो वह रो-रोकर और सिर पटक-पटक कर अपनी जान आधी कर देती थी। तब अकसर चन्दर ने पिता और पुत्री का समझौता कराया था, अकसर सुधा को डाँटा था, समझाया था, और सुधा, घर-भर में पुरवाई अल्हड और विद्रोही झोंके की तरह तोड-फोड मचाती रहने वाली सुधा, चन्दर के आँख के इशारे पर सुबह की नसीम की तरह शान्त हो जाती थी। कब और क्यों उस ने चन्दर के इशारो का यह मौन अनुशासन स्वीकार कर लिया था यह उसे खुद नही मालूम था, और यह सभी कुछ इतने स्वाभाविक ढग से, इतना अपने-आप होता गया कि दोनो में से कोई भी इस प्रक्रिया से वाकिफ नही था, कोई भी इस के प्रति जागरूक न था, दोनो का एक-दूसरे के प्रति अधिकार और आकर्षण इतना स्वाभाविक था जैसे शरद् की पवित्रता या सुबह की रोशनी।

और मजा तो यह था कि चन्दर की शक्ल देख कर छिप जाने वाली सुधा इतनी ढीठ हो गयी थी कि उस का सारा विद्रोह, सारी झुँझलाहट, मिजाज की सारी तेजी, सारा तीखापन और सारा लडाई-झगडा, सभी की तरफ़ से हट कर चन्दर की ओर केन्द्रित हो गया था। वह विद्रोहिनी अब शान्त हो गयी थी। इतनी शान्त, इतनी सुशील, इतनी विनम्र, इतनी मिष्टभाषिणी कि सभी को देख कर ताज्जुब होता था, लेकिन चन्दर को

देख कर जैसे उस का बचपन फिर लौट आता था और जब तक वह चन्दर को खिझा कर, छेड कर लड नही लेती थी उसे चैन नही पडता था । अकसर दोनो में अनबोला रहता था, लेकिन जब दो दिन तक दोनों मुँह फुलाये रहते थे और डॉक्टर साहब के लौटने पर सुधा उत्साह से उन के ब्यूरो का हाल नही पूछती थी और खाते वक़्त दुलार नही दिखाती थी तो डॉक्टर साहब फ़ौरन पूछते थे—"क्या, चन्दर से लडाई हो गयी क्या ?" फिर वह मुँह फुला कर शिकायत करती थी और शिकायतें भी क्या क्या होती थी, चन्दर ने उस की हेड मिस्ट्रेस का नाम एलीफैण्टा (श्रीमती हथिनी) रखा है, या चन्दर ने उस को डिबेट के भाषण के प्वाइट नही बताये, या चन्दर कहता है कि सुधा की सखियाँ कोयला बेचती हैं, और जब डॉक्टर साहब कहते हैं कि वह चन्दर को डाँट देंगे तो वह खुशी से फूल उठती और चन्दर के आने पर आँखें नचाती हुई चिढाती थी, "कहो कैसी डाँट पडी ?"

वैसे सुधा अपने घर की पुरखिन थी । किस मौसम मे कौन-सी तरकारी पापा को माफिक पडती है, बाजार में चीजो का क्या भाव है, नौकर चोरी तो नही करता, पापा कितनी सोसायटियो के मेम्बर हैं, चन्दर के इकनॉमिक्स के कोर्स में क्या है, यह सभी उसे मालूम था । मोटर या बिजली बिगड जाने पर वह थोडी-बहुत इंजीनियरिंग भी कर [illegible]ी थी और मातृत्व का अंश तो उस में इतना था कि हर नौकर और [illegible]रानी उस से अपना सुख-दुःख कह देते थे । पढाई के साथ-साथ घर का [illegible] काम-काज करते हुए उस का स्वास्थ्य भी कुछ बिगड गया था और [illegible] उम्र के हिसाब से कुछ अधिक शान्त, संयत, गम्भीर और बुज़ुर्ग थी, मगर अपने पापा और चन्दर, इन दो के सामने हमेशा उस का बचपन इठलाने लगता था । दोनो के सामने उस का हृदय उन्मुक्त था और स्नेह बाधाहीन ।

लेकिन, हाँ, एक बात थी । उसे जितना स्नेह और स्नेह-भरी फटकारें

और स्वास्थ्य के प्रति चिन्ता अपने पापा से मिलती थी, वह सब बडे निःस्वार्थ भाव से वह चन्दर को दे डालती थी। खाने-पीने की जितनी परवाह उस के पापा उस की रखते थे, न खाने पर या कम खाने पर उसे जितने दुलार से फटकारते थे, उतना ही खयाल वह चन्दर का रखती थी और स्वास्थ्य के लिए जो उपदेश उसे पापा से मिलते थे उसे और भी स्नेह में पाग कर वह चन्दर को दे डालती थी। चन्दर कै बजे खाना खाता है, यहाँ से जा कर घर पर कितनी देर पढता है, रात को सोते वक्त दूध पीता है या नहीं, इस सब का लेखा-जोखा उसे सुधा को देना पडता, और जब कभी उस के खाने-पीने में कोई कमी रह जाती तो उसे सुधा की डाँट खानी ही पडती थी। पापा के लिए सुधा अभी बच्ची थी, और स्वास्थ्य के मामले में सुधा के लिए चन्दर अभी बच्चा था। और कभी-कभी तो सुधा की स्वास्थ्य-चिन्ता इतनी ज्यादा हो जाती थी कि चन्दर बेचारा जो खुद तन्दुरुस्त था, घबडा उठता था। एक बार सुधा ने कमाल कर दिया। उस की तबीयत खराब हुई और डॉक्टर ने उसे लडकियों का एक टॉनिक पीने के लिए बताया। इम्तहान में जब चन्दर कुछ दुबला-सा हो गया तो सुधा जी अपनी बची हुई दवा ले आयीं। और लगी चन्दर से जिद्द करने कि "पियो इसे!" जब चन्दर ने किसी अखबार में उस का विज्ञापन दिखा कर बताया कि वह लडकियों के लिए है तो कहीं जाकर उस की जान बची।

इसी लिए जब आज सुधा ने चाय के लिए कहा तो उस की रूह काँप गयी क्यों कि जब कभी सुधा चाय बनाती थी तो प्याले के मुँह तक दूध भर कर उस में दो-तीन चम्मच चाय का पानी डाल देती थी और अगर उस ने ज्यादा स्ट्रांग चाय की माँग की तो उसे खालिस दूध पीना पडता था। और चाय के साथ फल और मेवा और खुदा जाने क्या-क्या, और उसके बाद सुधा का इसरार, न खाने पर सुधा का गुस्सा और उस के बाद की लम्बी-चौडी मनुहार, इस सब से चन्दर बहुत घबडाता था।

लेकिन जब सुधा उसे स्टडी रूम में बिठा कर जल्दी से चाय बना लायी तो उसे मजबूर होना पड़ा, और बैठे-बैठे निहायत बेबसी से उस ने देखा कि सुधा ने प्याले में दूध डाला और उस के बाद थोड़ी-सी चाय डाल दी। उस के बाद अपने प्याले में चाय डाल कर और दो चम्मच दूध डाल कर आप ठाट से पीने लगी, और बेतकल्लुफी से दुधिया चाय का प्याला चन्दर के सामने खिसका कर बोली—"पीजिए, नाश्ता आ रहा है।"

चन्दर ने प्याले को अपने सामने रखा और उसे चारों तरफ़ घुमा कर देखता रहा कि किस तरफ़ से उसे चाय का अंश मिल सकता है। जब सभी ओर प्याले में क्षीरसागर नजर आया तो उस ने हार कर प्याला रख दिया।

"क्यों, पीते क्यों नहीं ?" सुधा ने अपना प्याला रख दिया।

"पीयें क्या ? कहीं चाय भी हो ?"

तो और क्या खालिस चाय पीजिएगा ? दिमागी काम करने वालों को ऐसी ही चाय पीनी चाहिए।"

"तो अब मुझे सोचना पड़ेगा कि मैं चाय छोड़ूँ या रिसर्च। न ऐसी चाय मुझे पसन्द, न ऐसा दिमागी काम।"

"लो आप को विश्वास नहीं होता ! मेरी क्लासफेलो है गेसू काजमी, सब से तेज लड़की है, उस की अम्मी उसे दूध में चाय उबाल कर देती है।"

"क्या नाम है तुम्हारी सखी का ?"

"गेसू।"

"बड़ा अच्छा नाम है।"

"और क्या मेरी सब से घनिष्ठ मित्र है और उतनी ही अच्छी है जितना अच्छा नाम।"

"जरूर-जरूर" मुँह बिचकाते हुए चन्दर ने कहा—"और उतनी काली होगी, जितने काले गेसू।"

"धत्' शरम नहीं आती किसी लड़की के लिए ऐसा कहते हुए।"

"और हमारे दोस्तों की बुराई करती हो तब ?"

"तब क्या ! वे तो सब हैं ही बुरे । अच्छा लो नाश्ता, पहले फल खाओ ।" और वह प्याले में छील-छील कर सन्तरा रखने लगी । इतने में ज्यों ही वह झुक कर एक गिरे हुए सन्तरे को नीचे से उठाने लगी कि चन्दर ने झट से उस का प्याला अपने सामने रख लिया और अपना प्याला उधर रख दिया और शान्त चित्त से पीने लगा । सन्तरे की फाँकें उस की ओर बढ़ाते हुए ज्यों ही उस ने एक घूँट चाय ली तो वह चौंक कर बोली—"अरे, यह क्या हुआ ?"

"कुछ नहीं, हम ने उस में दूध और डाल दिया । तुम्हें दिमागी काम बहुत रहता है !" चन्दर ने ठाठ से चाय घूँटते हुए कहा । सुधा कुढ़ गयी । कुछ बोली नहीं । चाय खत्म कर के चन्दर ने घड़ी देखी ।

"अच्छा लाओ क्या टाइप कराना है ? अब बहुत देर हो रही है ।"

"बस-यहाँ तो एक मिनिट बैठना बुरा लगता है आप को ! हम कहते हैं कि नाश्ते और खाने के वक़्त आदमी को जल्दी नहीं करना चाहिए । बैठिए न !"

"अरे, तो तुम्हें कॉलेज की तैयारी नहीं करनी है !"

"करनी क्यों नहीं है । आज तो गेसू को मोटर पर लेते हुए तब जाना है !"

"तुम्हारी गेसू और कभी मोटर पर चढ़ी है ?"

"जी, वह साबिरहुसेन काज़मी की लड़की है, उस के यहाँ दो मोटरें हैं, और रोज़ तो उस के यहाँ दावतें होती रहती हैं ।"

"अच्छा, हमारी तो दावत कभी नहीं की ।"

"अहा हा, गेसू के यहाँ दावत खायेंगे ! इसी मुँह से ! जनाब उस की शादी भी तय हो गयी है, अगले जाड़ों तक शायद हो भी जाये ।"

"छि बड़ी खराब लड़की हो ! कहाँ रहता है ध्यान तुम्हारा ?"

सुधा ने मज़ाक़ में पराजित कर बहुत विजय-भरी मुसकान से उस

की ओर देखा। चन्दर ने झेंप कर निगाह नीची कर ली तो सुधा पास आ कर चन्दर का कन्धा पकड कर बोली—

"अरे उदास हो गये, नही भइया, तुम्हारा भी व्याह तय करायेंगे, घबडाते क्यो हो!" और एक मोटी-सी इकनॉमिक्स की किताब उठा कर बोली—"लो इस मुटकी से व्याह करोगे! लो बातचीत कर लो, तब तक, मैं वह निबन्ध ले आऊँ, टाइप कराने वाला।"

चन्दर ने खिसिया कर बडी जोर से सुधा का हाथ दबा दिया। "हाय रे!" सुधा ने हाथ छुडा कर मुँह बनाते हुए कहा—"लो बाबा, हम जा रहे हैं, काहे बिगड रहे आप?" और वह चली गयी। डॉक्टर साहब का लिखा हुआ निबन्ध उठा लायी और बोली—"लो यह निबन्ध की पाण्डुलिपि है।" उस के बाद चन्दर की ओर बडे दुलार से देखती हुई बोली—"शाम को आओगे!"

"न!"

"अच्छा हम परेशान नही करेंगे। तुम चुपचाप पढना। जब रात को पापा आ जायें तो उन्हें निबन्ध की प्रतिलिपि दे कर चले जाना!"

"नही, आज शाम को मेरी दावत है ठाकुर साहब के यहाँ।"

"तो उस के बाद आ जाना। और देखो अब फ़रवरी आ गयी है, मास्टर ढूँढ दो हमें।"

"नही, ये सब झूठी बात है। हम कल सुबह आयेंगे।"

"अच्छा तो सुबह जल्दी आना और देखो मास्टर लाना मत भूलना। २४८ तुम्हें मुकर्जी रोड पहुँचा देगा।"

वह कार में बैठ गया और कार स्टार्ट हो गयी कि फिर सुधा ने पुकारा। वह फिर उतरा। सुधा बोली—"लो यह लिफ़ाफा तो भूल ही गये थे। यह पापा ने लिख दिया है। उसे दे देना।"

"अच्छा।" कह कर फिर चन्दर चला कि फिर सुधा ने पुकारा, "सुनो।"

"एक बार में क्यों नहीं कह देती सब !" चन्दर ने झल्ला कर कहा।

"अरे बड़ी गम्भीर बात है। देखो वहाँ कुछ ऐसी-वैसी बात मत कहना लड़की से, वरना उस के यहाँ दो बड़े-बड़े बुलडॉग हैं।" कह कर उस ने गाल फुला कर, आँख फैला कर ऐसी बुलडॉग की भंगिमा बनायी कि चन्दर हँस पड़ा। सुधा भी हँस पड़ी।

ऐसी थी सुधा, और ऐसा था चन्दर।

सिविल लाइन्स के एक उजाड़ हिस्से में एक पुराने-से बँगले के सामने आ कर मोटर रुकी। बँगले का नाम था 'रोजलान' लेकिन सामने के कम्पाउण्ड में जंगली घास उग रही थी और गुलाब के फूलों के बजाय अहाते में मुर्गी के पंख बिखरे पड़े थे। रास्ते पर भी घास उग आयी थी और फाटक पर—जिस के एक खम्भे की कार्निस टूट चुकी थी बजाय लोहे के दरवाज़े के दो आड़े बाँस लगे हुए थे। फाटक के एक ओर एक छोटा-सा लकड़ी का नामपटल लगा था, जो कभी काला रहा होगा, लेकिन जिसे धूल, बरसात और हवा ने चितकबरा बना दिया था। चन्दर मोटर से उतर कर उस बोर्ड पर लिखे हुए अधमिटे सफेद अक्षरों को पढ़ने की कोशिश करने लगा, और जाने किस का मुँह देख कर सुबह उठा था कि उसे सफलता भी मिल गयी। उस पर लिखा था 'ए० एफ० डिक्रूज़।' उस ने जेब से लिफ़ाफ़ा निकाला और पता मिलाया। लिफ़ाफ़े पर लिखा था 'मिस पी० डिक्रूज़'। यही बँगला है, उसे सन्तोष हुआ।

"हॉर्न दो!" उस ने ड्राइवर से कहा। ड्राइवर ने हॉर्न दिया। लेकिन किसी का बाहर आना तो दूर, एक मुर्ग़ी जो अहाते में कुड़कुड़ा

रहा था, उस ने मुड कर वडे मन्देह और त्रास मे चन्दर की ओर देखा और उस के वाद पख फडफडाते हुए, चीखते हुए, जान छोड कर भागा। "वडा मनहूस वँगला है, यहाँ आदमी रहते हैं या प्रेत ?" कपूर ने ऊब कर कहा और ड्राइवर मे वोला—"जाओ तुम, हम अन्दर जा कर देखते है।"

"अच्छा हुजूर, मुधा वीवी से क्या कह देगे।"

"कह देना पहुँचा दिया।"

कार मुडी और कपूर वांस फांद कर अन्दर घुसा। आगे का पोर्टिको खाली पडा था और नीचे की जमीन ऐसी थी जैसे कई साल से उस वँगले में कोई मवारी गाडी न आयी हो। वह वरामदे में गया। दरवाज़े वन्द थे और उन पर धूल जमी थी। एक जगह चौखट और दरवाज़े के वीच में मकडी ने जाला बुन रखा था। "ये वँगला खाली है क्या ?" कपूर ने सोचा। सुवह साढे आठ वजे ही वहाँ ऐसा सन्नाटा छाया था कि दिल घवरा जाये। आस-पास चारो ओर आधी फर्लांग तक कोई वँगला नही था। उस ने सोचा वँगले के पीछे की ओर शायद नौकरो की झोप-डियाँ हो। वह दायें वाजू से मुडा और खुशवू का एक तेज झोका उसे चूमता हुआ निकल गया। "ताज्जुव है, यह सन्नाटा, यह मनहूसी और इतनी खुशवू।" कपूर ने कहा और आगे वढा तो देखा कि वँगले के पिछवाडे गुलाव का एक वहुत खूवसूरत वाग़ है। कच्ची रविशे और वडे-वडे गुलाव, हर रग के। वह सचमुच 'रोज़लान' था।

वह वाग में पहुँचा। उधर से भी वँगले के दरवाज़े वन्द थे। उस ने खटखटाया लेकिन कोई जवाव नही मिला। वह वाग में घुसा कि शायद कोई माली काम कर रहा हो। वीच-वीच में ऊँचे-ऊँचे जगली चमेली के झाड थे और कही-कही लोहे की छडो के कटघरे। वेगमवेलिया भी फूल रही थी। लेकिन चारो ओर एक अजव-सा सन्नाटा था और हर फूल पर किसी खामोशी के फरिश्ते की छाँह थी। फूलो में रग था, हवा में ताज़गी थी, पेडों में हरियाली थी, झोको में खुशवू थी, लेकिन फिर भी सारा

वाग एक ऐसे सितारो का गुलदस्ता लग रहा था जिन की चमक, जिन की रोशनी और जिन की ऊँचाई लुट चुकी हो। लगता था जैसे वाग का मालिक मौसमी रगीनी भूल चुका हो, क्योंकि नैस्टर्शियम या स्वीटपी या फ्लाक्स, कोई भी मौसमी फूल न था। सिर्फ गुलाव थे और जगली चमेली थी और वेगमवेलिया थी जो सालो पहले वोये गये थे। उस के वाद उन्ही की कांट-छांट पर वाग चल रहा था। वागवानी में कोई नवीनता और मौसमो का उल्लास न था।

चन्दर फूलो का वेहद शौकीन था। सुवह घूमने के लिए भी उस ने दरिया किनारे के वजाय अल्फ्रेड पार्क चुना था क्योकि पानी की लहरो के वजाय उसे फूलो के वाग की रग और सौरभ की लहरो से वेहद प्यार था। और उसे दूसरा शौक़ था कि फूलो के पौधो के पास से गुज़रते हुए हर फूल को समझने की कोशिश करना। अपनी नाजुक टहनियो पर हँसते-मुसकराते हुए ये फूल जैसे अपने रगो की वोली में आदमी से ज़िन्दगी का जाने कौन-सा राज़ कहना चाहते हैं। और ऐसा लगता है कि जैसे हर फूल के पास अपना व्यक्तिगत सन्देश है जिसे वह अपने दिल की पांखुरियों में आहिस्ते से सहेज कर रखे हुए हैं कि कोई सुनने वाला मिले और वह अपनी दास्तां कह जाये। पौदे की ऊपरी फुलगी पर मुसकराता हुआ आसमान की तरफ़ मुँह किये हुए यह गुलाव जो रात-भर सितारो की मुसकराहट चुप-चाप पीता रहा है, यह अपनी मोतिया पांखुरियो के होठों से जाने क्या खिलखिलाता ही जा रहा है। जाने इसे कौन-सा रहस्य मिल गया है। और वह एक नीचे वाली टहनी में आधा झुका हुआ गुलाव, झुकी हुई पलको-सी पांखुरियां और दोहरे मखमली तार-सी उसकी डण्डी, यह गुलाव जाने क्यो उदास है? और यह दुवली-पतली लम्वी-सी नाजुक कली जो वहुत सावधानी से हरा आंचल लपेटे है और प्रथम ज्ञात-यौवना की तरह लाज में जो सिमटी तो सिमटी ही चली जा रही है, लेकिन जिस के यौवन की गुलावी लपटें सात हरे परदो में से झलकी ही

पडती है, छलकी ही पडती है। और फारस के शाहजादे-जैसा शान से खिला हुआ यह पीला गुलाव ! उस पीले गुलाव के पास आ कर चन्दर रुक गया और झुक कर देखने लगा। कातिक पूनों की चांद से झरने वाले अमृत को पीने के लिए व्याकुल किसी सुकुमार, भावुक परी की फैली हुई अजलि के वरावर वडा-सा वह फूल जैसे रोशनी विखेर रहा था। वेगम-वेलिया के कुज से छन कर आने वाली तोतापखी धूप ने जैसे उस पर धान-पान की तरह खुशनुमा हरियाली विखेर दी थी। चन्दर ने सोचा उसे तोड ले लेकिन हिम्मत न पडी। वह झुका कि उसे सूंघ ही ले। सूंघने के इरादे से उस ने हाथ वढ़ाया ही था कि किसी ने पीछे से गरज कर कहा—

"हीयर यू आर, आई हैव काट रेड हैण्डेड टुडे !"

(तुम हो, आज तुम्हें मौक़े पर पकड पाया है) और उस के वाद किसी ने अपने दोनों हाथो से जकड लिया और उस की गरदन पर सवार हो गया। वह उछल पडा और अपने को छुडाने की कोशिश करने लगा। पहले तो वह कुछ समझ नही पाया। अजव रहस्यमय है यह वंगला। एक अव्यक्त भय और एक सिहरन में उस के हाय पांव ढोले हो गये। लेकिन उस ने हिम्मत कर के अपना एक हाय छुडा लिया और मुड कर देखा तो एक वहुत कमजोर, वीमार-सा, पीली आंखों वाला गोरा उसे पकडे हुए था। चन्दर के दूसरे हाय को फिर पकडने की कोशिश करता हुआ वह हांफता हुआ वोला—अंगरेज़ी में—

"रोज़-रोज़ यहां से फूल गायव होते थे। मैं कहता था, कहता था कौन ले जाता है। हो ' हो ··" वह हांफता जा रहा था—"आज मैंने पकडा तुम्हें। रोज़ चुपके से चले जाते थे ·" वह चादर को कस कर पकडे था लेकिन उस वीमार गोरे की सांस जैसे छूटी जा रही थी। चन्दर ने उसे झटका दे कर ढकेल दिया और डांट कर वोला—"क्या मतलव है तुम्हारा ! पागल है क्या ! खवरदार जो हाय वढाया, अभी

ढेर कर दूँगा तुझे ! गोरा सूअर ?" और उस ने अपनी आस्तीनें चढायी ।

वह धक्के से गिर गया था, वह धूल झाडते उठ बैठा और बडी ही रोनी आवाज में बोला—"कितना जुल्म है, कितना जुल्म है । मेरे फूल भी तुम चुरा ले गये और मुझे इतना हक भी नही कि तुम्हें धमकाऊँ । अब तुम मुझ से लडोगे ! तुम जवान हो, मैं बूढा हूँ । हाय रे मैं !" और सचमुच वह जैसे रोने लगा हो ।

चन्दर ने उस का रोना देखा और उस का सारा गुस्सा हवा हो गया और हँसी रोक कर बोला—"गलतफ़हमी है जनाब ! मैं तो बहुत दूर रहता हूँ । मैं चिट्ठी ले कर मिस डिक्रूज से मिलने आया था ।"

उस का रोना नही रुका—"तुम बहाना बनाते हो, बहाना बनाते हो और अगर मैं विश्वास नही करता तो तुम मारने की धमकी देते हो ? अगर मैं कमजोर न होता, तो तुम्हें पीस कर खा जाता और तुम्हारी खोपडी कुचल कर फेंक देता जैसे तुम ने मेरे फूल फेंके होंगे ?"

'फिर तुम ने गाली दी ! मैं उठा कर तुम्हें अभी नाले में फेंक दूँगा !"

"अरे बाप रे ! दौडो, दौडो, मुझे मार डाला 'पापी···टामी' ' अरे दोनो कुत्ते मर गये ।" उस ने डर के मारे चीखना शुरू किया ।

"क्या है बर्टी ? क्यों चिल्ला रहे हो ?" बाथरूम के अन्दर से किसी ने चिल्ला कर कहा ।

"अरे मार डाला इस ने ' ···दौडो-दौडो !"

झटके से बाथरूम का दरवाजा खुला और बेदिङ् गाउन पहने हुए एक लडकी दौडती हुई आयी और चन्दर को देख कर रुक गयी ।

"क्या है ?" उस ने डाँट कर पूछा ।

"कुछ नही, शायद पागल मालूम देता है ।"

"जबान सँभाल कर बोलो, वह मेरा भाई है !"

"ओह ! कोई भी हो । मैं मिस डिक्रूज से मिलने आया था । मैं ने आवाज दी तो कोई नही बोला । मैं बाग़ में घूमने लगा । इतने में इस ने

मेरी गरदन पकड ली। यह बीमार और कमज़ोर है वरना अभी गरदन दबा देता।"

गोरा उस लडकी के आते ही फिर तन कर खडा हो गया, और दाँत पीस कर बोला—"अरे मैं तुम्हारे दाँत तोड दूँगा। बदमाश कही का, चुपके-चुपके आया और गुलाब तोडने लगा। मैं चमेली के झाड के पीछे छिपा देख रहा था!"

"अभी मैं पुलिस बुलाती हूँ, तुम देखते रहो बर्टी इसे। मैं फोन करती हूँ।" लडकी ने डाँटते हुए कहा।

"अरे भाई मैं मिस डिक्रूज से मिलने आया हूँ।"

"मैं तुम्हें नही जानती, झूठा कही का। मैं मिस डिक्रूज हूँ।"

"देखिए तो यह खत!"

लडकी ने खत खोला और पढा और एकदम उस ने आवाज बदल दी।

"छि बर्टी, तुम किसी दिन पागलखाने जाओगे। आप को डॉ० शुक्ला ने भेजा है। तुम तो मुझे बदनाम करा डालोगे!"

उस की शकल और भी रोनी हो गयी—"मैं नही जानता था, मैं जानता नही था।" उस ने और भी घबडा कर कहा।

"माफ कीजिएगा!" लडकी ने बडे मीठे स्वर में साफ़ हिन्दुस्तानी में कहा—"मेरे भाई का दिमाग़ ज़रा ठीक नही रहता, जब से इन की पत्नी की मौत हो गयी।"

"इस के मतलब ये नही कि ये किसी भले आदमी की इज्जत उतार लें।" चन्दर ने बिगड कर कहा।

"देखिए बुरा मत मानिए। मैं इन की ओर से माफी माँगती हूँ, आइए अन्दर चलिए।" उस ने चन्दर का हाथ पकड लिया। उस का हाथ बेहद ठण्डा था। वह नहा कर आ रही थी। उस के हाथ के उस तुषार स्पर्श से चन्दर सिहर उठा और उस ने हाथ झटक कर कहा—"अफ़सोस, आप का हाथ तो बरफ़ है?"

लड़की चौंक गयी। वह सद्य.स्नाता सहसा सचेत हो गयी और बोली—"अरे शैतान तुम्हें ले जाये बर्टी ! तुम्हारे पीछे मैं बेदिङ् गाउन में भाग आयी।" और बेदिङ् गाउन के दोनों कालर पकड़ कर उस ने अपनी खुली गरदन ढँकने का प्रयास किया और फिर अपनी पोशाक पर लज्जित होकर भागी।

अभी तक गुस्से के मारे चन्दर ने उस पर ध्यान ही नहीं दिया था। लेकिन उस ने देखा कि वह तेईस बरस की दुबली-पतली तरुणी है। लहराता हुआ बदन, गले तक कटे हुए बाल। एंग्लो इण्डियन होने के बावजूद गोरी नहीं है। चाय की तरह वह हलकी, पतली, भूरी और तुर्श थी। भागते वक़्त ऐसी लग रही थी जैसे छलकती हुई चाय।

इतने में वह गोरा उठा और चन्दर का कन्धा छूकर बोला—"माफ करना भाई। उस से मेरी शिकायत मत करना। असल में ये गुलाब मेरी मृत पत्नी की यादगार हैं। जब इन का पहला पेड़ आया था तब मैं इतना ही जवान था जितने तुम, और मेरी पत्नी उतनी ही अच्छी थी जितनी पम्मी।"

"कौन पम्मी!"

"यही मेरी बहन प्रमिला डिक्रूज!"

"ओह! कब मरी आप की पत्नी! माफ़ कीजिएगा मुझे भी मालूम नहीं था!"

'हाँ मैं बड़ा अभागा हूँ। मेरा दिमाग़ कुछ खराब है, देखिए!" कह कर उस ने झुक कर अपनी खोपड़ी चन्दर के सामने कर दी—और बहुत गिड़गिड़ा कर बोला—"पता नहीं कौन मेरे फूल चुरा ले जाता है। अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद पांच साल से मैं इन फूलों को सम्हाल रहा हूँ। हाय रे मैं! जाइए पम्मी बुला रही हैं।"

पिछवाड़े के सहन का बीच का दरवाजा खुल गया था और पम्मी कपड़े पहन कर बाहर झांक रही थी। चन्दर आगे बढ़ा और गोरा मुड़

कर अपने गुलाब और चमेली की झाडी में खो गया। चन्दर गया और कमरे में पडे हुए एक सोफ़ा पर वैठ गया। पम्मी ट्वायलेट कर चुकी थी और एक हलकी फ्रासीसी खुशवू से गमक रही थी। शैम्पू से घुले हुए रूखे वाल जो मचले पड रहे थे, खुशनुमा आसमानी रग का एक पतला चिपका हुआ झीना ब्लाउज और ब्लाउज पर एक फलैनेल का फुल पैण्ट जिस के दो गेलिस कमर, छाती और कन्वे पर चिपके हुए थे। होठो पर एक हलकी लिपस्टिक की झलक मात्र थी, और गले तक वहुत हलका पाउडर जो वहुत नज़दीक से ही मालूम होता था। लम्वे नाखूनो पर हलका गुलावी पेण्ट। वह आयी, निस्सकोच भाव से उसी सोफे पर कपूर के वगल में वैठ गयी और वडी ही मुलायम आवाज़ में वोली—"मुझे वडा दु ख है मिस्टर कपूर! आप को वहुत तवालत उठानी पडी। चोट तो नही आयी?"

"नही, नही, कोई वात नही!" कपूर का सारा गुस्सा हवा हो गया। कोई भी लडकी निस्सकोच भाव से, इतनी अपनायत से सहानुभूति दिखाये, और माफ़ी मॉगे, तो उस के सामने कौन पानी-पानी नही हो जायेगा, और फिर वह भी तव जव कि उस के होठो पर न केवल वोली अच्छी लगती हो, वरन् लिपस्टिक भी इतनी प्यारी हो। लेकिन चन्दर की एक आदत थी। और चाहे कुछ न हो, कम से कम वह यह अच्छी तरह जानता था कि नारी जाति से व्यवहार करते समय कहॉ पर कितनी ढील देनी चाहिए, कितना कसना चाहिए, कव सहानुभूति से उन्हें झुकाया जा सकता है, कव अकडकर। इस वक्त जानता था कि इस लडकी से वह जितनी सहानुभूति चाहे ले सकता है, अपने अपमान के हर्जाने के तौर पर। इसलिए कपूर साहव वोले—"लेकिन मिस डिक्रूज़, आप के भाई वीमार होने के वावजूद वहुत मज़वूत है। उफ़! गरदन पर जैसे अभी तक जलन हो रही है।"

"ओहो! सचमुच मैं वहुत शरमिन्दा हूँ। देखूँ!" और कालर हटा

कर उस ने गरदन पर अपनी बरफ़ीली अँगुलियाँ रख दी, "लाइए लोशन मल दूँ मैं !"

"धन्यवाद, धन्यवाद, इतना कष्ट न कीजिए। आप की अँगुलियाँ गन्दी हो जायेंगी !" कपूर ने बड़ी शालीनता से कहा।

पम्मी के होठों पर एक हलकी-सी मुसकराहट, आँखों में हलकी-सी लाज और वक्ष में एक हलका-सा कम्पन दौड़ गया। यह वाक्य कपूर ने चाहे शरारत में ही कहा हो, लेकिन कहा इतने शान्त और संयत स्वरों में कि पम्मी कुछ प्रतिवाद भी न कर सकी। और फिर छह बरस से साठ बरस तक की कौन ऐसी स्त्री है जो अपने रूप की प्रशंसा पर बेहोश न हो जाये।

"अच्छा लाइए, वह स्पीच कहाँ है जो मुझे टाइप करनी है !" उस ने विषय बदलते हुए कहा।

"यह लीजिए।" कपूर ने दिया।

"यह तो मुश्किल से तीन-चार घण्टे का काम है।" और पम्मी स्पीच को उलट-पुलट कर देखने लगी।

"माफ़ कीजिएगा अगर मैं कुछ व्यक्तिगत सवाल पूछूँ, क्या आप टाइपिस्ट हैं ?" कपूर ने बहुत शिष्टता से पूछा।

"जी नहीं," पम्मी ने उन्हीं काग़ज़ों में नज़र गड़ाते हुए कहा— 'मैंने कभी टाइपिङ् और शार्टहैण्ड सीखी थी, और तब मैं सीनियर कैम्ब्रिज पास कर के युनिवर्सिटी गयी थी। युनिवर्सिटी मुझे छोड़नी पड़ी क्योंकि मैंने अपनी शादी कर ली।"

"अच्छा, आप के पति कहाँ हैं ?"

"रावलपिण्डी में, आर्मी में।"

"लेकिन फिर आप डिक्रूज़ क्यों लिखती हैं, और फिर मिस ?"

"क्योंकि हम लोग अलग हो गये हैं।" और स्पीच के काग़ज़ को फिर तह करती हुई बोली—

"मिस्टर कपूर, आप अविवाहित हैं ?"

"जी हाँ !"

"और विवाह करने का इरादा तो नही रखते ?"

"नहीं।"

"बहुत अच्छे। तब तो हम लोगो में निभ जायेगी। मैं शादी से बहुत नफ़रत करती हूँ। शादी अपने को दिया जाने वाला सब से बडा धोखा है। देखिए ये मेरे भाई हैं न, कैसे पीले और बीमार से हैं ये। पहले बडे तन्दुरुस्त और टेनिस में प्रान्त के अच्छे खिलाडियों में से थे। एक बिशप की दुबली-पतली भावुक लडकी से इन्हो ने शादी कर ली, और उसे बेहद प्यार करते थे। सुबह-शाम, दोपहर, रात, कभी उसे अलग नही होने देते थे। हनीमून के लिए उसे ले कर सीलोन गये थे। वह लडकी बहुत कलाप्रिय थी। बहुत अच्छा नाचती थी, बहुत अच्छा गाती थी और खुद गीत लिखती थी। यह गुलाब का बाग़ उसी ने बनवाया था और इन्ही के बीच में दोनो बैठ कर घण्टो गुज़ार देते थे।

"कुछ दिनों बाद दोनो मे झगडा हुआ। क्लब में बॉल डान्स था और उस दिन वह लडकी बहुत अच्छी लग रही थी। बहुत अच्छी। डान्स के वक़्त इन का ध्यान डान्स की तरफ़ कम था, अपनी पत्नी की तरफ़ ज्यादा। इन्हो ने आवेश में उस की अँगुलियाँ जोर से दबा दी। वह चीख पडी और सभी लोग इन लोगो की ओर देख कर हँस पडे।

"वह घर पर आयी और बहुत बिगडी—बोली—"आप नाच रहे या टेनिस का मैच खेल रहे थे, मेरा हाथ था या टेनिस का रैकट ?" बात पर बर्टी भी बिगड गया, और उस दिन से जो उन लोगो में की तो फिर कभी भी न बनी। धीरे-धीरे वह लडकी एक सार्जेण्ट को प्यार करने लगी। बर्टी को इतना सदमा हुआ कि वह बीमार पड गया। लेकिन बर्टी ने तलाक़ नही दिया, उस लडकी से कुछ कहा भी नहीं, और उस लड़की ने सार्जेण्ट से प्यार जारी रखा लेकिन बीमारी में बर्टी की

बहुत सेवा की। बर्टी अच्छा हो गया। उस के बाद उस को एक बच्ची हुई और उसी मे वह मर गयी। हालाँ कि हम लोग सब जानते हैं कि वह बच्ची उस सार्जेण्ट की थी लेकिन बर्टी को यकीन ही नही होता कि वह सार्जेण्ट को प्यार करती थी। वह कहता है—यह दूसरे को प्यार करती होती तो मेरी इतनी सेवा कैसे कर सकती थी भला। उस बच्ची का नाम बर्टी ने रोज़ रखा। और उसे ले कर दिन-भर उन्ही गुलाब के पेडो के बीच में बैठा करता था। जैसे अपनी पत्नी को ले कर बैठता था। दो साल बाद बच्ची को साँप ने काट लिया, वह मर गयी और तब से बर्टी का दिमाग ठीक नही रहता। खैर, जाने दीजिए। आइए अपना काम शुरू करे। चलिए अन्दर के स्टडी रूम में चले!"

"चलिए!" चन्दर बोला। और पम्मी के पीछे-पीछे चल दिया। मकान बहुत बडा था और पुराने अँगरेज़ों के ढग पर सजा हुआ था। बाहर से जितना पुराना और गन्दा नजर आता था अन्दर से उतना ही आलीशान और सुथरा। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के जमाने की छाप अन्दर थी। यहाँ तक कि बिजली लगने के बावजूद अन्दर पुराने बडे-बडे हाथ से खीचे जाने वाले पखे लगे थे। दो कमरो को पार कर वे लोग स्टडी रूम में पहुँचे। बडा-सा कमरा जिस में चारो तरफ़ आलमारियो में किताबे सजी हुई थी! चार कोने में चार मेजें लगी हुई थी जिन में कुछ बस्ट और कुछ तसवीरें स्टैण्ड के सहारे रखी हुई थी। एक आलमारी में नीचे खाने में टाइपराइटर रखा था। पम्मी ने बिजली जला दी, और टाइप-राइटर खोल कर साफ़ करने लगी। चन्दर घूम कर किताबें देखने लगा। एक कोने मे कुछ मराठी की किताबें रखी थी। उसे बडा ताज्जुब हुआ—"अच्छा पम्मी, ओह माफ कीजिएगा, मिस डिक्रूज •"

"नही, आप मुझे पम्मी पुकार सकते है। मुझे यही नाम अच्छा लगता है—हाँ, क्या पूछ रहे थे आप?"

"क्या आप मराठी भी जानती है?"

"नही, मैं तो नही मेरी नानी जी जानती थी। क्या आप को डॉ० शुक्ला ने हम लोगो के वारे में कुछ नहीं बताया ?"

"नहीं !" कपूर ने कहा।

"अच्छा ! ताज्जुव है !" पम्मी वोली—"आप ने ट्रेनाली डिक्रूज का नाम सुना है न ?" पम्मी वोली।

"हाँ, हाँ, डिक्रूज जिन्होने कौशाम्वी की खुदाई करवायी थी। वह तो वहुत वडे पुरातत्त्ववेत्ता थे ?" कपूर ने कहा।

"हाँ, वही। वह मेरे सगे नाना थे। और वह अँगरेज़ नही थे, मराठा थे और उन्होने मेरी नानी से शादी की थी जो एक काश्मीरी ईसाई महिला थी। उन के कारण भारत में उन्हें ईसाइयत अपनानी पडी। यह मेरे नाना का ही मकान है और अब हम लोगो को मिल गया है। डॉ० शुक्ला के दोस्त मिस्टर श्रीवास्तव बैरिस्टर है न, वे हमारे खानदान के ऐटर्नी थे। उन्होने और डॉ० शुक्ला ने ही यह जायदाद हमें दिलवायी। लीजिए मशीन तो ठीक हो गयी।" उस ने टाइपराइटर में कार्वन और कागज़ लगा कर कहा—"लाइए निवन्व ?"

इस के वाद घण्टे-भर तक टाइपराइटर रुका नही। कपूर ने देखा कि यह लडकी जो व्यवहार में इतनी सरल और स्पष्ट है, फैशन में इतनी नाज़ुक और शौकीन है, काम करने में उतनी ही मेहनती और तेज़ भी है। उस की अँगुलियाँ मशीन की तरह चल रही थी। और तेज़ इतनी कि एक घण्टे में उस ने लगभग आवी पाण्डुलिपि टाइप कर डाली थी। ठीक एक घण्टे के वाद उस ने टाइपराइटर वन्द कर दिया, वगल में वैठे हुए कपूर की ओर झुक कर कहा—"अव थोडी देर आराम।" और अपनी अँगुलियाँ चटखाने के वाद वह कुरसी खिसका कर उठी और एक भरपूर अँगडाई ली। उस का अग-अग धनुष की तरह झुक गया। उस के वाद कपूर के कन्वे पर वेतकल्लुफी से हाथ रख कर वोली—"क्यो, एक प्याला चाय मँगवायी जाये !"

"मैं तो पी चुका हूँ।"

"लेकिन मुझ से तो काम होने से रहा अब विना चाय के!" पम्मी एक अल्हड वच्ची की तरह वोली। और अन्दर चली गयी। कपूर ने टाइप किये हुए कागज उठाये और कलम निकाल कर उन की ग़लतियाँ सुधारने लगा। चाय पी कर थोडी देर में पम्मी वापस आयी और बैठ गयी। उस ने एक सिगरेट केश कपूर के सामने पेश किया।

"धन्यवाद, मैं सिगरेट नही पीता।"

"अच्छा, ताज्जुव है, आप की इजाजत हो तो मैं सिगरेट पी लूँ!"

"क्या आप सिगरेट पीती है? छि, पता नही क्यों औरतो का सिगरेट पीना मुझे वहुत ही नापसन्द है।"

"मेरी तो मजवूरी है मिस्टर कपूर, मैं यहाँ के समाज में मिलती-जुलती नही, अपने विवाह और अपने तलाक़ के वाद मुझे ऐङ्लो-इण्डियन समाज से नफरत हो गयी है। मैं अपने दिल से हिन्दोस्तानी हूँ। लेकिन हिन्दोस्तानियो से घुलना-मिलना हमारे लिए सम्भव नही। घर में अकेले रहती हूँ। सिगरेट और चाय से तवीयत वदल जाती है। कितावो से मुझे शौक नही।"

"तलाक के वाद आप ने पढाई जारी क्यो नही रखी?" कपूर ने पूछा।

मैंने कहा न, कि कितावों से मुझे शौक नही विलकुल!" पम्मी वोली। "और मैं अपने को आदमियो में घुलने-मिलने के लायक नही पाती। तलाक के वाद साल-भर तक मैं अपने घर में वन्द रही। मै और वर्टी। सिर्फ़ वर्टी से वात करने का मौक़ा मिला। वर्टी मेरा भाई, वह भी वीमार और वूढा। कही कोई तकल्लुफ़ की गुजाइश नही। अव मैं हरेक से वेतकल्लुफ़ी से वात करती हूँ तो कुछ लोग मुझ पर हँसते हैं, कुछ लोग मुझे सभ्य समाज के लायक नही समझते, कुछ लोग उस का ग़लत मतलव निकालते है। इस लिए मैंने अपने को अपने वँगले में ही क़ैद कर

लिया है। अब आप ही हैं, आज पहली बार मैंने देखा आप को।
समझी ही नही कि आप से कितना दुराव रखना चाहिए। अगर
भलेमानस न हो तो आप इस का गलत मतलब निकाल सकते हैं।"

"अगर यही बात हो तो" कपूर हँस कर बोला—"सम्भव है कि
भलेमानस बनने के बजाय गलत मतलब निकालना ज्यादा पसन्द करूँ

"तो सम्भव है मैं मजबूर होकर आप से भी न मिलूँ!" प
गम्भीरता से बोली।

"नही मिस डिक्रूज़··· "

"नही, आप पम्मी कहिए, डिक्रूज़ नही!"

"पम्मी सही, आप गलत न समझें मैं मज़ाक कर रहा था।" क
बोला। उस ने इतनी देर मे समझ लिया था कि यह साधारण ईस
छोकरी नही है।

इतने में बर्टी लडखडाता हुआ, हाथ में धूल सना खुरपा लिये आ
और चुपचाप खडा हो गया और अपनी धुँधली पीली आँखो से एकट
कपूर को देखने लगा। कपूर ने एक कुरसी खिसका दी और कहा-
"आइए!" पम्मी उठी और बर्टी के एक कन्धे पर हाथ रख कर उ
सहारा देकर कुरसी पर बिठा दिया। बर्टी बैठ गया और आँखें बन्द क
लीं। उस का बीमार कमज़ोर व्यक्तित्व जाने कैसा लगता था कि पम्
और कपूर दोनों चुप हो गये। थोडी देर बाद बर्टी ने आँख खोली औ
बहुत करुण स्वर में बोला··· ··"पम्मी, तुम नाराज़ हो, मैंने जान-बू
कर तुम्हारे मित्र का अपमान नही किया था!"

"अरे नही!" पम्मी ने उठ कर बर्टी का माथा सहलाते हुए कहा—
"मैं तो भूल गयी और कपूर भी भूल गये!"

"अच्छा, धन्यवाद! पम्मी अपना हाथ इधर लाओ!" और वह
पम्मी के हाथ पर सिर रख कर पड रहा और बोला—"मैं कितन
अभागा हूँ। कितना अभागा! अच्छा पम्मी, कल रात को तुम ने सुना था,

ारी तबीयत अब ठीक है, मैंने
का पीलापन देख न ले। मैंने
। उठी और जाने लगी। मैंने
। जरा क्लब जा रही हूँ। फिर

गया और पुचकारते हुए बोला—"जाने कौन ये फूल चुराता है। अगर मुझे एक बार मिल जाये तो मैं उस का खून ऐसे पी लूं!" उस ने हाथ की अँगुली काटते हुए कहा और उठ कर लडखडाता हुआ चला गया।

वातावरण इतना भारी हो गया था कि फिर पम्मी और कपूर ने कोई बातें नही की। पम्मी ने चुपचाप टाइप करना शुरू किया और कपूर चुपचाप बर्टी की बातें सोचता रहा। घण्टे-भर बाद जब टाइपराइटर खामोश हुआ तो कपूर ने कहा।

"पम्मी, मैंने जितने लोग देखे हैं उन में शायद बर्टी सब से विचित्र, है, और शायद सब से दयनीय!"

पम्मी खामोश रही। फिर उसी लापरवाही से अंगडाई लेते हुए बोली—"मुझे बर्टी की बातो पर जरा भी दया नहीं आती। मैं उस को दिलासा दे देती हूं क्योकि वह मेरा भाई है और बच्चे की तरह नासमझ और लाचार है।"

कपूर चौंक गया। वह पम्मी की ओर आश्चर्य से चुपचाप देखता रहा, कुछ बोला नही।

"क्यो, तुम्हें ताज्जुब होता है?" पम्मी ने कुछ मुसकरा कर कहा। 'लेकिन मैं सच कहती हूँ",—वह बहुत गम्भीर हो गयी, "मुझे जरा तरस नही आता इस पागलपन पर।" क्षण-भर चुप रही, फिर जैसे बहुत ही तेजी से बोली—"तुम जानते हो उस के फूल कौन चुराता है? मैं, मैं उस के फूल तोड कर फेंक देती हूं। मुझे शादी से नफरत है, शादी के बाद होने वाली आपसी धोखेबाजी से नफरत है, और उस धोखेबाजी के बाद इस झूठमूठ की यादगार और बेमानी के पागलपन से नफरत है। और ये गुलाब के फूल, य क्यो मूल्यवान् हैं, इसी लिए न कि इस के साथ बर्टी की जिन्दगी की इतनी बडी ट्रेजेडी गुँथी हुई है। अगर एक फूल के खूबसूरत होने के लिए आदमी की जिन्दगी में इतनी बडी ट्रेजेडी आना जरूरी है तो लानत है उस फूल की खूबसूरती पर! मैं उस से नफरत

करती हूँ। इसी लिए मैं किताबों से नफरत करती हूँ। एक कहानी लिखने के लिए कितनी कहानियों की ट्रैजेडी बर्दाश्त करनी होती है।"

पम्मी चुप हो गयी। उस का चेहरा सुर्ख हो गया था। थोड़ी देर बाद उस का तैश उतर गया और वह अपने आवेश पर खुद शर्मा गयी। उठ कर वह कपूर के पास गयी और उस के कन्धे पर हाथ रख कर बोली—"बर्टी से मत कहना, अच्छा?"

कपूर ने सिर हिला कर स्वीकृति दी और कागज समेट कर खड़ा हुआ। पम्मी ने उस के कन्धों पर हाथ रख कर उसे अपनी ओर घुमा कर कहा—"देखो, पिछले चार साल से मैं अकेली थी, और किसी दोस्त का इन्तजार कर रही थी, तुम आये और दोस्त बन गये। तो अब अकसर आना, ऐं?"

"अच्छा।" कपूर ने गम्भीरता से कहा।

"डॉ० शुक्ला से मेरा अभिवादन करना और कहना कभी यहाँ ज़रूर आयें।"

"आप कभी चलिए, वहाँ उन की लड़की है। आप उस से मिल कर खुश होंगी।"

पम्मी उस के साथ फाटक तक पहुँचाने चली तो देखा बर्टी एक चमेली के झाड़ में टहनियाँ हटा-हटा कर कुछ ढूँढ रहा था। पम्मी को देख कर पूछा उस ने—"तुम्हें याद है, वह चमेली के झाड़ में तो नहीं छिपी थी?" कपूर ने पता नहीं क्यों जल्दी से पम्मी को अभिवादन किया और चल दिया। उसे बर्टी को देख कर डर लगता था।

सुधा का कॉलिज वडा एकान्त और खूबसूरत जगह बना हुआ था। दोनो ओर ऊँची-सी मेंड और बीच में से एक ककड की खूबसूरत घुमावदार सडक। दायी ओर चने और गेहूँ के खेत, बेर और शहतूत के झाड और वायी ओर ऊँचे-ऊँचे टीले और ताड के लम्वे-लम्वे पेड। शहर से काफी वाहर देहात का सा नज्जारा और इतना शान्त वातावरण कि लगता था कि यहाँ कोई उथल-पुथल, कोई शोरगुल है ही नही। जगह इतनी हरी-भरी कि दर्जों के कमरों के पीछे ही महुआ चूता था और लम्बी-लम्बी घास में दुपहरिया के नीले फूलो की जगली लतरें उलझी रहती थी।

और इस वातावरण ने अगर किसी पर सब से ज्यादा प्रभाव डाला था तो वह थी गेसू। उसे अच्छी तरह मालूम था कि बाँस के झाड के पीछे किस चीज के फूल हैं। पुराने पीपल पर गिलोय की लतर चढी है और करौंदे के झाड के पीछे एक साही की माँद है। नागफनी की झाडी के पास एक बार उस ने एक लोमडी भी देखी थी। शहर के एक मशहूर रईस साविर हुसेन काज़मी की वह सब से वडी लटकी थी। उस की माँ जिन्हें उस के पिता अदन से व्याह कर लाये थे, शहर की मशहूर शायरा थी। हालाँ कि उन का दीवान छप कर मशहूर हो चुका था, मगर वह किसी भी वाहरी आदमी से कभी नही मिलती जुलती थी, उन की सारी दुनिया अपने पति और अपने वच्चो तक सीमित थी। उन्हें शायराना नाम रखने का वहुत शौक़ था। अपनी दोनो लडकियो का नाम उन्होने गेसू और फूल रखा था और अपने छोटे वच्चे का नाम हसरत। हाँ, वह अपने पतिदेव साविर साहव के हुक्के से वेहद चिढती थी और उस का नाम उन्होने रखा था, 'आतिश-फिशाँ।'

घास, फूल, लतर और शायरी का शौक गेसू ने अपनी माँ से विरासत में पाया था। क़िस्मत से उस का कॉलिज भी ऐसा मिला जिस में दर्जों

को खिडकियो से आम को शाखें झांका करती थी। इसलिए हमेशा जब कभी मौका मिलता था क्लास से भाग कर गेसू घास पर लेट कर सपने देखने की आदी हो गयी थी। क्लास के इस महाभिनिष्क्रमण और उस के वाद लतरो की छांह मे जा कर ध्यान-योग की साधना में उस की एक मात्र साथिन थी सुधा। आम की घनी छांह मे हरी-हरी दूव में दोनो सर के नीचे हाथ रख कर लेट रहती और दुनिया-भर की वातें करती रहती। वातो मे छोटी से छोटी और वडी से वडी किस तरह की वातें रहती थी यह वही समझ सकता है जिस ने कभी दो अभिन्न सहेलियों की एकान्त वार्ता सुनी है। गालिव की शायरी ले कर, उन के छोटे भाई हसरत ने एक कुत्ते का पिल्ला पाला है, यह गेसू सुनाया करती थी और शरत् के उपन्यासो से ले कर यह कि उस की मालिन ने गिलट का कड़ा वनवाया है, यह सुधा वताया करती थी। दोनो अपने-अपने मन की वातें एक दूसरे को वता डालती थी और जितना भावुक, प्यारा, अनजान और सुकुमार दोनो का मन था, उतनी ही भावुक और सुकुमार दोनो की वाते। हां भावुक, सुकुमार दोनो हो थी, लेकिन दोनो में एक अन्तर था। गेसू शायर होते हुए भी इसी दुनिया की थी और सुधा शायर न होते हुए भी कल्पनालोक की थी। गेसू अगर झाडियो में से कुछ फूल चुनती तो उन्हें सूंघती, उन्हें अपनी चोटी में सजाती और उन पर चन्द शेर कहने के वाद भी उन्हें माला में पिरो कर अपनी कलाई में लपेट लेती। सुधा लतरो के बीच में सर रख कर लेट जाती और निर्निमेष पलको से फूलो को देखती रहती और आंखो से न जाने क्या पी कर उन्हें उन्ही की डालो पर फूलता हुआ छोड देती। गेसू हर चीज का उचित इस्तेमाल जानती थी, किसी भी चीज को पसन्द करने या प्यार करने के वाद अव उन का क्या उपयोग है, क्रियात्मक यथार्थ जीवन में उस का क्या स्थान है, यह गेसू खूव समझती थी। लेकिन सुधा किसी भी फूल के जादू मे वंध जाना चाहती थी, उसी की कल्पना में डूव जाना

जानती थी, लेकिन उस के बाद सुधा को कुछ नही मालूम था। गेसू का कल्पना और भावुक सूक्ष्मता शायरी में व्यक्त हो जाती थी, अत उस की जिन्दगी मे काफी व्यावहारिकता और यथार्थ था, लेकिन सुधा जो शायरी लिख नही सकती थी अपने स्वभाव और गठन में खुद ही एक मासूम शायरी बन गयी थी। वह भी पिछले दो सालो में तो सचमुच ही वह इतनी गम्भीर, सुकुमार और भावनामयी बन गयी थी कि लगता था कि सूर के गीतो से उस के व्यक्तित्व के रेशे बुने गये हैं।

लडकियाँ, गेसू और सुधा के इस स्वभाव और उन की अभिन्नता से वाकिफ थी। और इस लिए जब आज सुधा की मोटर आ कर सायबान में रुकी और उस में से सुधा और गेसू हाथ में फाइल लिये उतरी तो कामिनी ने हँस कर प्रभा से कहा—"लो, चन्दा-सूरज की जोडी आ गयी!" सुधा ने सुन लिया। मुसकरा कर गेसू की ओर फिर कामिनी और प्रभा की ओर देख कर हँस दी। सुधा बहुत कम बोलती थी, लेकिन उस की हँसी ने उसे खुशमिजाज साबित कर रखा था और वह सभी की प्यारी थी। प्रभा ने आ कर सुधा के गले मे बाँह डाल कर कहा—"गेसू बानो, थोडी देर के लिए सुधारानी को हमे दे दो। जरा कल के नोट्स उतारने हैं इन से पूछ कर।"

गेसू हँस कर बोली—"उस के पापा से तय कर ले, फिर तू जिन्दगी-भर सुधा को पाल-पोस, मुझे क्या करना है।"

जब सुधा प्रभा के साथ चली गयी तो गेसू ने कामिनी के कन्धे पर हाथ रखा और कहा—"कम्मो रानी, अब तो तुम्ही हमारे हिस्से मे पडी, आओ। चलो देखें लतर में कुन्दरू हैं?"

"कुन्दरू तो नही, अब चने का खेत हरिया आया है।" कम्मो बोली।

गृह-विज्ञान का पीरियड था और मिस उमालकर पढा रही थी। बीच की क़तार की एक बेंच पर कामिनी, प्रभा, गेसू और सुधा बैठी थी।

हिस्सावाँट अभी तक कायम था अतः कामिनी के बगल में गेसू, गेसू के बगल में प्रभा और प्रभा के बाद बेंच के कोने पर सुधा बैठी थी। मिस उमालकर रोगियों के खान-पान के बारे में समझा रही थी। मेज़ के बगल में खड़ी हुई, हाथ में एक किताब लिये हुए उसी पर निगाह लगाये वह बोलती जा रही थी। शायद अँगरेज़ी की किताब में जो कुछ लिखा हुआ था उसी का हिन्दी में उल्था करते हुए वह बोलती जा रही थी—"आलू एक नुकसानदेह तरकारी है, रोग की हालत में। वह खुश्क होता है, गरम होता है और हज़म मुश्किल से होता है।…"

सहसा गेसू ने एक दम बीच से पूछा—"गुरुजी, गान्धीजी आलू खाते है या नहीं ?" सभी हँस पड़े।

मिस उमालकर ने बहुत गुस्से से गेसू की ओर देखा और डाँट कर कहा—"Why talk of Gandhi ? I want no political discussion in class" ("गान्धी से क्या मतलब ? मैं दर्जे में राजनीतिक बहस नहीं चाहती"।) इस पर तो सभी लड़कियों की दबी हुई हँसी फूट पड़ी। मिस उमालकर झल्ला गयी और मेज़ पर किताब पकटते हुए बोली—"साईलेन्स (खामोश) !" सभी चुप हो गये। उन्होंने फिर पढ़ाना शुरू किया।

"जिगर के रोगियों के लिए हरी तरकारियाँ बहुत फायदेमन्द होती हैं। लौकी, पालक और हर किस्म के हरे साग तन्दुरुस्ती के लिए बहुत फायदेमन्द होते हैं।"

सहसा प्रभा ने कुहनी मार कर गेसू से कहा—"ले फिर क्या है, निकाल चने या हरा साग, खा-खा कर मोटे हो मिस उमालकर के घण्टे में।'

गेसू ने अपने कुरते के जेब से बहुत-सा साग निकाल कर कामिनी और प्रभा को दिया।

मिस उमालकर अब शक्कर के हानि-लाभ बता रही थी—"लम्बे रोग के बाद रोगी को शक्कर कम देनी चाहिए। दूध या साबूदाने में

ताड की मिश्री मिला सकते हैं। दूध तो ग्लुकोज के साथ बहुत स्वादिष्ठ लगता है।"

इतने में जब तक सुधा के पास साग पहुँचा कि फौरन मिस उमालकर ने देख लिया। वह समझ गयी यह शरारत गेसू की होगी—"मिस गेसू, बीमार हालत में दूध काहे के साथ स्वादिष्ठ लगता है?"

इतने में सुधा के मुँह से निकला—"साग काहे के साथ खायें?"

और गेसू ने कहा—"नमक के साथ।"

"हूँ! नमक के साथ?" मिस उमालकर ने कहा—"बीमारी में दूध नमक के साथ अच्छा लगता है। खडी हो! कहाँ था ध्यान तुम्हारा?"

गेसू सन्न। मिस उमालकर का चेहरा मारे गुस्से के लाल हो रहा था।

"क्या बात कर रही थी, तुम और सुधा?"

गेसू सन्न!

"अच्छा तुम लोग क्लास के बाहर जाओ, और आज हम तुम्हारे गार्जियन को खत भेजेंगे। चलो, जाओ बाहर।"

सुधा ने कुछ मुसकराते हुए प्रभा की ओर देखा और प्रभा हँस दी। गेसू ने देखा कि मिस उमालकर का पारा और भी चढने वाला है तो वह चुपचाप किताब उठा कर चल दी। सुधा भी पीछे-पीछे चल दी। कामिनी ने कहा—"खत-वत भेजती रहना सुधा!" और क्लास ठठाकर हँस पडा। मिस उमालकर गुस्से से नीली पड गयी—"क्लास अब खतम होगा।" और रजिस्टर उठा कर चल दी। गेसू अभी अन्दर ही थी कि वह बाहर चली गयी और उन के जरा दूर पहुँचते ही गेसू ने बडी अदा से कहा—"बडे बेआबरू हो कर तेरे कूचे से हम निकले" और सारा क्लास फिर हँसी से गूँज उठा। लडकियाँ चिडियों की तरह फुर्र हो गयीं और थोडी ही देर में सुधा और गेसू बैडमिण्टन फील्ड के पास वाले छत-नार पाकड के नीचे लेटी हुई थीं।

बडी खुशनुमा दोपहरी थी। खुशबू से लदे हल्के-हल्के झोंके गेसू की

ओढनी और गरारे की सिलावटो से आंखमिचौनी खेल रहे थे। आसमान मे कुछ हलके रुपहरे बादल उड रहे थे और जमीन पर बादलो की साँवली छायाएँ दौड रही थी। घास के लम्बे-चौडे मैदान पर बादलो की छायाओ का खेल बडा मासूम लग रहा था। जितनी दूर तक छाँह रहती थी उतनी दूर तक घास का रग गहरा काही हो जाता था, और जहाँ-जहाँ बादलो से छन कर धूप बरसने लगती थी वहाँ-वहाँ घास सुनहरे धानी रग की हो जाती थी। दूर कही पर पानी बरसा था और बादल हलके होकर खरगोश के मासूम स्वच्छन्द बच्चो की तरह दौड रहे थे। सुधा आँखो पर फाइल की छांह किये हुए बादलो की ओर एकटक देख रही थी। गेसू ने उस की ओर करवट बदली और उस की वेणी में लगे हुए रेशमी फीते को उँगली में उमेठते हुए एक लम्बी-सी सांस भर कर कहा—

"बादशाहो की मुअत्तर ख्वाबगाहो मे कहाँ
वह मजा जो भीगी-भीगी घास पर सोने में है,
मुतमइन बेफिक्र लोगो की हँसी में भी कहाँ,
लुत्फ़ जो एक-दूसरे को देख कर रोने में है।"

सुधा ने बादलो से अपनी निगाह नही हटायी, बस एक करुण सपनीली मुसकराहट बिखेर कर रह गयी।

"क्या देख रही है सुधी?" गेसू ने पूछा।

"बादलो को देख रही हूँ।" सुधा ने बेहोश आवाज़ में जवाब दिया। गेसू उठी और सुधा की छाती पर सिर रख कर बोली—

"कैफ़ बरदोश, बादलो को न देख,
बेख़बर, तू न कुचल जाय कही।"

और सुधा के गाल मे ज़ोर की चुटकी काट ली। "हाय रे!" सुधा ने चीख कर कहा और उठ बैठी "वाह! वाह! कितना अच्छा शेर है। किस का है?"

"पता नही किस का है।" गेसू बोली—"लेकिन बहुत सच है सुधी,

आस्मां के वादलों के दामन में अपने ख्वाव टांक लेना और उनके सहारे ज़िन्दगी वसर करने का ख़याल है तो वडा नाज़ुक, मगर रानी वडा ख़तरनाक भी है। आदमी वडी ठोकरें खाता है। इस से तो अच्छा है कि आदमी को नाज़ुकख़याली से साविक़ा ही न पडे! खाते-पीते, हँसते-वोलते आदमी की ज़िन्दगी कट जाये।"

सुधा ने अपना आंचल ठीक किया, और लटो में से घास के तिनके निकालते हुए कहा—"गेसू, अगर हम लोगो को भी शादी-व्याह की झंझट में न फँसना पडे और इसी तरह दिन कटते जायें तो कितना मज़ा आये। हँसते-वोलते, पढते-लिखते, घास में लेट कर वादलो में प्यार करते हुए कितना अच्छा लगता है, लेकिन हम लडकियो की ज़िन्दगी भी क्या? मैं तो सोचती हूँ गेसू, कभी व्याह ही न करूँ। हमारे पापा का ध्यान कौन रखेगा?"

गेसू थोडी देर तक सुधा की आंखो में आँखें डाल कर शरारत-भरी निगाहो से देखती रही और मुसकरा कर वोली—"अरे अव ऐसी भोली नही हो रानी तुम! ये शवाव, ये उठान और व्याह नही करेगी, जोगन वनेंगी।"

"अच्छा चल हट वेशरम कही की, खुद व्याह करने की ठान चुकी है तो दुनिया-भर को क्यो तोहमत लगाती है!"

"मैं तो ठान ही चुकी हूँ, मेरा क्या। फिक्र तो तुम लोगों की है कि ...ाह नही होता तो लेट कर वादल देखती हैं।" गेसू ने मचलते ... कहा।

"अच्छा, अच्छा," गेसू की ओढनी खींच कर सिर के नीचे रख कर ...धा ने कहा—"क्या हाल है तेरे अख्तर मियाँ का? मँगनी कव होगी तेरी?"

"मँगनी क्या किसी दिन हो जाये, वस फूफीजान के यहाँ आने-भर की क़सर है। वैसे अम्मी तो फूल की वात उन से चला रही थी, पर

उन्होंने मेरे लिए इरादा जाहिर किया। बड़े अच्छे हैं, आते हैं तो घर-भर मे रोशनी छा जाती है।" गेसू ने बहुत भोलेपन से गोद में सुधा का हाथ रख कर उस की उँगलियाँ चिटखाते हुए कहा।

"वे तो तेरे चाचाजात भाई हैं ना ? तुझ से तो पहले उन से बोल-चाल रही होगी।" सुधा ने पूछा।

"हां-हां, खूब अच्छी तरह से। मौलवी साहब हम लोगों को साथ-साथ पढ़ाते थे और जब हम दोनों सबक भूल जाते थे तो एक-दूसरे का कान पकड़ कर साथ-साथ उठते-बैठते थे।" गेसू कुछ झेंपते हुए बोली।

सुधा हँस पड़ी—"वाह रे! प्रेम की इतनी विचित्र शुरूआत मैंने कहीं नहीं सुनी थी। तब तो तुम लोग एक-दूसरे का कान पकड़ने के लिए अपने आप सबक़ भूल जाते होगे ?"

"नहीं जी, एक बार फिर पढ़ कर कौन सबक़ भूलता है और एक बार सबक याद होने के बाद जानती हो इश्क में क्या होता है—

"मकतबे इश्क़ मे इक ढंग निराला देखा,
उस को छुट्टी न मिली जिस को सबक़ याद हुआ।"

खैर, यह सब बात जाने दे सुधा, अब तू कब ब्याह करेगी ?"

"जल्दी ही करूँगी।" सुधा बोली।

"किस से ?"

"तुझ से।" और दोनों खिलखिला कर हँस पड़ीं।

बादल हट गये थे और पाकड़ की छांह को चीरते हुए एक सुनहली रोशनी का तार झिलमिला उठा। हँसते वक्त गेसू के कान के टॉप चमक उठे और सुधा का ध्यान उधर खिंच गया। "ये कब बनवाया तू ने ?"

"बनवाया नहीं।"

"तो उन्होंने दिये होंगे, क्यों ?"

गेसू ने शरमा कर सिर हिला दिया।

सुधा ने उठ कर हाथ से छूते हुए कहा—"कितने सुन्दर कमल हैं!

वाह ! क्यो, गेसू, तूने सचमुच के कमल देखे हैं ?"

"न।"

"मैंने देखे है।"

"कहाँ ?"

"असल मे पाँच-छह साल पहले तक तो मै गाँव मे रहती थी न। ऊँचाहार के पास एक गाँव में मेरी बुआ रहती है न, बचपन से मै उन्ही के पास रहती थी। पढाई की शुरूआत मैंने वही की और सातवें तक वही पढी। तो वहाँ मेरे स्कूल के पीछे के पोखरे में बहुत-से कमल थे। रोज शाम को मैं भाग जाती थी, और तालाब में घुस कर कमल तोडती थी और घर से बुआ एक लम्बा-सा सोटा ले कर गालियाँ देती हुई आती थी मुझे पकडने के लिए। जहाँ वह किनारे पर पहुँचती तो मैं कहती अभी डूब जायेंगे बुआ, अभी डूबे, तो बहुत रबडो-मलाई की लालच दे कर वह मिन्नत करती निकल आओ, तो मैं निकलती थी। तुम ने तो कभी देखा नही होगा हमारी बुआ को ?"

"न, तूने कभी दिखाया ही नही।"

"इधर बहुत दिनो से आयो ही नही वो। आयेंगी तो दिखाऊँगी तुझे। और उन की एक लडकी है। बडी प्यारी, बहुत मजे की है। उसे देख कर तो तुम उसे बहुत प्यार करोगी। वो तो अब यही आने वाली है। अब यही पढेगी।"

"किस दर्जे में पढती है ?"

"प्राइवेट विदुषी मे बैठेगी इस साल। खूब गोल-मटोल और हँसमुख है।" सुधा बोली।

इतने में घण्टा बोला और गेसू ने सुधा के पैर के नीचे दबी हुई अपनी ओढनी खींची।

"अरे, अब आखिरी घण्टे में जा कर क्या पढोगी। हाजिरी तो कट ही गयी। अब बैठो यही बातचीत करें, आराम करें।" सुधा ने अल-

साये स्वर में कहा और खडी हो कर एक मदमाती हुई अँगडाई ली—
गेसू ने हाथ पकड कर उसे विठा लिया और वडी गम्भीरता से कहा—
"देखो ऐसी नरसौही अँगडाई न लिया करो, इस से लोग समझ जाते हैं कि अव वचपन करवट वदल रहा है।"

"धत्!" वेहद झेंप कर और फ़ाइल मे मुँह छिपा कर सुधा वोली।

"लो तुम मजाक समझती हो, एक शायर ने तुम्हारी अँगडाई के लिए कहा है—

"कौन ये ले रहा है अँगडाई।
आस्मानो को नीद आती है!"

"वाह!" सुधा वोली, "अच्छा गेसू आज वहुत-से शेर सुनाओ—"

"सुनो—

"इक रिदायेतीरगी है और खावेक़ायनात
डूवते जाते हैं तारे, भीगती जाती है रात!"

"पहली लाइन के क्या मतलव हैं?" सुधा ने पूछा!

"रिदायेतीरगी के माने हैं अँधेरे की चादर और खावेक़ायनात के माने हैं जिन्दगी का सपना—अव फिर सुनो शेर—

"इक रिदायेतीरगी है और खावेक़ायनात
डूवते जाते है तारे, भीगती जाती है रात!"

"वाह! कितना अच्छा है—अन्धकार की चादर है, जीवन का स्वप्न है, तारे डूवते जाते है, रात भीगती जाती है··· गेसू, उर्दू की शायरी वहुत अच्छी है।"

"तो तू खुद उर्दू क्यो नही पढ लेती है?" गेसू ने कहा।

"चाहती तो वहुत हूँ, पर निभ नही पाता।"

"किसी दिन शाम को आओ सुधा, तो अम्मीजान से तुझे शेर सुनवाये वह ले तेरी मोटर तो आ गयी।"

सुधा उठी, अपनी फाइल उठायी। गेसू ने अपनी ओढनी झाडी और

वाह ! क्यो, गेसू, तूने सचमुच के कमल देखे हैं ?"

"न ।"

"मैंने देखे है ।"

"कहाँ ?"

"असल मे पाँच-छह साल पहले तक तो मै गाँव मे रहती थी न। ऊँचाहार के पास एक गाँव में मेरी बुआ रहती है न, वचपन से मैं उन्हीं के पास रहती थी । पढाई की शुरूआत मैंने वही की और सातवे तक वही पढी । तो वहाँ मेरे स्कूल के पीछे के पोखरे में वहुत-से कमल थे। रोज शाम को मैं भाग जाती थी, और तालाव में घुस कर कमल तोडती थी और घर से वुआ एक लम्वा-सा सोटा ले कर गालियाँ देती हुई आती थी मुझे पकडने के लिए । जहाँ वह किनारे पर पहुँचतीं तो मैं कहती अभी डूव जायेंगे वुआ, अभी डूवे, तो वहुत रवडी-मलाई की लालच दे कर वह मिन्नत करती निकल आओ, तो मैं निकलती थी । तुम ने तो कभी देखा नही होगा हमारी वुआ को ?"

"न, तूने कभी दिखाया ही नही ।"

"इधर वहुत दिनो से आयी ही नही वो। आयेंगी तो दिखाऊँगी तुझे । और उन की एक लडकी है । वडी प्यारी, वहुत मजे की है । उसे देख कर तो तुम उसे वहुत प्यार करोगी । वो तो अव यही आने वाली है । अव यही पढेगी ।"

"किस दर्जे में पढती है ?"

"प्राइवेट विदुषी में वैठेगी इस साल । खूव गोल-मटोल और हँसमुख है ।" सुधा वोली ।

इतने में घण्टा वोला और गेसू ने सुधा के पैर के नीचे दवी हुई अपनी ओढनी खीची ।

"अरे, अव आखिरी घण्टे में जा कर क्या पढोगी । हाजिरी तो कट ही गयी । अव वैठो यही वातचीत करें, आराम करें ।" सुधा ने अल-

साये स्वर में कहा और खडी हो कर एक मदमाती हुई अँगडाई ली—

गेसू ने हाथ पकड कर उसे बिठा लिया और बडी गम्भीरता से कहा—"देखो ऐसी अरसौही अँगडाई न लिया करो, इस से लोग समझ जाते हैं कि अब बचपन करवट बदल रहा है।"

"धत्!" बेहद झेंप कर और फाइल में मुँह छिपा कर सुधा बोली।

"लो तुम मजाक समझती हो, एक शायर ने तुम्हारी अँगडाई के लिए कहा है—

"कौन ये ले रहा है अँगडाई।
आस्मानो को नीद आती है!"

"वाह!" सुधा बोली, "अच्छा गेसू आज बहुत-से शेर सुनाओ—"

"सुनो—

"इक रिदायेतीरगी है और खावेक़ायनात
डूबते जाते हैं तारे, भीगती जाती है रात!"

"पहली लाइन के क्या मतलब हैं?" सुधा ने पूछा।

"रिदायेतीरगी के माने है अँधेरे की चादर और खावेक़ायनात के माने है जिन्दगी का सपना—अब फिर सुनो शेर—

"इक रिदायेतीरगी है और खावेक़ायनात
डूबते जाते है तारे, भीगती जाती है रात!"

"वाह! कितना अच्छा है—अन्धकार की चादर है, जीवन का स्वप्न है, तारे डूबते जाते है, रात भीगती जाती है··· गेसू, उर्दू की शायरी बहुत अच्छी है।"

"तो तू खुद उर्दू क्यो नही पढ लेती है?" गेसू ने कहा।

"चाहती तो बहुत हूँ, पर निभ नही पाता।"

"किसी दिन शाम को आओ सुधा, तो अम्मीजान से तुझे शेर सुनवाये वह ले तेरी मोटर तो आ गयी।"

सुधा उठी, अपनी फाइल उठायी। गेसू ने अपनी ओढ़नी झाडी और

आगे चली। पास जा कर उचक कर उस ने प्रिन्सिपल का रूम देखा। वह खाली था। उस ने दाई को खबर दी और मोटर पर बैठ गयी।

गेसू बाहर खडी थी। "चल तू भी न!"

"नही, मैं गाडी पर चली जाऊँगी।"

"अरे चलो, गाडी साढे चार बजे जायेगी। अभी घण्टा-भर है। घर पर चाय पियेंगे, फिर मोटर पहुँचा देगी। जब तक पापा नही हैं तब तक जितना चाहो कार घिसो!"

गेसू भी आ बैठी और कार चल दी।

दूसरे दिन जब चन्दर डॉ० शुक्ला के यहाँ निबन्ध की प्रतिलिपि ले कर पहुँचा तो ८ बज चुके थे। ७ बजे तो चन्दर की नीद ही खुली थी और जल्दी से वह नहा-धो कर साइकिल दौडाता हुआ भागा था कि कही भाषण की प्रतिलिपि पहुँचने में देर न हो जाये।

जब वह बँगले पर पहुँचा तो धूप फैल चुकी थी। अब धूप भली नही मालूम देती थी, धूप की तेजी बर्दाश्त के बाहर होने लगी थी, लेकिन सुधा नीलकांटे के ऊँचे-ऊँचे झाडो की छाँह मे एक छोटी-सी कुरसी डाले बैठी थी। बगल में एक छोटी-सी मेज थी जिस पर कोई किताब खुली हुई रखी थी, हाथ में क्रोशिया थी और उँगलियाँ एक नाजुक तेजी से डोरे से उलझ-सुलझ रही थी। हलकी बादामी रग की इकलाई की लहराती हुई धोती, नारगी और काली तिरछी धारियो का कलफ किया चुस्त ब्लाउज और एक कन्धे पर उभरा हुआ उस का पफ ऐसा लग रहा

था जैसे कि बाँह पर कोई रंगीन तितली आ कर बैठ गयी हो और उस का सिर्फ एक पंख उठा हो। अभी-अभी शायद नहा कर उठी थी क्योंकि शरद् की खुशनुमा धूप की तरह हलके सुनहले बाल पीठ पर लहरा रहे थे। नीलकाँटे की टहनियों की सुनहली लहरें समझ कर अठखेलियाँ कर रही थी।

चन्दर की साइकिल जब अन्दर दीख पड़ी तो सुधा ने उधर देखा लेकिन कुछ भी न कह कर फिर अपनी क्रोशिया बुनने में लग गयी। चन्दर सीधा पोर्टिको में गया और अपनी साइकिल रख कर भीतर चला गया डॉक्टर शुक्ला के पास। स्टडी में, बैठक में, सोने के कमरे में कहीं भी डॉक्टर शुक्ला नहीं नज़र आये। हार कर वह बाहर आया तो देखा मोटर अभी गैरेज में है। तो वे जा कहाँ सकते हैं? और सुधा को तो देखिए! क्या अकड़ी हुई है आज, जैसे चन्दर को जानती ही नहीं। चन्दर सुधा के पास गया। सुधा का मुँह और भी लटक गया।

"डॉक्टर साहब कहाँ हैं?" चन्दर ने पूछा।

"हमें क्या मालूम?" सुधा ने क्रोशिया पर से बिना निगाह उठाये जवाब दिया।

"तो किसे मालूम होगा?" चन्दर ने डाँटते हुए कहा—"हर वक़्त का मज़ाक हमें अच्छा नहीं लगता। काम की बात का उसी तरह जवाब देना चाहिए। उन के निबन्ध की लिपि देनी है या नहीं!"

"हाँ हाँ, देनी है तो मैं क्या करूँ? नहा रहे होंगे अभी। कोई ये तो है नहीं कि तुम निबन्ध की लिपि लाये हो तो कोई नहाये-धोये न, बस सुबह से बैठा रहे कि अब निबन्ध आ रहा है, अब आ रहा है।" सुधा ने मुँह बना कर आँखें नचाते हुए कहा।

"तो सीधे क्यों नहीं कहती कि नहा रहे हैं।" चन्दर ने सुधा के गुस्से पर हँस कर कहा। चन्दर की हँसी पर तो सुधा का मिज़ाज और भी बिगड़ गया और अपनी क्रोशिया उठा कर और किताब बग़ल में

दवा कर, वह उठ कर अन्दर चल दी। उस के उठते ही चन्दर आराम से उस कुरसी पर बैठ गया और मेज़ पर टाँग फैला कर बोला—

"आज मुझे बहुत गुस्सा चढ़ा है, खबरदार कोई बोलना मत !"

सुधा जाते-जाते मुड़ कर खड़ी हो गयी।

"हम ने कह दिया चन्दर एक बार कि हमे ये सब बातें अच्छी नही लगती। जब देखो तुम चिढ़ाते रहते हो !" सुधा ने गुस्से से कहा।

"नही ! चिढ़ायेंगे नही तो पूजा करेंगे ! तुम अपने मौके पर छोड़ देती हो !" चन्दर ने उसी लापरवाही से कहा।

सुधा गयी नही। वही घास पर बैठ गयी और किताब खोल कर पढ़ने लगी। जब पाँच मिनिट तक वह कुछ नही बोली तो चन्दर ने सोचा आज बात कुछ गम्भीर है।

"सुधा !" उस ने बड़े दुलार से पुकारा। "सुधा !"

सुधा ने कुछ नही कहा मगर दो बड़े-बड़े आँसू टप से नीचे किताब पर गिर गये।

"अरे क्या बात है सुधा, नही बताओगी ?"

"कुछ नही।"

"बता दो तुम्हें हमारी क़सम है।"

"कल शाम को तुम आये नही···" सुधा रोनी आवाज़ में बोली।

"बस, इस बात पर इतनी नाराज़ हो पागल !"

"हाँ, इस बात पर इतनी नाराज़ हैं। तुम आओ चाहे हज़ार बार न आओ, इस पर हम क्यो नाराज़ होंगे। बड़े कही के आये, नही आयेंगे तो जैसे हमारा घर-बार नही है। अपने को जाने क्या समझ लिया है।" सुधा ने चिढ़ कर जवाब दिया।

"अरे तो तुम्ही तो कह रही थी भाई।" चन्दर ने हँस कर कहा।

"तो पूरी बात तो सुनो। शाम को गेसू का नौकर आया था। उस के छोटे भाई हसरत की सालगिरह थी। सुबह 'कुरानखानी' होने वाली थी

और उस की माँ ने बुलाया था।"

'तो गयी क्यों नहीं ?"

"गयी क्यों नहीं ! किस से पूछ कर जाती ? आप तो इस वक्त आ रहे हैं जब सब खत्म हो गया !" सुधा बोली।

"तो पापा से पूछ के चली जाती।" चन्दर ने समझा कर कहा— "और फिर गेसू के यहाँ तो यों ही अकसर जाती हो तुम !"

"तो ? आज तो डान्स भी करने के लिए कहा था उस ने। फिर बाद में तुम कहते, 'सुधा, तुम्हें ये नहीं करना चाहिए, वो नहीं करना चाहिए। लड़कियों को ऐसे रहना चाहिए, वैसे रहना चाहिए।' और बैठ के उपदेश पिलाते और नाराज होते। बिना तुम से पूछे हम कहीं सिनेमा, पिकनिक, जल्सों में गये हैं कभी ?" और फिर उस के आँसू टपक पड़े।

"पगली कहीं की ! इतनी-सी बात पर रोना क्या ? किसी के हाथ कुछ उपहार भेज दो और फिर किसी मौके पर चली जाना।"

"हाँ चली जाना ! तुम्हें कहते क्या लगता है। गेसू ने कितना बुरा माना होगा !" सुधा ने बिगड़ते हुए ही कहा। "फिर इम्तहान आ रहा है, फिर कब जायेंगे ?"

"कब है इम्तहान तुम्हारा ?"

"चाहे जब हो ! मुझे पढ़ाने के लिए कहा किसी से ?"

"अरे भूल गये ! अच्छा आज देखो कहेंगे।"

"कहेंगे-वहेंगे नहीं, आज दोपहर को आप बुला लाइए, वरना हम सब किताबों में लगाये देते हैं आग। समझे कि नहीं।"

"अच्छा, अच्छा आज दोपहर को बुला लायेंगे। ठीक, अच्छा याद आया बिसारिया से कहूँगा तुम्हें पढ़ाने के लिए। उसे रुपये की जरूरत भी है।" चन्दर ने छुटकारे का कोई रास्ता न पा कर कहा।

"आज दोपहर को जरूर से।" सुधा ने फिर आँखें नचा कर कहा।

"जरूर से, बावा, जरूर से !" चन्दर ने एक सन्तोष की सांस ले कर कहा।

"लो पापा आ गये नहा कर, जाओ !" चन्दर उठा और चल दिया।

सुधा उठी और अन्दर चली गयी।

डॉक्टर शुक्ला हलके-सांवले रंग के ज़रा स्थूलकाय से थे। बहुत गम्भीर अध्ययन, और अध्यापन और उम्र के साथ-साथ ही उन की नम्रता और भी बढ़ती जा रही थी। लेकिन वे लोगों से मिलते-जुलते कम थे। व्यक्तिगत दोस्ती उन की किसी से नहीं थी। लेकिन उत्तर भारत के प्रमुख विद्वान् होने के नाते कानफ्रेन्सों में, मौखिक परीक्षाओं में, सरकारी कमेटियों में वे बराबर बुलाये जाते थे और इस में बहुत दिलचस्पी से हिस्सा लेते थे। ऐसी जगहों में चन्दर अकसर उन का प्रमुख सहायक रहता था और इसी नाते चन्दर भी प्रान्त के बड़े-बड़े लोगों से परिचित हो गया था। जब से वह एम० ए० पास हुआ था तब से फाइनेन्स विभाग में उसे कई बार ऊंचे-ऊंचे पदों का 'ऑफर' आ चुका था लेकिन डॉ० शुक्ला इस के खिलाफ़ थे। वे चाहते थे कि पहले वह रिसर्च पूरी कर ले। सम्भव हो तो विदेश हो आये, तब चाहे कुछ काम करे। अपने व्यक्तिगत जीवन में डॉ० शुक्ला अन्तर्विरोधों के व्यक्ति थे। पार्टियों में मुसलमानों और ईसाइयों के साथ खाने में उन्हें कोई एतराज नहीं था लेकिन कच्चा खाना वे चौके में आसन पर बैठ कर रेशमी धोती पहन कर खाते थे। सरकार को उन्होंने सलाह दी थी कि साधु और सन्यासियों को जबर्दस्ती काम में लगाया जाये और मन्दिरों की जायदादें जब्त कर ली जायें लेकिन सुबह घण्टे-भर तक पूजा जरूर करते थे। पूजा-पाठ, खान पान, जात-पांत के पक्के हामी, लेकिन व्यक्तिगत जीवन में कभी यह नहीं जाना कि उस का कौन शिष्य ब्राह्मण है, कौन बनिया, कौन खत्री, कौन कायस्थ।

नहा कर वे आ रहे थे और दुर्गासप्तशती का कोई श्लोक गुनगुना रहे थे। कपूर को देखा तो रुक गये और बोले—"हलो, हो गया वह टाइप !"

"जी हाँ।"

"कहाँ कराया टाइप ?"

"मिस डिक्रूज के यहाँ।"

"अच्छा, वह लड़की अच्छी है ? अब तो बहुत बड़ी हुई होगी। अभी शादी नही हुई ? मैं ने तो सोचा वह मिले या न मिले !"

"नही, वह यही है। शादी हुई। फिर तलाक़ हो गया।"

"अरे ! तो अकेले रहती है ?"

"नही अपने भाई के साथ है, बर्टी के साथ !"

"अच्छा ! और बर्टी की पत्नी अच्छी तरह है ?"

"वह मर गयी।"

"राम राम, तब तो घर ही बदल गया होगा।"

"पापा, पूजा के लिए सब बिछा दिया है।" सहसा सुधा बोली।

"अच्छा बेटी, अच्छा चन्दर, मैं पूजा कर आऊं जल्दी से। तुम चाय पी चुके ?"

"जी हाँ।"

"अच्छा तो मेरी मेज पर एक चार्ट है जरा इस को ठीक तो कर दो तब तक। मैं अभी आया।"

चन्दर स्टडी रूम में गया और मेज पर बैठ गया। कोट उतार कर उस ने खूंटी पर टांग दिया और नक़्शा देखने लगा। पास में एक छोटी-सी चीनी की प्याली में चाइना इंक रखी थी और मेज पर पानी। उस ने दो बूंद पानी डाल कर चाइना इंक घिसनी शुरू की, इतने में सुधा कमरे में दाखिल—"ए सुनो !" उस ने चारो ओर देख कर बड़े सशंकित स्वरों में कहा और फिर झुक कर चन्दर के कान के पास मुँह लाकर कहा—"चावल की नानखटाई खाओगे ?"

"ये क्या बला है ?" चन्दर ने इंक घिसते-घिसते पूछा।

"बड़ी अच्छी चीज होती है, पापा को बहुत अच्छी लगती है। आज

५

हम ने सुबह अपने हाथ से बनायी थी। ऐं खाओगे ?" सुधा ने बड़े दुलार से पूछा।

"ले आओ।" चन्दर ने कहा।

"ले आये हम, लो !" और सुधा ने अपने आँचल में लिपटी हुई दो नानखटाई निकाल कर मेज़ पर रख दी।

"अरे तश्तरी में क्यों नही लायी ? और सब धोती में घी लग गया। इतनी बड़ी हो गयी, शऊर नही ज़रा-सा।" चन्दर ने बिगड़ कर कहा।

"छिपा कर के लाये हैं, फिर ये सकरी होती है कि नही ? चौके के बाहर कैसे लाते ! तुम्हारे लिए तो लाये हैं और तुम्ही बिगड़ रहे हो। 'अन्धे को नोन दो, अन्धा कहे मेरी आँखें फोड़ी।" सुधा ने मुँह बना कर कहा, "खाना है कि नही ?"

"हाथ में तो हमारे स्याही लगी है।" चन्दर बोला।

"हम अपने हाथ से नही खिलायेंगे, हमारा हाथ जूठा हो जायेगा और राम ! राम ! पता नही तुम रेस्टोराँ में मुसलमान के हाथ खाते होगे। थू-थू !"

चन्दर हँस पड़ा सुधा की इस बात पर और उस ने पानी में हाथ डुबोकर बिना पूछे सुधा के आँचल में हाथ पोंछ दिये स्याही के और बेतकल्लुफ़ी से उठा कर नानखटाई खाने लगा।

"बस, अब धोती का किनारा रंग दिया और यही पहनना है हमें दिन-भर।" सुधा ने बिगड़ कर कहा।

"खुद नानखटाई छिपा कर लायी और घी लग गया तो कुछ नही और हम ने स्याही पोंछ दी तो मुँह बिगड़ गया।" चन्दर ने मैपिंग पेन में इंक लगाते हुए कहा।

"हाँ, अभी पापा देखें तो और बिगड़े कि धोती में घी, स्याही सब लगाये रहती है। तुम्हें क्या ?" और उस ने स्याही लगा हुआ छोर कस कर कमर में खोंस लिया।

"छि, वही घी में तर छोर कमर में खोंस लिया। गन्दी कहीं की।" चन्दर ने चार्ट की लाइनें ठीक करते हुए कहा।

"गन्दी हैं तो, तुम से मतलब!" और मुँह चिढ़ाते हुए सुधा कमरे से बाहर चली गयी।

चन्दर चुपचाप बैठा चार्ट दुरुस्त करता रहा। उत्तर प्रदेश के पूर्वी ज़िलों—बलिया, आजमगढ़, बस्ती, बनारस आदि में बच्चों की मृत्यु-संख्या का ग्राफ़ बनाना था और एक ओर उन के नक्शे पर बिन्दुओं की सघनता से मृत्यु-संख्या का निर्देश करना था। चन्दर की एक आदत थी कि वह काम में लगता था तो भूत की तरह लगता था फिर उसे दीन-दुनिया, किसी की खबर नहीं रहती थी। खाना-पीना, तन-बदन, किसी का होश नहीं रहता था। इस का एक कारण था। चन्दर उन लड़कों में से था जिन की ज़िन्दगी बाहर से बहुत हलकी-फुलकी होते हुए भी अन्दर से बहुत गम्भीर और अर्थमयी होती है, जिन के सामने एक स्पष्ट उद्देश्य, एक लक्ष्य होता है। बाहर से चाहे जैसे होने पर भी अपने आन्तरिक सत्य के प्रति घोर ईमानदारी, यह इन लोगों की विशेषता होती है और सारी दुनिया के प्रति अगम्भीर और उच्छृंखल होने पर भी जो चीज़ें इन की लक्ष्यपरिधि में आ जाती हैं उन के प्रति उन की गम्भीरता, साधना और पूजा बन जाती है। इस लिए बाहर से इतना व्यक्तिवादी और सारी दुनिया के प्रति निरपेक्ष और लापरवाह दीख पड़ने पर भी वह अन्तरतम से समाज और युग और अपने आसपास के जीवन और व्यक्तियों के प्रति अपने को बेहद उत्तरदायी अनुभव करता था। वह देशभक्त भी था और शायद समाजवादी भी, पर अपने तरीक़े से। वह खद्दर नहीं पहनता था, कांग्रेस का सदस्य नहीं था, जेल नहीं गया था, फिर भी वह अपने देश को प्यार करता था। बेहद प्यार। उस की देशभक्ति, उस का समाजवाद, सभी उस के अध्ययन और खोज में समा गया था। वह यह जानता था कि समाज के सभी स्तम्भों का स्थान अपना अलग होता है। अगर सभी

मन्दिर के कंगूरे का फूल बनने की कोशिश करने लगें तो नींव की ईंट और सीढी का पत्थर कौन बनेगा ? और वह जानता था कि अर्थशास्त्र वह पत्थर है जिस पर समाज के सारे भवन का बोझ है। और उस ने निश्चय किया था कि अपने देश, अपने युग के आर्थिक पहलू को वह खूब अच्छी तरह से अपने ढग से विश्लेपण कर के देखेगा और उसे आशा थी कि वह एक दिन ऐसा समाधान खोज निकालेगा कि मानव की बहुत-सी समस्याएँ हल हो जायेंगी और आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में अगर आदमी आज खूँखार जानवर बन गया है तो एक दिन दुनिया उस की एक आवाज़ पर देवता बन सकेगी। इस लिए जब वह बैठ कर कानपुर की मिलों के मजदूरो के वेतन का चार्ट बनाता था, या उपयुक्त साधनो के अभाव में मर जाने वाले ग़रीब औरतो और बच्चो का लेखा-जोखा करता था तो उस के सामने अपना कैरियर, अपनी प्रतिष्ठा, अपनी डिग्री का सपना नही होता था। उस के मन में उस वक़्त वैसा सन्तोष होता था जो किसी पुजारी के मन में होता है जब वह अपने देवता को अर्चना के लिए धूप, दीप, नैवेद्य सजाता है। बल्कि चन्दर थोडा भावुक था, एक बार तो जब चन्दर ने अपने रिसर्च के सिलसिले में यह पढा कि अंग-रेज़ों ने अपनी पूँजी लगाने और अपना व्यापार फैलाने के लिए किस तरह मुर्शिदाबाद से ले कर रोहतक तक हिन्दोस्तान के ग़रीब से ग़रीब और अमीर से अमीर बाशिन्दे को अमानुषिकता से लूटा, तब वह फूट-फूट कर रो पडा था लेकिन इस के बावजूद भी उस ने राजनीति में कभी डूब कर हिस्सा नही लिया क्योंकि उस ने देखा कि उस के जो भी मित्र राजनीति में गये वे थोडे दिन बाद बहुत प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा पा गये मगर आदमी-यत खो बैठे।

अपने अर्थशास्त्र के बावजूद वह यह समझता था कि आदमी की ज़िन्दगी सिर्फ़ आर्थिक पहलू तक सीमित नही और वह यह भी समझता था कि जीवन को सुधारने के लिए सिर्फ़ आर्थिक ढाँचा बदल देने-भर को

जरूरत नही है। उस के लिए आदमी का सुधार करना होगा, व्यक्ति का सुधार करना होगा। वरना एक भरे-पुरे और वैभवशाली समाज में भी आज के से अस्वस्थ और पाशविक वृत्तियो वाले व्यक्ति रहेंगे तो दुनिया ऐसी ही लगेगी जैसे एक खूबसूरत सजा-सजाया महल जिस में कीडे और राक्षस रहते हो।

वह यह भी समझता था कि वह जिस तरह की दुनिया का सपना देखता, वह दुनिया आज किसी भी एक राजनीतिक क्रान्ति या किसी भी विशेष पार्टी की सहायता मात्र से नही बन सकती है। उस के लिए आदमी को अपने को बदलना होगा, किसी समाज को बदलने से काम नही चलेगा। इस लिए वह अपने व्यक्ति के सस्कार में निरन्तर लगा रहता था और समाज के आर्थिक पहलू को समझने की कोशिश करता रहता था। यही कारण है कि अपने जीवन में आनेवाले व्यक्तियो के प्रति वह बेहद ईमानदार रहता था और अपने अध्ययन और काम के प्रति वह सचेत और जागरूक रहता था और वह अच्छी तरह समझता था कि इस तरह वह दुनिया को उस ओर बढने में थोडी-सी मदद कर रहा है। चूंकि अपने मे भी वह सत्य की वही चिनगारी पाता था इस लिए कवि या दार्शनिक न होते हुए भी वह इतना भावुक, इतना दृढ-चरित्र, इतना सशक्त और इतना गम्भीर था और काम तो अपना वह इस तरह करता था जैसे वह किसी की एकाग्र उपासना कर रहा हो। इस लिए जब वह चार्ट के नक्शे पर कलम चला रहा था तो उसे मालूम ही नही हुआ कि कितनी देर से डॉ॰ शुक्ला आ कर उस के पीछे खडे हो गये।

"वाह, नक्शे पर तो तुम्हारा हाथ बहुत अच्छा चलता है। बहुत अच्छा! अब उसे रहने दो, लाओ देखें तुम्हारा काम कैसा चल रहा है? आज तो इतवार है न?"

डॉ॰ शुक्ला पास की कुरसी पर बैठ कर बोले—"चन्दर! आजकल मै एक किताब लिखने की सोच रहा हूं। मैंने सोचा है कि भारतवर्ष

की जाति व्यवस्था का नये वैज्ञानिक ढग से अव्ययन और विश्लेपण किया जाये। तुम इस के वारे मे क्या सोचते हो ?"

"व्यर्थ है। जो व्यवस्था आज नही तो कल चूर-चूर होने जा रही है उस के वारे में तूमार वॉंधना और समय वर्वाद करना वेकार है।" चन्दर ने वहुत आत्मविश्वास से कहा।

"यही तो तुम लोगो में खरावी है। कुछ थोडी-सी खरावियाँ जाति व्यवस्था की देख ली और उस के खिलाफ़ हो गये। एक रिसर्च स्कॉलर का दृष्टिकोण ही दूसरा होना चाहिए। फिर हमारे भारत की प्राचीन सास्कृतिक परम्पराओ को तो वहुत ही सावधानी से समझने की आवश्यकता है। यह समझ लो कि मानवजाति दुर्वल नही है। अपने विकास-क्रम में वह उन्ही सस्थाओ, रीति-रिवाजो और परम्पराओं को रहने देती है जो उस के अस्तित्व के लिए वहुत आवश्यक होती है। अगर वे आवश्यक न हुई तो मानव उन से छुटकारा माँग लेता है। यह *जाति-व्यवस्था जाने कितने सालो से हिन्दोस्तान में क़ायम है, क्या* यही इस वात का प्रमाण नही कि यह वहुत सशक्त है, अपने में वहुत जरूरी है!"

"अरे हिन्दोस्तान की भली चलायी।" चन्दर वोला—"हिन्दोस्तान में तो गुलामी इतने दिनो से क़ायम है तो क्या वह भी ज़रूरी है।"

"विलकुल ज़रूरी।" डॉ० शुक्ला वोले—"मुझे भी हिन्दोस्तान पर गर्व है। मैंने कभी कांग्रेस का काम किया, लेकिन मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि ज़रा-सी आज़ादी अगर मिलती है हिन्दोस्तानियो को, तो वे उस का भरपूर दुरुपयोग करने से वाज़ नही आते और कभी भी ये लोग अच्छे शासक नही निकलेंगे।"

"अरे नही! ऐसी वात नही। हिन्दोस्तानियो को ऐसा वना दिया है अँगरेज़ो ने। वरना हिन्दोस्तान ने ही तो चन्द्रगुप्त और अशोक पैदा किये

थे। और रही जाति-व्यवस्था की बात तो मुझे तो स्पष्ट दीख रहा है कि जाति-व्यवस्था टूट रही है।" कपूर बोला—"रोटी-बेटी की कैद थी। रोटी की कैद तो करीब-करीब टूट ही गयी अब बेटी की कैद भी · व्याह शादियाँ भी दो-एक पीढी के बाद स्वच्छन्दता से होने लगेंगी।"

अगर ऐसा होगा तो बहुत गलत होगा। इस से जातिगत पतन होता है। व्याह-शादी को कम से कम मैं भावना की दृष्टि से नही देखता। यह एक सामाजिक तथ्य है और उसी दृष्टिकोण से हमें देखना चाहिए। शादी में सब से बडी बात होती है सास्कृतिक समानता। और जब अलग-अलग जाति मे अलग-अलग रीति-रिवाजें है तो एक जाति की लडकी दूसरी जाति मे जा कर कभी भी अपने को ठीक से सन्तुलित नही कर सकती। और फिर एक बनिया की व्यापारिक प्रवृत्तियो की लडकी और एक ब्राह्मण का अध्ययन वृत्ति का लडका, इन की सन्तान न इधर विकास कर सकती है न उधर। यह तो सामाजिक व्यवस्था को व्यर्थ के लिए असन्तुलित करना हुआ।"

"हाँ, लेकिन विवाह को आप केवल समाज के दृष्टिकोण से क्यो देखते है? व्यक्ति के दृष्टिकोण से भी देखिए। अगर दो विभिन्न जाति के लडके-लडकी अपना मानसिक सन्तुलन ज्यादा अच्छा कर सकते है तो क्यो न विवाह की इजाजत दी जाये!"

'ओह, एक व्यक्ति के झुकाव के लिए हम समाज को क्यो नुक़सान पहुँचावे! और इस का क्या निश्चय कि विवाह के समय यदि दोनो में मानसिक सन्तुलन है तो विवाह के बाद भी रहेगा ही। मानसिक सन्तुलन और प्रेम जितना अपने मन पर आधारित होता है उतना ही बाहरी परिस्थितियो पर। क्या जाने व्याह के वक्त की परिस्थितियो का दोनो के मन पर कितना प्रभाव है और उस के बाद सन्तुलन रह पाता है या नही? और मै ने तो लव-मैरिजेज (प्रेम-विवाह) को असफल ही होते देखा है। होते है या नही?" डॉ० शुक्ला ने कहा।

"हाँ प्रेम-विवाह अकसर असफल होते हैं, लेकिन सम्भव है वह प्रेम न होता हो। जहाँ सच्चा प्रेम होगा वहाँ कभी असफल विवाह नहीं होंगे।" चन्दर ने बहुत साहस कर के कहा।

"ओह! ये सब साहित्य की बातें हैं। समाजशास्त्र की दृष्टि से या वैज्ञानिक दृष्टि से देखो! अच्छा खैर, अभी मैं ने उस की रूप-रेखा बनायी है। लिखूँगा तो तुम सुनते चलना। लाओ वह निबन्ध कहाँ है!" डॉ० शुक्ला बोले।

चन्दर ने उन्हें टाइप की हुई प्रतिलिपि दे दी। उलट-पुलट कर डॉ० शुक्ला ने देखा और कहा—"ठीक है! अच्छा चन्दर, अपना काम इधर ठीक-ठाक कर लो अगले इतवार को लखनऊ कॉन्फ्रेंस में चलना है।"

"अच्छा! क्या कार पर चलेंगे या ट्रेन से?"

"ट्रेन से। अच्छा," घड़ी देखते हुए उन्होंने कहा—"अब जरा मैं काम से चल रहा हूँ। तुम यह चार्ट बना डालो और एक निबन्ध लिख डालना 'पूर्वी जिलों में शिशु मृत्यु।' प्रान्त के स्वास्थ्य विभाग ने एक पुरस्कार घोषित किया है।"

डॉ० शुक्ला चले गये। चन्दर ने फिर चार्ट में हाथ लगाया।

चन्दर के जाने के जरा ही देर बाद पापा आये और खाने बैठे। सुधा ने रसोई की रेशमी धोती पहनी और पापा को पखा झलने बैठ गयी। सुधा अपने पापा की सिरचढ़ी दुलारी बिटियों में से थी और इतनी बड़ी हो जाने पर भी वह दुलार दिखाने से बाज नहीं आती थी। फिर आज तो

उस ने पापा की प्रिय नानखटाई अपने हाथ से बनायी
दुलार दिखाने का उस का हक था और भली-बुरी हर तर
मंजूर करना, यह पापा की मजबूरी थी।

मुश्किल से डॉ० साहब ने अभी दो कौर खाये हे...

कहा—"नानखटाई खाओ पापा!"

डॉ० शुक्ला ने एक नानखटाई तोड कर खाते हुए कहा—"बहुत अच्छी है।" खाते-खाते उन्होने पूछा—"सोमवार को कौन दिन है सुधा!"

"सोमवार को कौन दिन है?" सोमवार को 'मण्डे' है।" सुधा ने हँस कर कहा। डॉ० शुक्ला भी अपनी भूल पर हँस पडे। "अरे देख तो मैं कितना भुलक्कड हो गया हूँ। मेरा मतलब था कि सोमवार को कौन तारीख है।"

"११ तारीख।" सुधा बोली—"क्यो?"

"कुछ नही, १० को कॉन्फ्रेंस है और १४ को तुम्हारी बुआ आ रही है।"

"बुआ आ रही है, और बिनती भी आयेगी?"

"हाँ, उसी को तो पहुँचाने आ रही है। विदुषी का केन्द्र यही तो है।"

"आ हा! तब तो बिनती तीन-महीने यही रहेगी, पापा अब बिनती को यही बुला लो। मैं बहुत अकेली रहती हूँ।"

"हाँ अब तो जून तक यही रहेगी। फिर जुलाई में उस की शादी होगी।" डॉ० शुक्ला ने कहा।

"अरे, अभी से, अभी उस की उम्र ही क्या है।" सुधा बोली।

"क्यो, तेरे ही बराबर है। अब तेरे लिए भी तेरी बुआ ने लिखा है।

"नही पापा, हम ब्याह नही करेगे।" सुधा ने मचल कर कहा।

"तब?"

"वस हम पढ़ेंगे। एफ० ए० कर लें, फिर वी० ए०, फिर एम० ए०, फिर रिसर्च, फिर वरावर पढ़ते जायेंगे, फिर एक दिन हम भी तुम्हारे वरावर हो जायेंगे। क्यों पापा ?"

"पागल नही तो, वातें तो सुनो इस की। ला दो नानखटाई और दे।" शुक्ला ने हँस कर वोले।

"नही, पहले तो कवूल दो तव हम नानखटाई देंगे। वताओ व्याह तो नही करोगे।" सुधा ने दो नानखटाइयाँ हाथ में उठा कर कहा।

"ला रख।"

"नही पहले वता दो।"

"अच्छा-अच्छा नही करेंगे।"

सुधा ने दोनो नानखटाइयाँ रख कर पखा हाँकना शुरू किया। इतने में फिर नानखटाइयाँ खाते हुए डॉ० शुक्ला वोले—"तेरी सास तुझे देखने आयेगी तो यही नानखटाइयाँ तुझ से वनवा कर खिलायेंगे।"

"फिर वही वात" सुधा ने पखा पटक कर कहा—"अभी तुम वादा कर चुके हो कि व्याह नही करोगे।"

"हाँ, हाँ, व्याह नही करूँगा, यह तो कह दिया मैं ने। लेकिन तेरा व्याह नही करूँगा यह मैं ने कव कहा।"

"हाँ आँ, ये तो फिर झूठ वोल गये तुम··· ··" सुधा वोली।

"अच्छा ए चलो ओहर।" महराजिन ने डाँट कर कहा—"एतो वडी विटिया हो गयी, मारे दुलार के वररानी जात है।" महराजिन पुरानी थी और सुधा को डाँटने का पूरा हक़ था उसे, और सुधा भी उस का वहुत लिहाज़ करती थी। वह उठी और चुपचाप जा कर अपने कमरे में लेट गयी। १२ वज रहे थे।

वह लेटी-लेटी कल रात की वात सोचने लगी। क्लास में क्या मज़ा आया था कल, गेसू कितनी अच्छी लडकी है। इस वक्त गेसू के यहाँ खाना-पीना हो रहा होगा और फिर सव लोग मिल कर गायेंगे। कौन

जाने शायद दोपहर को कव्वाली भी हो। इन लोगो के यहाँ कव्वाली इतनी अच्छी होती है। सुधा नही सुन पायेगी और गेसू ने भी कितना बुरा माना होगा। और यह सब सिर्फ चन्दर की वजह से। चन्दर हमेशा उस के आने-जाने, उठने बैठने मे कतर-ब्योत करता रहता है। एक बार वह अपने मन से लडकियो के साथ पिकनिक में चली गयी। वही चन्दर के बहुत-से दोस्त भी थे। एक दोस्त ने जा कर चन्दर से जाने क्या कह दिया कि चन्दर उस पर बहुत बिगडा। और सुधा कितनी रोयी थी उस दिन। यह चन्दर बहुत खराब है। सच पूछो तो अगर कभी-कभी वह सुधा का कहना मान लेता है तो उस से दुगुना सुधा पर रोब जमाता है और सुधा को रुला-रुला कर मार डालता है। और खुद अपने-आप दुनिया-भर मे घूमेंगे। अपना काम होगा तो "चलो सुधा, अभी करो, फौरन।" और सुधा का काम होगा तो—"अरे भाई, क्या करें भूल गये।" अब आज ही देखो, सुबह ८ बजे आये। और अब देखो दो बजे भी जनाब आते है या नही? और कह गये है दो बजे तक के लिए तो अब दो बजे तक सुधा को चैन नही पडेगी। न नीद आयेगी, न किसी काम में तबीयत लगेगी। लेकिन अब ऐसे काम कैसे चलेगा। इम्तहान को कितने थोडे दिन रह गये है। और सुधा की तबीयत सिवा पोयट्री (कविता) के और कुछ पढने मे लगती ही नही। कब से वह चन्दर से कह रही है थोडा-सा इकनॉमिक्स पढा दो, लेकिन ऐसा स्वार्थी है कि बस चाय पी ली, नानखटाई खा ली, रुला लिया और फिर अपने मस्त साइकिल पर घूम रहे है।

यही सब सोचते-सोचते सुधा को नीद आ गयी।

और तीन बजे जब गेसू आयी तो भी सुधा सो रही थी। पलग के नीचे टी० एम० सी० का गोला खुला हुआ था और तकिये के पास क्रोशिया पडी थी। सुधा थी बडी प्यारी। बडी खूबसूरत। और खासतौर से उस की पलकें तो अपराजिता के फूलो को मात करती थी। और थी इतनी

गोरी गुदकारी कि कहीं पर दबा तो फूल खिल जाये। मूँगिया होंठों पर जाने कैसा अछूता गुलाब मुसकराता था और बाँहें तो जैसे बेले की पाँखुरियों की बनी हों। गेसू आयी। उस के हाथ में मिठाई थी जो उस की माँ ने सुधा के लिए भेजी थी। वह पल-भर खड़ी रही फिर उस ने मेज़ पर मिठाई रख दी और क्रोशिया से सुधा की गरदन गुदगुदाने लगी। सुधा ने करवट बदल ली। गेसू ने नीचे पड़ा हुआ डोरा उठाया और आहिस्ते से उस का चुटीला डोरे के एक छोर में बाँध कर दूसरा छोर मेज़ के पाये में बाँध दिया। और उस के बाद बोली—"सुधा, सुधा उठो।"

सुधा चौंक कर उठ गयी आँख मलते-मलते बोली—"अब दो बजे हैं? लाये उन्हें या नहीं।"

"ओहो। उन्हें लाये या नहीं। किसे बुलवाया था रानी दो बजे, ज़रा हमें भी तो मालूम हो?" गेसू ने बाँह में चुटकी काटते हुए पूछा।

"उफ़्फ़ोह" सुधा बाँह झटक कर बोली—"मार डाला! बेदर्द कहीं-की? ये सब अपने उन्हीं अख़्तर मियाँ को दिखाया कर!" और ज्यों ही सुधा ने सर ढँकने के लिए पल्ला उठाया तो देखा कि चोटी डोर में बँधी हुई है। इस के पहले कि सुधा कुछ कहे, गेसू बोली—"या सनम! ज़रा पढ़ाई तो देखो, मैं ने तो सुना था कि नींद न आये इस लिए लड़के अपनी चोटी खूँटी में बाँध लेते हैं पर यह नहीं मालूम था कि लड़कियाँ भी अब वही करने लगी हैं।"

सुधा ने चोटी से डोर खोलते हुए कहा—"मैं ही सताने को रह गयी हूँ। अख़्तर मियाँ की चोटी बाँध कर नचाना उन्हें। अभी से बेताब क्यों हुई जाती है?"

"अरे रानी, उन के चोटी कहाँ? मियाँ हैं मियाँ!"

"चोटी न सही, दाढ़ी सही।"

"दाढ़ी, ख़ुदा ख़ैर करे, अगर वो दाढ़ी रख लें तो मैं उन से मोहब्बत तोड़ लूँ।"

सुधा हँसने लगी।

"ले अम्मी ने तेरे लिए मिठाई भेजी है। तू आयी क्यों नहीं ?"

"क्या बताऊँ ?"

"बताऊँ-बताऊँ कुछ नहीं। अब कब आयेगी तू ?"

'गेसू, सुनो इसी मंगल, नहीं-नहीं बृहस्पति को बुआ आ रही हैं। वो चली जायेंगी तब आऊँगी मैं।"

"अच्छा अब मैं चलूँ। अभी कामिनी और प्रभा के यहाँ मिठाई पहुँचानी है।" गेसू मुड़ते हुए बोली।

"अरे बैठो भी।" सुधा ने गेसू की ओढ़नी पकड़ कर उसे खींच कर बिठलाते हुए कहा—"अभी आये हो, बैठे हो, अभी दामन सम्हाला है।"

"आहा! अब तो तू भी उर्दू शायरी कहने लगी।" गेसू ने बैठते हुए कहा।

"तेरा ही मर्ज लग गया।" सुधा ने हँस कर कहा।

"देख कहीं और भी मर्ज न लग जाये, वरना फिर तेरे लिए भी इन्तज़ाम करना होगा!" गेसू ने पलँग पर लेटते हुए कहा।

"अरे ये वो गुड़ नहीं कि चींटे खायें।"

"देखूँगी, और देखूँगी क्या, देख रही हूँ। इधर पिछले दो साल से कितनी बदल गयी है तू। पहले कितना हँसती-बोलती थी, कितना लड़ती-झगड़ती थी और अब कितनी हँसने-बोलने पर भी गुमसुम हो गयी है तू। और वैसे हमेशा हँसती रहे चाहे लेकिन जाने किस खयाल में डूबी रहती है हमेशा।" गेसू ने सुधा की ओर देखते हुए कहा।

"धत् पगली कहीं की।" सुधा ने गेसू के एक हलकी-सी चपत मार कर कहा—"यह सब तेरे अपने खयाली-पुलाव है। मैं किसी के ध्यान में रहूँगी ये हमारे गुरु ने नहीं सिखाया।"

"गुरु तो किसी के नहीं सिखाते सुधा रानी, बिलकुल सच-सच, क्या कभी तुम्हारे मन में किसी के लिए मोहब्बत नहीं जागी ?" गेसू ने बहुत

गम्भीरता से पूछा।

"देख गेसू, तुझ से मैं ने आज तक तो कभी कुछ नहीं छिपाया न शायद कभी छिपाऊँगी। अगर कभी कोई बात होती तो तुझ से छिपी न रहती और रहा मुहब्बत का, तो सच पूछ तो मैं ने जो कुछ कहानियों में पढा है कि किसी को देख कर मैं रोने लगूँ, हँसने लगूँ, गाने लगूँ, पागल हो जाऊँ, यह सब कभी मुझे नहीं हुआ। और रही कविताएँ तो उन में की बातें मुझे बहुत अच्छी लगती हैं। कीट्स की कविताएँ पढ कर ऐसा लगा है अकसर कि मेरी नसों का कतरा-कतरा आंसू बन कर छलकने वाला है। लेकिन वह महज़ कविता का असर होता है।"

"महज़ कविता का असर," गेसू ने पूछा, "कभी किसी खास आदमी के लिए तेरे मन में हँसी या आँसू नहीं उमडते! कभी अपने मन को जाँच कर तो देख, कहीं तेरी नाज़ुक-खयाली के परदे में किसी एक की सूरत तो नहीं छिपी है।"

"नहीं गेसूबानो नहीं, इस में मन को जाँचने की क्या बात है। ऐसी बात होती और मन किसी के लिए झुकता तो क्या खुद मुझे नहीं मालूम होता?" सुधा बोली—"लेकिन तुम ऐसा क्यों सोचती हो?"

"बात यह है सुधी!" गेसू ने सुधा को अपनी गोद में खींचते हुए कहा—"देखो, तुम मुझ से इल्म में ऊँची हो, तुम ने अँगरेज़ी शायरी छान ली है लेकिन ज़िन्दगी से जितना मुझे साबिक़ा पड चुका है, अभी तुम्हें नहीं पडा। अकसर कब, कहाँ और कैसे मन अपने को हार बैठता है, यह खुद हमें पता नहीं लगता। मालूम तब होता है जब जिस के कदम पर हमने सर रखा है वह झटके से अपने कदम घसीट ले। उस वक्त हमारी नींद टूट जाती है और तब हम जा कर देखते हैं कि अरे हमारा सर तो किसी के कदमों पर रखा हुआ है और उन के सहारे आराम से सोते हुए हम सपना देख रहे थे कि हमारा सर कहीं झुका ही नहीं। और मुझे जाने तेरी आँखों में इधर क्या दीख रहा है कि मैं बेचैन हो उठी हूँ। तूने कभी

कुछ नही कहा, लेकिन मैं ने देखा कि नाजुक अशआर तेरे दिल को उस जगह छू लेते है जिस जगह उसी को छू सकते है जो अपना दिल किसी के कदमो पर चढा चुका हो। और मैं यह नही कहती कि तू ने मुझ से छिपाया है। कौन जानता है तेरे दिल ने खुद तुझ से यह राज छिपा रखा हो।" और सुधा के गाल थपथपाते हुए गेसू बोली—' लेकिन मेरी एक बात मानेगी तू ? तू कभी इस दर्द को मोल न लेना। बहुत तकलीफ होती है।"

सुधा हँसने लगी—"तकलीफ की क्या बात ? तू तो है ही। तुझ से पूछ लूँगी उन का इलाज।"

"मुझ से पूछ कर क्या कर लेगी—

"दर्दे दिल क्या बाँटने की चीज़ है ?"
बाँट लें अपने पराये दर्दे दिल ?"

नही, तू बडी सुकुंवार है। तू इन तकलीफो के लिए बनी नही। मेरी चम्पा !" और गेसू ने उस का सर अपनी छाती में छिपा लिया।

टन से घडी ने साढे तीन बजाये।

सुधा ने अपना सर उठाया और घडी की ओर देख कर कहा—

"ओफ्फोह, साढे तीन बज गये और अभी तक गायब !"

"किस के इन्तज़ार में बेताब है तू ?" गेसू ने उठ कर पूछा।

' बस दर्दे दिल, मुहब्बत, इन्तज़ार, बेताबी, तेरे दिमाग़ में तो यही सब भरा रहता है आजकल, वही तू सब को समझती है। इन्तज़ार-विन्तज़ार नही, चन्दर अभी मास्टर ले कर आयेंगे। अब इम्तहान कितना नज़दीक है।"

"हाँ ये तो सच है, और अभी तक मुझ से पूछ क्या पढाई हुई है। असल बात तो यह है कि कालेज मे पढाई हो तो घर में पढने में मन लगे और गर्ल्स-कालेज में पढाई नही होती। इस से अच्छा सीधे युनिवर्सिटी से बी० ए० करते तो अच्छा था। मेरी तो अम्मी ने कहा कि वहाँ लडके

पढ़ते हैं, वहाँ नहीं भेजूँगी, लेकिन तू क्यों नहीं गयी सुधा !"

"मुझे भी चन्दर ने मना कर दिया था।" सुधा बोली।

सहसा गेसू ने एक क्षण को सुधा की ओर देखा और कहा—"सुधी, तुझ से एक बात पूछूँ !"

"हाँ।"

"अच्छा जाने दे !"

"पूछो न !"

"नहीं, पूछना क्या ख़ुद ज़ाहिर है।"

"क्या ?"

"कुछ नहीं।"

"पूछो न !"

"अच्छा फिर कभी पूछ लेंगे ! अब देर हो रही है। आधा घण्टा हो गया। कोचवान बाहर खड़ा है।"

सुधा गेसू को पहुँचाने बाहर तक आयी।

"कभी हसरत को ले कर आओ।" सुधा बोली।

"अब पहले तुम आओ।" गेसू ने चलते-चलते कहा।

"हाँ, हम तो बिनती को ले कर आयेंगे। और हसरत से कह देना तभी उस के लिए तोहफ़ा लायेंगे !"

"अच्छा सलाम ..."

और गेसू की गाड़ी मुश्किल से फाटक के बाहर गयी होगी कि साइकिल पर चन्दर आते हुए दीख पड़ा। सुधा ने बहुत ग़ौर से देखा कि उस के साथ कौन है, मगर वह अकेला था।

सुधा सचमुच झल्ला गयी। आख़िर लापरवाही की हद है। चन्दर को दुनिया-भर के काम याद रहते हैं, एक सुधा से जाने क्या खार खाये बैठा है वह कि सुधा का काम कभी नहीं करेगा। इस बात पर सुधा कभी-कभी दुःखी हो जाती है और घर में किस से वह कहे काम के लिए।

खुद कभी बाजार नही जाती। नतीजा यह होता है कि वह छोटी से छोटी चीज़ के लिए मोहताज हो कर बैठ जाती है। और काम नौकरो से करवा भी ले, पर अब मास्टर तो नौकर से नही ढुँढवाया जा सकता। ऊन तो नौकर नही पसन्द कर सकता। किताबें तो नौकर नही ला सकता और चन्दर का यह हाल है। इसी बात पर कभी-कभी उसे रुलाई आ जाती है।

चन्दर ने आ कर बरामदे में साइकिल रखी और सुधा का चेहरा देखते ही वह समझ गया। "काहे मुँह बना रखा है, पाँच बजे मास्टर साहब आयेंगे तुम्हारे। अभी उन्ही के यहाँ से आ रहे है। बिसरिया को जानती हो, वही आयेंगे।" और उस के बाद चन्दर सीधा स्टडी रूम में पहुँच गया। वहाँ जा कर देखा तो आरामकुरसी पर बैठे-ही-बैठे डॉ० शुक्ला सो रहे है अत उस ने अपना चार्ट और पेन उठाया और ड्राइड्रूम में आ कर चुपचाप काम करने लगा।

बड़ा गम्भीर था वह। जब इंक घोलने के लिए उस ने सुधा से पानी नही मागा और खुद गिलास ला कर आँगन में पानी लेने लगा, तब सुधा समझ गयी कि आज दिमाग़ कुछ बिगडा है। वह एकदम तड़प उठी। क्या करे वह! वैसे चाहे वह चन्दर से कितना ही ढीठ क्यो न हो पर जब चन्दर गुस्सा रहता था तब सुधा की रूह काँप उठती थी। उस की हिम्मत नही पड़ती थी कि वह कुछ भी कहे। लेकिन अन्दर-ही-अन्दर वह इतनी परेशान हो उठती थी कि बस।

कई बार वह किसी-न-किसी बहाने से ड्राइड्रूम में आयी, कभी गुलदस्ता बदलने, कभी मेज़पोश बदलने, कभी अलमारी में कुछ रखने, कभी अलमारी में से कुछ निकालने, लेकिन चन्दर अपने चार्ट में ही निगाह गड़ाये रहा। उस ने सुधा की ओर देखा तक नही। सुधा की आँख में आँसू छलक आये और वह चुपचाप अपने कमरे में चली गयी और लेट गयी। थोड़ी देर वह पड़ी रही फिर पता नही क्यो वह फूट-फूट कर रो

पडी। खूब रोयी खूब रोयी और फिर मुँह धो कर आ कर पढने की कोशिश करने लगी। जब हर अक्षर मे उसे चन्दर का उदास चेहरा नज़र आने लगा तो उस ने किताब बन्द कर के रख दी और ड्राइंगरूम में गयी। चन्दर ने चार्ट बनाना भी बन्द कर दिया था और कुरसी पर सिर टेके छत की ओर देखता हुआ जाने क्या सोच रहा था।

वह जा कर सामने बैठ गयी तो चन्दर ने चौंक कर सिर उठाया और फिर चार्ट को सामने खिसका लिया। सुधा ने बडी हिम्मत कर के कहा—"चन्दर !"

"क्या !" बडे भर्राये गले से चन्दर बोला।

"इधर देखो !" सुधा ने बहुत दुलार से कहा।

"क्या है !" चन्दर ने उधर देखते हुए कहा—"अरे सुधा ! तुम रो क्यों रही हो ?"

"हमारी बात पर नाराज़ हो गये तुम। हम क्या करे, हमारा स्वभाव ही ऐसा हो गया। पता नही क्यों तुम पर इतना गुस्सा आ जाता है।" सुधा के गाल पर दो बडे-बडे मोती ढलक आये।

"अरे पगली ! मालूम होता है तुम्हारा तो दिमाग बहुत जल्दी खराब हो जायेगा, हम ने तुम से कुछ कहा है ?"

"कह लेते तो हमें सन्तोष हो जाता। हम ने कभी कहा तुम से कि तुम कहा मत करो। गुस्सा मत हुआ करो। मगर तुम तो फिर गुस्सा मन-ही-मन में छिपाने लगते हो। इसी पर हमें रुलाई आ जाती है।"

"नही सुधी, तुम्हारी बात नही थी। और हम गुस्सा भी नही थे। पता नहीं क्यो मन बडा भारी-सा था।"

"क्या बात है, अगर बता सको तो बताओ, वरना हम कौन हैं तुम से पूछने वाले।" सुधा ने बडे करुण स्वर में कहा।

"तो तुम्हारा दिमाग़ खराब हुआ। हम ने कभी तुम से कोई बात छिपायी है ? जाओ, अच्छी लडकी की तरह पहले मुँह धो आओ।"

सुधा उठी और मुँह धो कर आ कर बैठ गयी।

"अब बताओ क्या बात थी?"

"कोई एक बात हो तो बतायें। पता नही तुम्हारे घर से गये तो एक-न-एक ऐसी बात होती गयी कि मन बडा उदास हो गया।"

"आखिर फिर भी कोई बात तो हुई ही होगी।"

"बात यह हुई कि तुम्हारे यहाँ से मैं घर गया खाना खाने। वहाँ देखा चाचा जी आये हुए हैं, उन के साथ एक कोई साहब और हैं। खैर बडी खुशी हुई। खाना-वाना खा कर जब बैठे तब मालूम हुआ कि चाचा जी मेरा ब्याह तय करने के लिए आये हैं और साथ वाले साहब मेरे होने वाले ससुर हैं। जब मैंने इनकार कर दिया तो बहुत बिगड कर चले गये और बोले हम आज से तुम्हारे लिए मर गये और तुम हमारे लिए मर गये।"

"तुम्हारी माता जी कहाँ हैं?"

"परतापगढ मे, लेकिन वो तो सौतेली हैं और वे तो चाहती ही नही कि मैं घर लौटूँ, लेकिन चाचा जी जरूर आज तक मुझ से कुछ मुहब्बत करते थे। आज वह भी नाराज होकर चले गये।"

सुधा कुछ देर तक सोचती रही, फिर बोली—"तो चन्दर तुम शादी कर क्यो नही लेते?"

"नही सुधा, शादी नही करनी है मुझे। मैंने देखा कि जिन की शादी हुई कोई भी सुखी नही हुआ। सभी का भविष्य बिगड गया। और क्यो एक तवालत पाली जाये? जाने कैसी लडकी हो, क्या हो?"

"तो इस मे क्या? पापा से कहो उस लडकी को जा कर देख लें। हम भी पापा के साथ चले जायेंगे। अच्छी हो तो कर लो न चन्दर! फिर नही रहना। हमे अकेला भी नही लगेगा। क्यो?"

"नही जी, तुम तो समझती नही हो। जिन्दगी निभानी है कि कोई गाय-भैंस खरीदना है।" चन्दर ने हँस कर कहा—"आदमी एक-दूसरे को

समझे, बूझे, प्यार करे, तब व्याह के भी कोई माने है।"

"तो उसी से कर लो जिस से प्यार करते हो!"

चन्दर ने कुछ जवाब नही दिया।

"बोलो! चुप क्यो हो गये! अच्छा तुम ने किसी को प्यार किया है चन्दर!"

"क्यो?"

"बताओ न!"

"शायद नही।"

"बिलकुल ठीक, हम भी यही सोच रहे थे अभी।" सुधा बोली।

"क्यो, ये क्यो सोच रही थी?"

"इस लिए कि तुम ने किया होता तो तुम हम से थोडे ही छिपाते, हम से जरूर बताते, और नही बताया तो हम समझ गये कि अभी तुम ने किसी से प्यार नही किया।"

"लेकिन तुम ने यह पूछा क्यों सुधा! यह बात तुम्हारे मन में उठी कैसे?"

"कुछ नही अभी गेसू आयी थी। वह बोली—सुधा, तुम ने किसी से कभी प्यार किया है, असल में वह अख्तर को प्यार करती है। उस से उस का व्याह होने वाला है। हाँ तो उस ने पूछा कि तू ने किसी से प्यार किया है, हम ने कहा, नही। बोली, तू अपने से छिपाती है। तो हम मन ही-मन में सोचते रहे कि तुम आओगे तो तुम से पूछेंगे कि हम ने कभी प्यार तो नही किया है। क्योकि तुम्ही एक हो जिस से हमारा मन कभी कोई बात नही छिपाता, अगर कोई बात छिपायी भी होती हम से, तो तुम से जरूर बता देता। फिर हम ने सोचा शायद कभी हम ने प्यार किया हो और तुम से बताया हो, फिर हम भूल गये हो। अभी उसी दिन देखा। हम पापा की दवाई का नाम भूल गये और तुम्हें याद रहा। शायद हम भूल गये हो और तुम्हें मालूम हो। कभी हम ने प्यार तो नही किया न?"

"नही, हमें तो कभी नही वताया।" चन्दर वोला।

"तव तो हम ने प्यार-वार नही किया। गेसू यूँ ही गप्प उडा रही थी।" सुधा ने सन्तोष की सांस ले कर कहा—"लेकिन वस चाचा जी के नाराज होने पर तुम इतने दुःखी हो गये हो! हो जाने दो नाराज़। पापा तो है अभी, क्या पापा मुहब्बत नही करते तुम से?"

"सो क्यो नही करते, तुम से ज्यादा मुझ से करते है लेकिन उन की वात से मन तो भारी हो ही गया। उस के वाद गये विसरिया के यहाँ। विसरिया ने कुछ बड़ी अच्छी कविताएँ सुनायी। और भी मन भारी हो गया।" चन्दर ने कहा।

"तो तव तो चन्दर तुम प्यार करते होगे! जरूर से?" सुधा ने हाथ पटक कर कहा।

"क्यो?"

गेसू कह रही थी शायरी पर जो उदास हो जाता है वह जरूर मुहब्बत-मुहब्बत करता है।" सुधा ने कहा—"अरे यह पोर्टिको में कौन है?"

चन्दर ने देखा—"लो विसरिया आ गया।"

चन्दर उसे बुलाने उठा तो सुधा ने कहा—"अभी वाहर विठलाना उन्हें, मैं तब तक कमरा ठीक कर लूँ।"

विसरिया को वाहर विठा कर चन्दर भीतर आया, अपना चार्ट वगैरह समेटने के लिए तो सुधा ने कहा—"सुनो!"

चन्दर रुक गया।

सुधा ने पास आकर कहा—"तो अव तो उदास नही हो तुम। नही चाहते मत करो शादी, इस मे उदास क्या होना। और कविता-उविता पर मुँह बनाकर बैठे तो अच्छी वात नही होगी।"

"अच्छा" चन्दर ने कहा।

"अच्छा-वच्छा नही, वताओ, तुम्हें मेरी कसम है, उदास मत हुआ

करो फिर हम से कोई काम नही होता ।"

"अच्छा उदास नही होगे, पगली !" चन्दर ने हलकी-सी चपत मार-कर कहा और वरवस उस के मुँह से एक ठण्डी साँस निकली । उस ने चार्ट उठाकर स्टडी रूम में रखा । देखा डॉक्टर साहव अभी सो ही रहे हैं । सुधा कमरा ठीक कर रही थी । वह आकर विसरिया के पास बैठ गया ।

थोडी देर मे कमरा ठीक कर के सुधा आ कर दरवाज़े पर खडी हो गयी । चन्दर ने पूछा—"क्यो, सब ठीक है ?"

उस ने सिर हिला दिया कुछ वोली नही ।

"यही है आप की शिष्या, श्री सुधा शुक्ला । इस साल वी० ए० फाइनल का इम्तहान देंगी ।"

विसरिया ने बिना आँखें उठाये ही हाथ जोड लिया । सुधा ने हाथ जोडे फिर वहुत सकुचा-सी गयी । चन्दर उठा और विसरिया को लाकर उस ने अन्दर विठा दिया । विसरिया के सामने सुधा और उस की वगल में चन्दर ।

चुप । सभी चुप ।

अन्त मे चन्दर वोला—"लो तुम्हारे मास्टर साहव आ गये । अब वताओ न तुम्हें क्या-क्या पढना है ?"

सुधा चुप । विसरिया कभी यह पुस्तक उलटता, कभी वह । थोडी देर वाद वह वोला—

"आप के क्या विपय हैं ?"

"जी !" वडी कोशिश से वोलते हुए सुधा ने कहा—"हिन्दी, इकनॉ-मिक्स और गृह-विज्ञान ।" और उस के माथे पर पसीना झलक आया ।

"आप को हिन्दी कौन पढाता है ?" विसरिया ने किताव में ही निगाह गडाये हुए कहा ।

सुधा ने चन्दर की ओर देखा और मुसकरा कर फिर मुँह झुका लिया ।

"बोलो न तुम खुद, ये राजा गर्ल्स कॉलेज में है। शायद मिस पवार हिन्दी पढाती है।" चन्दर ने कहा—"अच्छा अब आप पढाइए, मैं अपना काम करूँ।" चन्दर उठ कर चल दिया स्टडी रूम में। मुश्किल से चन्दर दरवाज़े तक पहुँचा होगा कि सुधा ने बिसरिया से कहा—

"जी, मैं पेन ले आऊँ!" और लपकती हुई चन्दर के पास पहुँची।

"ए सुनो चन्दर", चन्दर रुक गया और उस का कुरता पकड कर छोटे बच्चों की तरह मचलते हुए सुधा बोली—"तुम चल कर बैठो तो हम पढेंगे। ऐसे शरम लगती है।"

"जाओ चलो! हर वक्त वही बचपना!" चन्दर ने डाँट कर कहा—"चलो पढो सीधे से। इतनी बडी हो गयी अभी तक वही आदतें!"

सुधा चुपचाप मुँह लटका कर खडी हो गयी और फिर धीरे-धीरे पढने चली गयी। चन्दर स्टडी रूम में जा कर चार्ट बनाने लगा। डॉक्टर साहब अभी तक सो रहे थे। एक मक्खी उड कर उन के गले पर बैठ गयी और उन्हो ने बायें हाथ से मक्खी मारते हुए नींद में कहा—"मैं इस मामले में सरकार की नीति का विरोध करता हूँ।"

चन्दर ने चौंक कर पीछे देखा। डॉक्टर साहब जग गये थे और जमुहाई ले रहे थे।

"जी आप ने कुछ मुझ से कहा?" चन्दर ने पूछा।

"नहीं, क्या मैं ने कुछ कहा था? ओह! मैं सपना देख रहा था। कै बज गये?"

"साढे पाँच।"

"अरे बिलकुल शाम हो गयी!" डॉक्टर साहब ने बाहर देख कर कहा—"अब रहने दो कपूर, आज काफ़ी काम किया है तुम ने। चाय मँगवाओ। सुधा कहाँ है?"

"पढ रही है। आज से उस के मास्टर साहब आने लगे है।"

"अच्छा, अच्छा जाओ उन्हें भी बुला लाओ, और चाय भी मँगवा

लो। उसे भी बुला लो—सुधा को।"

चन्दर जब ड्राइङ् रूम में पहुँचा तो देखा सुधा किताबें समेट रही है और बिसरिया जा चुका है। उस ने सुधा से कहना चाहा लेकिन सुधा का मुँह देखते ही उस ने अनुमान किया कि सुधा लडने के मूड में है, अत वह स्वय ही जा कर महराजिन से कह आया कि तीन प्याला चाय पढने के कमरे में भेज दो। जब वह लौटने लगा तो खुद सुधा ही उस के रास्ते में खडी हो गयी और धमकी के स्वर में बोली—"अगर कल से साथ नही बैठोगे तुम, तो हम नही पढेंगे।"

"हम साथ नही बैठ सकते, चाहे तुम पढो या न पढ़ो।" चन्दर ने ठण्डे स्वर में कहा और आगे बढा।

"तो फिर हम नही पढेंगे।" सुधा ने जोर से कहा।

"क्या बात है? क्यो लड रहे हो तुम लोग?" डॉ० शुक्ला अपने कमरे से बोले। चन्दर कमरे में जा कर बोला, "कुछ नही, ये कह रही हैं कि··"

"पहले हम कहेंगे", बात काट कर सुधा बोली—"पापा, हम ने इन से कहा कि तुम पढाते वक्त बैठा करो, हमें बहुत शरम लगती है, ये कहते हैं पढो चाहे न पढ़ो, हम नही बैठेंगे।"

"अच्छा, अच्छा, जाओ चाय लाओ।"

जब सुधा चाय लाने गयी तो डॉक्टर साहब बोले—"कोई विश्वास-पात्र लडका है? अपने घर की लडकी समझ कर सुधा को सौंपना पढने के लिए। सुधा अब बच्ची नही है।"

"हाँ, हाँ, अरे ये भी कोई कहने की बात है!"

"हाँ, वैसे अभी तक सुधा तुम्हारी ही निगहबानी में रही है। तुम खुद ही अपनी जिम्मेवारी समझते हो। लडका हिन्दी में एम० ए० है?"

"हाँ, एम० ए० कर रहा है।"

"अच्छा है, तब तो बिनती आ रही है उसे भी पढा देगा।"

सुधा चाय ले कर आ गयी थी।

"पापा, तुम लखनऊ कब जाओगे ?"

"शुक्रवार को, क्यों ?"

"और ये भी जायेंगे ?"

"हाँ।"

"और हम अकेले रहेंगे ?"

"क्यों, महराजिन यहीं सोयेगी और अगले सोमवार को हम लौट आयेंगे।"

डॉ० शुक्ला ने चाय का प्याला मुँह में लगाते हुए कहा।

एक गमकदे की शाम, मन उदास, तबीयत उचटी-सी सितारों की रोशनी फीकी लग रही थी। मार्च की शुरूआत थी और फिर भी जाने शाम इतनी गरम थी, या सुधा को ही इतनी बेचैनी लग रही थी। पहले वह जा कर सामने की लॉन में बैठी लेकिन सामने के मौलसिरी के पेड़ में छोटी-छोटी गौरैयों ने मिल कर इतनी जोर से चहचहाना शुरू किया कि उस की तबीयत घबड़ा उठी। वह इस वक्त एकान्त चाहती थी और सब से बढ़ कर सन्नाटा चाहती थी जहाँ कोई न बोले, कोई न बात करे, सभी खामोशी में डूबे हुए हों।

वह उठ कर टहलने लगी। और जब लगा कि पैरों में ताक़त ही नहीं रही तो फिर लेट गयी, हरी-हरी घास पर। मंगलवार की शाम थी और अभी तक पापा नहीं आये थे। आना तो दूर वह पापा या चन्दर के हाथ

के एक पुरजे के लिए तरस गयी थी। किसी ने यह भी नही लिखा कि वे लोग कहाँ रह गये हैं, या कब तक आयेंगे। किसी को भी सुधा का खयाल नही। शनिवार या इतवार को तो वह रोज खाना खाते वक्त रोयी, चाय पीना तो उस ने उसी दिन से छोड दिया था और सोमवार को सुबह पापा नही आये तो वह इतना फूट-फूट कर रोयी कि महराजिन को सिकती हुई रोटी छोड कर चूल्हे की आँच निकाल कर सुधा को समझाने आना पडा। और सुधा की रुलाई देख कर तो महराजिन के हाथ-पाँव ढीले हो गये थे। उस की सारी डाँट हवा हो गयी थी और वह सुधा का मुँह-ही-मुँह देखती थी। कल से वह कॉलेज भी नही गयी थी और दोनो दिन इन्तजार करती रही कि कही दोपहर को पापा न आ जायें। गेसू से भी दो दिन से मुलाकात नही हुई थी।

लेकिन मगल को दोपहर तक जब कोई खबर न आयी तो उस की घबराहट बेकाबू हो गयी। इस वक्त उस ने बिसरिया से भी कोई बात नही की। आधे घण्टे पढने के बाद उस ने कहा कि उस के सिर में दर्द हो रहा है और उस के बाद खूब रोयी खूब रोयी। उस के बाद उठी, चाय पी, मुँह-हाथ धोया और सामने के लॉन में टहलने लगी। और फिर लेट गयी हरी-हरी घास पर।

बडी ही उदास शाम थी और क्षितिज की लाली के होठ भी स्याह पड गये थे। बादल साँस रोके पडे थे और खामोश सितारे टिमटिमा रहे थे। बगलो की धुँधली-धुँधली कतारें पर मारती हुई गुजर रही थीं। सुधा ने एक लम्बी साँस लेकर सोचा कि अगर वह चिडिया होती तो एक क्षण में उड कर जहाँ चाहती वहाँ की खबरें ले आती। पापा इस वक्त घूमने गये होंगे। चन्दर अपने दोस्तो की टोली में बैठा रगरेलियाँ कर रहा होगा। वहाँ भी दोस्त बना ही लिये होंगे उस ने। बडा बातूनी है चन्दर और बडा मीठे स्वभाव का। आज तक किसी से सुधा ने उस की बुराई नही सुनी। सभी उस को प्यार करते थे। यहाँ तक की महराजिन,

जो सुधा को हमेशा डांटती रहती थी चन्दर का हमेशा पक्ष लेती थी। और सुधा हरेक से पूछ लेती थी कि चन्दर के वारे में उस को क्या राय है ? लेकिन सव लोग जितनी चन्दर की तारीफ करते वह उतना अच्छा उसे नही समझती थी। आदमी की परख तव होती है जव दिन-रात कोई वरते। चन्दर उस का ऊन कभी नही ला देता था, वादामी रग का रेशम मँगाओ तो केसरिया रग का ला देता था। इतने नकशे वनाता रहता था, और सुधा ने हमेशा उस से कहा कि मेज़पोश की कोई डिजाइन वना दो तो उस ने कभी नही वनायी। एक वार सुधा ने वहुत अच्छी वायल कानपुर से मँगवायी और चन्दर ने कहा—"लाओ, ये तो वहुत अच्छी हैं इस पर हम किनारे की डिज़ाइन वना देंगे।" और उस के वाद उस ने उस में तमाम पान-जैसा जाने क्या वना दिया और जब सुधा ने पूछा—"ये क्या है ?" तो वोला—"लका का नक़शा है।" तव सुधा विगडी तो वोला—"लडकियो के हृदय में रावण से ले कर मेघनाद तक करोडो राक्षसो का वास होता है, इस लिए उन की पोशाक में लका का नकशा सव से सुशोभित होता है।" मारे गुस्से के सुधा ने वह धोती अपनी मालिन को दे डाली थी। यह सव वातें तो किसी को मालूम नही। उन के सामने तो ज़रा-सा कपूर साहव हँस दिये, चार मज़ाक की वातें कर दी, छोटे-मोटे उन के काम कर दिये, मीठी-मीठी वातें कर ली और सव समझे कपूर साहव तो विलकुल गुलाव के फूल हैं। लेकिन कपूर साहव एक तेज़ तीखे काँटे हैं जो दिन-रात सुधा के मन में चुभते रहते हैं, यह तो दुनिया को नही मालूम। दुनिया क्या जाने कि सुधा कितनी परेशान रहती है चन्दर की आदतो से। अगर दुनिया को मालूम हो जाये तो कोई चन्दर की ज़रा भी तारीफ न करे, सव सुधा को ही ज्यादा अच्छा कहें, लेकिन सुधा कभी किसी से कुछ नही कहती, मगर आज उस का मन हो रहा था कि किसी से चन्दर की जी भर कर वुराई कर ले तो उस का मन वहुत हलका हो जाये।

"चलो बिटिया रानी, तई खाय लेव, फिर भीतर लेटौ। अबहिन बाहर लेटे का वखत नही आवा !" सहसा महराजिन ने आ कर सुधा की स्वप्न-शृंखला तोडते हुए कहा।

"अब हम नही खायेंगे, भूख नही।" सुधा ने अपने सुनहले सपनों मे ही डूबी हुई बेहोश आवाज़ में जवाब दिया।

"खाय लेव बिटिया, खाय पियैं छोडैं से कसत काम चली, आव उठौ !" महराजिन ने बहुत दुलार से कहा। सुधा, पीछा छूटने की कोई आशा न देख कर उठ गयी और चल दी खाने। कौर उठाते ही उस की आँख में आँसू छलक आये, लेकिन अपने को रोक लिया उस ने। दूसरो के सामने अपने को बहुत शान्त रखना आता था उसे। दो कौर खाने के बाद वह महराजिन से बोली—"आज कोई चिट्ठी तो नही आयी ?"

"नही बिटिया, आप तो दिन भर घरै में रह्यो !" महराजिन ने पराठे उलटते हुए जवाब दिया—"काहे बिटिया, बाबू जी कुछौ नाही लिखिन तो छोटे बाबू तो लिख देतें।"

"अरे महराजिन यही तो हमारी जान का रोना है। हम चाहे रो-रो कर मर जायें मगर न पापा को खयाल, न पापा के शिष्य को। और चन्दर तो ऐसे खराब है कि हम क्या करें। ऐसे स्वार्थी हैं, अपने मतलब के कि बस ! सुबह-शाम आयें और हम या पापा न मिलें तो आफत ढा देंगे, बहुत घूमने लगी हो तुम, बहुत बाहर कदम निकल गया है तुम्हारा र सच पूछो तो चन्दर की वजह से हम ने सब जगह आना-जाना बन्द र दिया और खुद है कि आज लखनऊ, कल कलकत्ता और एक चिट्ठी फ भेजने का वक्त नही मिला ! अभी हम ऐसा करते तो हमारी जान नोच खाते ! और पापा को देखो, उन के दुलारे उन के साथ है तो बस और किसी की फिक्र नही। अब तुम महराजिन, चन्दर को तो कभी कुछ चाय-वाय बना के मत देना।"

"काहे बिटिया, काहे कोसत हो। कैसा चाँद-से तो है छोटे बाबू,

और कैसा हँस के बातें करत हैं। माई का जाने कैसे हियाव पडा कि उन्हे अलग कै दिहिस। बेचारा होटल में जाने कैसे रोटी खात होई। उन्हें हियई बुलाय लेव तो हम अपने हाथ की खिलाय के दुई महीना माँ मोटा कै देई। हमें तो से ज्यादा उन की ममता लगत है।"

"बीबी जी, बाहर एक ठो मेम पूछत है हिया कोनो डाकदर रहत हैं, हम कहा नाही हिया तो बाबू जी रहत हैं तो कहत हैं, नही यही मकान आय।" मालिन ने सहसा आ कर बहुत सन्त्रस्त स्वरो में कहा।

"बैठाओ उन्हें, हम आते है।" सुधा ने कहा और जल्दी-जल्दी खाना शुरू किया और जल्दी-जल्दी खत्म कर दिया।

बाहर जा कर उस ने देखा तो नीलकाँटे के झाड से टिकी हुई एक बाइसिकिल रखी थी और एक ईसाई लडकी लॉन पर टहल रही है। होगी करीब चौबीस-पचीस बरस की, लेकिन बहुत अच्छी लग रही थी।

"कहिए आप किसे पूछ रही है ?" सुधा ने अँगरेजी मे पूछा।

"मैं डॉक्टर शुक्ला से मिलने आयी हूँ।" उस ने शुद्ध हिन्दोस्तानी में कहा।

"वे तो बाहर गये है और कब आयेंगे कुछ पता नही। कोई खास काम है आप को ?" सुधा ने पूछा।

"नही, यूँ ही मिलने आ गयी। आप उन की लडकी हैं ?" उस ने साइकिल उठाते हुए कहा।

"जी, हाँ, लेकिन अपना नाम तो बताती जाइए।"

"मेरा नाम कोई महत्त्वपूर्ण नही। मैं उन से मिल लूँगी। और हाँ, आप उसे जानती हैं, मिस्टर कपूर को ?"

"आहा ! आप पम्मी हैं, मिस डिक्रूज !" सुधा को एकदम खयाल आ गया—"आइए, आइए, हम आप को ऐसे नही जाने देंगे। चलिए, बैठिए।" सुधा ने बडी बेतकल्लुफी से उस की साइकिल पकड ली।

"अच्छा, अच्छा चलो !" कह कर पम्मी जा कर ड्राइङ्रूम में बैठ गयी।

"मिस्टर कपूर रहते कहाँ हैं ?" पम्मी ने बैठने के पहले पूछा।

"रहते तो ये चौक में हैं, लेकिन आजकल तो वे भी पापा के साथ बाहर गये हैं। वे तो आप की एक दिन बहुत तारीफ कर रहे थे, बहुत तारीफ। इतनी तारीफ किसी लडकी की करते तो हम ने सुना नही।"

"सचमुच !" पम्मी का चेहरा लाल हो गया। "वह बहुत अच्छे हैं, बहुत अच्छे हैं !"

थोडी देर पम्मी चुप रही, फिर बोली—"क्या बताया था उन्हों ने हमारे बारे में ?"

"ओह तमाम ! एक दिन शाम को तो हम लोग आप ही के बारे में बातें करते रहे। आप के भाई के बारे में बताते रहे। फिर आप के काम के बारे में बताया कि आप कितना तेज टाइप करती हैं, फिर आप की रुचियो के बारे मे बताया कि आप को साहित्य से बहुत शौक नही है और आप शादी से बेहद नफरत करती हैं और आप ज्यादा मिलती-जुलती नही, बाहर आती-जाती नही और मिस डिक्रूज "

"न, आप पम्मी कहिए मुझे !"

"हाँ तो मिस पम्मी, शायद इसी लिए आप उसे इतनी अच्छी लगी कि आप कही आती-जाती नही, वह लडकियो का आना-जाना और आज़ादी बहुत नापसन्द करता है।" सुधा बोली।

"नही, वह ठीक सोचता है।" पम्मी बोली—"मैं शादी और [illegible] के बाद इसी नतीजे पर पहुँची हूँ कि चौदह बरस से चौंतीस बरस तक लडकियो को बहुत शासन में रखना चाहिए।" पम्मी ने गम्भीरता से कहा।

एक ईसाई मेम के मुँह से यह बात सुन कर सुधा दंग रह गयी।

"क्यो ?" उस ने पूछा।

"इस लिए कि इस उम्र में लडकियाँ बहुत नादान होती हैं और जो कोई भी चार मीठी बातें करता है, तो लडकियाँ समझती है कि उस से

ज्यादा प्यार उन्हें कोई नही करता । और इस उम्र मे जो कोई भी ऐरा-गैरा उन के ससर्ग मे आ जाता है उसे वे प्यार का देवता समझने लगती है और नतीजा यह होता है कि वे ऐसे जाल में फँस जाती है कि जिन्दगी भर उस से छुटकारा नही मिलता । मेरा तो यह विचार है कि या तो लडकियां चौंतीस बरस के बाद शादियां करे जब वे अच्छा-बुरा समझने के लायक हो जायें और नही तो मुझे तो हिन्दुओ का कायदा सब से ज्यादा पसन्द आता है कि चौदह बरस के पहले ही लडकी की शादी कर दी जाये और उस के बाद उस का ससर्ग उसी आदमी से रहे जिस से उन्हें जिन्दगी-भर निवाह करना है और अपने विकास-क्रम में दोनो ही एक-दूसरे को समझते चले । लेकिन यह तो सब से भद्दा तरीक़ा है कि चौदह और चौंतीस बरस के बीच में लडकी की शादी हो, या उसे आज़ादी दी जावे । मैं ने तो स्वय अपने ऊपर बन्धन बाँध लिये थे । तुम्हारी तो शादी अभी नही हुई ?"

"नही ।"

"बहुत ठीक, तुम चौंतीस बरस क पहले शादी मत करना, अच्छा हाँ और क्या बताया चन्दर ने मेरे बारे में ?"

"और तो कुछ खास नही, हाँ यह कह रहा था आप को चाय और सिगरेट बहुत अच्छी लगती हैं । ओहो, देखिए मैं भूल ही गयी, लीजिए सिगरेट मँगवाती हूँ ।" और सुधा ने घण्टी बजायी ।

"रहने दीजिए, मैं सिगरेट छोड रही हूँ ।"

"क्यो ?"

"इस लिए कि कपूर को अच्छा नही लगता और अब वह मेरा दोस्त बन गया है, और दोस्ती मे एक दूसरे से निवाह ही करना पडता है । उस ने आप से यह नही बताया कि मैं ने उसे दोस्त मान लिया है ?" पम्मी ने पूछा ।

'जी हाँ, बताया था, अच्छा तो चाय तो लीजिए ।"

सुन्दर आँखें हैं। माफ़ करना मैं कपूर से भी इतनी ही वेतकल्लुफ़ हूँ।"

सुधा झेंप गयी। उस ने आँखें नीची कर ली।

पम्मी ने अपनी साइकिल उठाते हुए कहा—"कपूर के साथ आप आइएगा। और आप ने कहा था कपूर को कविता पसन्द है।"

"जी, हाँ, गुड नाइट।"

जब पम्मी बँगले पहुँची तो उस की साइकिल के कैरियर में अँगरेज़ी कविता के पाँच-छह ग्रन्थ बँधे थे।

आठ बज चुके थे। सुधा जा कर अपने बिस्तर पर लेट कर पढ़ने लगी। अँगरेज़ी कविता पढ़ रही थी। अँगरेज़ी लड़कियाँ कितनी आज़ाद और स्वच्छन्द होती होंगी जब पम्मी जो ईसाई है इतनी आज़ाद है, उस ने सोचा। और पम्मी कितनी अच्छी है। उस की बेतकल्लुफ़ी में भोलापन तो नहीं है, पर सरलता बेहद है। बड़ी साफ़ दिल है, कुछ छिपाना नहीं जानती। और सुधा से सिर्फ़ पाँच-छह साल बड़ी है, लेकिन सुधा उस के सामने बच्ची लगती है। कितना जानती है पम्मी और कितनी अच्छी समझ है उस की। और चन्दर की तारीफ़ करते नहीं थकती। चन्दर के लिए उस ने सिगरेट छोड़ दी। चन्दर उस का दोस्त है, इतनी पढ़ी-लिखी लड़की के लिए भी रोशनी का देवदूत है। सचमुच चन्दर पर सुधा को गर्व है। और उसी चन्दर से यह लड़-झगड़ लेती है, इतनी मान-मनुहार कर लेता है और चन्दर सब बर्दाश्त कर लेता है वरना चन्दर के इतने बड़े-बड़े दोस्त हैं और चन्दर की इतनी इज़्ज़त है। अगर चन्दर चाहे तो सुधा की रत्ती-भर परवाह न करे लेकिन चन्दर सुधा की भली-बुरी हर बात बर्दाश्त कर लेता है। और यह कितना परेशान करती रहती है चन्दर को।

कभी अगर सचमुच चन्दर बहुत नाराज़ हो गया और सचमुच हमेशा के लिए बोलना छोड़ दे तब क्या होगा? या चन्दर यहाँ से कहीं चला जाये तब क्या होगा? ख़ैर चन्दर जायेगा तो नहीं इलाहाबाद छोड़ कर,

गुनाहों का देवता

लेकिन अगर वह खुद कही चली गयी तब क्या होगा ? वह कहां जायेगी ! अरे पापा को मनाना बाये हाथ का खेल है, और ऐसा प्यार वह करेगी नही कि शादी करनी पडे ।

लेकिन यह तो सब ठीक है । पर चन्दर ने चिट्ठी क्यो नही भेजी ? क्या नाराज़ हो कर गया है ? जाते वक्त सुधा ने परेशान तो बहुत किया था । होलडॉल की पेटी का बक्सुआ खोल दिया था और उठाते ही चन्दर के हाथ से सब कपडे बिखर गये । चन्दर कुछ बोला नही लेकिन जाते समय उस ने सुधा को डांटा भी नही और न यही समझाया कि घर का खयाल रखना, अकेले घूमना मत, महराजिन से लडना मत, पढती रहना । इस से सुधा समझ तो गयी थी कि वह नाराज़ है, लेकिन कुछ कहा नही ।

लेकिन चन्दर को खत तो भेजना चाहिए था । चाहे गुस्से का ही खत क्यो न होता ? बिना खत के मन उस का कितना घबरा रहा है । और क्या चन्दर को मालूम नही होगा । यह कैसे हो सकता है ? जब इतनी दूर बैठे हुए सुधा को मालूम हो गया कि चन्दर नाखुश है तो क्या चन्दर को नही मालूम होगा कि सुधा का मन उदास हो गया है । ज़रूर मालूम होगा । सोचते-सोचते उसे जाने कब नीद आ गयी और नीद में उसे पापा या चन्दर की चिट्ठी मिली या नही, यह तो नही मालूम, लेकिन इतना ज़रूर है कि जैसे यह सारी सृष्टि एक बिन्दु से बनी और एक बिन्दु में समा गयी, उसी तरह सुधा की यह भादो की घटाओ-जैसे फैली हुई घनी और गीली उदासी एक चन्दर के ध्यान से उठी और उसी में समा गयी ।

दूसरे दिन सुबह सुधा आँगन में बैठी हुई आलू छील रही थी और चन्दर का इन्तजार कर रही थी। उसी दिन रात को पापा आ गये थे और दूसरे दिन सुबह बुआ जी और बिनती।

"सुधी!" किसी ने इतने प्यार से पुकारा कि हवाओं में रस भर गया।

"अच्छा! आ गये चन्दर!" सुधा आलू छोड़ कर उठ बैठी, "क्या लाये हमारे लिए लखनऊ से?"

"बहुत कुछ सुधा!"

"के है सुधा!" सहसा कमरे में से कोई बोला।

"चन्दर हैं।" सुधा ने कहा "चन्दर, बुआ आ गयी।"

और कमरे से बुआ जी बाहर आयी।

"प्रणाम बुआ जी!" चन्दर बोला और पैर छूने के लिए झुका।

"हाँ, हाँ, हाँ!" बुआ जी तीन कदम पीछे हट गयी। "देखत्यो नै हम पूजा की धोती पहने हैं। ई के हैं सुधा!"

सुधा ने बुआ की बात का कुछ जवाब नहीं दिया—"चन्दर चलो अपने कमरे में, यहाँ बुआ पूजा करेंगी।"

चन्दर अलग हटा। बुआ ने हाथ के पचपात्र से वहाँ पानी छिड़का और ज़मीन फूँकने लगी। "सुधा, बिनती को भेज देव।" बुआ जी ने धूपदानी में महराजिन से कोयला लेते हुए कहा।

सुधा अपने कमरे में पहुँच कर चन्दर को खाट पर बिठा कर नीचे बैठ गयी।

"अरे, ऊपर बैठो।"

"नहीं, हम यहीं ठीक हैं।" कह कर वह बैठ गयी और चन्दर के पैण्ट पर पेन्सिल की लकीरें खींचने लगी।

"अरे ! यह क्या कर रही हो ?" चन्दर ने पैर उठाते हुए कहा ।

"तो तुमने इतने दिन क्यों लगाये ?" सुधा ने दूसरे पांयचे पर पेन्सिल लगाते हुए कहा ।

"अरे बड़ी आफत में फँस गये थे सुधा ! लखनऊ से हम लोग गये बरेली । वहाँ एक उत्सव में हम लोग भी गये और एक मिनिस्टर भी पहुँचे । कुछ सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट और मज़दूरों ने विरोधी पदर्शन किया । फिर तो पुलिस वालों और मज़दूरों मे जम कर लड़ाई हुई । वह तो कहो एक बेचारा सोशलिस्ट लड़का था कैलास मिश्रा, उस ने हम लोगों की जान बचायी, वरना पापा और हम, दोनों ही अस्पताल मे होते··· "

"अच्छा ! पापा ने हमें कुछ बताया नहीं !" सुधा घबड़ा कर बोली और बड़ी देर तक बरेली उपद्रव और कैलास मिश्रा की बात करती रही ।

"अरे ये बाहर गा कौन रहा है ?" चन्दर ने सहसा पूछा ।

बाहर कोई गाता हुआ आ रहा था—"आँचल में क्यों बाँध लिया मुझ परदेशी का प्यार आँचल में क्यों ··" और चन्दर को देखते ही उस लड़की ने चौंक कर कहा, "अरे ?" क्षण-भर स्तब्ध, और फिर शरम से लाल होकर भागी बाहर ।

"अरे, भागती क्यों है ? यही तो है चन्दर ।" सुधा ने कहा ।

लड़की बाहर रुक गयी और गरदन हिला कर इशारे से कहा, "मैं नहीं आऊँगी । मुझे शरम लगती है ।"

"अरे चली आ, देखो हम अभी पकड़ लाते हैं, बड़ी झक्की है, यह ।" कह कर सुधा उठी, वह फिर भागी । सुधा पीछे-पीछे भागी । थोड़ी देर बाद सुधा अन्दर आयी तो सुधा के हाथ में उस लड़की की चोटी और वह बेचारी बुरी तरह अस्त-व्यस्त थी । दाँत से अपने आँचल का छोर दबाये हुए थी, बाल की तीन-चार लटें मुँह पर झुक रही थी

और लाज के मारे सिमटी जा रही थी और आंख थो कि मुसकरायें यह तय ही नही कर पाती थी।

"देखो ''चन्दर देखो।" सुधा हांफ रही थी—"यही है बिनती मोटकी कही की, इतनी मोटी है कि दम निकल गया हमारा।" सुधा बुरी तरह हांफ रही थी।

चन्दर ने देखा—बेचारी की बुरी हालत थी। मोटी तो बहुत नही थी पर हां गांव की तन्दुरुस्ती थी, लाल चेहरा, जिसे शरम ने तो दूना बना दिया था। एक हाथ से अपनी चोटी पकडे थी, दूसरे हाथ से अपने कपडे ठीक कर रही थी और दांत से आंचल पकडे।

"छोड दो उसे, यह क्या है सुधा! बडी जगली हो तुम।" चन्दर ने डांट कर कहा।

"जगली मैं हूं या यह?" चोटी छोड कर सुधा बोली—"यह देखो दांत काट लिया है इस ने।" सचमुच सुधा के कन्धे पर दांत के निशान बने हुए थे।

चन्दर इस सम्भावना पर बेतहाशा हंसने लगा कि इतनी बडी लडकी दांत काट सकती है—"क्यो जी इतनी बडी हो और दांत काटती हो?" उस की हंसी रुक नही रही थो। सचमुच यह तो बडे मज़े की लडकी है। "बिनती है इसका नाम? क्यो रे महुआ बिनती थी क्या वहां, जो बुआजी ने बिनती नाम रखा है?"

वह पल्ला ठीक से ओढ चुकी थी। बोली—"नमस्ते।"

चन्दर और सुधा दोनो हंस पडे। "अब इतनी देर बाद याद आयी।" चन्दर और भी हंसने लगा।

"बिनती! ए बिनती!" बुआ की आवाज़ आयी। बिनती ने सुधा की ओर देखा और चली गयी।

"और कहो सुधी," चन्दर बोला—"क्या हाल-चाल रहा यहां?"

"फिर भी एक चिट्ठी भी तो नही लिखी तुमने।" सुधा बोली

शिकायत के स्वर में बोली—"हमे रोज रुलाई आती थी। और तुम्हारी वो आयी थी।"

"हमारी वो ?" चन्दर ने चौंक कर पूछा।

"अरे हाँ, तुम्हारी पम्मो रानी।"

"अच्छा, वो आयी थी। क्या बात हुई ?"

"कुछ नही, तुम्हारी तसवीर देख-देख कर रो रही थी।" सुधा ने उँगलियाँ नचाते हुए कहा।

"मेरी तसवीर देख कर! अच्छा, और थी कहाँ मेरी तसवीर ?"

"अब तुम तो बहस करने लगे, हम कोई वकील है। तुम कोई नयी बात बताओ।" सुधा बोली।

"हम तो तुम्हें बहुत-बहुत-सी बात बतायेंगे। पूरी कहानी है।"

इतने में विनती आयी। उस के हाथ में एक तश्तरी थी और एक गिलास। तश्तरी में कुछ मिठाई थी, और गिलास में शरबत। उस ने ला कर तश्तरी चन्दर के सामने रख दी।

"ना भई, हम नही खायेंगे।" चन्दर ने इन्कार किया।

विनती ने सुधा की ओर देखा।

"खा लो। लगे नखरा करने। लखनऊ से आ रहे है न, तकल्लुफ न करें तो मालूम कैसे हो ?" सुधा ने मुँह चिढाते हुए कहा। चन्दर मुसकरा कर खाने लगा।

"दीदी के कहने पर खाने लगे आप!" विनती ने अपने हाथ की अँगूठी की ओर देखते हुए कहा।

चन्दर हँस दिया कुछ बोला नही। विनती चली गयी।

"बड़ी अच्छी लड़की मालूम पडती है यह।" चन्दर बोला।

"बहुत प्यारी है। और पढने मे हमारी तरह नही है, बहुत तेज है।"

"अच्छा। तुम्हारी पटाई कैसी चल रही है ?"

"मास्टर साहब बहुत अच्छा पढाते हैं। और चन्दर, अब हम खूब बात करते हैं उन से दुनिया-भर की और वे बस हमेशा सर नीचे किये रहते हैं। एक दिन पढते वक्त हम गरी पास में रख कर खाते गये, उन्हें मालूम ही नही हुआ। उन से कविता सुनवा दो एक दिन।" सुधा बोली।

चन्दर ने कुछ जवाब नही दिया और डॉ० साहब के कमरे में जा कर किताबे उलटने लगा।

इतने में बुआजी का तेज़ स्वर आया—"हमे मालूम होता कि ई मुँहझौंसी हम के ऐसा नाच नचइहैं तो हम पैदा होतै गला घोंट देइत। हरे राम! अक्काश सिर पर उठाये हैं। कै घण्टे से नरियात-नरियात गटई फट गयी। ई बोलतै नाही जैसे साँप सूँघ गवा होय।"

प्रोफेसर शुक्ला के घर में यह नया सास्कृतिक तत्त्व था। कितनी शालीनता और शिष्टता से वह रहते थे। कभी इस तरह की भाषा भी उन के घर में सुनने को मिलेगी इस की चन्दर को ज़रा भी उम्मीद न थी। चन्दर चौंक कर उधर देखने लगा। डॉ० शुक्ला समझ गये। कुछ लज्जित-से और मुसकरा कर ग्लानि छिपाते हुए-से बोले—"मेरी विधवा बहिन हैं, कल गाँव से आयी हैं लडकी को पहुँचाने।"

उस के बाद कुछ पटकने का स्वर आया, शायद किसी बरतन के। इतने में सुधा आयी, गुस्से से लाल—"सुना पापा तुम ने, बुआ बिनती को मार डालेंगी!"

"क्या हुआ आखिर?" डॉ० शुक्ला ने पूछा।

"कुछ नही, बिनती ने पूजा का पचपात्र उठाकर ठाकुरजी के सिंहासन के पीछे रख दिया था। उन्हें दिखाई नही पडा, तो गुस्सा बिनती पर उतार रही हैं।"

इतने मे फिर उन की आवाज़ आयी—"पैदा करत बखत बहुत अच्छा लाग रहा, पालत बखत टें बोल गये। मर गये रह्यो तो आपन

सन्तानौ अपने साथ लै जात्यौ। हमरे मूड पर ई हत्या काहे डाल गयी। ऐसी कुलच्छनी है कि पैदा होतेहिन बाप को खाय गयी।"

"सुना पापा तुम ने ?"

"चलो हम चलते हैं।" डॉ० शुक्ला ने कहा। सुधा वहीं रह गयी। चन्दर ने बोलो—

"ऐसा बुरा स्वभाव है बुआ का कि बस। बिनती ऐसी है कि इतना बर्दाश्त कर लेती है।"

बुआ ने ठाकुरजी का सिंहासन साफ करते हुए कहा—"रोवत काहे हो, कौन तुम्हारे माई-बाप को गरियावा है कि ई अँसुवा ढरकाय रही हो। ई सब चोचला अपने ओ को दिखाओ जाय के। दुई महीना और है—अबहिन से उधियानी न जाओ।"

अब अभद्रता सीमा पार कर चुकी थी।

"बिनतो, चलो कमरे के अन्दर, हटो सामने से।" डॉ० शुक्ला ने डाँट कर कहा—"अब ये चरखा बन्द होगा या नहीं। कुछ शरम-हया है या नहीं तुम में ?"

बिनती सिसकते हुए अन्दर गयी। स्टडी रूम में देखा चन्दर है तो उलटे पाँव लौट आयी सुधा के कमरे में और फूट-फूट कर रोने लगी।

डॉ० शुक्ला लौट आये—"अब हम ये सब करें कि अपना काम करें। अच्छा कल से घर में महाभारत मचा रखा है। कब जायेंगी ये, सुधा ?"

"कल जायेंगी। पापा, अब बिनती को कभी मत भेजना इन के पास।" सुधा ने गुस्सा-भरे स्वर में कहा।

"अच्छा—जाओ हमारा खाना परसो। चन्दर, तुम अपना काम यहाँ करो। यहाँ शोर ज्यादा हो तो तुम लाइब्रेरी में चले जाना। आज-भर की तकलीफ़ है।"

चन्दर ने अपनी कुछ किताबें उठायीं और उस ने चला जाना ही ठीक

समझा। सुधा खाना परोसने चली गयी। विनती रो-रो कर और तकिये पर सिर पटक कर अपनी कुण्ठा और दुःख उतार रही थी। बुआ घण्टी बजा रही थी, दबी ज़बान जाने क्या बकती जा रही थी, यह घण्टी के भक्ति-भावना-भरे मधुर स्वर में सुनाई नहीं देता था।

लेकिन बुआ जी दूसरे दिन गयी नहीं। जब तीन-चार दिन बाद चन्दर गया तो देखा बाहर के सहन में डॉ० शुक्ला बैठे हुए हैं और दरवाज़ा पकड़ कर बुआ जी खड़ी बातें कर रही हैं। लेकिन इस वक़्त बुआ जी काफी गम्भीर थी और किसी विषय पर मन्त्रणा कर रही थी। चन्दर के पास पहुँचने पर फौरन वे चुप हो गयी और चन्दर की ओर सशंकित नेत्रों से देखने लगी। डॉ० शुक्ला बोले—"आओ चन्दर बैठो।" चन्दर बग़ल की कुरसी खींच कर बैठ गया तो डॉ० साहब बुआ जी से बोले—"हाँ, हाँ, बात करो, अरे ये तो घर के आदमी हैं। इन के बारे में सुधा ने नहीं बताया तुम्हें? ये चन्दर हैं हमारे शिष्य, बहुत अच्छा लड़का है।"

"अच्छा, अच्छा भइया बइठो, तू तो एक दिन अउर आये रह्यो, ।० ए० में पढ़त हो सुधा के संगे ?"

"नहीं बुआ जी, मैं रिसर्च कर रहा हूँ।"

"बाह, बहुत खुशी भई तोको देख के—हाँ तो सुकुल!" वे अपने ˆ से बोली, "फिर यही ठीक होई। बिनती का बियाह टाल देव और अगर ई लड़का ठीक हुइ जाय तो सुधा का बियाह असाढ़-भर में निपटाय देव। अब अच्छा नाही लगत। ठूँठ ऐसी बिटिया, सूनी माँग लिये छर-

रावा करत है एहर-ओहर !" बुआ बोलीं।

"हाँ ये तो ठीक है।" डॉ० शुक्ला बोले—"मैं खुद सुधा का ब्याह अब टालना नही चाहता। बी० ए० तक की शिक्षा बहुत काफी है वरना फिर हमारी जाति मे तो लडके नही मिलते। लेकिन ये जो लडका तुम बता रही हो तो घर वाले कुछ एतराज तो नही करेगे। और फिर, लडका तो हमें अच्छा लगा लेकिन घर वाले पता नही कैसे हो ?"

"अरे तो घरवालन से का करे का है तो को। लडका तो अलग है, अपने-आप पढ रहा है और लडकी अलग रहिए, न सास का डर न ननद को घौंस। हम पत्री मँगवाये देइत ही, मिलवाय लेव।"

डॉ० शुक्ला ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

"तो फिर बिनती के बारे में का कहत हौ ? अगहन तक टाल दिया जाय न ?" बुआ जी ने पूछा।

"हाँ, हाँ," डॉक्टर शुक्ला ने विचार में डूबे हुए कहा।

"तो फिर तुम ही इन जूतापिटऊ, बडनक्कू से कह दियो, आय के कल से हमरी छाती पर मूँग दलत हैं।" बुआ जी ने चन्दर की ओर किसी को निर्देशित करते हुए कहा और चली गयी।

चन्दर चुपचाप बैठा था। जाने क्या सोच रहा था। शायद कुछ भी नही सोच रहा था। मगर फिर भी अपनी विचार-शून्यता में ही खोया हुआ-सा था। जब डॉक्टर शुक्ला उस की ओर मुडे और कहा—"चन्दर !" तो वह एकदम से चौंक गया और जाने किस दुनिया से लौट आया। डॉ० साहब ने कहा—"अरे ! तुम्हारी तबीयत खराब है क्या ?"

"नही तो।" एक फीकी हँसी हँस कर चन्दर ने कहा।

"तो मेहनत बहुत कर रहे होगे। कितने अध्याय लिखे अपनी थीसिस के ? अब मार्च खत्म हो रहा है और पूरा अप्रैल तुम्हें थीसिस टाइप कराने मे लगेगा और मई में हर हालत में जमा हो जानी चाहिए।"

"जी, हाँ।" बडे थके हुए स्वर में चन्दर ने कहा—"दस अध्याय हो

हो गये हैं। तीन अध्याय और होने हैं और अनुक्रमणिका बनानी है। अप्रैल के पहले सप्ताह तक खत्म हो ही जायगा। अब सिवा थीसिस के और करना ही क्या है ?" एक बहुत गहरी साँस लेते हुए चन्दर ने कहा और माथा थाम कर बैठ गया।

"कुछ तबीयत ठीक है नही तुम्हारी। चाय बनवा लो। लेकिन सुधा तो है नही, न महराजिन है।" डॉक्टर साहब बोले।

अरे सुधा, सुधा के नाम पर चन्दर चौंक गया। हाँ, अभी वह सुधा के ही बारे में सोच रहा था जब बुआजी बात कर रही थी। क्या सोच रहा था। देखो उस ने याद की कोशिश की, पर कुछ याद ही नही आ रहा था, पता नही क्या सोच रहा था। पता नही था·· · कुछ सुधा के व्याह की बात हो रही थी शायद ? क्या बात हो रही थी ?

"कहाँ गयी है सुधा ?" चन्दर ने पूछा।

"आज शायद साबिर साहब के यहाँ गयी है। उन की लडकी उस के साथ पढती है न, वही गयी है बिनती के साथ।"

"अब इम्तहान को कितने दिन रह गये हैं, अभी घूमना बन्द नही हुआ उन का ?" चन्दर बोला।

"नही दिन-भर पढ़ने के बाद उठी थी, उस के भी सिर में दर्द था, चली गयी। घूम-फिर लेने दो बेचारी को, अब तो जा रही है।" डॉक्टर शुक्ला बोले, एक ऐसी हँसी के साथ जिस में आँसू छलके पडते थे।

"कहाँ तय हो रही है सुधा की शादी ?" चन्दर ने पूछा।

"बरेली में अब उस की बुआ ने बताया है। जन्मपत्री दी है मिलवा , फिर तुम जरा सब बाते देख लेना। तुम तो थीसिस में व्यस्त रहोगे, जा कर लडका देख आऊँगा। फिर मई के बाद जुलाई तक में सुधा का ·ह कर देंगे। तुम्हें डॉक्टरेट मिल जाये और यूनिवर्सिटी में जगह मिल जाये। बस हम तो लडका-लडकी दोनो से फारिग।" डॉ० शुक्ला बहुत अजब-से स्वरों मे बोले।

चन्दर चुप रहा ।

"विनती को देखा तुम ने ?" थोड़ी देर बाद डॉक्टर ने पूछा ।

"हाँ वही न जिस को डाँट रही थी ये उस दिन ?"

"हाँ वही ! उस के ससुर आये हुए हैं, उन से कहना है कि अब शादी अगहन-पूस के लिए टाल दें। पहले सुधा की हो जाये, वह बड़ी है और हम चाहते हैं कि विनती को तब तक विदुषी का दूसरा खण्ड भी दिला दें। आओ उन से बात कर लें अभी ।" डाक्टर शुक्ला उठे। चन्दर भी उठा ।

और उस ने अन्दर जा कर विनती के ससुर के दिव्य दर्शन प्राप्त किये । वे एक पलग पर बैठे थे, लेकिन वह अभागी पलग उन के उदर के ही लिए नाकाफी था । वे चित्त पड़े थे और साँस लेते थे तो पुराणो की उस कथा का प्रदर्शन हो जाता था कि धीरे-धीरे पृथ्वी का गोला वाराह के मुँह पर कैसे ऊपर उठा होगा । सिर पर छोटे-छोटे बाल और कमर में एक अँगोछे के अलावा सारा शरीर दिगम्बर । सुबह शायद गगा नहा कर आये थे क्यो कि पेट तक में चन्दन, रोरी लगी हुई थी ।

डॉक्टर शुक्ला जा कर बग़ल में कुरसी पर बैठ गये, "कहिए दुबेजी, कुछ जलपान किया आप ने ?"

पलग चरमरायी । उस विशाल मास-पिण्ड में एक भूडोल आया और दुबेजी जलपान की याद करके गद्गद हो कर हँसने लगे । एक थलथलाहट हुई और कमरे की दीवारें गिरते-गिरते बची । दुबेजी ने उठ कर बैठने की कोशिश की लेकिन असफल हो कर लेटे-ही-लेटे कहा—"हो ! हो सब आप की कृपा है । खूब छक के मिष्ठान्न पाया । अब ज़रा सरबत-उरबत कुछ मिलै तो जो कुछ पेट में जलन है, सो शान्त होय !" उन्होने पेट पर अपना हाथ फेरते हुए कहा ।

"अच्छा, अरे भाई ज़रा शरबत बना देना ।" डॉ० शुक्ला ने दरवाज़े की ओट मे खड़ी हुई बुआजी से कहा । बुआजी की आवाज़ सुनाई

पडी—"बाप रे ! ई ढाई मन की लहाम कम से कम मसक-भर के शरबत तो उलीचे लैई है ।" चन्दर को हँसी आ गयी, डॉ० शुक्ला मुसकराने लगे लेकिन दुबे जी के दिव्य मुखमण्डल पर कही क्षोभ या उल्लास की रेखा तक न आयी । चन्दर मन-ही-मन सोचने लगा प्राचीन काल के ब्रह्मानन्द सिद्ध महात्मा ऐसे ही होते होगे ।

बुआ एक गिलास मे शरबत ले आयी । दुबेजी कांख-कांख कर उठे और एक सांस में शरबत गले से नीचे उतार कर, गिलास नीचे रख दिया ।

"दुबे जी, एक प्रार्थना है आप से !" डॉ० शुक्ला ने हाथ जोड कर बडे विनीत स्वर में कहा ।

"नही ! नही !" बात काट कर दुबेजी बोले—"बस अब हम न कुछ खावें । आप बहुत सत्कार किये । हम एही से छक गये । आप को देख के तो हमें बडी प्रसन्नता भई । आप सचमुच दिव्य पुरुष हौ । और फिर आप तो लडकी के मामा हो, और बियाहसादी में जो है सो मामा का पक्ष देखा जात है । ई तो भगवान् ऐसा जोड मिलाइन हैं कि वरपक्ष अउर कन्यापक्ष दुइन के मामा बडे ज्ञानी हैं । आप हैं तौन कालिज में पुरफ़ेसर है और ओहर हमार सार, लडका केर मामा जौन हैं तौन डाकघर में मुन्सी है, आप की किरपा से ।" दुबे जी ने गर्व से कहा । चन्दर मुसकराने लगा ।

"अरे सो तो आप की नम्रता है लेकिन मैं सोच रहा हूं कि गरमियो ं अगर ब्याह न रख कर जाडे में रखा जाये तो ज्यादा अच्छा होगा । ब तक आप के सत्कार की हम कुछ तैयारी भी कर लेंगे ।" डॉ० शुक्ला बोले ।

दुबेजी इस के लिए तैयार नही थे । वे बडे अचरज में भर कर उन की ओर देखने लगे । लेकिन बहुत कहने-सुनने के बाद अन्त में वे इस शर्त पर राजी हुए कि अगहन तक हर तीज-त्योहार पर लडके के लिए

कुर्त्ता-धोती का कपडा और ग्यारह रुपये नज़राना आयेगा और अगहन में अगर व्याह हो रहा है तो सास, ननद और जिठानी के लिए गरम साडी जायेगी और जब-जब दुबेजी गगा नहाने प्रयागराज आयेंगे तो उन का रोचना एक थाल, कपडे और एक स्वर्णमण्डित जौ से होगा। जब डॉ० शुक्ला ने यह स्वीकार कर लिया तो दुबेजी ने उठ कर अपना झालम-झोला कुरता गले में लटकाया और अपनी गठरी हाथ मे उठा कर बोले—

"अच्छा तो अब आज्ञा देव, हम चलो अब, और ई रुपिया लडकी को दै दियो, अब बात पक्की है।" और अपनी टेंट से उन्होंने एक मुडा-मुडाया तेल लगा हुआ पांच रुपये का नोट निकाला और डॉ० साहब को दे दिया।

'चन्दर एक तांगा कर दो, दुबेजी को। अच्छा आओ हम भी चलें।"

जब ये लोग लौटे तो बुआजी एक थैली से कुछ घर-निकाल रही थी। डॉ० शुक्ला ने नोट बुआजी को देते हुए कहा, "लो ये दे गये तुम्हारे समधी जी, लडकी को।"

पांच का नोट देखा तो बुआजी सुलग उठी—"न गहना न गुरिया, बियाह पक्का कर गये ई कागज के टुकडे से। अपना-आप तो सोना और रुपिया और कपडा सब लीलै को तैयार और देत के दाईं पेट पिरात है जूता-पिटऊ का। अरे राम चाही तो जमदूत ई लहास को बोटी-बोटी करके रामजी के कुत्तन को खिलइहें।"

चन्दर हँसी के मारे पागल हो गया।

बुआजी ने थैली का मुंह बांधा और बोली, "अबहिन तक बिनती का पता नै, और ऊ तुरकन-मलेच्छन के हियां कुछ खा-पी लिहिस तो फिर हमरे हियां गुजारा नहि ना ओका। बडी आजाद हुई गयी है सुधा को सह पाय के। आवै देव, आज हम भद्रा उतारित ही।"

डॉ० शुक्ला अपने कमरे में चले गये। चन्दर को प्यास लगी थी। उस ने एक गिलास में पानी बुआजी से मांगा। बुआ ने एक गिलास में

पानी दिया और बोली—"बैठ के पियो बेटा, बैठके। कुछ खाय को देई ?"

"नही बुआजी !" बुआ बैठ कर हँसिया से कटहल छीलने लगी और चन्दर पानी पीता हुआ सोचने लगा, बुआजी सभी से इतनी मीठी बात करती है तो आखिर बिनती से ही इतनी कटु क्यो है ?

इतने में अन्दर चप्पलो की आहट सुनाई पडी। चन्दर ने देखा। सुधा और बिनती आ गयी थी। सुधा अपनी चप्पल उतारकर अपने कमरे में चली गयी और बिनती आँगन में आयी। बुआजी के पास जाकर बोली—"लाओ, हम तरकारी काट दें।"

"चल हट ओहर। पहिले नहाव जाय के। कुछ खाये तो नै रह्यो। एत्ती देर कहाँ घूमती रह्यो ? हम खूब अच्छी तरह जानित ही तूँ हमार नाक कटाइन के रहवो। पतुरियन के ढग सीखे है !"

बिनती चुप। एक तीखी वेदना का भाव उस के मुँह पर आया। उस ने आँखें झुका ली। रोयी नही और चुपचाप सिर झुकाये हुए सुधा के कमरे में चली गयी।

चन्दर क्षण-भर खडा रहा। फिर सुधा के पास गया। सुधा के कमरे में अकेले बिनती खाट पर पडी थी। औंधे मुँह, तकिया में मुँह छिपाये। चन्दर को जाने कैसा लगा। उस के मन में बेहद तरस आ रहा था इस बेचारी लडकी के लिए, जिस के पिता हैं ही नही, और जिसे प्रताडना के सिवा कुछ नही मिला। चन्दर को बहुत ही ममता लग रही थी इस अभागिनी के लिए। वह सोचने लगा कितना अन्तर है दोनो बहिनो में। एक बचपन से ही कितने असीम दुलार, वैभव और स्नेह में पली है और दूसरी प्रताडना और कितने अपमान में पली और वह भी अपनी ही सगी माँ से जो दुनिया-भर के प्रति स्नेहमयी है, अपनी लडकी को छोडकर।

वह कुरसी पर बैठकर चुपचाप यही सोचने लगा—अब आगे भी इस बेचारी को क्या सुख मिलेगा। ससुराल कैसी है, यह तो ससुर को

देख कर ही मालूम देता है।

इतने में सुधा कपड़े बदल कर हाथ में एक किताब लिये उसे पढ़ती हुई उसी में डूबी हुई आयी और खाट पर बैठ गयी। "अरे! विनती! कैसे पड़ी हो? अच्छा तुम हो चन्दर! विनती! उठो!" उस ने विनती की पीठ पर हाथ रख कर कहा।

विनती जो अभी तक निश्चेष्ट पड़ी थी, सुधा के ममता-भरे स्पर्श पर फूट-फूट कर रो पड़ी। तो सुधा ने चन्दर से कहा—"क्या हुआ विनती रानी को!" और जब विनती और भी जोरों से सिसकियाँ भरने लगी तो सुधा ने चन्दर से कहा—"कुछ तुम ने कहा होगा। चौदह दिन बाद आये और आते ही लगे रुलाने उसे। कुछ कहा होगा तुम ने? समझ गये। घूमने के लिए उसे भी डांटा होगा। हम साफ-साफ बताये देते हैं चन्दर, हम तुम्हारी डांट सह लेते हैं इस के ये मतलब नहीं कि अब तुम उस बेचारी पर भी रोब झाड़ने लगो। उस से कभी कुछ कहा तो अच्छी बात नहीं होगी!"

"तुम्हारे दिमाग़ का कोई पुरजा ढीला हो गया है क्या? मैं क्यों कहूंगा विनती को कुछ?"

"बस फिर यही बात तुम्हारी बुरी लगती है।" सुधा बिगड़ कर बोली, "क्यों नहीं कहोगे विनती को कुछ? जब हमें कहते हो तो उसे क्यों नहीं कहोगे? हम तुम्हारे अपने हैं तो क्या वो तुम्हारी अपनी नहीं है?"

चन्दर हँस पड़ा—"सो क्यों नहीं है, लेकिन न तुम्हारे साथ ऐसे निबाह न वैसे निबाह।"

"ये सब हम कुछ नहीं जानते! क्यों रो रही है यह?" सुधा बोली धमकी के स्वर में।

"बुआजी ने कुछ कहा था।" चन्दर बोला।

"अरे तो उस के लिए क्या रोना! इतना समझाया तुझे कि उन की तो आदत है। हँस कर टाल दिया कर। चल उठ! हँसती है कि

गुदगुदाऊँ ।" सुधा ने गुदगुदाते हुए कहा । विनती ने उस का हाथ पकड कर झटक दिया और फिर सिसकियाँ भरने लगी ।

"नही मानेगी तू ?" सुधा बोली—"अभी ठीक करती हूँ तुझे मैं । चन्दर पकडो तो इस का हाथ ।"

चन्दर चुपचाप रहा ।

"नही उठे । उठो, तुम इस का हाथ पकड लो तो हम अभी इसे हँसाते है ।" सुधा ने चन्दर का हाथ पकड कर विनती की ओर बढते हुए कहा । चन्दर ने अपना हाथ खीच लिया और बोला—"वह तो रो रही है और तुम बजाय समझाने के उसे परेशान कर रही हो ।"

"अरे जानते हो क्यो रो रही है ? अभी इस के ससुर आये थे, वो बहुत मोटे थे तो ये सोच रही है कही 'वो' भी मोटे हो !" सुधा ने फिर इस की गरदन गुदगुदा कर कहा ।

विनती हँस पडी । सुधा उछल पडी—"लो ये तो हँस पडी, अब रोओगी !" और फिर सुधा ने गुदगुदाना शुरू किया । विनती पहले तो हँसी से लोट गयी फिर पल्ला सम्हालते हुए बोली—"छि दीदी ! वो बैठे हैं कि नही !" और उठ कर बाहर जाने लगी ।

"कहाँ चली ?" सुधा ने पूछा ।

"जा रही हूँ नहाने ।"विनती पल्ले से सिर ढँकते हुए चल दी ।

"क्यो मैंने तेरा बदन छू दिया इस लिए ?" सुधा हँस कर बोली—"ए चन्दर वो गेसू का छोटा भाई है न हसरत मैंने उसे छू लिया तो फौरन उस ने जा कर अपना मुँह साबुन से धोया और अम्मीजान से बोला—"मेरा मुँह जूठा हो गया ।" और आज हम ने गेसू के अख्तर मियाँ को देखा । बडे मजे के है । मैं तो गेसू से बात करती रही लेकिन विनती और फूल ने बहुत छेडा उन्हें । बेचारे घबडा गये । फूल बहुत चुलबुली है और बडी नाजुक है । बडी बोलने वाली है और विनती और फूल का खूब जोड मिला । दोनो खूब गाती हैं ।"

"विनती गाती भी है?" चन्दर ने पूछा, "हम ने तो रोते ही देखा।"

"अरे बहुत अच्छा गाती है। इस ने एक गाँव का गाना बहुत अच्छा गाया था।""अरे देखो वे सब बताने में हम तुम पर गुस्सा होना तो भूल गये। कहाँ रहे चार रोज ? बोलो, बताओ जल्दी से।"

"व्यस्त थे। सुधा, अब थीसिस तीन हिस्सा लिख गयी। इधर हम लगातार पाँच घण्टे बैठ कर लिखते थे।" चन्दर बोला।

पाँच घण्टे!" सुधा बोली—"दूध आज-कल पीते हो कि नही ?"

"हाँ-हाँ, तीन गायें खरीद ली हैं।" चन्दर बोला।

"नही मजाक नही, कुछ खाते-पीते रहना, नही तबीयत खराब हुई तो अब हमारा इम्तहान है, पडे-पडे मक्खी मारोगे और अब हम देखने भी नही आ सकेंगे।"

"अब कितना कोर्स बाकी है तुम्हारा ?"

"कोर्स तो खत्म था हमारा। कुछ कठिनाइयाँ थी सो पिछले दो-तीन हफ्ते में मास्टर साहब ने बता दी थी। अब दोहराना है। लेकिन बिनती का इम्तहान मई में है, उसे भी तो पढाना है।"

"अच्छा अब चलें हम।"

"अरे बैठो! फिर जाने के दिन बाद आओगे। आज बुआ तो चली जायेंगी फिर कल से यही पढो न। तुम ने विनती के ससुर को देखा था ?"

"हाँ देखा था!" चन्दर उन की रूपरेखा याद कर के हँस पडा—"बाप रे। पूरे टैंक थे वे तो।"

"विनती की ननद से तुम्हारा व्याह करवा दें। करोगे ?" सुधा बोली—"लडकी इतनी ही मोटी है। उसे कभी डाँट लेना तो देखेंगे तुम्हारी हिम्मत।" सुधा बोली।

व्याह! एकदम से चन्दर को याद आ गया। अभी बुआ ने बात की थी सुधा के व्याह की। तब उसे कैसा लगा था ? कैसा लगा था ? उस का दिमाग घूम गया। लगा जैसे एक असहनीय दर्द था या क्या था—

जो उस की नस-नस को तोड गया । एक दम' ।

"क्या हुआ चन्दर ? अरे चुप क्यो हो गये ? डर गये मोटी लडकी के नाम से ?" सुधा ने चन्दर का कन्धा पकड कर झकझोरते हुए कहा।

चन्दर एक फीकी हँसी हँस कर रह गया और चुपचाप सुधा की ओर देखने लगा । सुधा चन्दर की निगाह से सहम गयी । चन्दर की निगाह में जाने क्या था, एक अजब-सा पथराया सूनापन, एक जाने किस दर्द की अमगल छाया, एक जाने किस पीडा की मूक आवाज़, एक जाने कैसी पिघलती हुई-सी उदासी और वह भी गहरी, जाने कितनी गहरी '''और चन्दर था कि एकटक देखता जा रहा था, एकटक अपलक' ।

सुधा को जाने कैसा लगा । ये अपना चन्दर तो नही, ये अपने चन्दर की निगाह तो नही है । चन्दर तो ऐसी निगाह से, इस तरह अपलक तो सुधा को कभी नही देखता था । नही यह चन्दर की निगाह तो नही । इस निगाह में न शरारत है, न डाँट, न दुलार और न करुणा । इस मे कुछ ऐसा है जिस से सुधा बिलकुल परिचित नहीं, जो आज चन्दर में पहली बार दिखाई पड रहा है । सुधा को जैसे डर लगने लगा, जैसे वह काँप उठी । नही यह कोई दूसरा चन्दर है जो उसे इस तरह देख रहा है । यह कोई अपरिचित है, कोई अजनबी, किसी दूसरे देश का कोई व्यक्ति जो सुधा को'''

"चन्दर, चन्दर ! तुम्हें क्या हो गया !" सुधा की आवाज़ मारे डर के काँप रही थी, उस का मुँह पीला पड गया, उस की साँस बैठने लगी थी—"चन्दर " और जब उस का कुछ बस न चला तो उस की आँखो में आँसू छलक आये ।

हाथो पर एक गरम-गरम बूँद आ कर पडते ही चन्दर चौंक गया । "अरे सुधी ! रोओ मत । नही पगली ! हमारी तबीयत कुछ ठीक नही है । एक गिलास पानी तो ले आओ ।"

सुधा अब भी काँप रही थी । चन्दर की आवाज़ में अभी भी वह

मुलायमियत नही आ पायी थी। वह पानी लाने के लिए उठी।

"नही तुम कही जाओ मत, तुम बैठो यही।" उस ने उस की हथेली अपने माथे पर रख कर जोर से अपने हाथो में दबा ली और कहा—"सुधा! "

"क्यो चन्दर!"

"कुछ नही।" चन्दर ने आवाज दी लेकिन लगता था वह आवाज चन्दर की नही थी। न जाने कहाँ से आ रही थी

"क्या सिर मे दर्द है? विनती, एक गिलास पानी लाओ जल्दी से।"

सुधा ने आवाज दी। चन्दर जैसे पहले-सा हो गया—"अरे! अभी मुझे क्या हो गया था? तुम क्या बात कर रही थी सुधा?"

"पता नही तुम्हें अभी क्या हो गया था?" सुधा ने घबरायी हुई गौरैया की तरह सहम कर कहा। चन्दर स्वस्थ हो गया—"कुछ नही सुधा! मैं ठीक हूं। मैं तो यूं ही तुम्हें परेशान करने के लिए चुप था।" उस ने हँस कर कहा।

"हाँ, चलो रहने दो। तुम्हारे सिर में दर्द है जरूर से।" सुधा बोली। विनती पानी ले कर आ गयी थी।

"लो पानी पियो।"

"नही हमें कुछ नही चाहिए।" चन्दर बोला।

"विनती, जरा पेनबाम ले आओ।" सुधा ने गिलास जबर्दस्ती उस के मुँह से लगाते हुए कहा। विनती पेनबाम ले आयी थी—"विनती, तू जरा लगा तो दे इन के। अरे खडी क्यो है? कुरसी के पीछे खडी हो कर माथे पर जरा हलकी उँगली से लगा दे।"

विनती आज्ञाकारी लडकी की तरह आगे बढी, लेकिन फिर हिचक गयी। किसी अजनबी लडके के माथे पर कैसे पेनबाम लगा दे। "चलती है या अभी काट के गाड देंगे यही। मोटकी कही की! खा-खा कर मुटानी है। जरा-सा काम नही होता।"

विनती ने हार कर पेनवाम लगाया। चन्दर ने उस का हाथ हटा दिया। सुधा ने विनती के हाथ से पेनवाम ले कर कहा—"आओ हम लगा दें।" विनती पेनवाम दे कर चली गयी। सुधा ने हाथ वढाया तो चन्दर ने डाँटा—"सीधे से वैठो। हाँ!" सुधा चुपचाप वैठ गयी तो चन्दर वोला—"अव वताओ क्या वात कर रही थी? हाँ, विनती के व्याह की। ये उन के ससुर तो वहुत ही भद्दे मालूम पड रहे थे। क्या देख कर व्याह कर रही हो तुम लोग?"

"पता नही क्या देख कर व्याह कर रही है वुआ। असल में वुआ पता नही क्यो विनती से इतनी चिढती हैं, वह तो चाहती हैं किसी भी तरह से वोझ टले सिर से। लेकिन चन्दर यह विनती वडी खुश है। वह तो चाहती है किसी तरह जल्दी से व्याह हो!" सुधा मुसकराती हुई वोली।

"अच्छा, ये खुद व्याह करना चाहती है!" चन्दर ने ताज्जुव से पूछा।

"और क्या? अपने ससुर की खूव सेवा कर रही थी सुवह। वल्कि पापा तो कह रहे थे कि अभी यह वी० ए० कर ले तव व्याह करो। हम से पापा ने कहा इस से पूछने को। हम ने पूछा तो कहने लगी वी० ए० कर के भी वही करना होगा तो वेकार टालने से क्या फ़ायदा। फिर पापा हम से वोले कि कुछ वजहो से अगहन में व्याह होगा तो वडे ताज्जुव से वोली—"अगहन में!"

"सुधी, तुम जानती हो अगहन में उस का व्याह क्यो टल रहा है। पहले तुम्हारा व्याह होगा।" चन्दर हँस कर वोला। वह पूर्णतया शान्त था और उस के स्वर में कम से कम वाहर, सिवा एक चुहल के और कुछ भी न था।

"मेरा व्याह, मेरा व्याह!" आँखें फाड कर, मुँह फैला कर हाथ नचा कर, कुतूहल-भरे आश्चर्य से सुधा ने कहा और फिर हँस पडी, खूव

हँसी—"कौन करेगा मेरा व्याह ? वुआ ? पापा करने ही नही देंगे। हमारे विना पापा का काम ही नही चलेगा और वावूसाहव, तुम किस पर आ कर रग जमाओगे ? व्याह मेरा ! हुँ !" सुधा ने मुँह विचका कर उपेक्षा से कहा।

"नही सुधा, मैं गम्भीरता से कह रहा हूँ। तीन-चार महीने के अन्दर तुम्हारा व्याह हो जायेगा। चन्दर उसे विश्वास दिलाते हुए वोला।

"अरे जाओ !" सुधा ने हँसते हुए कहा—"ऐसे हम तुम्हारे वनाने मे आ जाये तो हो चुका।"

"अच्छा जाने दो। तुम्हारे पास कोई पोस्टकार्ड है ? लाओ जरा इस कामरेड को एक चिट्ठी तो लिख दे !" चन्दर वात वदल कर वोला। पता नही क्यो इस विषय की वात के चलने मे उसे जाने कैसा लगता था।

"कौन कामरेड ?" सुधा ने पूछा—"तुम भी कम्युनिस्ट हो गये क्या ?"

"नही, जी, वो वरेली का सोशलिस्ट लडका कैलाश जिस ने झगडे में हम लोगो की जान वचायी थी। हम ने तुम्हें वताया नही था सव किस्सा उस झगडे का जव हम और पापा वाहर गये थे।"

"हाँ, हाँ वताया था। उसे जरूर खत लिख दो !" सुधा ने पोस्टकार्ड देते हुए कहा—"तुम्हें पता मालूम है ?"

चन्दर जव पोस्टकार्ड लिख रहा था तो सुधा ने कहा—"सुनो, उसे लिख देना कि पापा की सुधा, पापा की जान वचाने के एवज मे आप की वहुत कृतज्ञ है और कभी अगर हो सके तो आप इलाहावाद जरूर आवे ! लिख दिया ?"

"हाँ !" चन्दर ने पोस्टकार्ड जेव में रखते हुए कहा।

"चन्दर, हम भी सोशलिस्ट पार्टी के मेम्वर होगे !" सुधा ने मचलते हुए कहा।

"चलो अव तुम्हें नयी सनक सवार हुई। तुम क्या समझ रही हो

सोशलिस्ट पार्टी को। राजनीतिक पार्टी है वह। यह मत करना कि सोशलिस्ट पार्टी मे जाओ और लौट कर आओ तो पापा से कहो—"अरे हम तो समझे पार्टी है, वहाँ चाय-पानी मिलेगा। वहाँ तो सब लोग लेक्चर देते हैं।"

"धत्त, हम कोई वेवक़ूफ़ हैं क्या ?" सुधा ने विगड कर कहा।

"नही, सो तो तुम बुद्धिसागर हो, लेकिन लडकियो की राजनीतिक बुद्धि कुछ ऐसी ही होती है।" चन्दर बोला।

"अच्छा रहने दो। लडकियाँ न हो तो काम ही न चले।" सुधा ने कहा।

"अच्छा सुधा! आज कुछ रुपये दोगी। हमारे पास पैसे खतम हैं और सिनेमा देखना है ज़रा।" चन्दर ने बहुत दुलार से कहा।

"हाँ, हाँ ज़रूर देंगे तुम्हें। मतलबी कही के!" सुधा बोली—"अभी-अभी तुम लडकियो की बुराई कर रहे थे न ?"

"तो तुम और लडकियो में से थोडे ही हो। तुम तो हमारी सुधा हो। सुधा महान्!"

सुधा पिघल गयी—"अच्छा कितना लोगे ?" अपनी पाकेट में से पाँच रुपये का नोट निकाल कर बोली—"इस से काम चल जायेगा ?"

'हाँ-हाँ, आज ज़रा सोच रहे हैं पम्मी के यहाँ जायें, तब सेकण्ड शो जायें।"

"पम्मी रानी के यहाँ जाओगे। समझ गये तभी तुम ने चाचाजी से व्याह करने से इनकार कर दिया। लेकिन पम्मो तुम से तीन साल बडी है। लोग क्या कहेंगे ?" सुधा ने छेडा।

"ऊँह तो क्या हुआ जी! सब यों ही चलता है!" चन्दर हँस कर टाल गया।

"तो फिर खाना यहीं खाये जाओ और कार लेते जाओ।" सुधा ने कहा।

"मँगवाओ !" चन्दर ने पलँग पर पैर फैलाते हुए कहा । खाना आ गया । और जब तक चन्दर खाता रहा, सुधा सामने बैठी रही और बिनती दौड़ कर पूड़ी लाती रही ।

जब चन्दर पम्मी के बँगले पर पहुँचा तो शाम होने में देर नहीं थी । लेकिन अभी फर्स्ट शो शुरू होने में देरी थी । पम्मी गुलाबों के बीच में टहल रही थी और बर्टी एक बहुत अच्छा-सा सूट पहने लॉन पर बैठा था और घुटनों पर ठुड्डी रखे कुछ सोच-विचार में पड़ा था । बर्टी के चेहरे पर का पीलापन भी कुछ कम था । वह देखने से इतना भयंकर नहीं मालूम पड़ता था । लेकिन उस की आँखों का पागलपन अभी वैसा ही था और खूबसूरत सूट पहनने पर भी उस का हाल यह था कि एक कालर अन्दर था और एक बाहर ।

पम्मी ने चन्दर को आते देखा तो खिल गयी । "हल्लो, कपूर ! क्या हाल है ? पता नहीं क्यों आज सुबह से मेरा मन कह रहा था कि आज मेरे मित्र जरूर आयेंगे । और शाम के वक़्त तुम तो इतने अच्छे लगते हो जैसे वह जगमग सितारा जिसे देख कर कीट्स ने अपनी आखिरी सानेट लिखी थी ।" पम्मी ने एक गुलाब तोड़ा और चन्दर के कोट के बटन होल में लगा दिया । चन्दर ने बड़े भय से बर्टी की ओर देखा कि कहीं गुलाब के तोड़े जाने पर वह फिर चन्दर की गरदन पर सवार न हो जाये । लेकिन बर्टी कुछ बोला नहीं । बर्टी ने सिर्फ़ हाथ उठा कर अभिवादन किया और फिर बैठ कर सोचने लगा ।

पम्पी ने कहा—"आओ अन्दर चलें।" और चन्दर और पम्मी दोनो ड्राइगरूम मे बैठ गये।

चन्दर ने कहा—मैं तो डर रहा था कि तुम ने गुलाब तोड कर मुझे दिया तो कही बर्टी नाराज न हो जाये, लेकिन वह कुछ बोला नही।"

पम्मी मुसकरायी—"हाँ अब वह कुछ कहता नही और पता नहीं क्यो गुलाबो से उस की तबीयत भी इधर हट गयी। अब वह उतनी पर-वाह भी नही करता।"

"क्यो ?" चन्दर ने ताज्जुब से पूछा।

"पता नही क्यो। मेरी तो समझ में यह आता है कि उस का जितना विश्वास अपनी पत्नी पर था वह इधर धीरे-धीरे हट गया है और इधर वह यह विश्वास करने लगा है कि सचमुच वह सार्जेण्ट को प्यार करती थी। इस लिए उस ने फूलो को प्यार करना छोड दिया।"

"अच्छा ! लेकिन यह हुआ कैसे ? उस ने तो अपने मन में इतना गहरा विश्वास जमा रखा था कि मैं समझता था कि मरते दम तक उस का पागलपन न छूटेगा।" चन्दर ने कहा।

"नही, बात यह हुई कि तुम्हारे जाने के दो-तीन दिन बाद मैंने एक दिन सोचा कि मान लिया जाय अगर मेरे और बर्टी के विचारो मे मत-भेद है तो इस के मतलब यह नही कि मैं उस के गुलाब चुरा कर उसे मानसिक पीडा पहुँचाऊँ और उस का पागलपन और बढाऊँ। बुद्धि और तर्क के अलावा भावना और सहानुभूति का भी एक महत्त्व मुझे लगा ौर मैंने फूल चुराना छोड दिया। दो-तीन दिन वह बेहद खुश रहा, बेहद रा और मुझे भी बडा सन्तोष हुआ कि लो अब बर्टी शायद ठीक हो ाये। लेकिन तीसरे दिन सहसा उस ने अपना खुरपा फेंक दिया, कई के पौधे उखाड कर फेंक दिये और मुझ से बोला—"अब तो कोई , भी नही चुराता, अब भी वह इन फूलो में नही मिलती। वह ज़रूर सार्जेण्ट के साथ जाती है। वह मुझे प्यार नही करती, हर्गिज़ नही

करती।" और वह रोने लगा। बस उसी से वह गुलाबो के पास नही जाता और आज-कल बहुत अच्छे-अच्छे सूट पहन कर घूमता है और कहता है क्या मैं सार्जेण्ट से कम सुन्दर हूं? और इधर वह बिलकुल पागल हो गया है। पता नही किस से अपने-आप लडता रहता है।"

चन्दर ने ताज्जुब से सिर हिलाया।

"हां, मुझे बडा दु ख हुआ!" पम्मी बोली—"मैंने तो हमदर्दी की कि फूल चुराने बन्द कर दिये और उस का नतीजा यह हुआ। पता नही क्यो कपूर, मुझे तो लगता है कि हमदर्दी करना इस दुनिया मे सब से बडा पाप है। आदमी से हमदर्दी कभी नही करनी चाहिए।"

चन्दर ने सहसा अपनी घडी देखी।

"क्यो, अभी तुम नही जा सकते। बैठो और बातें सुनो, इस लिए मैंने तुम्हें दोस्त बनाया है। आज दो-तीन साल हो गये मैंने किसी से बातें ही नही की है और तुम से इस लिए मैंने मित्रता की है कि बातें करूंगी।"

चन्दर हंसा—"आपने मेरा अच्छा उपयोग ढूंढ निकाला।"

"नही उपयोग नही कपूर! तुम मुझे गलत न समझना। जिन्दगी ने मुझ से इतनी बाते बतायी है और यह किताबें जो मैं इधर पढने लगी हूं, इन्होने मुझे इतनी बातें बतायी है कि मैं चाहती हूं कि उन पर बात-चीत कर के अपने मन का बोझ हलका कर लूं। और तुम्हें बैठ कर सुननी होगी सभी बातें!"

"हां, मैं तैयार हूं लेकिन किताबें पढनी कब से शुरू कर दी तुम ने?" चन्दर ने ताज्जुब से पूछा।

"अभी उस दिन मैं डॉ० शुक्ला के यहां गयी। उन की लडकी से मालूम हुआ कि तुम्हें कविता पसन्द है। मैंने सोचा उसी पर बातें करूं और मैंने कविताएं पढनी शुरू कर दी।"

"अच्छा तो मैं देखता हूं कि दो-तीन हफ्ते में भाई और बहन दोनों में कुछ परिवर्तन आ गये।"

पम्मी कुछ वोली नही, हँस दी।

"मैं सोचता हूँ पम्मी कि आज सिनेमा देखने जाऊँ। कार है साथ में, अभी पन्द्रह मिनिट वाकी है। चाहो तो चलो।"

"सिनेमा! आज चार साल से मैं कही नही गयी हूँ। सिनेमा, हॉजी, वाल डास सभी जगह जाना वन्द कर दिया है मैंने। मेरा दम घुटेगा हाल के अन्दर। लेकिन चलो देखें, अव भी कितने हो लोग वैसे ही खुशी से सिनेमा देखते होगे।" एक गहरी साँस लेकर पम्मी वोली—"वर्टी को ले चलोगे?"

"हाँ, हाँ! तो चलो उठो, फिर देर हो जायेगी!" चन्दर ने घडी देखते हुए कहा।

पम्मी फौरन अन्दर के कमरे में गयी और एक जार्जेट का हलका भूरा गाउन पहन कर आयी। इस रग से वह जैसे निखर आयी। चन्दर ने उस की ओर देखा, तो वह लजा गयी और वोली—"इस तरह से मत देखो। मैं जानती हूँ यह मेरा सव से अच्छा गाउन है। इस में कुछ अच्छी लगती होऊँगी। चलो!" और आकर उस ने वेतकल्लुफी से उस के कन्धे पर हाथ रख दिया।

दोनो वाहर आये तो वर्टी लॉन पर घूम रहा था। उस के पैर लड-खडा रहे थे लेकिन वह वडी शान से सीना ताने था। "वर्टी, आज मिस्टर कपूर मुझे सिनेमा दिखलाने जा रहे हैं। तुम भी चलोगे?"

"हूँ!" वर्टी ने सिर हिला कर जोर से कहा—"सिनेमा जाऊँगा? नही। भूल कर भी नही। तुम ने मुझे क्या समझा है? मैं सिनेमा ।?" धीरे-धीरे उस का स्वर मन्द पड गया अगर सिनेमा में सार्जेण्ट के साथ मिल गयी तो! तो मैं उस का गला घोट दूँगा।" ने गले को दवाते हुए वर्टी वोला और इतनी जोर से दवा दिया अपना ला कि आँखें लाल हो गयी और खाँसने लगा। खाँसी वन्द हुई तो वोला—"वह मुझे प्यार नही करती। वह सार्जेण्ट को प्यार करती है।

वह उसी के साथ घूमती है। अगर वह मिल जायेगी सिनेमा मे तो मैं उस की हत्या कर डालूँगा, तो पुलिस आयेगी और खेल खत्म हो जायेगा। तुम जानते हो मि० कपूर मै उस से कितनी नफरत करता हूँ। कितनी नफरत करता हूँ और, और लेकिन नही, कौन जानता है मैं नफरत करता होऊँ मुझे कुछ समझ मे नही आता मैं पागल हूँ, ओफ!" और वह सिर थाम कर बैठ गया।

पम्मी ने चन्दर का हाथ पकड कर कहा—"चलो यहाँ रहने से उस का दिमाग़ और खराब होगा। आओ!"

दोनों जा कर कार में बैठे। चन्दर खुद ही ड्राइव कर रहा था तो पम्मी बोली, "बहुत दिन से मैं ने कार नही ड्राइव की है। आओ आज ड्राइव करूँ।"

पम्मी ने स्टीयरिङ् अपने हाथ में ले ली। चन्दर इधर बैठ गया।

थोडी देर में कार रीजेण्ट के सामने जा पहुँची। चित्र था—'सेलामी, ह्वेयर शी डान्स्ड' ['सेलामी जहाँ वह नाची थी]।' चन्दर ने टिकिट लिया और दोनो ऊपर बैठे। ऊपर भीड कम थी। सिर्फ़ तीन-चार लोग थे। ये लोग बहुत दूर एक सीट पर जा कर बैठ गये। अभी न्यूज़ रील चल रही थी। सहसा पम्मी ने कहा—"कपूर, सेलामी की कहानी मालूम है?"

"न! क्या यह कोई उपन्यास है?" चन्दर ने पूछा।

"नही, यह बाइबिल की एक कहानी है। असल में एक राजा था हेराद। उस ने अपने भाई को मार कर उस की पत्नी से अपनी शादी कर ली। उस की भतीजी थी सेलामी जो बहुत सुन्दर थी और बहुत अच्छा नाचती थी। हेराद उस पर मुग्ध हो गया। लेकिन सेलामी एक पैग़म्बर पर मुग्ध थी। पैग़म्बर ने सेलामी के प्रणय को ठुकरा दिया। एक बार हेराद ने सेलामी से कहा कि यदि तुम नाचो तो मैं तुम्हें कुछ दे सकता हूँ। सेलामी नाची और पुरस्कार में उस ने अपना अपमान करने वाले पैग़म्बर का सिर माँगा। हेराद वचनबद्ध था। उस ने पैग़म्बर का सिर

तो दे दिया लेकिन वाद में इस भय से कि कही राज्य पर कोई आपत्ति न आवे उस ने सेलामी को भी मरवा डाला ।"

चन्दर को यह कहानी वहुत अच्छी लगी । तव तो चित्र वहुत ही अच्छा होगा उस ने सोचा । सुधा की परीक्षा है वरना सुधा को भी दिखला देता । लेकिन क्या नैतिकता है इन पाश्चात्य देशो की कि अपनी भतीजी पर ही हेराद मुग्ध हो गया । उस ने कहा पम्मी से—

"लेकिन हेराद अपनी भतीजी पर ही मुग्ध हो गया !"

"तो क्या हुआ ! यह तो सेक्स है मि० कपूर । सेक्स कितनी भयकर शक्तिशाली भावना है यह भी शायद तुम नही समझते । अभी तुम्हारी आँखो में वडा भोलापन है । तुम रूप की आग के ससार से दूर मालूम पडते हो, लेकिन शायद दो-एक साल वाद तुम भी जानोगे कि यह कितनी भयकर चीज है । आदमी के सामने वक्त-बेवक्त, नाता-रिश्ता, मर्यादा-अमर्यादा कुछ भी नही रह जाता । वह अपनी भतीजी पर मोहित हुआ तो क्या ! मैं ने तो तुम्हारे यहाँ एक पौराणिक कहानी पढी थी कि महादेव अपनी लडकी सरस्वती पर मुग्ध हो गये ।"

"महादेव नही ब्रह्मा ।" चन्दर वोला ।

"हाँ, हाँ ब्रह्मा । मैं भूल गयी थी । तो यह तो सेक्स है । आदमी को कहाँ ले जाता है यह अन्दाज भी नही किया जा सकता । तुम तो अभी वच्चो की तरह भोले हो और ईश्वर न करे तुम कभी इस प्याले की शरवत चखो । मैं तो तुम्हारी इसी पवित्रता को प्यार करती हूँ ।" पम्मी चन्दर की ओर देख कर कहा । "तुम जानते हो मैं ने तलाक क्यों । मेरा पति मुझे वहुत चाहता था लेकिन मैं विवाहित जीवन के सनात्मक पहलू से घवडा उठी । मुझे लगने लगा मैं आदमी नही हूँ वस मास का लोथडा हूँ जिसे मेरा पति जव चाहे मसल दे, जव चाहे ऊव गयी थी । एक गहरी नफ़रत थी मेरे मन में । तुम आये तो तुम वडे पवित्र लगे । तुम ने आते ही प्रणय-याचना नही की । तुम्हारी आँखो में

भूख नही थी। हमदर्दी थी, स्नेह था, कोमलता थी, निश्छलता थी। मुझे तुम काफी अच्छे लगे। तुम ने मुझे अपनी पवित्रता दे कर जिला दिया ।"

चन्दर को एक अजब-सा गौरव अनुभव हुआ। और पम्मी के प्रति एक बहुत ऊँची आदर-भावना। उस ने पवित्रता दे कर जिला दिया। सहसा चन्दर के मन में आया—लेकिन यह उस के व्यक्तित्व की पवित्रता किस की दी हुई है। सुधा की ही न! उसी ने तो उसे सिखाया है कि पुरुष और नारी मे कितने ऊँचे सम्बन्ध रह सकते है।

"क्या सोच रहे हो?" पम्मी ने अपना हाथ कपूर की गोद में रख दिया।

कपूर सिहर गया लेकिन शिष्टाचारवश उस ने अपना हाथ पम्मी के कन्धे पर रख दिया। पम्मी ने दो क्षण के बाद अपना हाथ हटा लिया और बोली—"कपूर, मैं सोच रही हूँ अगर यह विवाह-सस्था हट जाये तो कितना अच्छा हो। पुरुष और नारी में मित्रता हो। बौद्धिक मित्रता और दिल की हमदर्दी। यह नही कि आदमी औरत को वासना की प्यास बुझाने का प्याला समझे और औरत आदमी को अपना मालिक। असल मे बँधने के बाद ही पता नही क्यो सम्बन्धो में विकृति आ जाती है। मैं तो देखती हूँ कि प्रणय-विवाह भी होते है तो वह असफल हो जाते हैं क्योंकि विवाह के पहले आदमी औरत को ऊँची निगाह से देखता है, हमदर्दी और प्यार की चीज समझता है और विवाह के बाद सिर्फ़ वासना की। मैं तो प्रेम मे भी विवाह-पक्ष में नही हूँ और प्रेम में भी वासना का विरोध करती हूँ।"

"लेकिन हर लड़की ऐसी थोड़े ही होती है।" चन्दर बोला—"तुम्हें वासना से नफरत हो लेकिन हर एक को नही।"

"हर एक को होती है। लडकियाँ बस वासना की एक झलक, एक हल्की सिहरन, एक गुदगुदी पसन्द करती है। बस, उसी के पीछे उन

पर चाहे जो दोष लगाया जाये लेकिन अधिकतर लडकियाँ कम वासना-प्रिय होती हैं, लडके ज्यादा।"

चित्र शुरू हो गया। वह चुप हो गयी। लेकिन थोडी ही देर में मालूम हुआ कि चित्र भ्रमात्मक था। वह बाइबिल की सेलामी की कहानी नही थी। वह एक अमेरिकन नर्तकी और कुछ डाकुओ की कहानी थी। पम्मी ऊब गयी। अब जब डाकू पकड कर सेलामी को एक जगल में ले गये तो इण्टरवल (अवकाश) हो गया और पम्मी ने कहा—"अब चलो, आधे ही चित्र से तबीयत ऊब गयी।"

दोनो उठ खडे हुए और नीचे आये।"

"कपूर, अबकी बार तुम ड्राइव करो!" पम्मी बोली।

"नही, तुम्ही ड्राइव करो" ' कपूर बोला।

"कहाँ चलें"—पम्मी ने स्टार्ट करते हुए कहा।

"जहाँ चाहो।" कपूर ने विचारों में डूबे हुए कहा।

पम्मी ने गाडी खूब तेज चला दी। सडकें साफ थीं। पम्मी का कालर फहराने लगा और उड कर चन्दर के गालों पर थपकियाँ लगाने लगा। चन्दर दूर खिसक गया। पम्मी ने चन्दर की ओर देखा और बजाय कालर ठीक करने के गले का एक बटन और खोल दिया और चन्दर को पास खीच लिया। चन्दर चुपचाप बैठ गया। पम्मी ने एक हाथ स्टीयरिंग पर रखा और एक हाथ से चन्दर का हाथ पकडे रही जैसे वह चन्दर को दूर नही जाने देगी। चन्दर के बदन में एक हलकी सिहरन नाच रही थी। ?, ? शायद इसलिए कि हवा ठण्डी थी या शायद इसलिए कि उस ने ^ का हाथ अपने हाथ से हटाने की कोशिश की। पम्मी ने हाथ खीच लिया और कार के अन्दर की बिजली जला दी।

कपूर चुपचाप ठाकुर साहब के बारे में सोचता रहा। कार चलती रही। जब चन्दर का ध्यान टूटा तो उस ने देखा कार मैकफर्सन लेक के पास रुकी है।

दोनो उतरे। बीच में सडक थी, इधर नीचे उतर कर झील और उधर गंगा बह रही थी। आठ बजा होगा। रात हो गयी थी, चारो तरफ सन्नाटा था। बस सितारो की हलकी रोशनी थी। मैकफर्सन झील काफ़ी सूख गयी थी। किनारे-किनारे मछली मारने के मचान बने थे।

"इधर आओ!" पम्मी बोली। और दोनो नीचे उतर कर मचान पर जा बैठे। पानी का धरातल शान्त था। सिर्फ कही-कही मछलियो के उछलन या साँस लेने से पानी हिल जाता था। पास ही के नीवाँ गांव में किसी के यहाँ शायद शादी थी जो शहनाई का हलका स्वर हवाओ की तरगो पर हिलता डुलता हुआ आ रहा था। दोनो चुपचाप थे। थोडी देर बाद पम्मी ने कहा—"कपूर, चुपचाप रहो कुछ बात मत करना उधर देखो पानी में। सितारों का प्रतिबिम्ब देख रहे हो। चुप्पे से सुनो, ये सितारे क्या बातें कर रहे हैं।"

पम्मी सितारो की ओर देखने लगी। कपूर चुपचाप पम्मी की ओर देखता रहा। थोडी देर बाद सहसा पम्मी एक बाँस से टिक कर बैठ गयी। उस के गले के दो बटन खुले हुए थे और उन में से रूप की चाँदनी फटी पडती थी। पम्मी आँखें बन्द किये बैठी थी। चन्दर ने उस की ओर देखा और फिर जाने क्यो उस से देखा नही गया। वह फिर सितारों की ओर देखने लगा। पम्मी के कालर के बीच से सितारे टूट-टूट कर बरस रहे थे।

सहसा पम्मी ने आँखें खोल दी और चन्दर का कन्धा पकड कर बोली—"कितना अच्छा हो अगर आदमी हमेशा सम्बन्धो में एक दूरी रखे। सेक्स न आने दे। ये सितारे हैं देखो कितने नजदीक हैं। करोडो बरस के साथ है, लेकिन कभी भी एक-दूसरे को छूते तक नही तभी तो सग निभ भी जाता है।" सहसा उस की आवाज में जाने क्या छलक आया कि चन्दर जैसे मदहोश हो गया—बोली वह—"बस ऐसा हो कि आदमी अपने प्रेमास्पद को निकटतम ला कर छोड दे, उस को बाँधे न। कुछ ऐसा हो कि होटो के पास खीच कर छोड दे।" और पम्मी ने चन्दर

का माथा होठो तक ला कर छोड दिया। उस की गरम-गरम सांसे चन्दर की पलको पर वरस गयी ""कुछ ऐसा हो कि आदमी उसे अपने हृदय तक खीच कर फिर हटा दे।" और चन्दर को पम्मी ने अपनी बांहो में घेर कर अपने वक्ष तक खीच कर छोड दिया। वक्ष की गरमाई चन्दर के रोम-रोम में सुलग उठी। वह वेचैन हो उठा। उस के मन में आया वह अभी यहां से चला जाये। जाने कैसा लग रहा था उसे। सहसा पम्मी वोली—"लेकिन नही, हम लोग मित्र हैं और कपूर तुम वहुत पवित्र हो, निष्कलक हो, और तुम पवित्र रहोगे। मैं जितनी दूरी, जितना अन्तर, जितनी पवित्रता पसन्द करती हूं, वह तुम मे है और हम लोगो में हमेशा निभेगी जैसे इन सितारो में हमेशा निभती आयी है।"

चन्दर चुपचाप सोचने लगा वह पवित्र है। एकाएक उस का मन जैसे ऊवने लगा। जैसे एक विहग शिशु घवरा कर अपने नीड के लिए तडप उठता है, वैसे ही वह इस वक्त तडप उठा सुवा के पास जाने के लिए—क्यो? पता नही क्यो? यहां कुछ है जो उसे जकड लेना चाहता है। वह क्या करे?

पम्मी उठी, वह भी उठा। बांस का मचान हिला। लहरो में हरकत हुई। करोडो साल से अलग और पवित्र सितारे हिले, आपस मे टकराये और चूर-चूर हो कर विखर गये।

रात-भर चन्दर को ठीक से नीद नही आयी। अव गरमी काफी पडने लगी थी। एक सूती चादर से ज्यादा नही ओढा जाता था और चन्दर ने

वह भी आदना छोड दिया था, लेकिन उस दिन रात को अकसर एक अजब-सी कँपकँपी उसे झकझोर जाती थी और वह कस कर चादर लपेट लेता था, फिर जब उस की तबीयत घटने लगती थी तो वह उठ बैठता था। उसे रात-भर नीद नही आयी, बार-बार झपकी आयी और लगा कि खिडकी के बाहर के सुनसान अँधेरे में से अजब-सी आवाज़ें आती हैं और नागिन बन कर उस की साँसो में लिपट जाती है। वह परेशान हो उठता है, इतने में फिर कही से कोई मीठी सतरगी सगीत की लहर आती है और उसे सचेत और सजग कर जाती है। एक बार उस ने देखा कि सुधा और गेसू कही चली जा रही हैं। उस ने गेसू को कभी नही देखा था लेकिन उस ने सपने में गेसू को पहचान लिया। लेकिन गेसू तो पम्मी की तरह गाउन पहने हुए थी। फिर देखा बिनती रो रही है और इतना बिलख-बिलख कर रो रही है कि तबीयत घबडा जाये। घर में कोई नही है। चन्दर समझ नही पाता कि वह क्या करे! अकेले घर में एक अपरिचित लडकी से बोलने का साहस भी नहीं होता उस का। किसी तरह हिम्मत कर के वह समीप पहुँचा तो देखा अरे यह तो सुधा है। सुधा टूटी हुई-सी मालूम पडती। वह बहुत हिम्मत कर के सुधा के पास बैठ गया। उस ने सोचा सुधा को आश्वासन दे लेकिन उस के हाथो पर जाने कैसी सुकुमार जजीरें कसी हुई हैं। उस के मुँह पर किसी की साँसो का भार है। वह निश्चेष्ट है। उस का मन अकुला उठा। वह चौंक कर जाग गया तो देखा वह पसीने से तर है। वह उठ कर टहलने लगा। वह जाग गया था लेकिन फिर भी उस का मन स्वस्थ नही था। कमरे में ही टहलते टहलते वह फिर लेट गया। लगा जैसे सामने की खुली खिडकी से सैकडो तारे टूट-टूट कर भयानक तेजी से आ रहे हैं और उस के माथे से टकरा-टकरा कर चूर-चूर हो जाते हैं। एक मर्मान्तक पीडा उस की नसो में खौल उठी और लगा जैसे उस के अग-अंग में चिताएँ धधक रही हैं।

जैसे-तैसे रात कटी और सुबह उठते ही वह युनिवर्सिटी जाने से पहले

सुधा के यहाँ गया। सुधा लेटी हुई पढ़ रही थी। डॉक्टर शुक्ला पूजा कर रहे थे। बुआजी शायद रात को चली गयी थी क्योंकि बिनती बैठी तरकारी काट रही थी और खुशनजर आती थी। चन्दर सुधा के कमरे में गया। देखते ही सुधा मुसकरा पड़ी। बोली कुछ नहीं लेकिन आते ही उस ने चन्दर के अंग-अंग को अपनी निगाहों के स्वागत में समेट लिया। चन्दर सुधा के पैरों के पास बैठ गया।

"कल रात को तुम कार लेकर वापस आये तो चुप्पे से चले गये—" सुधा बोली—"कहो कल कौन-सा खेल देखा ?"

"कल बहुत बड़ा खेल देखा, बहुत बड़ा खेल सुधी !" चन्दर व्याकुलता से बोला—"अरे जाने कैसा मन हो गया कि रात-भर नींद ही नहीं आयी !" और उस के बाद चन्दर सब बता गया। कैसे वह सिनेमा गया। उस ने पम्मी से क्या बात की। उस के बाद वैसे कार पर उस ने चन्दर को पास खींच लिया। कैसे वे लोग मैकफर्सन झील गये और वहाँ पम्मी पागल हो गयी। फिर कैसे चन्दर को एकदम सुधा की याद आने लगी और फिर रात-भर चन्दर को कैसे-कैसे सपने आये। सुधा बहुत गम्भीर हो कर मुँह में पेन्सिल दबाये कुहनी टेके सब चुपचाप सुनती रही और अन्त में बोली—"तो तुम इतने परेशान क्यों हो गये चन्दर ! उस ने तो अच्छी ही बात कही थी। यह तो अच्छा ही है कि ये सब जिसे तुम सेक्स कहते हो यह सम्बन्धों में न आयें। इस में क्या बुराई है ? क्या तुम चाहते हो कि सेक्स आये !"

"कभी नहीं, तुम मुझे अभी तक नहीं समझ पायी ?"

"तो ठीक है, तुम भी नहीं चाहते कि सेक्स आये और वह भी नहीं चाहती कि सेक्स आये तो झगड़ा क्या है ? क्यों, तुम उदास क्यों हो इतने ?" सुधा बोली बड़े अचरज से।

"लेकिन उस का व्यवहार कैसा है ?" चन्दर ने सुधा से कहा।

"ठीक तो है। उस ने बता दिया तुम्हें कि इतना अन्तर होना

चाहिए। समझ गये। तुम लालची आदमी, चाहते होगे यह भी अन्तर न रहे! इसी लिए तुम उदास हो गये छि!" होठो में मुसकराहट और आँखो में शरारत की झलक छिपाते हुए सुधा बोली।

"तुम तो मजाक करने लगी।" चन्दर बोला।

सुधा सिर्फ चन्दर की ओर देख कर मुसकराती रही। चन्दर सामने लगी हुई तस्वीर की ओर देखता रहा। फिर उस ने सुधा के कबूतरो-जैसे उजले मासूम नन्हें पैर अपने हाथ में ले लिये और भर्रायी हुई आवाज़ में बोला—"सुधा, तुम कभी हम पर विश्वास न हार बैठना।"

सुधा ने किताब बन्द कर के रख दी और उठ कर बैठ गयी। उस ने चन्दर के दोनो हाथ अपने हाथो में ले कर कहा—"पागल कही के! हमें कहते हो अभी सुधा में बचपन है और तुम में क्या है! वाह रे छुईमुई का फूल। किसी ने हाथ पकड लिया, किसी ने बदन छू लिया तो घबडा गये। तुम से अच्छी लडकियाँ होती है।" सुधा ने उस के दोनो हाथ झकझोरते हुए कहा।

"नही सुधी, तुम नही समझती। मेरी जिन्दगी में एक ही विश्वास की चट्टान है। वह हो तुम। मैं जानता हूँ कि कितने हा जल-प्रलय हों लेकिन तुम्हारे सहारे मैं हमेशा ऊपर रहूँगा। तुम मुझे डूबने नही दोगी। तुम्हारे ही सहारे मैं लहरो से खेल भी सकता हूँ लेकिन तुम्हारा विश्वास अगर कभी हिला तो मैं किन अँधेरी गहराइयो में डूब जाऊँगा यह कभी मैं सोच नही पाता।" चन्दर ने बडे कातर स्वर में कहा।

सुधा बहुत गम्भीर हो गयी। क्षण-भर वह चन्दर के चेहरे की ओर देखती रही, फिर चन्दर के माथे पर झूलती हुई एक लट को ठीक करती हुई बोली—"चन्दर, और मैं किस के विश्वास पर चल रही हूँ बोलो! लेकिन मैंने तो कभी नही कहा कि चन्दर अपना विश्वास मत हारना! और क्या कहूँ। मुझे अपने चन्दर पर पूरा विश्वास है। मरते दम तक विश्वास रहेगा। फिर तुम्हारा मन इतना डगमगा क्यो गया? बुरी बात है न?"

चन्दर ने सुधा के कन्धे पर अपना सिर रख दिया। सुधा ने उस का हाथ लेकर कहा—"लाओ, यहाँ छुआ था पम्मी ने तुम्हें!" और उस का हाथ होठो तक ले गयी। चन्दर काँप गया, यह आज सुधा को क्या हो गया है। लेकिन होठो तक हाथ ले जा कर झाडने-फूँकने वालो की तरह सुधा ने फूँक कर कहा—"जाओ तुम्हारे हाथ से पम्मी के स्पर्श का जहर उतर गया। अब तो ठीक हो गये। पवित्र हो गये! छू मन्तर!"

चन्दर हँस पडा। उस का मन शान्त हो गया। सुधा में जादू था। सचमुच जादू था। विनती चाय ले आयी। दो प्याले। सुधा बोली—"अपने लिए भी लाओ।" विनती ने सिर हिलाया।

सुधा ने चन्दर की ओर देख कर कहा—"ये पगली जाने क्यो तुम से झेंपती है?"

"झेंपती कहाँ हूँ?" विनती ने प्रतिवाद किया और प्याला भी ले आयी और जमीन पर बैठ गयी। सुधा ने प्याला मुँह से लगाया और बोली—"चन्दर, तुम ने पम्मी को ग़लत समझा है। पम्मी बहुत अच्छी लडकी है। तुम से बडी भी है और तुम से ज्यादा समझदार, और उसी तरह व्यवहार भी करती है। तुम अगर कुछ सोचते हो तो गलत सोचते हो। मेरा मतलब समझ गये न।"

"जी हाँ गुरुआनीजी अच्छी तरह से!" चन्दर ने हाथ जोड कर विनम्रता से कहा। विनती हँस पडी और उस की चाय छलक गयी। नीचे रखी हुई चन्दर की जरीदार पेशावरी सैण्डिल भीग गयी। विनती झुक कर एक अँगोछे से उसे पोछना चाहा तो सुधा चिल्ला उठी··· "हाँ, छुओ मत। कही इन की सैण्डिल भी बाद मे आ के न रोने लगे। सुन विनती, एक लडकी ने कल इन्हें छू लिया तो आप आज उदास थे। अभी तुम सैण्डिल छुओ तो वो कही जा के कोतवाली में रपट न कर दे।"

चन्दर हँस पडा। और उस का मन धुल कर ऐसे निखर गया जैसे

शरद् का नीलम आकाश।

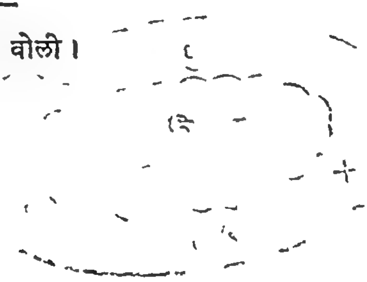
"अब पम्मी के यहाँ कब जाओगे ?" सुधा ने शरारत-भरी मुसकराहट से पूछा।

"कल जाऊँगा। ठाकुर साहब पम्मी के हाथ अपनी कार बेच रहे हैं तो कागज पर दस्तखत करना है।" चन्दर ने कहा—"अब मैं निडर हूँ। कहो बिनती, तुम्हारे ससुर का क्या कोई खत नही आया ?"

बिनती झेंप गयी। चन्दर चल दिया।

थोडी दूर जा कर फिर मुड़ा और बोला—"अच्छा सुधा, आज तक जो काम हो बता दो फिर एक महीने तक तुम से कोई मतलब नही। हम थीसिस पूरी करेंगे। समझी ?"—

"समझे!" हाथ पटक कर सुधा बोली।



सचमुच डेढ़ महीने तक चन्दर को होश नही रहा कि कहाँ क्या हो रहा है। बिसरिया रोज सुधा और बिनती को पढाने आता रहा, सुधा और बिनती दोनो ही का इम्तहान खत्म हो गया। पम्मी दो बार सुधा और चन्दर से मिलने आयी लेकिन चन्दर एक बार भी उस के यहाँ नही गया। मिश्रा का एक खत बरेली से आया लेकिन चन्दर ने उस का भी जवाब नही दिया। डॉक्टर साहब ने अपनी पुस्तक के दो अध्याय लिख डाले लेकिन उस ने एक दिन भी बहस नही की। बिनती उसे बराबर चाय, दूध, नाश्ता, शरबत और खरबूजा देती रही। लेकिन चन्दर ने एक बार भी उस के ससुर का नाम ले कर नही चिढाया। सुधा क्या

करती है, कहाँ जाती है, चन्दर से क्या कहती है, चन्दर को कोई होश नही, बस उस की पेन, उस के कागज़, स्टडीरूम की मेज़ और चन्दर है कि आखिर थीसिस पूरी कर के ही माना।

७ मई को जब उस ने थीसिस का आखिरी पन्ना लिख कर पूरा किया और सन्तोष की साँस ली तो देखा कि शाम को पाँच बजे है, सायवान मे अभी परदा पडा है लेकिन धूप उतार पर है और लू बन्द हो गयी है। उस की कुरसी के पीछे एक चटाई बिछाये हुए सुधा बैठी है। ह्यूगो का अधपढा हुआ उपन्यास बगल मे खुला हुआ औंधा पडा है और आप चन्दर की एक मोटी-सी इकनॉमिक्स की किताब खोले उस पर कलम से कुछ गोदा-गोदी कर रही है।

"सुधा!" एक गहरी साँस ले कर अँगडाई लेते हुए चन्दर ने कहा—"लो आज आखिरकार जान छूटी। बस अब दो-तीन महीने में भावदौलत डॉक्टर बन जायेंगे।"

सुधा अपने कार्य में व्यस्त। चन्दर ने क्या कहा यह सुन कर भी गुम। चन्दर ने हाथ बढा कर चोटी झटक दी। "हाय रे! हमें नही अच्छा लगता चन्दर!' सुधा बिगड कर बोली—"तुम्हारे काम के बीच मे कोई बोलता है तो बिगड जाते हो और हमारा काम थोडे ही महत्व-पूर्ण है!" कह कर फिर सुधा पेन ले कर गोदने लगी।

"आखिर कौन-सी उपनिषद् लिख रही हैं आप? जरा देखें तो!" चन्दर ने किताब खींच ली। टाज़िग की इकनॉमिक्स की किताब मे एक रे पन्ने पर सुधा ने एक बिल्ली बनायी थी और अगर आप की निगाह १ चूक जाये तो आप कह नही सकते कि यह चौरासी लाख योनियो में किस योनि का जीव है, लेकिन अब चूँकि सुधा कह रही है कि यह ल्ली है, इस लिए मानना होगा कि यह बिल्ली ही है।

चन्दर सुधा की बाँह पकड कर कहा—"उठ! आलसी कहीं की, चल उठा ये पोथा! चल के पापा के पैर छू आयें।"

सुधा हाथ में नोट लिये उछलते हुए स्टडी रूम में आयी, पीछे-पीछे चन्दर। सुधा रुक गयी और अपने मन में हिसाब लगाते हुए बोली—दस रुपये पौण्ड ऊन। एक पौण्ड में आठ लच्छी। छह लच्छी में एक शाल। बाक़ी बची दो लच्छी। दो लच्छी में एक स्वेटर। बस! एक बिनती का स्वेटर एक हमारा शाल।"

चन्दर का माथा ठनका। अब मिठाई की उम्मीद नहीं। फिर भी कोशिश करनी चाहिए।

"सुधा, अभी से शाल क्या करोगी? अभी तो बहुत गरमी है!" चन्दर बोला।

"अब की जाड़े में तुम्हारा ब्याह होगा तो आखिर हम लोग नयी-नयी चीज़ का इन्तज़ाम करें न। अब डाक्टर हुए, अब डॉक्टरानी आयेंगी!" सुधा बोली।

खैर बहुत मनाने-बहलाने-फुसलाने पर सुधा मिठाई मँगवाने को राज़ी हुई। जब नौकर मिठाई लेने चला गया तो चन्दर ने चारों ओर देख कर पूछा—"कहाँ गयी बिनती? उसे भी बुलाओ कि अकेले-अकेले खा लोगी!"

"वह पढ़ रही है मास्टर साहब से!"

"क्यों? इम्तहान तो खत्म हो गया, अब क्या पढ़ रही है!" चन्दर ने पूछा।

"विदुषी का दूसरा खण्ड तो दे रही है न सितम्बर में!" सुधा बोली।

"अच्छा बुलाओ बिसरिया को भी!" चन्दर बोला।

"अच्छा, मिठाई आने दो।" सुधा ने कहा और फ़ाइल की ओर देख कर कहा—"मुझे इस कम्बख्त पर बहुत गुस्सा आ रहा है।"

"क्यों इस की वजह से तुम डेढ़ महीने सीधे से बोले तक नहीं। इम्तहान वाले दिन सुबह-सुबह तुम्हें हाथ जोड़ने जाती तो तुम ने सिर पर हाथ भी नहीं रखा!" सुधा ने शिकायत के स्वर में कहा।

"तो अब आशीर्वाद दे दे। अब तो खत्म हुई थीसिस। अब जितना चाहो बात कर लो। थीसिस न लिखते तो फिर तुम्हारे चन्दर को उपाधि कहाँ से मिलती ?" चन्दर ने दुलार से कहा।

"तो फिर कन्वोकेशन पर तुम्हारी गाउन हम पहन कर फोटो खिचावेंगे।" सुधा मचल कर बोली। इतने में नौकर मिठाई ले आया। "जाओ विनतीजी को बुला लाओ।" चन्दर ने कहा।

विनती आयी।

"तुम पढ़ चुकी।" चन्दर ने पूछा।

"अभी नही।" विनती बोली।

"अच्छा अब आज पढाई बन्द करो, उन्हें भी बुला लाओ। मिठाई खायी जाये।" चन्दर ने कहा।

"अच्छा।" कह कर विनती जो मुडी तो सुधा बोली—"अरे लालचिन! ये तो पूछ ले कि मिठाई काहे की है।"

"मुझे मालूम है।" विनती मुसकराती हुई बोली—"उन के यहाँ आज गये होंगे, पम्मी के यहाँ फिर आज कुछ उस दिन ऐसी बात हुई होगी।"

सुधा हँस पडी। चन्दर झेंप गया। विनती चली गयी बिसरिया को बुलाने।

"अब तो ये तुम से बोलने लगी!" सुधा ने कहा।

"हाँ यह है बडी सुशील लडकी और बहुत शान्त। हमें बहुत अच्छी लगती है। बोलना तो जैसे आता ही नही इसे।"

"हाँ लेकिन अब खूब सीख रही है। इस की गुरु मिली है गेसू। हम से भी ज्यादा गेसू से पटने लगी है इस की। दोनो ब्याह करने जा रही है और दोनो उसी की बातें करती है जब मिलती है तब।" सुधा बोली।

"और कविता भी करती हैं यह, तुम एक बार कह रही थी ?" चन्दर ने पूछा।

"नहीं जी, असल में एक बडी सुन्दर-सी नोट-बुक थी, उस में यह जाने क्या लिखती थी ? हमें नहीं दिखाती थी। बाद में हम ने देखा कि यह डायरी है। उस में धोबी का हिसाब लिखती थी।"

"तो कविता नहीं लिखती ! ताज्जुब है, वरना सोलह बरस के बाद प्रेम कर के कविता करना तो लडकियो का फ़ैशन हो गया है, उतना ही व्यापक जितना उलटा पल्ला ओढना।" चन्दर बोला।

"चला तुम्हारा नारी-पुराण !" सुधा बिगड़ी।

मिठाई खाने वाले आये। आगे-आगे बिनती, पीछे-पीछे बिसरिया। अभिवादन के बाद बिसरिया बैठ गया। "कहो बिसरिया, तुम्हारी शिष्या कैसी है ?"

"बस अद्वितीय।" कवि बिसरिया ने सिर हिला कर कहा। सुधा मुसकरा दी, चन्दर की ओर देख कर।

"और ये सुधा कैसी थी ?"

"बस, अद्वितीय।" बिसरिया ने उसी तरह कहा।

"दोनो अद्वितीय हैं ? साथ ही !" चन्दर ने पूछा।

सुधा और बिनती दोनो हँस दी। बिसरिया नहीं समझ पाया कि उस ने कौन सी हँसने की बात की थी और जब नहीं समझ पाया तो खुद पहले सिर खुजलाने लगा फिर खुद भी हँस पडा। उस की हँसी पर तीनों और हँस पडे।

"चन्दर, मास्टर साहब भी खूब हैं। एक दिन बिनती को महादेवी की वह कविता पढा रहे थे, 'विरह का जल जात जीवन', तो पढते पढते बडी गहरी साँसें भरने लगे।" सुधा बोली।

चन्दर और बिनती दोनो हँस पडे। बिसरिया पहले तो खुद हँसा फिर बोला—

"हाँ, भाई क्या करे, कपूर, तुम तो जानते ही हो मैं बहुत भावुक हूँ। मुझ से वर्दाश्त नही होता। एक बार तो ऐसा हुआ कि पर्चे में एक करुण-रस का गीत आ गया अर्थ लिखने को। मैं उसे पढ़ते ही इतना व्यथित हो गया कि उठ कर टहलने लगा। प्रोफेसर समझे मैं दूसरे लडके की कापी देखने उठा हूँ, तो उन्होंने निकाल दिया। मुझे निकाले जाने का अफसोस नही हुआ लेकिन कविता पढ कर मुझे बहुत रुलाई आयी।"

सुधा हँसी तो चन्दर ने आँख के इशारे से मना किया और गम्भीरता से बोला—"हाँ भाई बिसरिया, सो तो सही है ही। तुम इतने भावुक न हो तो इतना अच्छा कैसे लिख सकते हो? तो तुम ने पर्चा छोड दिया?"

"हाँ, मैं पर्चे वग़ैरह की क्या परवाह करता हूँ? मेरे लिए इन सभी वस्तुओ का कुछ भी अर्थ नही। मैं भावना की उपासना करता हूँ। उस समय परीक्षा देने की भावना से ज्यादा सबल उस कविता की करुण-भावना थी। और इस तरह मैं कितनी बार फ़ेल हो चुका हूँ। मेरे साथ वह पढ़ता था न हरिहर टण्डन, वह अब बस्ती कॉलेज का प्रिन्सिपल है। एक मेरा सहपाठी था, वह रेडियो का प्रोग्राम एक्ज़ीक्यूटिव है·"

"और एक तुम्हारा सहपाठी तो हम ने सुना कि असेम्बली का स्पीकर भी है।" चन्दर बात काट कर बोला। सुधा फिर हँस पडी। बिनती भी हँस पडी।

खैर मिठाई का भोग प्रारम्भ हुआ। बिसरिया कुछ तकल्लुफ़ कर रहा था तो बिनती बोली—"खाइए, मिठाई तो विरह-रोग में और भावुकता में बहुत स्वास्थ्यप्रद होती है!"

'अच्छा, अब तो बिनती का कण्ठ फूट निकला! अपने गुरुजी को बना रही है।" चन्दर बोला।

बिसरिया थोडी देर बाद चला गया। "अब मुझे एक पार्टी में जाना है।" उस ने कहा। जब आखिर में रसगुल्ला बच रहा तो बिनती हाथ में ले कर बोली— 'कौन लेगा?" आज पता नही क्यो बिनती बहुत खुश

थी और बोल रही थी।

चन्दर बोला—"हमें दो!"

सुधा बोली—"हमे!"

बिनती ने एक बार चन्दर की ओर देखा, एक बार सुधा की ओर। चन्दर बोला—"देखें बिनती हमारी है या सुधा की है।"

बिनती ने झट रसगुल्ला सुधा के मुँह में रख दिया और सुधा के सिर पर सिर रख कर बोली—

"हम अपनी दीदी के हैं!" सुधा ने आधा रसगुल्ला बिनती को दे दिया तो बिनती चन्दर को दिखला कर खाते हुए सुधा से बोली—"दीदी, ये हमें बहुत बनाते हैं, अब हम भी तुम्हारी तरह बोलेंगे तो इन का दिमाग ठीक हो जायेगा।"

"हम तुम दोनो मिल के इन का दिमाग़ ठीक करेंगे?" सुधा ने प्यार से बिनती को थपथपाते हुए कहा—"अब हम तश्तरियाँ धो कर रख दें!" और वह तश्तरियाँ उठा कर चल दी।

"पानी नही दोगी?" चन्दर बोला।

बिनती पानी ले आयी और बोली—"हम तो आप का इतना काम करते हैं और आप जब देखो तब हमें बनाते रहते हैं। आप को क्या आनन्द आता है हमें बनाने मे?"

चन्दर ने पल-भर बिनती की ओर देखा और बोला—"असल में बनाने के बाद जब तुम झेंप जाती हो तो·· हाँ ऐसे हो।"

बिनती ने फिर झेंप कर मुँह छिपा लिया और लाज से सकुच कर इन्द्र-वधू बन गयी। बिनती देखने-सुनने मे बडी अच्छी थी। उस की गठन तो सुधा की तरह नही थी लेकिन उस के चेहरे पर एक फिरोजी आभा थी जिस में गुलाल के डोरे थे। आँखें उस की बडी-बडी और पलकों में इस तरह डोलती थी जैसे किसी सुकुमार सीपी में कोई बहुत बडा मोती डोले। झेंपती थी तो मुँह पर साँझ मुसकरा उठती थी और गालो में

फूलो के कटोरो-जैसे दो छोटे-छोटे गड्ढे। और विनती के अग-अग में एक रूप की लहर थी जो नागिन की तरह लहराती थी और उस की आदत थी कि बात करते समय अपनी गरदन ज़रा टेढ़ी कर लेती थी और अँगुलियो से अपने आंचल का छोर उमेठने लगती थी।

इस वक़्त चन्दर की बात पर वह झेंप गयी और उसी तरह आंचल के छोर को उमेठती हुई, मुसकान छिपा कर उस ने ऐसी निगाह से चन्दर की ओर देखा जिस में थोडी लाज, थोडा गुस्सा, थोडी प्रसन्नता और थोडी शरारत थी।

चन्दर एक दम बोल उठा—"अरे सुधा, सुधा, ज़रा विनती की आंख देखो इस वक़्त।"

"आयी अभी।" बगल के कमरे में तश्तरी रखते हुए सुधा बोली।

"बडे खराब हैं आप।" विनती बोली।

"हां बनाओगी न आज से हमे? हमारा दिमाग़ ठीक करोगी न?" बहुत बोल रही थी आज, अब बताओ!"

"बताये क्या? अभी तक हम बोलते नही थे तभी न?"

"अब अपनी ससुराल में बोलना टुइयां ऐसी! वही तुम्हारे बोल पर रीझेंगे लोग।" चन्दर ने फिर छेडा।

"छि राम राम! ये सब मज़ाक़ हम से मत किया कीजिए। दीदी से क्यो नही कहते जिन की अभी होने जा रही है।"

"अभी उन की कहां, अभी तो तय भी नही हुई।"

"तय ही समझिए, फोटो इन की उन लोगो ने पसन्द कर ली। अच्छा एक बात कहें, मानिएगा?" विनती बडे आग्रह और दीनता के स्वर मे बोली।

"क्या?" चन्दर ने आश्चर्य से पूछा। विनती आज सहसा कितना बोलने लगी है। विनती बोली नीचे ज़मीन की ओर देखती हुई—"आप हम से ब्याह के बारे मे मज़ाक न किया कीजिए, हमें अच्छा नही लगता।"

"ओहो, ब्याह अच्छा लगता है लेकिन उस के बारे में मजाक नहीं। गुड खाया गुलगुले से परहेज!"

"हाँ, यही तो बात है।" बिनती सहसा गम्भीर हो गयी—"आप समझते होंगे कि मैं ब्याह के लिए उत्सुक हूँ, दीदी भी यही समझती हैं, लेकिन मेरा ही दिल जानता है कि ब्याह की बात सुन कर मुझे कैसा लगने लगता है। लेकिन फिर भी मैंने ब्याह करने से इनकार नहीं किया। खुद दौड़-दौड़ कर उस दिन दुबेजी की सेवा में लगी रही, इसी लिए कि आप देख चुके हैं कि माँ का व्यवहार मुझ से कैसा है? आप यहाँ इस परिवार को देख कर समझ नहीं सकते कि मैं वहाँ कैसे रहती हूँ, कैसे मांजी की बातें बरदाश्त करती हूँ। वह नरक है, मेरे लिए माँ की गोद नरक है और मैं किसी तरह निकल भागना चाहती हूँ। कुछ चैन तो मिलेगा!" बिनती की आँख में आँसू आ गये और सिसकती हुई बोली—"लेकिन आप या दीदी जब ये कहते हैं, तो मुझे लगता है कि मैं कितनी नीच हूँ, कितनी पतित हूँ कि खुद अपने ब्याह के लिए व्याकुल हूँ, लेकिन आप न कहा करें तो अच्छा है!" बिनती के आँसुओं का तार बँध गया था।

सुधा बग़ल के कमरे से सब कुछ सुन रही थी। आयी और चन्दर से बोली—"बहुत बुरी बात है चन्दर! बिनती, क्यों रो रही हो रानी? बुआ का स्वभाव ही ऐसा है, उस से हमेशा अपना दिल दुखाने से क्या लाभ?" और पास जा कर उस को छाती से लगा कर सुधा बोली—"मेरी राजदुलारी! अब रोना मत ऐं! अच्छा हम लोग कभी मजाक नहीं करेंगे! बस अब चुप हो जाओ रानी बिटिया की तरह। जाओ मुँह धो आओ।"

बिनती चली गयी। चन्दर लज्जित-सा बैठा था।

"लो, अब तुम्हें भी रुलाई आ रही क्या?" सुधा ने बहुत दुलार से कहा—"तुम उस से ससुराल का मजाक मत किया करो। वह बहुत

दुखी है और बहुत क़दर करती है तुम्हारी। और किसी की मज़ाक की बात और है। हम या तुम कहते है तो उसे लग जाता है।"

"अच्छा, वह कह रही थी तुम्हारी फोटो उन लोगो ने पसन्द कर ली है"—चन्दर बात बदलने के खयाल से कहा।

"और क्या, कोई हमारी शकल तुम्हारी तरह है कि लोग नापसन्द कर दें।" सुधा अकड कर बोली।

"नही सच-सच बताओ ?" चन्दर ने पूछा।

"अरे जी", लापरवाही से मुँह बिचका कर सुधा बोली—"उन के पसन्द करने से क्या होता है ? मैं ब्याह-उलाह नही करूँगी। तुम इस फेर मे न रहना कि हमें निकाल दोगे यहाँ से।"

इतने में बिनती आ गयी। वह अब भी उदास थी। सुधा उठी और बिनती को पकड लायी और ढकेल कर चन्दर के बगल में बिठा दिया।

"लो चन्दर अब इसे दुलार कर लो तो अभी गुरगुराने लगे। बिल्ली कही की !" सुधा ने उसे हलकी-सी चपत मार कर कहा। बिनती का मुँह अपनी हथेलियो मे ले कर अपने मुँह के बहुत पास ला कर बिनती की आँखो मे आँख डाल कर कहा—"पगली कही की, आँसू का खजाना लुटाती फिरती है।"

"चन्दर" डॉक्टर शुक्ला ने पुकारा और चन्दर उठ कर चला गया।

सुधा पर इन दिनो घूमना सवार था। सुबह हुई कि चप्पल पहनी और गायब। गेसू, दामिनी, प्रभा, लीला शायद ही कोई लडकी बची होगी

जिस के यहाँ जाकर सुधा ऊधम न मचा आती हो, और चार सुख-दु.ख की बातें न कर आती हो। विनती को घूमना कम पसन्द था, हाँ जब कभी सुधा गेसू के यहाँ जाती थी तो विनती जरूर जाती थी, उसे सुधा की सभी मित्रो मे गेसू सब से ज्यादा पसन्द थी। डॉक्टर शुक्ला के ब्यूरो मे छुट्टी हो चुकी थी पर वे सुधा के ब्याह तय करने की कोशिश कर रहे थे। इस लिए वह बाहर भी नही गये थे। चन्दर डेढ़ महीने तक लगातार मेहनत करने के बाद पढाई-लिखाई की ओर से आराम कर रहा था और उस ने निश्चित कर लिया था कि अब बरसात के पहले वह किताब छुएगा नही। बडे आराम के दिन कटते थे उस के। सुबह उठ कर साइकिल पर गगा नहाने जाता था और वहाँ अकसर ठाकुर साहब से भी मुलाकात हो जाती थी। डॉक्टर शुक्ला ने भी कई दफे इरादा किया कि वे गगाजी चला करें लेकिन एक तो उन से दिन में काम नही होता था। शाम को वे घूमते थे और सुबह उठ कर एक किताब लिखते थे।

एक दिन सुबह लिख रहे थे कि चन्दर आया और उन के पैर छू कर बोला—"प्रान्तीय सरकार का वह पुरस्कार कल शाम को आ गया।"

"कौन-सा ?"

"वह जो युक्त प्रान्त में माता और शिशुओ की मृत्यु-सख्या पर मैं ने निबन्ध लिखा था, उसी पर।"

"तो क्या पदक आ गया ?" डॉक्टर शुक्ला ने कहा।

"जी" अपने जेब में से एक मखमली डिब्बा निकाल कर चन्दर ने दिया। पदक बहुत सुन्दर था। जगमगाता हुआ स्वर्णपदक जिस में प्रान्तीय राजमुद्रा अकित थी।

"ईश्वर तुम्हें बहुत यशस्वी करें जीवन में।" डॉक्टर शुक्ला ने पदक उस की कमीज में अपने हाथो से लगा दिया, "जाओ, अन्दर सुधा को दिखा आओ।"

चन्दर जाने लगा तो फिर डॉक्टर साहब ने बुलाया—"अच्छा, अब सुधा की शादी का इन्तजाम करना है। हम से तो कुछ होने से रहा, तुम्ही को सब करना होगा। और सुनो जेठ दशहरा को लडके का भाई और माँ देखने आ रही है। और बहन भी आयेगी गाँव से।"

"अच्छा!" चन्दर बैठ गया कुरसी पर और बोला—"कहाँ है लडका? क्या करता है?"

"लडका शाहजहाँपुर मे है। घर के जमीदार है ये लोग। लडका एम० ए० है। और अच्छे विचारो का है। उस ने लिखा है सिर्फ दस आदमी बारात में आवेगे, एक दिन रुकेगे। सस्कार के बाद चले जायेगे। सिवा लडकी के गहने-कपडे और लडके के गहने-कपडे के और कुछ भी नही स्वीकार करेंगे।"

"अच्छा, ब्राह्मणो में तो ऐसा कुल नही मिलेगा।"

"तभी तो! सुधा की क़िस्मत है, वरना तुम बिनती के ससुर को तो देख ही चुके हो। अच्छा जाओ सुधा से मिल आओ।"

वह सुधा के कमरे में गया। सुधा थी ही नही वह आँगन में आया। देखा महराजिन खाना बना रही है और बिनती बरामदे में बुरादे की अँगीठी पर पकौडियाँ बना रही है।

"आइए," बिनती बोली—"दीदी तो गयी है गेसू को बुलाने। आज गेसू की दावत है। पीढे पर बैठिएगा, लीजिए।" एक पीढा चन्दर की ओर बिनती ने खिसका दिया। चन्दर बैठ गया। बिनती ने उस के हाथ मे मखमली डिब्बा देखा तो पूछा—"यह क्या लाये? कुछ दीदी के लिए है क्या? यह तो अँगूठी मालूम पडती है।"

"अँगूठी, वह क्या दाल में मिला के खायेगी! जगली कही की! उसे क्या तमीज है अँगूठी पहनने की।"

"हमारी दीदी के लिए ऐसी बात की तो अच्छा नही होगा, हाँ!" बिनती ने उसी तरह गरदन टेढी कर आँखें डुलाते हुए धमकाया—"उन्हें

नही अँगूठी पहनना आयेगी तो क्या आपको आयेगी ? अब ब्याह में सोलहो सिंगार करेंगी ! अच्छा दीदी कैसी लगेंगी घूँघट काढ के ? अभी तक तो सिर खोले चकई की तरह घूमती फिरती है ।"

"तुम ने तो डाल ली आदत, ससुराल में रहने को !" चन्दर ने विनती से कहा ।

"अरे हमारा क्या !" एक गहरी साँस लेते हुए विनती ने कहा—"हम तो उसी के लिए बने थे । लेकिन सुधा दीदी को ब्याह-शादी मे न फँसना पडता तो अच्छा था । दीदी इन सब के लिए नही बनी थी । आप मामाजी से कहते क्यो नही ?"

चन्दर ने कुछ जवाब नही दिया । चुपचाप बैठा हुआ सोचता रहा । बिनती भी कडाही में से पकौडियाँ निकाल-निकाल कर थाली में रखने लगी । थोडी देर बाद जब वह घी मे पकौडियाँ डाल चुकी तब भी वह वैसे ही गुमसुम बैठा सोच रहा था ।

"क्या सोच रहे हैं आप ? नही बताइएगा । फिर अभी हम दीदी से कह देंगे कि बैठे-बैठे सोच रहे थे ।" विनती बोली ।

"क्या तुम्हारी दीदी का डर पडा है ?" चन्दर ने कहा ।

"अपने दिल से पूछिए । हम से नही बन सकते आप !" विनती ने मुसकरा कर कहा और उस के गालो में फूलो के कटोरे खिल गये—"अच्छा इस डिब्बे मे क्या है, कुछ प्राइवेट !"

"नही जी प्राइवेट क्या होगा, और वह भी तुम से ! सोने का मेडल है । मिला है मुझे एक लेख पर ।" और चन्दर ने डिब्बा खोल कर दिखला दिया ।

"आहा ! ये तो बहुत अच्छा है । हमे दे दीजिए ।" विनती बोली ।

"क्या करेगी तू ?" चन्दर ने हँस कर पूछा ।

"अपने आने वाले जीजाजी के लिए कान के बुन्दे बनवा लेंगे ।" विनती बोली—"अरे हाँ, आप को एक चीज़ दिखायेंगे ।"

"क्या ?"

"यह नही बताते। देखिएगा तो उछल पडिएगा।"

"तो दिखाओ न।"

"अभी तो दीदी आ रही होगी। दीदी के सामने नही दिखायेंगे।"

"सुधा से छिपा कर हम कुछ नही कर सकते यह तुम जानती हो।" चन्दर बोला।

"छिपाने की वात थोडे ही है। देख कर तब उन्हें बता दीजिएगा। वैसे हम खुद ही सुधा दीदी से क्या छिपाते है ? लो सुधा दीदी तो आ गयी—"

चन्दर ने पीछे मुड कर देखा। सुधा के हाथ में एक लम्बा-सा सरकण्डा था और उसे झण्डे की तरह फहराती हुई चली आ रही थी। चन्दर हँस पडा।

"खिल गये दीदी को देखते ही!" विनती बोली और एक गरम पकौडी चन्दर के ऊपर फेंक दी।

"अरे बडी शैतान हो गयी हो तुम इधर! पाजी कही की!" चन्दर बोला।

सुधा चप्पल उतार कर अन्दर आयी। झूमती इठलाती हुई चली आ रही थी।

"कहो सेठ स्वार्थीमल!" उस ने चन्दर को देखते ही कहा—"सुवह हुई और पकौडी की महक लग गयी तुम्हे!" और पीढा खीच कर उस के बगल मे बठ गयी और सरकण्डा चन्दर के हाथ पर रखते हुए बोली—"लो यह गन्ना। घर मे वो देना और गँडेरी खाना। अच्छा!" और हाथ बढा कर वह डिबिया उठा ली और बोली—"इस मे क्या है ? खोले या न खोले ?"

"अच्छा, अब तक तो हमारे विना पूछे खोल लेती हो। इसे पूछ के खोलेंगी!"

"अरे हम ने सोचा शायद इस डिबिया में पम्मी का दिल बन्द हो। तुम्हारी मित्र है, शायद स्मृति-चिह्न मे वही दे दिया हो।" और सुधा ने डिबिया खोली तो उछल पडी, "यह तो उसी निबन्ध पर मिला है जिस का चार्ट तुम बनाते थे ?"

"हाँ !"

"तब तो ये हमारा है।" डिबिया अपने वक्ष में छिपा कर सुधा बोली।

"तुम्हारा तो है ही ? मैं अपना कब कहता हूँ।" चन्दर ने कहा।

"लगा कर देखें !" और उठ कर सुधा चल दी।

"बिनती, दो पकौडी तो दो।" और दो पकौडियाँ ले कर खाते हुए चन्दर सुधा के कमरे में गया। देखा सुधा शीशे के सामने खडी है और मेडल अपनी साडी में लगा रही है। वह चुपचाप खडा हो कर देखने लगा। सुधा ने मेडल लगाया और एक क्षण-भर तन कर देखती रही। फिर उसे एक हाथ से वक्ष पर चिपका लिया और फिर मुँह झुका कर उसे चूम लिया।

"बस कर दिया न गन्दा उसे !" चन्दर मौका नही चूका।

और सुधा तो जैसे पानी-पानी। गालो से लाज की रतनारी लपटें फूटी और एडी तक धधक उठी। फौरन शीशे के पास से हट गयी और बिगड कर बोली—"चोर कही के ! क्या देख रहे थे ?"

बिनती इतने मे तश्तरी में पकौडी रख कर ले आयी। सुधा ने झट से मेडल उतार दिया और बोली—"लो रखो सहेज कर।"

"क्यो पहने रहो न !"

"ना बाबा, परायी चीज, अभी खो जाये तो डाँड भरना पडे।" और मेडल चन्दर की गोद में रख दिया।

बिनती ने धीमे से कहा—"या मुरली मुरलीधर की अधरान धरी अधरा न धरौंगी।"

चन्दर और सुधा दोनो झेंप गये। "लो गेसू आ गयी।"

सुधा की जान में जान आ गयी। चन्दर ने विनती का कान पकड कर कहा—"वहुत उलटा-सीधा वोलने लगी है।"

विनती ने कान छुडाते हुए कहा—"कोई झूठ थोडे ही कहती हूँ।"

चन्दर चुपचाप सुधा के कमरे में पकाडियाँ खाता रहा। वगल के कमरे मे सुधा, गेसू, फूल और हसरत वैठे वातें करते रहे। विनती उन लोगो को नाश्ता देती रही। उस कमरे में नाश्ता पहुँचा कर विनती एक गिलास मे पानी ले कर चन्दर के पास आयी और पानी रख कर वोली—"अभी हलुआ ला रही हूँ, जाना मत।" और पल-भर में तश्तरी में हलुआ रखकर ले आयी।

"अव मै चल रहा हूँ।" चन्दर ने कहा।

"वैठो, अभी हम एक चीज दिखायेंगे। जरा गेसू से वात कर आयें।" विनती वडे भोले स्वर में वोली—"आइए, हसरत मियाँ।" और पल-भर मे नन्हें-मुन्ने से छह वर्ष के हसरत मियाँ तनजेव का कुरता और चूडीदार पायजामे पर पीले रेशम की जाकेट पहने कमरे में खरगोश की तरह उछल आये।

"आदावअरज।" वडे तमीज से उन्होने चन्दर को सलाम किया। चन्दर ने उसे गोद में उठा कर पास विठा दिया। "लो हलुआ खाओ हसरत।"

हसरत ने सिर हिला दिया और वोला—"गेसू ने कहा था जा कर चन्दर भाई से हमारा आदाव कहना और कुछ खाना मत। हम खायेंगे नही।"

चन्दर वोला, "हमारा भी नमस्ते कह दो उन से जा कर।"

हसरत उठ खडा हुआ—"हम कह आयें।" फिर मुड कर वोला—"आप तव तक हलुआ खतम कर देंगे?"

चन्दर हँस पडा—"नही हम तुम्हारा इन्तजार करेंगे, जाओ।"

हसरत सिर हिलाता हुआ चला गया।

इतने में सुधा आयी और बोली—"गेसू की ग़ज़ल सुनो यहाँ बैठ कर। आवाज़ आ रही है न! फूल भी आयी है इसलिए गेसू तुम्हारे सामने नहीं आयेगी वरना फूल अम्मीजान से शिकायत कर देगी। लेकिन वह तुम से मिलने को बहुत इच्छुक है। अच्छा यहीं से सुनना बैठे-बैठे—"

सुधा चली गयी। गेसू ने गाना शुरू किया। बहुत महीन, पतली लेकिन बेहद मीठी आवाज़ जिस में कसक और नशा दोनों घुले मिले थे। चन्दर एक तकिया टेक कर बैठ गया और उनींदा-सा सुनने लगा। ग़ज़ल ख़त्म होते ही सुधा भाग कर आयी—"कहो सुन लिया न!" और उन के पीछे-पीछे आया हसरत और सुधा के पैरों में लपट कर बोला—"सुधा, हम हलुआ नहीं खायेंगे!"

सुधा हँस पड़ी—"पागल कहीं का। ले खा।" और उस के मुँह में हलुआ ठूँस दिया। हसरत को गोद में ले कर वह चन्दर के पास बैठ गयी और गेसू के बारे में बताने लगी—"गेसू गरमियाँ बिताने नैनीताल जा रही है। वहीं अख्तर की अम्मी भी आयेंगी और मंगनी की रस्म वहीं [illegible] करेंगी। अब वह पढ़ेगी नहीं। जुलाई तक उस का निकाह हो [illegible]येगा। कल रात की गाड़ी से जा रहे हैं ये लोग। वग़ैरह-वग़ैरह।" [illegible] बैठी-बैठी गेसू और फूल से बातें करती रही। थोड़ी देर बाद सुधा [illegible] कर चली गयी। "तुम जाना मत, आज खाना यहीं खाना, मैं बिनती को तुम्हारे पास भेज दे रही हूँ, उस से बातें करते रहना।"

थोड़ी देर बाद बिनती आयी। उस के हाथ में कुछ था जिसे वह अपने आँचल में छिपाये हुई थी। आयी और बोली—"अब दीदी नहीं हैं, जल्दी से देख लीजिए।"

"क्या है?" चन्दर ने ताज्जुब से पूछा।

"जीजाजी की फोटो। बिनती ने मुसकरा कर कहा और एक छोटी सी बहुत कलात्मक फोटो चन्दर के हाथ में रख दिया।

"अरे यह तो मिश्र हैं। कामरेड कैलाश मिश्र।" और चन्दर के दिमाग़ में बरेली की बातें, लाठी चार्ज सभी कुछ घूम गया। चन्दर के मन में इस वक़्त जाने कैसा-सा लग रहा था। कभी बडा अचरज होता, कभी एक सन्तोष होता कि चलो सुधा के भाग्य की रेखा उसे अच्छी जगह ले गयी, फिर कभी सोचता कि मिश्र इतना विचित्र स्वभाव का है, सुधा की उस से निभेगी या नही? फिर सोचता नही सुधा भाग्यवान् है। इतना अच्छा लडका मिलना मुश्किल था।

"आप इन्हें जानते है?" बिनती ने पूछा।

"हां, सुधा भी इन्हें नाम से जानती है शक्ल से नही। लेकिन अच्छा लडका है, बहुत अच्छा लडका। चन्दर ने एक गहरी सांस ले कर कहा और फिर चुप हो गया। बिनती बोली—"क्या सोच रहे हैं आप?"

"कुछ नही।" पलको में आये हुए आंसू रोक कर और होठो पर मुसकान लाने की कोशिश करते हुए चन्दर बोला—"मैं सोच रहा हूं, आज कितना सन्तोष है मुझे, कितनी खुशी है मुझे, कि सुधा एक ऐसे घर जा रही है जो इतना अच्छा है, ऐसे लडके के साथ जा रही है जो इतना ऊंचा है।" कहते-कहते चन्दर की आंखे भर आयीं।

बिनती चन्दर के बहुत पास खडी होकर बोली—"छि चन्दर बाबू! आप की आंखो में आंसू। यह तो अच्छा नही लगता। जितनी पवित्रता और ऊंचाई से आप ने सुधा के साथ निबाह किया है यह तो शायद देवता भी नही कर पाते और दीदी ने आप को जैसा निश्छल प्यार दिया है उस को पा कर तो आदमी स्वर्ग से भी ऊंचा उठ जाता है, फौलाद से भी ज्यादा ताकतवर हो जाता है, फिर आज इतने शुभ अवसर पर आप में यह कमजोरी कहा से? हमे तो बड़ी शरम लग रही है। आज तक दीदी तो दूर हम तक को आप पर गर्व था। अच्छा मैं फोटो रख आऊं तो आऊं वरना दीदी आ जायेगी।" बिनती ने फ़ोटो ली और चली गयी।

बिनती जब लौटी तो चन्दर स्वस्थ था। बिनती की ओर क्षण-भर

हटो चन्दर, छूना मत मुझे !" और जैसे उस मे जाने कहाँ की ताक़त आ गयी हो, उस ने अपने को छुडा लिया।

चन्दर ने दबी जबान कहा—"छि सुधा ! यह तुम से उम्मीद नही थी मुझे। यह भावुकता तुम्हें शोभा नही देती। और बातें कैसी कर रही हो तुम ! हम वही चन्दर हैं न !"

"हाँ वही चन्दर हो ! और तभी तो ! इस सारी दुनिया मे तुम्ही एक रह गये थे मुझे फ़ोटो दिखा कर पसन्द कराने को।" सुधा सिसक-सिसक कर रोने लगी—"पापा ने भी धोखा दे दिया। हमें पापा से यह उम्मीद नही थी।"

"पगली ! कौन अपनी लडकी का हमेशा अपने पास रख पाया है !" चन्दर बोला।

"तुम चुप रहो चन्दर। हमें तुम्हारी बोली जहर लगती है। 'सुधा यह फ़ोटो तुम्हें पसन्द है ?' तुम्हारी जुबान हिली कैसे ? शरम नही आयी तुम्हें। हम कितना मानते थे पापा को, कितना मानते थे तुम्हें ? हमें यह नही मालूम था कि तुम लोग ऐसा करोगे !" थोडी देर चुपचाप सिसकती रही सुधा और फिर बबक कर उठी—"कहाँ है वह फोटो ? लाओ अभी मैं जाऊँगी पापा के पास ! मैं कहूँगी उन से, हाँ, मैं इस लडके को पसन्द करती हूँ। वह बहुत अच्छा है, बहुत सुन्दर है लेकिन मैं उस से शादी नही करूँगी, मैं किसी से शादी नही करूँगी ! झूठी बात है" • " और उठ कर पापा के कमरे की ओर चली।

"खबरदार जो कदम बढ़ाया !" चन्दर ने डाँट कर कहा। "बैठो इधर।"

"मैं नही रुकूँगी !" सुधा ने अकड कर कहा।

"नही रुकोगी !"

"नहीं रुकूँगी !"

और चन्दर का हाथ तैश मे उठा और एक भरपूर तमाचा सुधा के

गाल पर पा[illegible]। सुधा के गाल पर [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] स्तब्ध ! जैसे पत्थर बन गया हो। [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] निगाहें जम गयीं। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] गयीं।

चन्दर एक बार सुधा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] पटक कर बैठ गया। सुधा [illegible] [illegible] [illegible] चन्दर के घुटनों पर [illegible] [illegible] दिया। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]—"चन्दर, [illegible] तुम्हारे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]!"

चन्दर ने सुधा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] फाड़ कर [illegible] [illegible] था। सुधा [illegible] [illegible] [illegible] चन्दर के पैरों पर सिर [illegible] [illegible]—"चन्दर, [illegible] [illegible] [illegible] आश्रय से निकाल कर [illegible] [illegible]! चन्दर! [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], जिन्दगी में [illegible] तुम्हारी मन [illegible] [illegible]!"

चन्दर एक गहरी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], गया। पाँच मिनिट बीत गये। कमरे में [illegible] [illegible], [illegible] [illegible]। सुधा चन्दर के पाँवों को छाती से चिपकाये [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] रही थी दीवारों के पार, दिशाओं के पार, क्षितिजों के पार [illegible] [illegible] घड़ी चल रही थी टिक टिक..

चन्दर ने सिर उठाया और कहा—"सुधा, [illegible] [illegible] [illegible]—" सुधा ने सिर ऊपर उठाया, चन्दर बोला—"सुधा, तुम [illegible] [illegible] [illegible] समझ रही होगी, लेकिन अगर तुम समझ पाती कि मैं [illegible] सोचता हूँ! क्या समझता हूँ।" सुधा कुछ नहीं बोली—चन्दर [illegible] [illegible]—"मैं तुम्हारे मन को समझता हूँ सुधा! तुम्हारे मन ने जो [illegible] से [illegible] नहीं कहा, वह मुझ से कह दिया था—लेकिन सुधा हम दोनों एक दूसरे की जिन्दगी में क्या इसी लिए आये कि एक दूसरे को कमजोर बना दें या हम लोगों ने स्वर्ग की ऊँचाइयों पर साथ बैठ कर आत्मा का संगीत सुना

सिर्फ इसी लिए कि उसे अपने ब्याह की शहनाई मे बदल दें।"

"ग़लत मत समझो चन्दर, मैं गेसू नही कि अख़्तर से ब्याह के सपने देखूँ और न तुम्ही अख़्तर हो चन्दर! मैं जानती हूँ कि मैं तुम्हारे लिए राखी के सूत से भी ज्यादा पवित्र रही हूँ लेकिन मैं जैसी हूँ मुझे वैसी ही क्यो नही रहने देते! मैं किसी से शादी नही करूँगी। मैं पापा के पास रहूँगी। शादी को मेरा मन नही कहता मैं क्यो करूँ? तुम गुस्सा मत हो, दु:खी मत हो, तुम आज्ञा दोगे तो मैं कुछ भी कर सकती हूँ, लेकिन हत्या करने के पहले यह तो देख लो कि मेरे हृदय में क्या है?" सुधा ने चन्दर के पाँवो को अपने हृदय से और भी दबा कर कहा।

"सुधा, तुम एक बात सोचो। अगर तुम सब का प्यार बटोरती चलती हो तो कुछ तुम्हारी जिम्मेदारी है या नही? पापा ने आज तक तुम्हें किस तरह पाला। अब क्या तुम्हारा यह फ़र्ज़ है कि उन की बात को ठुकराओ? और एक बात और सोचो—हम पर कुछ विश्वास कर के ही उन्होने कहा है कि मैं तुम से फ़ोटो पसन्द कराऊँ? अगर अब तुम इनकार कर देती हो तो एक तरफ पापा को तुम से धक्का पहुँचेगा दूसरी ओर मेरे प्रति उन के विश्वास को कितनी गहरी चोट लगेगी। हम उन्हे क्या मुह दिखाने लायक रहेंगे भला? तो तुम क्या चाहती हो? महज अपनी थोडी-सी भावुकता के पीछे तुम सभी की ज़िन्दगी चौपट करने के लिए तैयार हो। यह तुम्हें शोभा नही देता है। क्या कहेंगे पापा? कि चन्दर ने अभी तक तुम्हे यही सिखाया था? हमे लोग क्या कहेंगे? बताओ? आज तुम शादी न करो। उस के बाद पापा हमेशा के लिए दु:खी रहा करें और दुनिया हमें कहा करे तब तुम्हे अच्छा लगेगा?"

"नही।" सुधा ने भर्राये हुए गले से कहा।

"तब, और फिर एक बात और है न सुधी! सोने की पहचान आग में होती है न! लपटो मे अगर उस मे और निखार आये तभी वह सच्चा सोना है। सचमुच मैंने तुम्हारे व्यक्तित्व को बनाया है या तुम ने मेरे

व्यक्तित्व को बनाया है यह तो तभी मालूम होगा जब कि हम लोग कठिनाइयो से, वेदनाओ से, सघर्षों से खेलें और बाद मे विजयी हो और तभी मालूम होगा कि सचमुच मैंने तुम्हारे जीवन में प्रकाश और बल दिया था। अगर सदा तुम मेरी बाँहो की सीमा में रहो और मैं तुम्हारी पलको की छाँह में रहा और बाहर के सघर्षो से हम लोग डरते रहे तो कायरता है। और मुझे अच्छा लगेगा कि दुनिया कहे कि मेरी सुधा, जिस पर मुझे नाज था वह कायर है ? बोलो ? तुम कायर कहलाना पसन्द करोगी ?"

"हाँ !" सुधा ने फिर चन्दर के घुटनो में मुँह छिपा लिया।

"क्या ? यह मैं सुधा के मुँह से सुन रहा हूँ ! छि ! पगली ! अभी तक तेरी निगाहो ने मेरे प्राणो में अमृत भरा है और मेरी साँसो ने तेरे पखो मे तूफानो की तेजी। और हमें तुम्हें तो आज खुश होना चाहिए कि अब सामने जो रास्ता है उस में हम लोगो को यह सिद्ध करने का अवसर मिलेगा कि सचमुच हम लोगो ने एक दूसरे को ऊँचाई और पवित्रता दी है। मैंने आज तक तुम्हारी सहायता पर विश्वास किया था। आज क्या तुम मेरा विश्वास तोड दोगी ? सुधा इतनी क्रूर क्यो हो रही हो आज तुम ? तुम साधारण लडकी नही हो। तुम ध्रुवतारो से ज्यादा प्रकाशमान हो ! तुम ये क्यो चाहती हो कि दुनिया कहे सुधा भी एक साधारण-सी भावुक लडकी थी और आज मैं अपने कान से सुनूँ ! बोलो सुधी ?" चन्दर ने सुधा के सिर पर हाथ रख कर कहा।

सुधा ने आँखें उठायी, बडी कातर निगाहो से चन्दर की ओर देखा और सिर झुका लिया। सुधा के सिर पर हाथ फेरते हुए चन्दर बोला—

"सुधा, मैं जानता हूँ मैं तुम पर शायद बहुत सख्ती कर रहा हूँ, लेकिन तुम्हारे सिवा और कौन है मेरा बताओ ! तुम्ही पर अपना अधिकार भी आजमा सकता हूँ। विश्वास करो मुझ पर सुधा, जीवन में अलगाव, दूरी, दु ख और पीडा आदमी को महान् बना सकती है। भावुकता और सुख हमें ऊँचे नही उठाते। बताओ सुधा, तुम्हें क्या पसन्द है ! मैं

ऊँचा उठूँ तुम्हारे विश्वास के सहारे, तुम ऊँचे उठो मेरे विश्वास के सहारे इस से अच्छा और क्या है सुधा! चाहो तो मेरे जीवन को एक पवित्र साधन बना दो चाहो एक छिछली अनुभूति।"

सुधा ने एक गहरी साँस ली, क्षण-भर घडी की ओर देखा और बोली—"इतनी जल्दी क्या है अभी चन्दर? तुम जो कहोगे मैं कर लूँगी!" और फिर वह सिसकने लगी—"लेकिन इतनी जल्दी क्या है? अभी मुझे पढ़ लेने दो।"

"नही, इतना अच्छा लडका फिर मिलेगा नही। और इस लडके के साथ तुम वहाँ भी पढ सकती हो। मैं जानता हूँ उसे। वह देवताओ सा निश्चल है। बोलो मैं पापा से कह दूँ तुम्हें पसन्द है?"

सुधा कुछ नही बोली!

"मौन का मतलब हाँ है न?" चन्दर ने पूछा।

सुधा ने कुछ नही कहा। झुक कर चन्दर के पैरो को अपने होठो से छू लिया और पलको से दो आँसू चू पडे। चन्दर ने सुधा को उठा लिया और उस के माथे पर हाथ रख कर कहा—"ईश्वर तुम्हारी आत्मा को सदा ऊँचा बनायेगा। सुधा!" उस ने एक गहरी साँस ले कर कहा—"मुझे तुम पर गर्व है" और फोटो उठा कर बाहर चला।

"कहाँ जा रहे हो! जाओ मत!" सुधा ने उस का कुरता पकड कर बडी आजिजी से कहा—"मेरे पास तबीयत घबराती है?"

चन्दर पलग पर बैठ गया। सुधा तकिये पर सिर रख कर लेट गयी और फटी-फटी पथरायी आँखो से जाने क्या देखने लगी। चन्दर भी चुप था। बिलकुल खामोश। कमरे में सिर्फ घडी चल रही थी, टिक' टिक''

थोड़ी देर बाद सुधा ने चन्दर के पैरो को अपने तकिये के पास खीच लिया और उस के तलवो पर ओठ रख कर उन मे मुँह छिपा कर चुपचाप लेटी रही। बिनती आयी। सुधा हिली भी नही। चन्दर ने देखा वह सो गयी थी। बिनती ने फोटो उठा कर इशारे से पूछा—"मजूर?—हाँ।"

विनती ने बजाय खुश होने के चन्दर की ओर देख कर सिर झुका लिया और चली गयी।

सुधा सो रही थी और चन्दर के तलवों में उस की नरम क्वाँरी साँसें गूँज रही थीं। चन्दर बैठा रहा। चुपचाप। उस की हिम्मत न पड़ी कि वह हिले और सुधा की नींद तोड़ दे। थोड़ी देर बाद सुधा ने करवट बदली तो वह उठ कर आँगन के शोफ़े पर जा कर लेट रहा और जाने क्या सोचता रहा।

जब उठा तो देखा धूप ढल गयी है और सुधा उस के सिरहाने बैठी उसे पंखा झल रही है। उस ने सुधा की ओर एक अपराधी-जैसी कातर निगाहों से देखा और सुधा ने बहुत दर्द से आँखें फेर लीं और ऊँचाइयों पर आखिरी साँसें लेती हुई मरणासन्न धूप की ओर देखने लगी।

चन्दर उठा और सोचने लगा तो सुधा बोली—"कल आओगे कि नहीं ?"

"क्यों नहीं आऊँगा ?" चन्दर बोला।

"मैंने सोचा शायद अभी दूर होना चाहते हो।" एक गहरी साँस ले कर सुधा बोली और पंखे की ओट में आँसू पोंछ लिये।

चन्दर दूसरे दिन सुबह नहीं गया। उस की थीसिस का बहुत-सा भाग टाइप हो कर आ गया था और उसे बैठा वह सुधार रहा था। लेकिन साथ ही पता नहीं क्यों उस का साहस नहीं हो रहा था वहाँ जाने का। लेकिन मन में एक चिन्ता थी सुधा की। वह कल से बिलकुल मुरझा गयी

थी। चन्दर को अपने ऊपर कभी-कभी क्रोध आता था लेकिन वह जानता था कि अपने हाथ से अपनी खुशी को क़ब्र में गाड रहा है, क्योकि वह जानता था कि यह तकलीफ का ही रास्ता ठीक रास्ता है। वह अपनी जिन्दगी में सस्तेपन के खिलाफ था। लेकिन उस के लिए सुधा की पलक का एक आँसू भी देवता की तरह था और सुधा के फूलो-जैसे चेहरे पर उदासी की एक रेखा भी उसे पागल बना देती थी। सुबह पहले तो वह नही गया, बाद में स्वय उसे पछतावा होने लगा और फिर वह अधीरता से पाँच बजने का इन्तजार करने लगा।

पाँच बजे और वह साइकिल ले कर पहुँचा। देखा सुधा और बिनती दोनो नही हैं। अकेले डॉक्टर शुक्ला अपने कमरे में बैठे है। चन्दर गया। "आओ, सुधा ने तुम से कह दिया, उसे पसन्द है ?" डॉक्टर शुक्ला ने पूछा।

"हाँ, उसे कोई एतराज नही।" चन्दर ने कहा।

"मैं पहले से जानता था। सुधा मेरी इतनी अच्छी है, इतनी सुशील है कि वह मेरी इच्छा का उल्लघन तो कर ही नही सकती। लेकिन चन्दर, कल से उस ने खाना-पीना छोड दिया है। बताओ इस से क्या फायदा ? मेरे बस मे क्या है ? मैं उसे हमेशा तो रख नही सकता। लेकिन, लेकिन आज सुबह खाते वक्त वह बैठी भी नही मेरे पास, बताओ " उन का गला भर आया—"बताओ, मेरा क्या कसूर है ?"

चन्दर चुप था।

"कहाँ है सुधा ?" चन्दर ने पूछा।

"गैरेज मे मोटर ठीक कर रही है। मैंने इतना मना किया कि धूप मे तप जाओगी, लू लग जायेगी—लेकिन मानी ही नही ! बताओ इस झल्लाहट से मुझे कैसा लगता है ?" वृद्ध पिता के कातर स्वर मे डाक्टर ने कहा—"जाओ चन्दर तुम्ही समझाओ ! मैं क्या कहूँ ?"

चन्दर उठ कर गया। मोटर गैरेज मे काफी गरमी थी, लेकिन

विनती वही एक चटाई विछाये पडी सो रही थी और सुधा इजन का कवर उठाये मोटर साफ करने में लगी हुई थी। विनती बेहोश सो रही थी। तकिया चटाई से हट कर जमीन पर चली गयी थी और चोटी फर्श पर सोयी हुई नागिन की तरह पडी थी। विनती का एक हाथ छाती पर था और एक हाथ जमीन पर। आंचल, आंचल न रह कर चादर बन गया था। चन्दर के जाते ही सुधा ने मुँह फेर कर देखा—"चन्दर, आओ।" क्षीण मुसकराहट उस के होठो पर दौड गयी। लेकिन इस मुसकराहट में उल्लास लुट चुका था, रेखाएं वाक़ी थी। सहसा उस ने मुड कर देखा—"विनती! अरे कैसे घोडा वेच कर सो रही है! उठ! चन्दर आये हैं!" विनती ने आंख खोली, चन्दर की ओर देखा, लेटे-ही-लेटे नमस्ते किया और आंचल सम्हाल कर फिर करवट वदल कर सो गयी।

"वहुत सोती है कम्वख्त!" सुधा वोली—"इतना कहा इस से कमरे में जा कर पखे में सो! लेकिन नही, जहाँ दीदी रहेगी वही ये भी रहेगी। मैं गैरेज में हूं तो ये कैसे कमरे में रहे। वही मरेगी जहाँ मैं मरूंगी।"

"तो तुम्ही क्यो गैरेज में थी! ऐसी क्या जरूरत थी अभी ही ठीक करने की!" चन्दर ने कहा, लेकिन कोशिश करने पर भी सुधा को आज डांट नही पा रहा था। पता नही कहाँ पर क्या टूट गया था।

"नही चन्दर, तवीयत ही नही लग रही थी। क्या करती! क्रोसिया उठाया, वह भी रख दिया। कविता उठायी, वह भी रख दी। कविता वगैरह मे तवीयत नही लगी। मन मे आया कोई कठोर काम हो, कोई नीरस काम हो लोहे-लक्कड, पीतल-फ़ौलाद का, तो मन लग जाये। तो चली आयी मोटर ठीक करने।"

"क्यो कविता मे भी तवीयत नही लगी? ताज्जुव है गेसू के साथ वैठ कर तुम तो कविता मे घण्टो गुजार देती थी!" चन्दर वोला।

"उन दिनो शायद किसी को प्यार करती रही होऊँ तभी कविता में

थी। चन्दर को अपने ऊपर कभी-कभी क्रोध आता था लेकिन वह जानता था कि अपने हाथ से अपनी खुशी को क़ब्र में गाड रहा है, क्योंकि वह जानता था कि यह तकलीफ़ का ही रास्ता ठीक रास्ता है। वह अपनी ज़िन्दगी में सस्तेपन के खिलाफ था। लेकिन उस के लिए सुधा की पलक का एक आंसू भी देवता की तरह था और सुधा के फूलों-जैसे चेहरे पर उदासी की एक रेखा भी उसे पागल बना देती थी। सुबह पहले तो वह नही गया, बाद में स्वय उसे पछतावा होने लगा और फिर वह अधीरता से पांच बजने का इन्तज़ार करने लगा।

पांच बजे और वह साइकिल ले कर पहुँचा। देखा सुधा और बिनती दोनो नही हैं। अकेले डॉक्टर शुक्ला अपने कमरे में बैठे है। चन्दर गया। "आओ, सुधा ने तुम से कह दिया, उसे पसन्द है ?" डॉक्टर शुक्ला ने पूछा।

"हाँ, उसे कोई एतराज नही।" चन्दर ने कहा।

"मैं पहले से जानता था। सुधा मेरी इतनी अच्छी है, इतनी सुशील है कि वह मेरी इच्छा का उल्लघन तो कर ही नही सकती। लेकिन चन्दर, कल से उस ने खाना-पीना छोड दिया है। बताओ इस से क्या फ़ायदा ? मेरे बस में क्या है ? मैं उसे हमेशा तो रख नही सकता। लेकिन, लेकिन आज सुबह खाते वक़्त वह बैठी भी नही मेरे पास, बताओ " उन का गला भर आया—"बताओ, मेरा क्या क़सूर है ?"

चन्दर चुप था।

"कहाँ है सुधा ?" चन्दर ने पूछा।

"गैरेज में मोटर ठीक कर रही है। मैंने इतना मना किया कि धूप मे तप जाओगी, लू लग जायेगी—लेकिन मानी ही नही ! बताओ इस झल्लाहट से मुझे कैसा लगता है ?" वृद्ध पिता के कातर स्वर में डॉक्टर ने कहा—"जाओ चन्दर तुम्ही समझाओ ! मैं क्या कहूँ ?"

चन्दर उठ कर गया। मोटर गैरेज में काफ़ी गरमी थी, लेकिन

विनती वही एक चटाई बिछाये पडी सो रही थी और सुधा इजन का कवर उठाये मोटर साफ करने में लगी हुई थी। विनती बेहोश सो रही थी। तकिया चटाई से हट कर जमीन पर चली गयी थी और चोटी फर्श पर सोयी हुई नागिन की तरह पडी थी। विनती का एक हाथ छाती पर था और एक हाथ जमीन पर। आंचल, आंचल न रह कर चादर बन गया था। चन्दर के जाते ही सुधा ने मुँह फेर कर देखा—"चन्दर, आओ।" क्षीण मुसकराहट उस के होठो पर दौड गयी। लेकिन इस मुसकराहट में उल्लास लुट चुका था, रेखाएँ बाक़ी थी। सहसा उस ने मुड कर देखा— "विनती! अरे कैसे घोडा बेच कर सो रही है! उठ! चन्दर आये है!" विनती ने आंख खोली, चन्दर की ओर देखा, लेटे-ही-लेटे नमस्ते किया और आंचल सम्हाल कर फिर करवट बदल कर सो गयी।

"बहुत सोती है कम्बख्त!" सुधा बोली—"इतना कहा इस से कमरे में जा कर पखे में सो! लेकिन नही, जहाँ दीदी रहेगी वही ये भी रहेगी। मैं गैरेज में हूँ तो ये कैसे कमरे में रहे। वही मरेगी जहाँ मैं मरूँगी।"

"तो तुम्ही क्यो गैरेज में थी! ऐसी क्या जरूरत थी अभी ही ठीक करने की!" चन्दर ने कहा, लेकिन कोशिश करने पर भी सुधा को आज डांट नही पा रहा था। पता नही कहाँ पर क्या टूट गया था।

"नही चन्दर, तबीयत ही नही लग रही थी। क्या करती! क्रोसिया उठाया, वह भी रख दिया। कविता उठायी, वह भी रख दी। कविता वगैरह मे तबीयत नही लगी। मन मे आया कोई कठोर काम हो, कोई नीरस काम हो लोहे-लक्कड, पीतल-फ़ौलाद का, तो मन लग जाये। तो चली आयी मोटर ठीक करने।"

"क्यो कविता मे भी तबीयत नही लगी? ताज्जुब है गेसू के साथ बैठ कर तुम तो कविता मे घण्टो गुजार देती थी!" चन्दर बोला।

"उन दिनो शायद किसी को प्यार करती रही होऊँ तभी कविता में

मन लगता था !" सुधा उस दिन की पुरानी बात याद कर के बहुत उदास हँसी हँसी—"अब प्यार नहीं करती होऊँगी, अब तबीयत नहीं लगती ! बडी फीकी, बडी बेजान, बडी बनावटी लगती है ये कविताएँ, मन के दर्द के आगे सभी फीकी हैं।" और फिर वह उन्हीं पुर्जों में डूब गयी। चन्दर भी चुपचाप मोटर की खिडकी से टिककर खडा हो गया और चुपचाप कुछ सोचने लगा।

सुधा ने बिना सिर उठाये, झुके-ही-झुके, एक हाथ से एक तार लपेटते हुए कहा—

"चन्दर, तुम्हारे मित्र का परिवार आ रहा है, इसी मंगल को। तैयारी करो जल्दी।"

"कौन परिवार सुधा ?"

"हमारे जेठ और सास आ रही हैं, इसी बैसाखी को हमे देखने। उन्होंने तिथि बदल दी है। तो अब छह ही दिन रह गये हैं।"

चन्दर कुछ नही बोला। थोडी देर बाद सुधा फिर बोली—

"अगर उचित समझो तो कुछ पाउडर क्रीम ले आना, लगा कर ज़रा गोरे हो जायें तो शायद पसन्द आ जाये ! क्यो ठीक है न ?" सुधा ने बडी विचित्र-सी हँसी हँस और सिर उठा कर चन्दर की ओर देखा। चन्दर चुपचाप था लेकिन उस की आँखो में अजब-सी पीडा थी और उस के माथे पर बहुत ही करुण छाँह।

सुधा ने कवर गिरा दिया और चन्दर के पास जा कर बोली— "क्यो चन्दर, बुरा मान गये हमारी बात का ? क्या करे चन्दर कल से हम मज़ाक़ करना भी भूल गये। मज़ाक करते हैं तो व्यग्य बन जाता है। लेकिन हम तुम को कुछ कह नही रहे थे चन्दर ! उदास न होओ।" बडे ही दुलार से सुधा बोली—"अच्छा हम कुछ नहीं कहेंगे।" और उस ने अपना आँचल सम्हालने के लिए हाथ उठाया। हाथ में कालौंच लग गयी थी। चन्दर समझा मेरे कन्धे पर हाथ रख रही है सुधा। वह अलग

हटा तो सुधा अपने हाथ देख कर बोली—"घबडाओ न देवता, तुम्हारी उज्ज्वल साधना में कालिख नही लगाऊँगी। अपने आँचल में पोछ लूँगी।" और सचमुच आँचल में हाथ पोछ कर बोली—"चलो अन्दर चले, विनती ! उठ विलैया कही की।"

चन्दर को सोफ़े पर बिठा कर उसी की बगल मे सुधा बैठ गयी और अँगुलियाँ तोडते हुए कहा—"चन्दर, सिर में बहुत दर्द हो रहा है मुझे।"

"सिर मे दर्द नही होगा तो क्या ? इतनी तपिश मे मोटर बना रही थी ! पापा कितने दु खी हो रहे थे आज ? तुम्हें इस तरह करना चाहिए ? फिर फ़ायदा क्या हुआ ? न ऐसे दु खी किया, वैसे दु खी कर लिया। बात तो वही रही न ? तारीफ तो तब थी कि तुम अपनी दुनिया में अपने हाथ से आग लगा देती और चेहरे पर शिकन न आती। अभी तक दुनिया की सभी ऊँचाई समेट कर भी बाहर से वही बचपन क़ायम रखा था तुम ने, अब दुनिया का सारा सुख अपने हाथ से लुटाने पर भी वही बचपन, वही उल्लास क्यो नही क़ायम रखती !"

"बचपन !" सुधा हँसी—"बचपन अब खत्म हो गया चन्दर ! अब मैं बडी हो गयी।"

"बडी हो गयी ! कब से ?"

"कल दोपहर से चन्दर !"

चन्दर चुप। थोडी देर बाद फिर स्वय सुधा ही बोली—"नही चन्दर दो-तीन दिन मे ठीक हो जाऊँगी ! तुम घबडाओ मत। मैं मृत्यु-शय्या पर भी होऊँगी तो तुम्हारे आदेश पर हँस सकती हूँ।" और फिर सुधा गुमसुम बैठ गयी। चन्दर भी चुपचाप सोचता रहा--और बोला—"सुधी ! मेरा तुम्हें कुछ भी ध्यान नही है ?"

"और किस का है चन्दर ! तुम्हारा ध्यान न होता तो देखती मुझे कौन झुका सकता था। आज से सालो पहले जब मैं पापा के पास आयी थी तो मैंने कभी भी न सोचा था कि कोई भी होगा जिस के सामने मैं

इतना झुक जाऊँगी। " अच्छा चन्दर, मन बहुत उचट रहा है। चलो कही घूम आयें। चलोगे।"

"चलो!" चन्दर ने कहा।

"जायें विनती को जगा लायें। वह कम्बख्त अभी पडी सो रही है।" सुधा उठ कर चली गयी। थोडी देर में विनती आंख मलते बग़ल में चटाई दाबे आयी और फिर बरामदे में बैठ कर ऊँघने लगी। पीछे-पीछे सुधा आयी और चोटी खीच कर बोली—"चल तैयार हो! चलेंगे घूमने।"

थोडी देर में सब तैयार हो गये। सुधा ने जा कर मोटर निकाली और बोली चन्दर से—"तुम चलाओगे या हम? आज हमी चलायें। चलो किसी पेड से लडा दें मोटर आज!"

"अरे बाप रे!" पीछे से विनती चिल्लायी—"तब हम नही जायेंगे।"

सुधा और चन्दर दोनों ने मुड कर उसे देखा और उस की घबडाहट देख कर दंग रह गये।

"नही। मरेगी नही तू!" सुधा ने कहा। और आगे बैठ गयी।

"विनती, तू पीछे बैठेगी?" सुधा ने पूछा।

"न भइया, मोटर चलेगी तो मैं गिर जाऊँगी।"

"अरे कोई मोटर के पीछे बैठने के लिए थोडी कह रही हूँ। पीछे की सीट पर बैठेगी?" सुधा ने पूछा।

"ओ! मैं समझी तुम कह रही हो पीछे बैठने के लिए जैसे बग्घी में साईस बैठते हैं। हम तुम्हारे पास बैठेंगे।" विनती ने मचल कर कहा।

"अब तेरा बचपन इठला रहा है, बिल्ली कही की, चल आ मेरे पास।" विनती मुसकराती हुई जा कर सुधा के बगल में बैठ गयी। सुधा ने उसे दुलार से पास खीच लिया। चन्दर पीछे बैठा तो सुधा बोली—"अगर कुछ हर्ज न समझो तो तुम भी आगे आ जाओ। या दूरी रखनी

हो तो पीछे ही बैठो।"

चन्दर आगे बैठ गया। बीच में बिनती इधर चन्दर उधर सुधा।

मोटर चली तो बिनती चीखी—"अरे मेरे मास्टर साहब।"

चन्दर ने देखा बिसरिया चला जा रहा था—"आज नही पढेंगे" चन्दर ने चिल्ला कर कहा। सुधा ने मोटर रोकी नही।

चन्दर को बेहद अचरज हुआ जब उस ने देखा कि मोटर पम्मी के बँगले पर रुकी। "अरे यहाँ क्यो?" चन्दर ने पूछा।

"यो ही।" सुधा ने कहा। "आज मन हुआ कि मिस पम्मी से अँगरेज़ी कविता सुनें।"

"क्यो, अभी तो तुम कह रही थी कि कविता पढने में आज तुम्हारा मन ही नही लग रहा है।"

"कुछ कहो मत चन्दर, आज मुझे जो मन में आये कर लेने दो। मेरा सिर बेहद दर्द कर रहा है और मैं कुछ समझ नही पाती क्या करूँ। चन्दर तुम ने अच्छा नही किया।"

चन्दर कुछ नही बोला। चुपचाप आगे चल दिया। सुधा के पीछे-पीछे कुछ सकोच करती हुई-सी बिनती आ रही थी।

पम्मी बैठी कुछ लिख रही थी। उस ने उठ कर सबों का स्वागत किया। वह कोच पर बैठ गयी। दूसरी पर सुधा, चन्दर और बिनती। सुधा ने बिनती का परिचय पम्मी से कराया और जब पम्मी ने बिनती से हाथ मिलाया तो बिनती जाने क्यो चन्दर की ओर देख कर हँस पडी। शायद उस दिन की घटना की याद में।

सहसा सुधा को जाने क्या खयाल आ गया, बिनती की शरारत-भरी हँसी देख कर कि उस ने फ़ौरन कहा चन्दर से—"चन्दर, तुम पम्मी के पास बैठो, दो मित्रो को साथ बैठना चाहिए।"

"हाँ और खास तौर से जब वह कभी-कभी मिलते हो"—बिनती ने मुसकराते हुए जोड दिया। पम्मी ने मज़ाक समझ लिया और बिना

शरमाये बोली—

"हम लोगों को मध्यस्थ की जरूरत नहीं, धन्यवाद। आओ चन्दर यहाँ आओ।" पम्मी ने चन्दर को बुलाया। चन्दर उठ कर पम्मी के पास बैठ गया। थोडी देर तक बातें होती रही। मालूम हुआ बर्टी अपने एक दोस्त के साथ तराई के पास शिकार खेलने गया है। आज-कल वह दिल की शक्ल का एक पाननुमा दफ्ती का टुकडा काट कर उस में गोली मारा करता है और जब किसी चिडिया वग़ैरह को मारता है तो शिकार को उठा कर देखता है कि गोली हृदय में लगी है या नही। स्वास्थ्य उस का सुधर रहा है। सुधा कोच पर सिर टेके उदास बैठी थी। सहसा पम्मी ने विनती से कहा—"आप को पहली दफे देखा मैंने। आप बातें क्यो नही करती?"

विनती ने झेंप कर मुँह झुका लिया। बडी विचित्र लडकी थी। हमेशा चुप रहती थी। और कभी-कभी बोलने की लहर आती तो गुटरगूँ कर के घर गुँजा देती थी। और जिन दिनो चुप रहती थी उन दिनो ज्यादातर आँख की निगाह, कपोलो की आशनाई या अधरो की मुसकान के द्वारा बातें करती थी। पम्मी बोली—"आप को फूलो से शौक़ है?"

"हाँ, हाँ।" विनती सिर हिला कर बोली।

"चन्दर, इन्हें जा कर गुलाब दिखा लाओ। इधर फिर खूब खिले हैं!" विनती ने सुधा से कहा—"चलो दीदी।"

फूलो के बीच में पहुँच कर, विनती ने चन्दर से कहा—"सुनिए, दीदी को तो जाने क्या होता जा रहा है बताइए, ऐसे क्या होगा?"

"मैं खुद परेशान हूँ विनती! लेकिन पता नही कहाँ मन में कौन-सा विश्वास है जो कहता है कि नही सुधा अपने को सम्हालना जानती है, अपने मन को सन्तुलित करना जानती है और सुधा सचमुच ही त्याग में ज्यादा गौरवमयी हो सकती है।" इस के बाद चन्दर ने बात टाल दी। वह विनती से ज्यादा बात नही करना चाहता था, सुधा के बारे में।

विनती ने चन्दर का मौन देखा तो बोली—"एक बात कहें आप से ! मानिएगा !"

"क्या ?"

"अगर हम से कभी कोई अनधिकार चेष्टा हो जाये तो क्षमा कर दीजिएगा, लेकिन आप और दीदी दोनो मुझे इतना चाहते हैं कि हम समझ नही पाते कि व्यवहारो को कहाँ सीमित रखूँ !" विनती ने सिर झुकाये एक फूल को नोचते हुए कहा।

चन्दर ने उस की ओर देखा, क्षण-भर चुप रहा, फिर बोला—"नही विनती, जब सुधा तुम्हे इतना चाहती है तो तुम हमेशा मुझ पर उतना ही अधिकार समझना जितना सुधा पर।"

× × ×

उधर पम्मी ने चन्दर के जाते ही सुधा से कहा— 'क्या आप की तबीयत खराब है।"

'नही तो ?"

"आज आप बहुत पीली नजर आती है !" पम्मी ने पूछा।

"हाँ, कुछ मन नही लग रहा था तो मैं आप के पास चली आयी कि आप से कुछ कविताएँ सुनूं, अंगरेजी की। दोपहर को मैंने कविता पढ़ने की कोशिश की तो तबीयत नही लगी और शाम को लगा कि अगर कविता नही सुनूंगी तो सिर फट जायेगा।" सुधा बोली।

'आप के मन में कुछ सघर्ष मालूम पडता है, या शायद" एक बात पूछूँ आप से ?"

"क्या, पूछिए ?"

"आप बुरा तो नही मानेगी ?"

"नही बुरा क्या मानेगी ?"

"आप कपूर को प्यार तो नही करती ? उस से विवाह तो नही करना चाहती।"

"छि मिस पम्मी, आप कैसी वात कर रही है। उस का मेरे जीवन मे कोई ऐसा स्थान नही। छि आप की वात सुन कर शरीर में कांटे उठ आते हैं। मैं और चन्दर से विवाह करूँगी! इतनी घिनौनी वात तो मैं ने कभी नही सुनी।"

"माफ़ कीजिएगा, मैं ने यो ही पूछा था। क्या चन्दर किसी को प्यार करता है ?"

"नही, विलकुल नही।" सुधा ने उतने ही विश्वास से कहा जितने विश्वास से उस ने अपने वारे मे कहा था।

इतने में चन्दर और विनती आ गये। सुधा वोली अधीरता से—"मेरा एक-एक क्षण कटना मुश्किल हो रहा है, आप शुरू कीजिए कुछ गाना !"

"कपूर, क्या सुनोगे ?" पम्मी ने कहा।

"अपने मन से सुनाओ! चलो सुधा ने कहा तो कविता सुनने को मिली।"

पम्मी ने आलमारी से एक किताव उठायी और एक कविता गानी शुरू की—अपनी हेयर पिन निकाल कर मेज पर रख दी और उस के ल मचलने लगे। चन्दर के कन्धे से वह टिक कर वैठ गयी और किताव ५र की गोद में रख दी। विनती मुसकरायी तो सुधा ने आँख के। रे से मना कर दिया। पम्मी ने गाना शुरू किया, लेडी नार्टन का ,, गीत—

"मैं तुम्हें प्यार नही करती हूँ, न! मैं तुम्हें प्यार नही करती हूँ।
फिर भी मैं उदास रहती हूँ जव तुम पास नही होते हो!
और मैं उस चमकदार नीले आकाश से भी ईर्ष्या करती हूँ।
जिस के नीचे तुम खडे होगे और जिस के सितारे तुम्हें देख सकते हैं "

चन्दर ने पम्मी की ओर देखा। सुधा ने अपने ही वक्ष मे अपना सिर

छुपा लिया। पम्मी ने एक पद समाप्त कर एक गहरी सांस ली और फिर शुरू किया।

"मैं तुम्हें प्यार नही करती हूं—फिर भी तुम्हारी बोलती हुई आंखें,
जिन की नीलिमा में गहराई, चमक और अभिव्यक्ति है—
मेरी निर्निमेष पलको और जागते अर्धरात्रि के आकाश में नाच जाती है।
और किसी की आंखो के बारे में ऐसा नही होता है..."

सुधा ने बिनती को अपने पास खींच लिया और उस के कन्धे पर सिर टेक कर बैठ गयी। पम्मी गाती गयी—

"न मुझे मालूम है कि मैं तुम्हें प्यार नही करती हूं, लेकिन फिर भी
कोई शायद मेरे साफ़ दिल पर विश्वास नही करेगा।
और अकसर मैंने देखा है, कि लोग मुझे देख कर मुसकरा देते हैं।
क्योंकि मैं उधर एक टक देखती हूं, जिधर से तुम आया करते हो।"

गीत का स्वर बडे स्वाभाविक ढग से उठा, लहराने लगा, कांप उठा और फिर धीरे-धीरे एक करुण सिसकती हुई लय में डूब गया। गीत खत्म हुआ तो सुधा का सिर बिनती के कन्धे पर था और चन्दर का हाथ पम्मी के कन्धे पर। चन्दर थोडी देर सुधा की ओर देखता रहा फिर पम्मी की एक हलकी सुनहरी लट से खेलते हुए बोला—"पम्मी, तुम बहुत अच्छा गाती हो।"

"अच्छा ? आश्चर्यजनक। कहो चन्दर, पम्मी इतनी अच्छी है, यह तुम ने कभी नही बताया था। हमें फिर कभी सुनाइएगा ?"

"हां, हां, मिस शुक्ला! काश कि बजाय लेडी नार्टन के यह गीत आप ने लिखा होता!"

सुधा घबरा गयी। "चलो चन्दर चलें अब! चलो।" उस ने चन्दर का हाथ पकड कर खींच लिया—"मिस पम्मी, अब फिर कभी आयेंगे। आज मेरा मन ठीक नही है।"

चन्दर ड्राइव करने लगा। विनती बोली—"हमें आगे हवा लगती है, हम पीछे बैठेंगे।"

कार चली तो सुधा बोली—"अब मन कुछ शान्त है, चन्दर! इस के पहले तो मन मे कैसे तूफान आपस मे लड रहे थे कुछ समझ में नही आता। अब तूफान बीत गये। तूफान के बाद की खामोशी उदासी है।" सुधा ने गहरी साँस ले कर कहा। आज जाने क्यो बदन बहुत टूट रहा है।" बैठे-ही-बैठे बदन उमेठते हुए कहा।

दूसरे दिन चन्दर गया तो सुधा को बुखार आ गया था। अग-अग जैसे टूट रहा हो और आँखो में ऐसी तीखी जलन कि मानो किसी ने अगारे भर दिये हो। रात-भर वह बेचैन रही, आधी पागल-सी रही। उस ने तकिया, चादर, पानी का गिलास सभी उठा कर फेंक दिया, विनती को कभी बुला कर पास बिठाल लेती कभी उसे दूर ढकेल देती। डॉक्टर साहब परेशान, रात-भर सुधा के पास बैठे, कभी उस का माथा कभी उस के तलवो में बरफ़ मलते रहे। डॉक्टर घोष ने बताया यह कल की गरमी का असर है। विनती ने एक बार पूछा—"चन्दर को बुलवा दें।" तो सुधा ने कहा—"नही, मैं मर जाऊँ तो! मेरे जीते जी नही!" विनती ने ड्राइवर से कहा—"चन्दर को बुला लाओ!" तो सुधा ने बिगड कर कहा—"क्यो तुम लोग सब मेरी जान लेने पर तुले हो?" और उस के बाद कमजोरी से हाँफने लगी। ड्राइवर चन्दर को बुलाने नही गया।

जब चन्दर पहुँचा तो डॉक्टर साहब रात-भर के जागरण के बाद उठ कर नहाने-धोने जा रहे थे। "पता नही सुधा को क्या हो गया कल से? इस वक्त तो कुछ शान्त है पर रात-भर बुखार और बेहद बेचैनी रही है। और एक ही दिन में इतनी चिडचिडी हो गयी कि बस?" डॉक्टर साहब ने चन्दर को देखते ही कहा।

चन्दर जब कमरे में पहुँचा तो देखा कि सुधा आँख बन्द किये हुए लेटी है और विनती उस के सिर पर आइस-बैग रखे हुए है। सुधा का

चेहरा पीला पड गया है और मुंह पर जाने कितनी ही रेखाओ की उलझन है। आंखें वन्द हैं और पलको के नीचे से अगारो की आंच छन कर आ रही है। चन्दर की आहट पाते ही सुधा ने आंखें खोली। अजब-सी आग्नेय निगाहो से चन्दर की ओर देखा और विनती से बोली—"विनती, इन से कह दो जाये यहां से।"

विनती स्तब्ध, चन्दर नही समझा, पास आ कर बैठ गया, बोला—"सुधा, क्यो पड गयी न, मैंने कहा था कि गैरेज में मोटर साफ़ मत करो। परसो इतना रोयी, सिर पटका, कल धूप खायी। आज पड रही! कैसी तबीयत है?"

सुधा उधर खिसक गयी और अपने कपडे समेट लिये, जैसे चन्दर की छांह से भी बचना चाहती हो और तेज, कडवी और हांफती हुई आवाज में बोली—"विनती, इन से कह दो जाये यहां से।"

चन्दर चुप हो गया और एकटक सुधा की ओर देखने लगा और सुधा की बात ने जैसे चन्दर का मन मरोड दिया। कितनी गैरियत से बात कर रही है सुधा। सुधा जो उस के अपने व्यक्तित्व से ज्यादा अपनी थी, आज किस स्वर में बोल रही है। "सुधी, क्या हुआ तुम्हें?" चन्दर ने बहुत आहत और बहुत दुलार-भरी आवाज में पूछा है।

"मैं कहती हूं जाओगे नही तुम?" फुफकार कर सुधा बोली—"कौन हो तुम मेरी बीमारी पर सहानुभूति करने वाले? मेरी कुशल पूछनेवाले? मैं बीमार हूं, मैं मर रही हूं, तुम से मतलब? तुम कौन हो मेरे भाई हो? मेरे पिता हो? कल अपने मित्र के यहां मेरा अपमान कराने ले गये थे?" सुधा हांफने लगी।

"अपमान! किस ने तुम्हारा अपमान किया सुधा? पम्मी ने तो कुछ भी नही कहा? तुम पागल तो नही हो गयी?" चन्दर ने सुधा के पैरो पर हाथ रखते हुए कहा।

"पागल हो नही गयी तो हो जाऊंगी!" उस ने पैर हटा लिये, "तुम

पम्मी, गेसू, पापा, डॉक्टर सब लोग मिल कर मुझे पागल कर दोगे। पापा कहते हैं ब्याह करो, पम्मी कहती है मत करो, गेसू कहती है तुम प्यार करती हो और तुम तुम कुछ भी नही कहते। तुम मुझे इस नरक में वरसो से सुलगते देख रहे हो और वजाय इस के कि तुम कुछ कहो, तुम ने मुझे खुद इस भट्ठी में ढकेल दिया! चन्दर, मैं पागल हूँ, मैं क्या करूँ ?" सुधा वडे कातर स्वर में वोली। चन्दर चुप था सिर्फ सिर झुकाये, हाथो पर माथा रखे वैठा था। सुधा थोडी देर हाँफती रही। फिर वोली—

"तुम्हें क्या हक़ था कल पम्मी के यहाँ ले जाने का ? उस ने क्यो कल गीत में कहा कि मैं तुम्हे प्यार करती हूँ ?" सुधा वोली। चन्दर ने विनती की ओर देखा—"क्यो विनती ? विनती से मैं कुछ नही छिपाता !" क्यो पम्मी ने कल कहा—"मैं तुम्हें प्यार नही करती। मेरा मन मुझे धोखा नही दे सकता। मैं तुम से सिर्फ़ जानें क्या करती हूँ"" फिर पम्मी ने कल ऐसी वात क्यो कही ? मेरे रोम-रोम में जाने कौन-सा ज्वालामुखी धधक उठता है ऐसी वातें सुन कर ? तुम क्यो पम्मी के यहाँ ले गये !"

"तुम खुद गयी थी सुधा !" चन्दर वोला।

"तो तुम रोक नही सकते थे ! तुम कह देते मत जाओ तो मैं कभी जा सकती ? तुम ने क्यो नही रोका ? तुम हाथ पकड लेते। तुम डाँट देते। तुम ने क्यो नही डाँटा ? एक ही दिन में मैं तुम्हारी गैर हो गयी ? गैर हूँ तो फिर क्यो आये हो ? जाओ यहाँ से। मैं कहती हूँ, जाओ यहाँ से ?" दाँत पीस कर सुधा वोली।

"सुधा ..."

"मैं तुम्हारी वोली नही सुनना चाहती। जाते हो कि नही "

और सुधा ने अपने माथे पर से उठा कर आइस-वैग फेंक दिया। विनती चौंक उठी। चन्दर चौंक उठा। उस ने मुड कर सधा की ओर देखा।

सुधा का चेहरा डरावना लग रहा था। उस का मन रो आया। वह उठा, क्षण-भर सुधा की ओर देखता रहा और धीरे-धीरे कमरे से बाहर चला आया।

बरामदे के सोफे पर आकर सिर झुका कर बैठ गया और सोचने लगा—यह सुधा को क्या हो गया? परसों शाम वह इसी सोफे पर सोता था, सुधा बैठी पखा झल रही थी। कल शाम को वह हँस रही थी, लगता था कि तूफान शान्त हो गया पर यह क्या? अन्तर्द्वन्द्व ने यह रूप कैसे ले लिया?

और क्यों ले लिया? जब वह अपने मन को शान्त रख सकता है, जब वह सभी कुछ हँसते-हँसते बरदाश्त कर सकता है तो सुधा क्यों नहीं कर सकती। उस ने आज तक अपनी साँसों से सुधा का निर्माण किया है। सुधा को तिल-तिल बनाया, सजाया, सँवारा है फिर सुधा में यह कमजोरी क्यों?

क्या उस ने यह रास्ता अख्तियार कर के भूल की? क्या सुधा भी एक साधारण-सी लड़की है जिस के प्रेम और घृणा का स्तर उतना ही साधारण है? माना उस ने अपने दोनों के लिए एक ऐसा रास्ता अपनाया है जो विलक्षण है। लेकिन इस से क्या? सुधा और वह दोनों ही क्या विलक्षण नहीं हैं? फिर सुधा क्यों बिखर रही है? लड़कियाँ भावना की ही बनी होती हैं? साधना उन्हें आती ही नहीं? क्या उस ने सुधा का ग़लत मूल्यांकन किया था? क्या सुधा इस 'तलवार की धार' पर चलने में असमर्थ साबित होगी? यह तो चन्दर की हार थी।

और फिर सुधा अगर ऐसी ही रही तो चन्दर? सुधा चन्दर की आत्मा है, इसे अब चन्दर खूब अच्छी तरह पहचान गया। तो क्या अपनी ही आत्मा को घोंट डालने की हत्या का पाप चन्दर के सिर पर है?

तो क्या त्याग का नाम ही है? क्या पुरुष और नारी के सम्बन्ध का एक ही रास्ता है—प्रणय, विवाह और तृप्ति! पवित्रता, त्याग और

दूरी क्या सम्बन्धों को, विश्वासो को जिन्दा नही रहने दे सकते ? तो फिर सुधा और पम्मी में क्या अन्तर है ? क्या सुधा के हृदय इतने समीप रह कर, सुधा के व्यक्तित्व ने घुल-मिल कर और आज सुधा को इतने अन्तर पर डाल कर चन्दर पाप कर रहा है ? तो क्या फूल को तोड कर अपने ही बटन होल में लगा लेना ही पुण्य है और कोई रास्ता गर्हित है ? विनाशकारी है ? क्यो उस ने सुधा का व्यक्तित्व तोड दिया है ?

किसी ने उस के कन्धे पर हाथ रखा। विचार-शृंखला टूट गयी • विनती थी। "क्या सोच रहे हैं आप ?" विनती ने पूछा, बहुत स्नेह से।

"कुछ नही।"

"नही बताइएगा ? हम नही जान सकते ?" विनती के स्वर में ऐसा आग्रह, ऐसा अपनापन, ऐसी निश्छलता रहती थी कि चन्दर अपने को कभी नही रोक पाता था। छिपा नही पाता था।

"कुछ नही, विनती ! तुम कहती हो सुधा को इतने अन्तर पर मैं ने रखा तो मैं देवता हूँ ! सुधा कहती है, मैं ने अन्तर पर रखा मैं ने पाप किया ! जाने क्या किया है मैं ने ? क्या मुझे कम तकलीफ है ? मेरा जीवन आजकल किस तरह घायल हो गया है, मैं जानता हूँ। एक पल मुझे आराम नही मिलता। क्या उतनी सजा काफी नही थी जो सुधा को भी किस्मत यह दण्ड दे रही है। मुझी को सभी बेचैनी और दु ख मिल जाता। सुधा को मेरे पाप का दण्ड क्यो मिल रहा है ? विनती तुम से अब कुछ नही छिपा। जिस को मैं अपनी साँसो मे दुबका कर इन्द्रधनुष के लोक तक ले गया आज हवा के झोंके उसे बादलो की ऊँचाई से क्यो ढकेल देना चाहते हैं ? और मैं कुछ भी नही कर सकता ?" इतनी देर बाद विनती के ममता-भरे स्पर्श में चन्दर की आँख छलछला आयी।

"छि , आप समझदार हैं ! दीदी ठीक हो जायेगी घबडाने से काम नही चलेगा न ! आप को हमारी क़सम है। उदास मत होइए। कुछ सोचिए मत। दीदी बीमार, आप इस तरह से करेंगे तो कैसे काम चलेगा !

उठिए दीदी बुला रही हैं।"

चन्दर गया। सुधा ने इशारे से पास बुला कर बिठाल लिया। "चन्दर, हमारा दिमाग ठीक नही हैं। बैठ जाओ। लेकिन कुछ बोलना मत, बैठे रहो।"

उस के बाद दिन-भर अजब-सा गुज़रा। जब-जब चन्दर ने उठने की कोशिश की सुधा ने उसे खींच कर बिठा लिया। घर तो उसे जाने ही नही दिया। बिनती वही खाना ले आयी। सुधा कभी चन्दर की ओर देख लेती। फिर तकिये मे मुँह गडा लेती। बोली एक शब्द नही, लेकिन उस की आँखो में अजब-सी कातरता थी। पापा आये, घण्टो बैठे रहे, वह बोली ही नही, पापा चले गये तो उस ने चन्दर का हाथ अपने हाथ में लिया, करवट बदली और तकिये पर अपने कपोलो से चन्दर की हथेली दबाकर लेटी रही। पलको से कितने ही गरम-गरम आंसू छलक कर गालो पर फिसल कर चन्दर की हथेली भिगोते रहे।

चन्दर चुप रहा। लेकिन सुधा के आंसू जैसे नसो के सहारे उस के हृदय मे उतर गये और जब हृदय डूबने लगा तो उस की पलकों पर उतरा आये। सुधा ने देखा लेकिन कुछ भी नही बोली। घण्टे-भर बहुत गहरी साँस ली, बेहद उदासी से मुसकरा कर कहा—"हम दोनों पागल हो गये हैं क्यो चन्दर ? अच्छा अब शाम हो गयी। जरा लॉन पर चलें।"

सुधा चन्दर के कन्धे पर हाथ रख कर खडी हो गयी। बिनती ने दवा दी, थर्मामीटर से बुख़ार देखा। बुखार नही था। चन्दर ने सुधा के लिए कुरसी उठायी। सुधा ने हँस कर कहा—"चन्दर! आज बीमार हूँ तो कुरसी उठा रहे हो, मर जाऊँगी तो अरथी उठाने भी आना, वरना नरक मिलेगा! समझे न!"

"छि, ऐसा कुबोल न बोला करो दीदी ?"

सुधा लॉन में कुरसी पर बैठ गयी। बग़ल में नीचे चन्दर बैठ गया। सुधा ने चन्दर का सिर अपनी कुरसी से टिका लिया और अपनी उँगलियो

से चन्दर के सूखे होठो को छूते हुए कहा—"चन्दर! आज मैंने तुम्हें बहुत दुःखी किया, क्यो? लेकिन जाने क्यो, दुःखी न करती तो आज मुझे वह ताक़त न मिलती जो मिल गयी है।" और सहसा चन्दर के सिर को अपनी गोद मे खीचती हुई-सी सुधा ने कहा—"आराध्य मेरे! आज तुम से बहुत-सी बातें बताऊँगी। बहुत-सी।"

विनती उठ कर जाने लगी तो सुधा ने कहा—"कहाँ चली? बैठ तू यहाँ। तू गवाह रहेगी ताकि बाद में चन्दर ये न कहे कि सुधा कमजोर निकल गयी।" विनती बैठ गयी। सुधा ने क्षण-भर आँखें बन्द कर ली और अपनी वेणी पीठ पर से खीच कर गोद मे डाल ली और बोली—"चन्दर, आज कितने ही साल हुए, जब से मैंने तुम्हें जाना है, तब अच्छे-बुरे सभी कामो का फ़ैसला तुम्ही करते रहे हो। आज भी तुम्ही बताओ चन्दर कि अगर मैं अपने को बहुत सम्हालने की कोशिश करती हूँ और नही सम्हाल पाती हूँ, तो यह कोई पाप तो नही? तुम जानते हो चन्दर, तुम जितने मजबूत हो उस पर मुझे घमण्ड है कि तुम कितनी ऊँचाई पर हो, मैं भी उतना ही मजबूत बनने की कोशिश करती हूँ, उतने ही ऊँचे उठने की कोशिश करती हूँ, अगर कभी-कभी फिसल जाती हूँ तो यह अपराध तो नही?"

"नही।" चन्दर बोला।

"और अगर अपने उस अन्तर्द्वन्द्व के क्षणो में तुम पर कठोर हो जाती हूँ, तो तुम सह लेते हो, मैं जानती हूँ तुम मुझे जितना स्नेह करते हो उस में मेरी सभी दुर्बलताएँ घुल जाती हैं। लेकिन आज मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ चन्दर कि मुझे खुद अपनी दुर्बलताओ पर शरम आती है और आगे से मैं वैसी ही बनूँगी जैसा तुम ने सोचा है चन्दर।"

चन्दर कुछ नही बोला सिर्फ घास पर रखे हुए सुधा के पाँवो पर अपनी काँपती उँगलियाँ रख दी। सुधा कहती गयी—"चन्दर, आज से कुछ ही महीने पहले जब गेसू ने मुझ से पूछा था कि तुम्हारा दिल कही

झुका था तो मैं ने इनकार कर दिया था, कल पम्मी ने पूछा तुम चन्दर को प्यार करती हो तो मैं ने इनकार कर दिया था, मैं आज भी इनकार करती हूं कि मैं ने तुम्हें प्यार किया है, या तुम ने मुझे प्यार किया है। मैं भी समझती हूं और तुम भी समझते हो। लेकिन यह न तुम से छिपा है न मुझ से कि तुम ने मुझे जो कुछ दिया है वह प्यार से कही ज्यादा ऊँचा, और प्यार से भी कही ज्यादा महान् है। मैं व्याह नही करना चाहती थी, मैं ने परसो इनकार कर दिया था, इतनी रोयी थी, खीजी थी, वाद मे मैं ने सोचा कि यह ग़लत है, यह स्वार्थ है, जव पापा मुझे इतना प्यार करते हैं तो मुझे उन का दिल नही दुखाना चाहिए। पर मन के अन्दर की जो खीज थी, जो कुढन थी वह कही तो उतरती ही। वह मैं अपने पर उतार देना चाहती थी, मन में आता था अपने को कितना कष्ट दे डालूँ इसीलिए अपने गैरेज में जा कर मोटर सम्हाल रही थी, लेकिन वहाँ भी असफल रही और अन्त में वह खीज अपने पर भी न उतर कर उस पर उतरी जिन को मैंने अपने से भी वढ कर माना है। वह खीज उतरी तुम पर।"

चन्दर ने सुधा की ओर देखा। सुधा मुसकरा कर वोली—"न ऐसे मत देखो। यह मत समझो कि अपने आज के व्यवहार के लिए मैं तुम से क्षमा माँगूँगी। मैं जानती हूं कि माँगने से तुम दुखी भी होगे और डांटने भी लगोगे। खैर, आज से मैं अपना रास्ता पहचान गयी हूं। मैं जानती हूं कि मुझे कितना सम्हल कर चलना है। तुम्हारे सपने को पूरा करने के लिए मुझे अपने को क्या वनाना होगा यह भी मैं समझ गयी हूं। मैं खुश रहूँगी, सवल रहूँगी और सशक्त रहूँगी और जो रास्ता तुम दिखलाओगे उधर ही चलूँगी। लेकिन एक वात वताओ चन्दर, मैंने व्याह कर लिया और वहाँ सुखी न रह पायी, और उन्हें वह भावना, उपासना न दे पायी तव फिर तुम्हें दुख हुआ तव ?"

चन्दर ने घास का एक तिनका तोड कर कहा—"देखो सुधा, एक

गत वताओ। अगर मैं तुम्हें कुछ देता हूँ और उसे तुम मुझी को वापस दे देती हो तो कोई वहुत ऊँची वात नही हुई। अगर मैंने तुम्हें सचमुच ही स्नेह या पवित्रता या जो कुछ भी दिया है, उसे तुम उन सभी के जीवन में क्यो नही प्रतिफलित कर सकती जो तुम्हारे जीवन में आते हैं चाहे वह पति ही क्यो न हो। तुम्हारे मन के अक्षय स्नेह-भाण्डार के उपयोग मे इतनी कृपणता क्यो ? मेरा मपना कुछ और हो है सुग ! आज तक तुम्हारे सांसो के अमृत ने ही मुझे यह सामर्थ्य दी कि मै अपने जीवन मे कुछ कर सकूँ और मैं भी यही चाहता हूँ कि मैं तुम्हे वह स्नेह दूँ जो कभी घटे ही न। जितना वांटो उतना वढे और इतना मुझे विश्वास है कि तुम यदि स्नेह की एक बूँद दो तो मनुष्य क्या से क्या हो सकता है। अगर वही स्नेह रहेगा तो तुम्हारे पति को कभी कोई असन्तोष क्यो हो सकता है और फिर कैलाश तो इतना अच्छा लडका है, और उस का जीवन इतना ऊँचा कि तुम उस की जिन्दगी मे, ऐसी लगोगी, जैसे अँगूठी में हीरा। और जहाँ तक तुम्हारा अपना सवाल है, मैं तुम से भीख मांगता हूँ कि अपना सव कुछ खो कर भी अगर मुझे कोई सन्तोप रहेगा तो यह देख कर कि मेरी सुधा अपने जीवन मे कितनी ऊची है। मैं तुम से इस विश्वास की भीख माँगता हूँ।"

"छि, मुझ से वडे हो, चन्दर ! ऐसी वात नही कहते ! लेकिन एक वात है। मैं जानती हूँ कि मैं चन्द्रमा हूँ, सूर्य की किरणो से ही जिन मे चमक आती है। तुम ने जैसे आज तक मुझे सँवारा है, आगे भी तुम अपनी रोशनी अगर मेरी आत्मा में न भरते गये तो मैं अपना भविष्य भी नही पहचान सकूँगी। समझे !"

"समझा, पगली कही की !" थोडी देर चन्दर चुप वैठा रहा फिर सुधा के पाँवो से सिर टिका कर वोला—"परेशान कर डाला, तीन रोज से। सूरत तो देखो कैसी निकल आयी है और वैसाखो को कुल चार रोज रह गये। अव मत दिमाग विगाडना ! वे लोग आते हो होगे।"

"विनती ! दवा ले आ ।" विनती उठ कर गयी तो सुधा बोली—"हटो अब हम घास पर बैठेंगे !" और घास पर बैठ कर सुधा बोली—"लेकिन एक बात है, आज से लेकर ब्याह तक तुम हर अवसर पर हमारे सामने रहना, जो कहोगे वह हम करते जायेंगे ।"

"हां, यह हम मानते हैं ।" चन्दर ने कहा और कुछ दूर हट कर घास पर लेट गया और आकाश की ओर देखने लगा । शाम हो गयी थी और दिन-भर की उडी हुई धूल अब बहुत कुछ बैठ गयी थी । आकाश के बादल ठहरे हुए थे और उन पर अरुणाई झलक रही थी । एक दुरंगी पतंग बहुत ऊँचे पर उड रही थी । चन्दर का मन भारी था । हालां कि जो तूफान परसों से उठा था वह खत्म हो गया था, लेकिन चन्दर का मन अभी भरा-भरा हुआ-सा था । वह चुप-चाप लेट रहा । बिनती दवा और पानी ले आयी थी । दवा पीकर सुधा बोली—"क्यो चुप हो चन्दर ?"

"कोई बात नहीं ।"

"फिर बोलते क्यो नही, देखा बिनती, अभी-अभी क्या कह रहे थे और अब देखो इन्हें ।" सुधा बोली ।

"हम अभी बताते हैं इन्हें !" विनती बोली और गिलास में थोडा-सा पानी लेकर चन्दर के ऊपर फेंक दिया । चन्दर चौंक कर उठ बैठा और बिगड कर बोला—"यह क्या बदतमीजी है ? अपनी दीदी को यह सब दुलार दिखाया करो ।"

"तो क्यो पडे थे ऐसे ? बात करेंगे ऋषि-मुनियो-जैसे और उदास रहेंगे बच्चो की तरह ! वाह रे चन्दर बाबू !" विनती ने हँस कर कहा—"दीदी, ठीक किया न मैंने ?"

"बिलकुल ठीक, ऐसे ही इन का दिमाग ठीक होगा ।"

इतने में डाक्टर शुक्ला आये और कुरसी पर बैठ गये । सुधा के माथे पर हाथ रख कर देखा—"अब तो तू ठीक है ?"

"हाँ पापा।"

"विनती, कल तुम्हारी माता जी आ रही हैं। अब वैसाखी की तैयारी करनी है। सुधा के जेठ आ रहे हैं और सास।"

सुधा चुपचाप उठ कर चली गयी। चन्दर, विनती और डॉक्टर साहब बैठे उस दिन का बहुत-सा कार्यक्रम बनाते रहे।

चन्दर को सबसे बड़ा सन्तोष था कि सुधा ठीक हो गयी थी। वैसाख पूनो के एक दिन पहले ही से विनती ने घर को इतना साफ़ कर डाला था कि घर चमक उठा था। यह बात तो दूसरी है कि स्टडी रूम की सफाई में विनती ने चन्दर के बहुत से काग़ज बुहार कर फेंक दिये थे और आँगन धोते वक़्त उस ने चन्दर के कपड़ों को छींटों से तर कर दिया था। उस के बदले में चन्दर ने विनती को डाँटा था और सुधा देख-देख कर हँस रही थी और कह रही थी—"तुम क्यों चिढ़ रहे हो? तुम्हें देखने थोड़े ही आ रही हैं हमारी सास।"

वैशाख पूनो की सुबह डॉक्टर साहब और बुआजी गाड़ी लेकर उन को लिवा लाने गये थे। चन्दर बाहर बरामदे में बैठा अखबार पढ़ रहा था और सुधा अन्दर कमरे में बैठी थी। अब दो दिन उसे बहुत दब-ढँक कर रहना होगा। वह बाहर नहीं घूम सकती थी, क्योंकि जाने कैसे और कब उस की सास आ जायें और देख लें। बुआ उसे समझा गयी थीं और उस ने एक गम्भीर आज्ञाकारी लड़की की तरह मान लिया था और अपने कमरे में चुपचाप बैठी थी। विनती कढ़ी के लिए बेसन फेंट रही

धो और महराजिन ने रसोई में दूध चढा रखा था।

सुधा चुपके से आयी, किवाड की आड से देखा कि पापा और बुआ की मोटर आ तो नही रही है। जब देखा कोई नही है तो आकर चुप्पे से खडी हो गयी और पीछे से चन्दर के हाथ से अखबार ले लिया। चन्दर ने पीछे देखा तो सुधा एक बच्चे की तरह मुसकरा दी और बोली—"क्यो चन्दर, हम ठीक हैं न ? ऐसे ही रहें न ? देखो तुम्हारा कहना मानते है न हम ?"

"हाँ सुधी, तभी तो हम तुम को इतना दुलार करते हैं।"

"लेकिन चन्दर, एक बार आज रो लेने दो। फिर उन के सामने नही रो सकेंगे। और सुधा का गला रुँध गया और आँख छलछला आयी।

"छि सुधा " चन्दर ने कहा।

"अच्छा नही-नहीं " और झटके से सुधा ने आँसू पोछ लिये। इतने में गेट पर किसी कार का भोंपू सुनाई पडा और सुधा भागी। "अरे यह तो पम्मी की कार है।" चन्दर बोला। सुधा रुक गयी।

पम्मी ने पोर्टिको में आ कर कार रोकी।

"हलो, मेरे जुडवाँ मित्र, क्या हाल है तुम लोगो का ? और हाथ मिला कर बेतकल्लुफ़ी से कुरसी खींच कर बैठ गयी।

"इन्हे अन्दर ले चलो चन्दर ! वरना अभी वे लोग आते होंगे।" सुधा बोली।

"नही, मुझे बहुत जल्दी है। मैं आज शाम को बाहर जा रही हूँ। बर्टी अब मसूरी चला गया है, वहाँ से उस ने मुझे भी बुलाया है। उस के हाथ मे कही शिकार में चोट लग गयी है। मैं तो आज जा रही हूँ।"

सुधा बोली—"हमें ले चलिएगा ?"

"चलिए, कपूर तुम भी चलो, जुलाई में लौट आना !" पम्मी ने कहा।

"जब अगली साल हम लोगों की मित्रता की वर्षगांठ होगी तो मैं चलूँगा।" चन्दर ने कहा।

"अच्छा, विदा!" पम्मी बोली। चन्दर और सुधा ने हाथ जोड़े तो पम्मी ने आगे बढ़ कर सुधा का मुँह हथेलियों में उठा कर उस की पलकें चूम ली और बोली—"मुझे तुम्हारी पलकें बहुत अच्छी लगती हैं। अरे! इन में आँसुओं का स्वाद है, अभी रोयी थी क्या?" सुधा झेंप गयी।

चन्दर के कन्धे पर हाथ रख कर पम्मी ने कहा—"कपूर, तुम खत जरूर लिखते रहना। चलते तो बड़ा अच्छा रहता। अच्छा आप दोनों मित्रों का समय अच्छी तरह बीते।" और पम्मी चल दी।

थोड़ी देर में डॉक्टर साहब की कार आयी। सुधा ने अपने कमरे के दरवाज़े बन्द कर लिये, बिनती ने सिर पर पल्ला ढँक लिया और चन्दर दौड़ कर बाहर गया। डॉक्टर साहब के साथ जो सज्जन उतरे वे ठिगने से, गोरे से गोल चेहरे के कुलीन सज्जन थे और खद्दर का कुरता और धोती पहने हुए थे। हाथ में एक छोटा सफरी बैग था। चन्दर ने लेने को हाथ बढ़ाया तो हँस कर बोले—"नहीं जी, क्या इतना सा बैग ले चलने में मेरा हाथ थक जायेगा। आप लोग तो खातिर कर के मुझे महत्त्वपूर्ण बना देंगे!"

सब लोग स्टडी रूम में गये। वहाँ डॉक्टर शुक्ला ने परिचय कराया—"यह हमारे शिष्य और लड़के, प्रान्त के होनहार अर्थशास्त्री श्री चन्द्र कुमार कपूर और आप शाहजहाँपुर के प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्य-कर्त्ता और म्युनिसिपल कमिश्नर श्री शंकरलाल मिश्र।"

"अब तू नहाय लेव सकरी, फिर चाय ठंडाय जइहै।" बुआजी ने आ कर कहा। आज बुआजी ने बहुत दिन पहले की बूटीदार साड़ी पहन रखी थी और शायद खुश थीं क्योंकि बिनती को डाँट नहीं रही थीं।

"नही मैं तो वेटिङ् रूम में नहा चुका। चाय मैं पीता नही। खाना ही तैयार कराइए।" और घडी देख कर शकर बाबू बोले--"मुझे जरा स्वराज्य-भवन जाना है और दो बजे की गाडी से वापस चले जाना है और शायद उधर हीं से चला जाऊँगा।" उन्होने बहुत मीठे स्वरो से मुसकराते हुए कहा।

"यह तो कुछ अच्छा नही लगता कि आप आये भी और कुछ रुके नही।" डॉक्टर शुक्ला बोले।

"हाँ मैं खुद रुकना चाहता था लेकिन माँजी की तबीयत ठीक नही है। कैलाश भी कानपुर गया हुआ है। मुझे जल्दी जाना चाहिए।"

बिनती ने ला कर थाली रखी। चन्दर ने आश्चर्य से डॉक्टर साहब की ओर देखा। वे हँस कर बोले—"भाई, यह लोग हमारी तरह छूत-पाक नही मानते। चन्दर और शकर तुम्हारे सम्प्रदाय के है। यही कच्चा खाना खा लेंगे।"

"इन्हें बाह्मन कहत के है, ई तो किरिस्तान है, हमरो धरम बिगाडिन हियाँ आय कै।" बुआजी बोली। बुआजी ने ही यह शादी तय करायी थी, लडका बताया था और दूर के रिस्ते से वे कैलाश और शकर की भाभी लगती थी।

शकर बाबू ने हाथ धोया और कुरसी खीच कर बैठ गये। चन्दर की ओर देख कर बोले—"आइए, होनहार डॉक्टर साहब, आप तो मेरे साथ खा सकते है।"

"नही आप खाइए।" चन्दर ने तकल्लुफ करते हुए कहा।

"अजी वाह! मैं ब्राह्मण हूँ, शुद्ध, मेरे साथ खाकर आप को जल्दी मोक्ष मिल जायेगा। कही हाथ मे तरकारी लगी रह गयी तो आप के लिए स्वर्ग का फाटक फ़ौरन खुल जायेगा। खाओ।"

दो कौर खाने के बाद शकर बाबू ने बुआजी से कहा--"यही बहू है, जो लडकी थाली रख गयी थी?"

"जब अगली साल हम लोगो की मित्रता की वर्षगाँठ होगी तो मैं चलूँगा।" चन्दर ने कहा।

"अच्छा, विदा!" पम्मी बोली। चन्दर और सुधा ने हाथ जोडे तो पम्मी ने आगे बढ कर सुधा का मुँह हथेलियो मे उठा कर उस की पलकें चूम ली और बोली—"मुझे तुम्हारी पलकें बहुत अच्छी लगती हैं। अरे! इन में आँसुओ का स्वाद है, अभी रोयी थी क्या?" सुधा झेप गयी।

चन्दर के कन्धे पर हाथ रख कर पम्मी ने कहा—"कपूर, तुम खत जरूर लिखते रहना। चलते तो बडा अच्छा रहता। अच्छा आप दोनो मित्रो का समय अच्छी तरह बीते।" और पम्मी चल दी।

थोडी देर मे डॉक्टर साहब की कार आयी। सुधा ने अपने कमरे के दरवाज़े बन्द कर लिये, बिनती ने सिर पर पल्ला ढँक लिया और चन्दर दौड कर बाहर गया। डॉक्टर साहब के साथ जो सज्जन उतरे वे ठिगने से, गोरे से गोल चेहरे के कुलीन सज्जन थे और खद्दर का कुरता और धोती पहने हुए थे। हाथ में एक छोटा सफरी बैग था। चन्दर ने लेने को हाथ बढाया तो हँस कर बोले—"नही जी, क्या इतना सा बैग ले चलने में मेरा हाथ थक जायेगा। आप लोग तो खातिर कर के मुझे महत्त्वपूर्ण बना देंगे!"

सब लोग स्टडी रूम में गये। वहाँ डॉक्टर शुक्ला ने परिचय कराया—"यह हमारे शिष्य और लडके, प्रान्त के होनहार अर्थशास्त्री श्री चन्द्र कुमार कपूर और आप शाहजहाँपुर के प्रसिद्ध काग्रेसी कार्य-कर्त्ता और म्युनिसिपल कमिश्नर श्री शंकरलाल मिश्र।"

"अब तू नहाय लेव सकरो, फिर चाय ठढाय जइहै।" बुआजी ने आ कर कहा। आज बुआजी ने बहुत दिन पहले की बूटीदार साडी पहन रखी थी और शायद खुश थीं क्योंकि बिनती को डाँट नहीं रही थीं।

"नही मैं तो वेटिंग रूम में नहा चुका। चाय मैं पीता नही। खाना ही तैयार कराइए।" और घड़ी देख कर शंकर बाबू बोले—"मुझे जरा स्वराज्य-भवन जाना है और दो बजे की गाड़ी से वापस चले जाना है और शायद उधर ही से चला जाऊँगा।" उन्होंने बहुत मीठे स्वर से मुसकराते हुए कहा।

"यह तो कुछ अच्छा नही लगता कि आप आये भी और कुछ रुके नही।" डॉक्टर शुक्ला बोले।

"हाँ मैं खुद रुकना चाहता था लेकिन माँजी की तबीयत ठीक नही है। कैलाश भी कानपुर गया हुआ है। मुझे जल्दी जाना चाहिए।"

बिनती ने ला कर थाली रखी। चन्दर ने आश्चर्य से डॉक्टर साहब की ओर देखा। वे हँस कर बोले—"भाई, यह लोग हमारी तरह छूत-पाक नही मानते। चन्दर और शंकर तुम्हारे सम्प्रदाय के हैं। यही कच्चा खाना खा लेंगे।"

"इन्हें बाह्मन कहत के है, ई तो किरिस्तान हैं, हमरो धरम बिगाड़िन हियाँ आय कै!" बुआजी बोली। बुआजी ने ही यह शादी तय करायी थी, लड़का बताया था और दूर के रिश्ते से वे कैलाश और शंकर की भाभी लगती थी।

शंकर बाबू ने हाथ धोया और कुरसी खींच कर बैठ गये। चन्दर की ओर देख कर बोले—"आइए, होनहार डॉक्टर साहब, आप तो मेरे साथ खा सकते है!"

"नही आप खाइए।" चन्दर ने तकल्लुफ करते हुए कहा।

"अजी वाह! मैं ब्राह्मण हूँ, शुद्ध, मेरे साथ खाकर आप को जल्दी मोक्ष मिल जायेगा। कही हाथ मे तरकारी लगी रह गयी तो आप के लिए स्वर्ग का फाटक फ़ौरन खुल जायेगा! खाओ!"

दो कौर खाने के बाद शंकर बाबू ने बुआजी से कहा—"यही बहू है, जो लड़की थाली रख गयी थी?"

"अरे राम कहो, ऊ तो हमार छोरी है बिनती ! पहचनत्यो नं। पिछले साल तो मुन्ने के बियाह मे देखे होवो !" बुआजी बोली।

शकर बाबू कैलाश से काफी बडे थे लेकिन देखने में बहुत बडे नही लगते थे। खाते पीते बोले—"डॉक्टर साहब ! लडकी से कहिए रोटी दे जाये। मैं इसी तरह देख लूँगा, और ज्यादा तडक-भडक की कोई ज़रूरत नही !"

डॉक्टर साहब ने बुआजी को इशारा किया और वे उठ कर चली गयी। थोडी देर में सुधा आयी। सादी सफ़ेद धोती पहने हाथ से रोटी लिये दरवाज़े पर आकर हिचकी, फिर आकर चन्दर से बोली—"रोटी लोगे !" और बिना चन्दर का जवाब सुने रोटी चन्दर के आगे रख कर बोली—"और क्या चाहिए ?"

"मुझे कढी चाहिए !" शकर बाबू ने कहा। सुधा गयी और कढ़ी ले आयी। शकर बाबू के सामने रख दी। शकर बाबू ने आँखे उठा कर सुधा की ओर देखा, सुधा ने निगाहें नीची कर ली और चली गयी।

"बहुत अच्छी है लडकी !" शकर बाबू ने कहा। "इतनी पढ़ी-लिखी लड़की मे इतनी शर्म-लिहाज नही मिलती। सचमुच जैसे आप की एक ही लडकी थी, आप ने उसे खूब बनाया हैं। कैलाश के बिलकुल योग्य लडकी है। यह तो कहिए डॉक्टर साहब कि शिष्टा प्रबल होती है वरना हमारा कहाँ सौभाग्य था ! जब से मेरी पत्नी मरी तभी से माताजी कैलाश के विवाह की जिद कर रही हैं। कैलाश अन्तर्जातीय विवाह करना चाहता था, लेकिन हमें तो अपनी जाति में ही इतना अच्छा सम्बन्ध मिल गया।"

"तो तोहरे अबहिन कौन वैस ह्वै गयी। तुहौं काहे नाही बहुरिया लै अउत्यौ। सुधौ के अकेल मन न लगी !" बुआजी बोली।

शकर बाबू कुछ नही बोले। खाना खाकर उन्होने हाथ धोया और घडी देखी।

"अब थोड़ा सो लूँ, या जाने दीजिए आइए बातें करें हम और आप" उन्होने चन्दर से कहा। एक बजे तक चन्दर शकर बाबू ने बात करते रहे और डॉक्टर साहब और सुधा वगैरह खाना खाते रहे। शकर बाबू बहुत हँसमुख थे और बहुत बातूनी भी। चन्दर को तो कैलाश से भी ज्यादा शकर बाबू पसन्द आये। बातें करने से मालूम हुआ कि शकर बाबू की आयु अभी तीस वर्ष से अधिक की नही है। एक पांच वर्ष का बच्चा है और उसी के होने में उन की पत्नी मर गयी। अब वे विवाह नही करेंगे, वे गान्धीवादी हैं, कॉंग्रेस के प्रमुख स्थानीय कार्यकर्ता हैं। और म्युनिसिपल कमिश्नर हैं। घर के जमींदार हैं। कैलाश बरेली में पढता था। अब भी कैलाश का कोई इरादा किसी प्रकार की नौकरी या व्यापार करने का नही है, वह मजदूरों के लिए एक साप्ताहिक पत्र निकालने का इरादा कर रहा है। वह सुधा को बजाय घर पर रखने के अपने साथ रखेगा क्योंकि वह सुधा को आगे पढ़ाना चाहता है, सुधा को राजनीतिक क्षेत्र मे ले जाना चाहता है।

बीच मे एक बार बिनती आयी और उस ने चन्दर को बुलाया। चन्दर बाहर गया तो बिनती ने कहा—"दीदी पूछ रही हैं ये कितनी देर मे जायेंगे ?"

"क्यों ?"

"कह रही हैं अब चन्दर को याद थोड़े ही है कि सुधा भी इस घर में है। उन्ही से बातें कर रहे हैं।"

चन्दर हँस दिया और कुछ नही कहा। बिनती बोली—"ये लोग तो बहुत अच्छे हैं। मैं तो कहूँगी सुधा दीदी को इस से अच्छा परिवार मिलना मुश्किल है। हमारे ससुर की तरह नही हैं ये लोग।"

"हाँ फिर भी सुधा उतनी सेवा नही कर रही है इन की। बिनती, तुम सुधा को कुछ शिक्षा दे दो इस मामले में।"

"हाँ, हाँ, हम सेवा करने की शिक्षा दे देंगे और व्याह करने के

बाद को शिक्षा अपनी मम्मी से दिलवा देना । खुद तो उन से ले ही चुके होगे आप ।"

चन्दर झेंप गया । "पाजी कही की, वहुत वेशरम हो गयी है । पहले मुँह से वोल नही निकलता था ।"

"तुम ने और दीदी ने ही तो किया वेशरम ! हम क्या करे ? पहले हम कितना डरते थे !" विनती ने उसी तरह गरदन टेढी कर के कहा और मुसकरा कर भाग गयी ।

जब डॉक्टर साहव आये तो शकर वावू ने कहा, "अब तो मैं जा रहा हूँ, यह माला मेरी ओर से वहू को दे दीजिए ।" और उन्होंने वडी सुन्दर मोतियो की माला वैग से निकाली और वुआजी के हाथ मे दे दी ।

"हाँ, एक वात है !" शकर वावू वोले—"व्याह हम लोग महीने-भर के अन्दर ही करेंगे । आप की सब वात हम ने मानी, यह वात आप को हमारी माननी होगी ।"

"इतनी जल्दी !" डॉक्टर शुक्ला चौंक उठे, "यह असम्भव है शकर वावू ! मैं अकेला हूँ आप जानते हैं ।"

"नही, आप को कोई कष्ट न होगा ।" शकर वावू वहुत मीठे स्वर मे वोले—"हम लोग रीति-रसम के तो क़ायल है नही । आप जितना चाहें रीति-रसम अपने मन से कर लें । हम लोग तो सिर्फ छह-सात आदमियो के साथ आवेंगे । सुवह आवेंगे, अपने वँगले मे एक कमरा खाली करा दीजिएगा । शाम को अगवानी और विवाह कर दे । दूसरे दिन दस वजे हम लोग चले जायेंगे ।"

"यह नही होगा ।" डॉक्टर साहव वोले, "हमारी तो अकेली लडकी है और हमारे भी तो कुछ हौसले हैं । और फिर लडकी की वुआ तो यह कभी भी नही स्वीकार करेगी ।"

"देखिए, मैं आप को समझा दूँ, कैलाश शादियो मे तडक-भडक के सख्त खिलाफ है । पहले तो वह इसीलिए जाति मे विवाह नही करना

चाहता था, लेकिन जब मैं ने उसे भरोसा दिलाया कि बहुत सादा विवाह होगा तभी वह राजी हुआ है। इसलिए इसे आप मान हो ले फिर विवाह के बाद तो जिन्दगी पडी है। आप की अकेली लडकी है जितना चाहिए करिए। रहा कम समय का तो शुभस्य शीघ्रम्! फिर आप को कुछ खास इन्तजाम भी नही करना, अगर कुछ हो तो मैं कहिए यहीं रह जाऊँ, आप का काम कर दूँ।" शकर बाबू हँस कर बोले।

कुछ देर तक बाते होती रही, अन्त मे शकर बाबू ने अपने सौजन्य और मीठे स्वभाव से सभी को राजी कर ही लिया। उस के बाद उन्होंने सब से विदा मांगी, चलते वक्त बुआजी और डॉक्टर साहब के पैर छुए, चन्दर से हाथ मिलाया और शकर बाबू सब का मन जीत कर चले गये।

बुआजी माला हाथ में ली, उसे उलट-पलट कर देखा और बोली—एक ऊ आये रहे जूताखोर! एक ठो कागज थमाय के चले गये!" और एक गहरी सांस ले के चली गयी।

डॉक्टर साहब ने सुधा को बुलाया। उस के हाथ मे यह माला रख कर उसे चिपटा लिया। सुधा पापा की गोद में मुँह छिपा कर रो पडी।

उस के बाद सुधा चली गयी और चन्दर और डॉक्टर साहब और बुआजी बैठे शादी के इन्तजाम की बाते करते रहे। यह तय हुआ कि अभी तो इन्ही की इच्छानुसार विवाह कर दिया जाये फिर युनिवर्सिटी खुलने पर सभी को बुला कर अच्छी दावत वगैरह दे दी जाये। यह भी तय हुआ कि बुआजी गांव जा कर अनाज, घी, बडियाँ और नौकर वगैरह का इन्तजाम कर लावें और पन्द्रह दिन के अन्दर लौट आवें। यहाँ से ले कर यह तक कि अगवानी ठीक छह बजे शाम को हो जाये और सुबह के नाश्ते में क्या दिया जाये, यह सभी डॉक्टर साहब ने तय कर डाला। लेकिन निश्चय यह भी किया गया कि चूँकि आदमी बहुत कम आ रहे है, अत. सुबह-शाम के नाश्ते का काम युनिवर्सिटी के किसी रेस्टोराँ को दे दिया जाये।

इसी बीच में विनती खरबूजा और शरबत ला कर रख गयी और चन्दर ने बहुत आराम से शरबत पीते हुए पूछा—"किस ने बनाया है ?"

"सुधा दीदी ने ।"

"आज बडी खुश मालूम पडती है, चीनी बहुत कम छोडी है !" चन्दर बोला । बुआ और विनती दोनो हँस पडी ।

थोडी देर बाद चन्दर उठ कर भीतर गया तो देखा कि सुधा अपनी पलग पर बैठी सामने एक किताब रखे जाने क्या देख रही है और सामने वह माला पडी है । चन्दर गया और बोला—"सुधा ! आज मैं बहुत खुश हूँ, बेहद खुश हूँ ।"

सुधा ने आँखें उठायी और चन्दर की ओर देख कर मुसकराने की कोशिश की और बोली—"मैं भी बहुत खुश हूँ ।"

"क्यो, तय हो गया इसलिए !" विनती ने पूछा ।

"नही चन्दर बहुत खुश हैं इस लिए !" और एक गहरी साँस ले कर किताब बन्द कर दी ।

"कौन-सी किताब है सुधा ?" चन्दर ने पूछा ।

"कुछ नही, इस पर उर्दू के कुछ अशआर लिखे हैं जो गेसू ने सुनाये थे ।" सुधा बोली ।

चन्दर ने विनती की ओर देखा और कहा—"विनती, कैलाश तो जैसा है वैसा ही है, लेकिन शकर बाबू की तो तारीफ मैं कर नहीं सकता । क्या राय है तुम्हारी ?"

"हाँ है तो सही, दीदी इतनी सुखी रहेगी कि बस ! दीदी हमें भूल मत जाना समझी ?" विनती बोली ।

"और हमें भी मत भूलना सुधा !" चन्दर ने सुधा की उदासी दूर करने के लिए छेडते हुए कहा ।

"हाँ, तुम्हें भूले बिना कैसे काम चलेगा ।" सुधा ने और भी गहरी साँस लेते हुए कहा और एक आँसू गालो पर फिसल ही आया ।

"अरे पगली, तुम सब कुछ अपने चन्दर के लिए कर रही हो, उन की आज्ञा मान कर कर रही हो फिर यह आंसू कैसे ? छि ! और यह माला सामने रखे क्या कर रही हो ?" चन्दर ने बहलाया।

"माला तो दीदी इस लिए सामने रखे थी कि बतलाऊँ बतलाऊँ !" बिनती बोली—"असल में रामायण की कहानी सुनी है चन्दर तुम ने ? रामचन्द्र ने अपने एक भक्त को मोती की माला दी तो वह उसे दांत से तोड कर देख रहा था कि उस के अन्दर रामनाम है या नही। सो यह माला सामने रख कर देख रही थी, इस में कही चन्दर की झलक है या नही ?"

"चुप गिलहरी कही की !" सुधा हँस पडी, "बहुत बोलना आ गया है !" सुधा ने हँसते हुए बनावटी गुस्से से कहा। फिर सुधा तकिये से टिककर बैठ गयी—"आज गेसू नही है। मुझे गेसू की बहुत याद आ रही है।"

"क्यो ?"

"इस लिए कि आज उस के कई शेर याद आ रहे है। एक दफे उस ने सुनाया था—

"ये आज फिज़ाँ खामोश है क्यो, हर ज़र्रे को आखिर होश है क्यो ?
या तुम ही किसी के हो न सके, या कोई तुम्हारा हो न सका।

इसी की अन्तिम पंक्ति है—

मौजें भी हमारी हो न सकी, तूफाँ भी हमारा हो न सका !"

"वाह ! यह पंक्ति बहुत अच्छी है", चन्दर ने कहा।

"आज गेसू होती तो बहुत-सी बातें करते !" सुधा बोली—"देखो चन्दर, जिन्दगी भी क्या होती है ! आदमी क्या सोचता है और क्या होता है। आज से तीन-चार महीने पहले मैंने क्या सोचा था ! क्लास-रूम से भाग कर हम लोग पेड के नीचे लेट कर बातें करते थे, तो मैं हमेशा कहती थी—मैं शादी नही करूँगी। पापा को समझा लूँगी।

उस दिन क्या मालूम था कि इतनी जल्दी जुए के नीचे गरदन डाल देनी होगी और पापा को भी जीत कर किसी दूसरे से हार जाना होगा। अभी उस की तय भी नही हुई और महीने-भर बाद मेरी ''सुधा थोडी देर चुप रही और फिर—"और दूसरी बात उस की, जो मैंने तुम्हें बतायी थी। उस ने कहा था जब किसी के क़दम हट जाते हैं सिर के नीचे से, तब मालूम होता है कि हम किस का सपना देख रहे थे। पहले हमें भी नही मालूम होता था कि हमारे सिर किस के क़दमो पर झुक चुके हैं। याद है? मैंने तुम्हें बताया था, तुम ने पूछा था!"

"याद है।" चन्दर ने कहा। बिनती उठ कर चली गयी लेकिन सुधा या चन्दर किसी ने ध्यान भी नही दिया। चन्दर बोला—"लेकिन सुधा, इन सब बातो को सोचने से क्या फ़ायदा, आगे का रास्ता सामने है, बढो।"

"हाँ, सो तो है ही देवता मेरे! कभी कभी जाने कितनी पुरानी बातें मन में आ ही जाती हैं और मन करता है कि मैं सोचती ही जाऊँ। जाने क्यो मन को बडा सन्तोष मिलता है। और चन्दर जब मैं वहाँ रहूँगी, तुम से दूर, तो इन्ही स्मृतियो के अलावा और क्या शेष रहेगा ' तुम्हें वह दिन याद है जब मैं गेसू के यहाँ नही जा पायी थी और उस स्थान पर हम लोगो में झगडा हो गया था चन्दर, वहाँ सब कुछ है लेकिन मैं लडूँगी-झगडूँगी किस से वहाँ?"

चन्दर एक फीकी-सी हँसी हँस कर बोला—"अब क्या जनम भर बच्ची ही बनी रहोगी!"

"हाँ चन्दर, चाहती तो यही थी लेकिन ज़िन्दगी तो जबरदस्ती सब सुख छीन लेती है और बदले में कुछ भी नहीं देती। आओ चलो लॉन पर चलें। आज शाम को तुम से बातें ही करेंगे।"

उस के बाद सुधा रात को आठ बजे उठी, जब बुआ तैयार हो कर स्टेशन जा रही थी और ड्राइवर मोटर निकाल रहा था। और उदास

टिमटिमाते हुए सितारों ने देखा कि चन्दर और सुधा दोनों की आंखों में आँसुओं की अवशेष नमी झिलमिला रही थी। उठते हुए सुधा ने क्षण-भर चन्दर की ओर देखा, चन्दर ने सर झुका लिया और बहुत उदास आवाज़ में कहा—"चलो सुधा, बहुत देर कर दी हम लोगों ने।"

पन्द्रह दिन बाद बुआ आयी तो उन्होंने घर की शक्ल ही बदल दी। दरवाज़े पर और बरसाती में हल्दी के हाथों की छाप लग गयी, कमरों में का सभी सामान हटा कर दरी बिछा दी गयी और सब से अन्दर वाले कमरे में सुधा का सब सामान रख दिया गया। स्टडीरूम की सभी किताबें समेट दी गयी और वहां एक बड़ी-सी मशीन लाकर रख दी गयी जिस पर बैठ कर बिनती सिलाई करती थी। उसी को कपड़े और गहनों का भण्डार-घर बनाया गया और उस की चाबी बिनती या बुआ के पास रहती थी। गांव से एक महराजिन, एक कहारिन और दो मजदूर आये थे। वे सभी मोटर गैरेज में सोते थे और दिन-भर काम करते और 'पानी पीने' को मांगते रहते थे। सभी कुरसियाँ और सोफ़ा सेट निकलवा कर सायवान में डलवा दिये गये थे। रसोई के पास वाली कोठरी में कुल्हड़, पत्तलें, प्याले वगैरह रखे थे और पूजा वाले कमरे में शक्कर, घी, तरकारी और अनाज था। मिठाई कहाँ रखी जायेगी इस पर बुआजी, महराजिन और बिनती में घण्टे-भर तक बहस हुई लेकिन जब बुआजी ने बिनती से कहा—"आपन लड़के-बच्चे का वियाह कियो तो कतरनी अस जबान चलाय लिह्यो,

अवहिन हर काम में काहे टँगरी अडावा करत हो !' तो बिनती चुप हो गयी और अन्त में बुआजी की ही राय सर्वोपरि मानी गयी। बुआजी की जवान जितनी तेज थी, हाथ भी उतने ही तेज। चार बोरा गेहूँ उन्होंने साफ कर के कोठियों में भरवा दिये। कम से कम पाँच तरह की दालें लायी थी। वेसन पिसवाया, दाल दरवायी, पापड बनवाये, मैदा छनवायी, सूजी दरवायी, वरी मुँगौरी डलवायी, चावल की कच-रियाँ वनवायी और सब को अलग-अलग गठरी में बाँध कर रख दिया। रात को अकसर बुआजी, महराजिन तथा गाँव की महरिन ढोलक लेकर बैठ जाती और गीत गाती। बिनती उन मे भी शामिल रहती।

सच पूछो तो सुधा के व्याह का जितना उछाह बुआ को भी नहीं था उतना बिनती को था। वह सुबह से उठ कर झाड़ू लेकर सारा घर बुहार डालती थी, इस के वाद नहा कर तरकारी काटती, उस के वाद फिर चाय चढाती। डॉक्टर साहब, चन्दर, सुधा सभी को चाय देती, बैठ कर चन्दर अगर कुछ हिसाब लिखाता तो हिसाब लिखती, फिर अपनी मशीन पर बैठ जाती और वारह-एक वजे तक सिलाई करती रहती, फिर दोपहर को चावल और दाल बीनती, शाम को खरबूजे काटती, शरबत वनाती और रात-भर जाग-जाग कर गाती या दीदी को हँसाने की कोशिश करती। एक दिन सुधा ने कहा—"मेरे व्याह में तो इतनी खुश है, अपने व्याह में क्या करेगी ?" तो बिनती ने जवाब दिया—"अपने व्याह में तो मैं खुद, बैण्ड बजाऊँगी, वर्दी पहन कर !"

घर चमक उठा था जैसे रेशम ! लेकिन रेशम के चमकदार, रंगीन उल्लास-भरे गोले के अन्दर भी एक प्राणी होता है, उदास स्तब्ध अपनी साँस रोक कर अपनी मौत की क्षण-क्षण प्रतीक्षा करने वाला रेशम का कीडा। घर के इस सारे उल्लास और चहल-पहल से घिरा हुआ सिर्फ एक प्राणी था जिस की साँस धीरे-धीरे डूब रही थी, जिस की आँखों की चमक धीरे-धीरे कुम्हला रही थी, जिस की चचलता ने उस को नजरों मे

विदा माँग ली थी, जिस के उल्लास ने, सन्तोष ने, सुख ने, शान्ति ने उस के हृदय से विदा माँग ली थी, वह थी—सुधा। सुधा बदल गयी थी। गोरा चम्पई चेहरा पीला पड़ गया था, और लगता था जैसे वह बीमार हो। खाना उसे जहर लगने लगा था, अपने कमरे को छोड़ कर कहीं जाती न थी। एक शीतलपाटी बिछाये उसी पर दिन रात पड़ी रहती थी। बिनती जब हँसती हुई खाना लाती और सुधा के इनकार पर बिनती के आँसू छलछला आते तब सुधा पानी के घूँट के सहारे कुछ खा लेती और उदास, फिर अपनी शीतलपाटी पर लेट जाती। स्वर्ग को कोई इन्द्रधनुषों से भर दे और शची को जहर पिला दे, कुछ ऐसा ही लग रहा था वह घर।

डॉक्टर शुक्ला का साहस न होता था सुधा से बोलने का। वह रोज़ बिनती से पूछ लेते—"सुधा खाना खाती है या नहीं ?" बिनती कहती "हाँ।" तो एक गहरी साँस ले कर अपने कमरे में चले जाते।

चन्दर परेशान था। उस ने इतना काम शायद कभी भी न किया हो अपनी जिन्दगी में। सुनार के यहाँ, कपड़े वाले के यहाँ, फिर राशनिंग अफ्सर के यहाँ, पुलिस बैण्ड ठीक कराने पुलिस लाइन्स, अर्ज़ी देने मैजिस्ट्रेट के यहाँ, रुपया निकालने बैंक, शामियाने का इन्तजाम, पलंग, कुरसी वग़ैरह का इन्तज़ाम, खाने-परोसने के बरतनों का इन्तजाम और जाने क्या-क्या और जब बुरी तरह थक कर आता, जेठ की तपती हुई दोपहरी में, तब बिनती आ कर बताती, सुधा ने आज फिर कुछ नहीं खाया तो उस का मन होता था वह सिर पटक-पटक दे। वह सुधा के पास जाता, सुधा आँसू पोंछ कर बैठती, एक टूटी-फूटी मुसकान से चन्दर का स्वागत करती। चन्दर उस से पूछता—"खाती क्यों नहीं ?"

"खाती तो हूँ चन्दर, इस से ज्यादा गरमियों में मैं कभी नहीं खाती थी।" सुधा कहती और इतने दृढ़ स्वर से कि चन्दर से कुछ प्रतिवाद नहीं करते बनता।

अब बाहरी काम लगभग समाप्त हो गये थे। वैसे तो सभी जगह हल्दी छिडक कर पत्र रवाना किये जा चुके थे लेकिन निमन्त्रण-पत्र भी बहुत सुन्दर छप कर आये थे, हालाँ कि कुछ देर हो गयी थी। ब्याह को अब कुल सात दिन बचे थे। चन्दर सुबह दस बजे एक डिब्बे मे निमन्त्रण-पत्र और लिफाफा भरे हुए आया और स्टडीरूम मे बैठ गया। बिनती बैठी हुई कुछ सिल रही थी।

"सुधा कहाँ है ? उसे बुला लाओ।"

"सुधा आयी, सूजी आँखें, सूखे होंठ, रूखे बाल, मैली धोती, निष्प्राण चेहरा और बीमार चाल। हाथ मे पखा लिये थी। आयी और चन्दर के पास बैठ गयी—"कहो क्या कर आये चन्दर! अब कितना इन्तजाम बाक़ी है ?"

"अब सब हो गया सुधा रानी! आज तो पैर जवाब दे रहे हैं। साइकिल चलाते-चलाते पैर मे जैसे गाँठें पड गयी हो।" चन्दर ने कार्ड फैलाते हुए कहा—"शादी तुम्हारी होगी और जान मेरी निकली जा रही है मेहनत से।"

"हाँ चन्दर, इतना उत्साह तो और किसी को नही है मेरी शादी का!" सुधा ने कहा और बहुत दुलार से बोली—"लाओ पैर दबा दू तुम्हारे!"

'अरे पागल हो क्या ?" चन्दर ने अपने पैर उठा कर ऊपर रख लिये।

"हाँ चन्दर!" गहरी साँस लेते हुए सुधा बोली—"अब मेरा अधिकार भी क्या तुम्हारे पैर छूने का। क्षमा करना, मैं भूल गयी थी कि मैं पुरानी सुधा नही हूँ।" और टप से दो आंसू गिर पडे। सुधा ने पखे की ओट कर आँखें पोछ ली।

"तुम तो बुरा मान गयी सुधा!" चन्दर ने पैर नीचे रखते हुए कहा।

"नही चन्दर!"··· अब बुरा-भला मानने के दिन बीत गये। अब

गैरो की वात का भी वुरा-भला नही मान पाऊँगी, फिर [illegible]
वातो का वुरा-भला क्या ? छोडो ये सब बातें। ये रहा [illegible]
है, देखें।"

चन्दर ने एक निमन्त्रण-पत्र उठाया, उसे [illegible]
पर सुधा का नाम लिख कर कहा—"लो, हमारी [illegible]
आइएगा जरूर।"

सुधा ने निमन्त्रण-पत्र ले लिया—"अच्छा!" [illegible]
कर वोली—"अच्छा अगर हमारे पतिदेव ने आज्ञा दे दी तो आ [illegible]
आप के यहाँ। उन का भी नाम लिख दीजिए वरना वुरा न मान जाएँ।"
और सुधा उठ खडी हुई।

"कहाँ चली ?" चन्दर ने पूछा।

"यहाँ वहुत रोशनी है। मुझे अपना अँधेरा कमरा ही अच्छा [illegible]
है।" सुधा वोली।

"चलो विनती, वही कार्ड ले चलो!" चन्दर ने कहा—"[illegible]
सुधा, आज कार्ड लिखते जायेंगे, तुम से वात करते जायेंगे। [illegible]
सुधो! आज पन्द्रह दिन से तुम से दो मिनिट वैठ कर वात भी नही
कर सके।"

"अव क्या करना है चन्दर! जैसा कह रहे हो वैसा कर तो रही
हूँ। अभी कुछ और वाकी है क्या ? वता दो वह भी कर जाऊँ। अव तो
रो-पीट कर ऊँचा वनना ही है।"

विनती ने कार्ड समेटे तो सुधा डाँट कर वोली—"रख दो यहाँ,
चली उठा के! वडी चन्दर की आज्ञाकारी वनी है। ये भी हमारी जान
की गाहक हो गयी अव! हमारे कमरे में लायी ये सव, टाँग तोड दूँगी!
पाजी कही की!"

विनती ने कार्ड धर दिये। नौकर ने आकर कहा—"वावूजी,
कुम्हार अपना हिसाव माँगता है।"

"अच्छा, अभी आया सुधा !" और चन्दर चला गया।

और इस तरह दिन बीत रहे थे। शादी नज़दीक आती जा रही थी और सभी का सहारा एक-दूसरे से छूटता जा रहा था। सुधा के मन पर जो कुछ भी धीरे-धीरे मरघट की उदासी की तरह बैठता जा रहा था उसे चन्दर अपने प्यार से, अपनी मुसकानों से, अपने आँसुओं से धो देने के लिए व्याकुल हो उठा था, लेकिन यह ज़िन्दगी थी जहाँ प्यार हार जाता है, मुसकानें हार जाती हैं, आँसू हार जाते हैं तश्तरी, प्याले, कुल्हड़, पत्तलें, कालीनें, दरियाँ और बाजे जीत जाते हैं। जहाँ अपनी ज़िन्दगी की प्रेरणामूर्ति के आँसू गिनने के बजाय कुल्हड़ और प्याले गिनवा कर रखवाने पड़ते हैं और जहाँ किसी आत्मा की उदासी को अपने आँसुओं से धोने के बजाय पत्तलें बुलवाना ज़्यादा महत्त्वपूर्ण होता है, जहाँ भावना और अन्तर्द्वन्द्व के सारे तूफ़ान सुनार और बिजली वालों की बात में डूब जाते हैं, और जहाँ दो आँसुओं में डूबते हुए व्यक्तियों की पुकार शहनाइयों की आवाज़ में डूब जाती है और जिस वक़्त कि आदमी के हृदय का कण-कण क्षत-विक्षत हो जाता है, जिस वक़्त उस की नसों में सितारे टूटते हैं, जिस वक़्त उस के माथे पर आग धधकती है, जिस वक्त उस के सिर पर से आसमान और पाँव तले से धरती हट जाती है, उस समय ` शादी की साड़ियों का मोल-तोल करना पड़ता है और बाजे वाले को

८५ रुपया देना पड़ता है।

ऐसी थी उस वक़्त चन्दर की ज़िन्दगी और उस ज़िन्दगी ने अपना चक्र पूरी तरह से चला दिया था। करोड़ों तूफ़ान घुमड़ते हुए उसे नचा रहे थे। वह एक क्षण भी कहीं नहीं टिक पाता था। एक पल भी उसे चैन नहीं था, एक पल भी वह यह नहीं सोच पाता था कि उस के चारों ओर क्या हो रहा है ? वह बेहोशी में, मूर्च्छा में मशीन की तरह काम कर रहा था। आवाज़ें थीं कि उस के कानों से टकरा कर चली जाती थीं, आँसू थे कि हृदय को छू नहीं पाते थे, चक्र उसे फँसा कर खींचे लिये

शाम थी, सूरज डूब रहा था और दिन-भर की तपी हुई छत पर जलती हुई बरसाती के नीचे एक खरहरी खाट पर सुधा लेटी थी। एक महीन पीली धोती पहने, कोरी मारकीन की कुरती पहने, रूखे चिकटे हुए बाल और नाक में बहुत बड़ी-सी नथ। पन्द्रह दिन के आँसुओं ने चेहरे को जाने कैसा बना दिया। न चेहरे पर सुकुमारता थी न कठोरता। न रूप था, न ताज़गी। सिर्फ़ ऐसा लगता था कि जैसे सुधा का सब कुछ लुट चुका है। न केवल प्यार और ज़िन्दगी लुटी है, वरन्—आवाज़ भी लुट गयी है और नीरवता भी। वैभव भी लुट गया और याचना भी।

सुधा ने अपने पीले पल्ले से आँसू पोंछे और उठ कर बैठ गयी। दोनों चुप। पहले कौन बोले! बिनती आयी, चन्दर और सुधा का खाना रख कर चली गयी। "खाना खाओगी सुधा!" चन्दर ने पूछा। सुधा कुछ बोली नहीं सिर्फ़ सिर हिला दिया और डूबते हुए सूरज और उड़ते हुए बादलों की ओर देख कर जाने क्या सोचने लगी। चन्दर ने थाली खिसका दी और सुधा को अपनी ओर खींच कर बोला—"सुधा, इस तरह करने से कैसे काम चलेगा। तुम्हीं को देख कर तो मैं अपना धीरज सम्हालूँगा, बताओ। और तुम्हीं यह कर रही हो!" सुधा चन्दर के पास खिसक आयी और दो मिनिट तक चुपचाप चन्दर की ओर फटी हुई पथराई आँखों से देखती रही और एकदम हृदय को फाड़ देने वाली आवाज़ में चीख कर रो उठी—"चन्दर, अब क्या होगा!"

चन्दर की समझ में नहीं आया वह क्या करे! आँसू उस के सूख चुके थे। वह रो नहीं सकता था। उस के मन पर कहीं कोई पत्थर रखा था जो आँसुओं की बूँदों को बनने के साथ ही सोख लेता था लेकिन वह तड़प उठा, "सुधा!" वह घबड़ा कर बोला—"सुधा, तुम्हें हमारी क़सम है—चुप हो जाओ! ·· चुप बिलकुल चुप हो ऐसे ही!" सुधा चन्दर के पाँवों में मुँह छिपाये थी—"उठ कर बैठो ठीक से

सुधा ·· इतना समझ बूझ कर यह सब करती हो, छि ! तुम्हें अपना दिल मजबूत करना चाहिए वरना पापा को कितना दुःख होगा।"

"पापा ने तो मुझ से बोलना भी छोड दिया है, चन्दर ! पापा से कह दो आज तो बोल लें, कल से हम उन्हें परेशान करने नही आयेंगे, कभी नही आयेंगे। अब उन की सुधा को सब ले जा रहे है, जाने कहाँ ले जा रहे हैं !" और फिर वह फफक-फफक कर रो पडी।

चन्दर ने बिनती से पापा को बुलवाया। सुधा को रोते हुए देख कर बिनती खडी हो गयी, 'दीदी, रोओ मत दीदी, फिर हम किस के भरोसे रहेंगे यहाँ ?" और सुधा को चुप कराते-कराते बिनती भी रोने लगी और आंसू पोछते हुए चली गयी।

पापा आये। सुधा चुप हो गयी और कुछ कहा नही फिर रोने लगी। डॉक्टर शुक्ला भर्राये गले से बोले—"मुझे यह रोवाई अच्छी नही लगती। यह भावुकता क्या ? तुम पढी-लिखी लडकी हो। इसी दिन के लिए तुम्हें पढाया-लिखाया गया था। भावुकता से क्या फ़ायदा ?" कहते-कहते डॉक्टर शुक्ला खुद रोने लगे। "चलो चन्दर यहाँ से ! अभी जनवासा ठीक करवाना है" चन्दर और डॉक्टर शुक्ला दोनो उठ कर चले गये।

अपनी शादी के पहले, हमेशा के लिए अलग होने से पहले सुधा को इतना ही मौक़ा मिला उस के बाद

सुबह छह बजे गाडी आती थी, लेकिन खुशक़िस्मती से गाडी लेट थी, डॉक्टर शुक्ला तथा अन्य लोग बारात का स्वागत करने स्टेशन पर जा रहे थे और चन्दर घर पर रह गया था जनवासे का इन्तजाम करने। जनवासा बगल में था। माथुर साहब के बंगले के दो हॉल और कमरा खाली करवा लिया गया था। चन्दर सुबह छह ही बजे आ गया था और जनवासे मे सब सामान लगवा दिया। नहाने का पानी और बाकी इन्तजाम कर वह घर आया। जलपान का इन्तजाम तो केदार के हाथ में था लेकिन कुछ तौलिये भिजवाने थे।

"विनती, कुछ तौलिये निकाल दो।" चन्दर ने विनती से कहा।

विनती उर्द की दाल धो रही थी। उस ने फौरन उठ कर हाथ धोया और कमरे की ओर चली।

"ऐ विनती · " बुआजी ने भण्डारे के अन्दर से आवाज लगायी—"जाने कहाँ मर गयी मुँहझौंसी! अरे सिंगार-पटार बाद में कर लियो, काम में तनिक दीदा नै लगते। अरे बेसन का कनस्टर कहाँ रखा है?"

"अभी आये!" विनती ने चन्दर से कहा और अपनी माँ के पास दौड़ी—पन्द्रह मिनिट हो गये लेकिन विनती लौटी ही नहीं। ब्याह का घर! हर तरफ से विनती की पुकार मचती और विनती पख लगाये उड़ रही थी। जब विनती नहीं लौटी तो चन्दर ने सुधा को ढूँढ कर कहा—"सुधी, एक बहुत बड़ा-सा तौलिया निकाल दो।"

सुधा चुपचाप उठी और स्टडी रूम में चली। चन्दर भी पीछे-पीछे गया।

"बैठो, अभी निकाल कर लाते हैं!" सुधा ने भरी हुई आवाज में कहा और बगल के कमरे में चली गयी। वहाँ से लौटी तो उस के हाथ में मीठे की तश्तरी थी।

"अरे खाने का वक़्त नहीं है सुधा! आठ बजे लोग आ जायेंगे।"

"अभी दो घण्टे हैं, खा लो चन्दर! अब कभी तुम्हारे काम में हर्जा कर के खाने को नहीं कहूँगी!" सुधा बोली। चन्दर चुप।

"याद है चन्दर! इसी जगह आँचल में छिपा कर नानखटाई लायी थी। लाओ आज अपने हाथ से खिला दूँ। कल ये हाथ पराये हो जायेंगे!" और सुधा ने एक इमरती तोड़ कर चन्दर के मुँह में दे दी। चन्दर की आँख में दो आँसू छलक आये—सुधा ने अपने हाथ से आँसू पोंछ दिये और बोली—"चन्दर, घर में कोई खाने का खयाल करने वाला नहीं है। खाते-पीते जाना, तुम्हें हमारी कसम है। मैं शाहजहाँपुर से लौट कर

आऊँगी तो दुवले मत मिलना।" चन्दर कुछ वोला नही। आँसू वहते गये, सुधा खिलाती गयी, वह खाता गया। सुधा ने गिलास में पानी दिया, उस ने हाथ घोया और जेव से रूमाल निकाला।

"क्यो आज आँचल में हाथ नही पोछोगे?" सुधा वोली। चन्दर ने आँचल हाथ मे ले लिया और पलको पर आँचल दवा कर फूट फूट कर रो पडा।

"छि चन्दर! आज तो हम सम्हल गये है, हम ने सव स्वीकार कर लिया चुपचाप। अव तुम कमजोर मत वनो। तुम ने कहा था मैं शान्त रहूँ तो शान्त हो गयी। अव क्यो मुझे भी रुलाओगे! उठो।" चन्दर उठ खडा हुआ।

सुधा ने एक पान चन्दर के मुँह में देकर कत्था उस की कमीज में लगा दिया। चन्दर कुछ नही वोला।

"अरे आज तो लड लो चन्दर! आज से खत्म कर देना।"

इतने मे विनती तौलिया ले आयी। "दीदी, इन्हें कुछ खिला दो। ये खा नही रहे हैं।" विनती ने कहा।

"खिला दिया।" सुधा वोली—"देखो चन्दर, आज से नही रोऊँगी लेकिन एक शर्त पर। तुम वरावर मेरे सामने रहना। मण्डप में रहोगे न?"

"हाँ रहूँगा।" चन्दर ने आँसू पीते हुए कहा।

"कही चले मत जाना। मेरी आखिरी विनती है।" सुधा वोली। चन्दर तौलिया लेकर चला आया।

चूँकि वारात मे कुल आठ ही लोग थे अत घर की ओर माथुर साहव की दो ही कारों से काम चल गया। जव ये लोग आये तो नाश्ते का सामान तैयार था और चन्दर चुपचाप वैठा था। उस ने फ़ौरन सव का सामान लगवाया और सामान रखवा कर वह जा ही रहा था कि कैलाश ने पीछे से कन्धे पर हाथ रख कर उसे पीछे घुमा लिया और गले

से लगा कर बोला, "कहाँ चले कपूर साहब, नमस्ते ! चलो पहले नाश्ता करो।" और खींच कर वह चन्दर को ले गया। अपने बग़ल की मेज़ पर बिठा कर, उस की चाय अपने हाथ से बनायी और बोला, "कुछ नाराज़ थे क्या कपूर ? ख़त का जवाब क्यों नहीं देते थे ?"

"हम तो बराबर ख़त का जवाब देते रहे यार !" कपूर चाय पीते हुए बोला।

"अच्छा तो हम घूमते रहे इधर-उधर। ख़त गड़बड़ हो गये होंगे। लो समोसा खाओ !" कैलाश ने कहा। चन्दर ने सर हिलाया तो बोला, "अरे वाह क्यों ? शादी तुम्हारी नहीं हो रही है हमारी हो रही है, समझे ? तुम क्यों तकल्लुफ़ कर रहे हो। अच्छा कपूर काम तो तुम्हीं पर होगा सब !"

"हाँ !' कपूर बोला।

"बड़ा अफ़सोस है यार ! जब हम लोग पहली दफ़े मिले थे तो यह नहीं मालूम था कि तुम और डॉक्टर साहब इतना अच्छा इनाम दोगे, अपने को बचाने का। हमारे लायक़ कोई काम हो तो बताओ ?"

"आप की दुआ है !" चन्दर ने सिर झुका कर कहा, और सभी हँस पड़े। इतने में शंकर बाबू डॉक्टर साहब के साथ आये और सब लोग चुप हो गये।

दिन-भर के व्यवहार से चन्दर ने देखा कि कैलाश भी उतना ही अच्छा हँसमुख और शालीन है जितने शंकर बाबू थे। वह उसे राजनीतिक क्षेत्र मे जितना फौलादी लगा था, घरेलू जिन्दगी में उतना ही अच्छा। चन्दरका मन ख़ुशी से नाच उठा। सुधा की ओर से वह थोड़ा निश्चिन्त हो गया। अब सुधा निभा ले जायेगी। वह मौक़ा निकाल कर घर में गया। देखा सुधा को औरतें घेरे हुए बैठी हैं और महावर लगा रही हैं। बिनती कनस्टर में से घी निकाल रही थी। चन्दर गया और बिनती की चोटी घसीट कर बोला, "ओ गिलहरी, घी पी रही है क्या ?"

विनती ने दग हो कर चन्दर की ओर देखा । आज तक कभी अच्छे-
भले में तो चन्दर उसे नही चिढ़ाया था । आज क्या हो गया ? आज जव
कि पिछले पन्द्रह रोज से चन्दर के होठ मुसकराना भूल गये हैं ।

"आँख फाड कर क्या देख रही है ? कैलाश वहुत अच्छा लडका है,
वहुत अच्छा । अव सुधा वहुत सुखी रहेगी । कितना अच्छा होगा विनती !
हँसती क्यो नही, गिलहरी !" और चन्दर ने विनती की वाँह में चुटकी
काट ली ।

"अच्छा ! हमें दीदी समझा है क्या ? अभी वताती हूँ ।" और घी-
भरे हाथ से चन्दर की वाँह पकड कर विनती जोर से घुमा दी । चन्दर
ने अपने को छुडाया और विनती को एक चपत मार कर गुनगुनाता हुआ
चला गया ।

विनती ने कनस्टर के मुँह पर लगा घी पोछा और मन में वोली,
"देवता और किसे कहते है ?"

शाम को वारात चढी । सादी-सी वारात । सिर्फ एक वैण्ड था ।
कैलाश ने शेरवानी और पायजामा पहना था, और टोपी । सिर्फ एक
माला गले में पडी थी और हाथ में कगन वँधा था । मौर पीछे किसी
आदमी के हाथ में था । जयमाला की रस्म होने वाली थी लेकिन वुआ-
जी ने स्पष्ट कह दिया कि हमारी लडकी कोई ऐसी-वैसी नही कि व्याह के
पहले भरी वारात में मुँह खोल कर माला पहनावे । लेकिन घूँघट के
मामले पर सुधा ने दृढता से मना किया था कि वह घूँघट विल्कुल नही
करेगी ।

अन्त में पापा उसे लेकर मण्डप मे आये । घर का काम-काज निवट
गया था । सभी लोग आँगन में वैठे थे । कामिनी, प्रभा, लीला सभी थी,
एक ओर वराती वैठे थे । सुधा शान्त थी लेकिन उस का मुँह ग्रहण के
चन्द्रमा की तरह निस्तेज था । मण्डप का एक वल्व खराव हो गया था
और चन्दर सामने खडा उसे वदल रहा था । सुधा ने जाते-जाते चन्दर

को देखा और आँसू पोछ कर मुसकराने लगी और मुसकरा कर फिर आँसू पोछने लगी। कामिनी, प्रभा, लीला तमाम लडकियाँ कैलाश पर फब्तियाँ कस रही थी। सुधा सिर झुकाये बैठी थी। पापा से उस ने कहा, "बिनती को हमारे पास भेज दो।" बिनती आकर सुधा के पीछे बैठ गयी। कैलाश ने आँख के इशारे से चन्दर को बुलाया। चन्दर जाकर पीछे बैठा तो कैलाश ने कहा, "यार यहाँ जो लोग खडे हैं इन का परिचय तो बता दो चुपके से।" चन्दर ने सभी का परिचय बताया। कामिनी, प्रभा, लीला सभी के बारे में जब चन्दर बता रहा था तो बिनती बोली, "बडे लालची मालूम देते हैं आप? एक से सन्तोष नही है क्या? वाह रे जीजाजी।" कैलाश ने मुसकरा कर चन्दर से पूछा, "इस का ब्याह तय हुआ कि नही?"

"हो गया।" चन्दर ने कहा।

"तभी बोलने का अभ्यास कर रही है, मण्डप मे भी इसीलिए बैठी है क्या?" कैलाश ने कहा। बिनती झेंप गयी और उठ कर चली गयी।

सस्कार शुरू हुआ। कैलाश के हाथ में नारियल और कैलाश की मुट्ठी पर सुधा के दोनो हाथ। सुधा अब चुप थी। इतनी चुप इतनी चुप कि लगता था उस के होठो ने कभी बोलना जाना ही नही। सस्कार के दौरान में ही पारस्परिक वचन का समय आया। कैलाश ने सभी ति ँ स्वय कही। शकर बाबू ने कहा लडकी भी शिक्षित है और उसे ो स्वय वचन कहने होगे। सुधा ने सिर हिला दिया। एक असन्तोष की लहर-सी बरातियो में फैल गयी। चन्दर ने बिनती को बुलाया। उस के कान में कहा—"जा कर सुधा से कह दो कि पागलपन नही करते। इस से क्या फ़ायदा?" बिनती ने जा कर बहुत धीरे से सुधा के कान मे कहा। सुधा ने सिर उठा कर देखा। सामने बरामदे की सीढियो पर चन्दर बैठा हुआ बडा चिन्तित-सा कभी शकर बाबू की ओर देखता और कभी सुधा की ओर। सुधा से उस की निगाह मिली और वह सिहर सा उठा, सुधा क्षण-भर उस की ओर देखती रही। चन्दर ने जाने क्या कहा

बार सुधा ने आंखो-ही-आंखो मे उसे जाने क्या जवाब दे दिया। उस के बाद सुधा नीचे रखे हुए पूजा के नारियल पर लगे हुए सिन्दूर को देखती रही और फिर एक बार चन्दर की ओर देखा। विचित्र-सी थी वह निगाह, जिस में कातरता नही थी, करुणा नही थी, आंसू नही थे, कमजोरी नही थी, था एक गम्भीरतम विश्वास, एक उपमाहीन स्नेह, एक सम्पूर्णतम समर्पण। लगा, जैसे वह कह रही—सचमुच तुम कह रहे हो, फिर सोच लो चन्दर इतने दृढ हो इतने कठोर हो मुझ से मुंह से क्यो कहलवाना चाहते हो क्या सारा सुख लूट कर थोडी-सी आत्म-वचना भी मेरे पास नही छोडोगे? ''अच्छा लो मेरे देवता! और उस ने हार कर सिसकियो से सने स्वरो में अपने को कैलाश को समर्पित कर दिया। प्रतिज्ञाएँ दोहरा दी और उस के बाद साडी का एक छोर खीच कर छिपा कर, नथ की डोरी ठीक करने के बहाने उस ने आंसू पोछ लिये।

चन्दर ने एक गहरी सांस ली और बगल में बैठी हुई बुआजी से कहा—

"बुआजी अब तो बैठा नही जाता। आंखो में जैसे किसी ने मिर्च भर दी हो।"

"जाओ जाओ, सोय रहो ऊपर, खाट बिछी है। कल सुबह दस बजे बिदा करे को है। कुछ खायो पियो नै, तो पडे रहवो!" बुआ ने बडे स्नेह से कहा।

चन्दर ऊपर गया तो देखा एक खाट पर बिनती औंधी पडी सिसक रही है। "बिनती! बिनती!" उस ने बिनती को पकड कर हिलाया। बिनती फूट-फूटकर रो पडी।

"उठ पगली, हमें तो समझाती है, खुद अपने-आप पागलपन कर रही है।" चन्दर ने रुंधे गले से कहा।

बिनती उठकर एकदम चन्दर की गोद मे छिप गयी और दर्दनाक स्वर मे बोली—"हाय चन्दर—अब ' क्या' 'होगा ?"

को देखा और आंसू पोंछ कर मुसकराने लगी और मुसकरा कर फिर आंसू पोछने लगी। कामिनी, प्रभा, लीला तमाम लड़कियाँ कैलाश पर फब्तियाँ कस रही थी। सुधा सिर झुकाये बैठी थी। पापा से उस ने कहा, "बिनती को हमारे पास भेज दो।" बिनती आकर सुधा के पीछे बैठ गयी। कैलाश ने आँख के इशारे से चन्दर को बुलाया। चन्दर जाकर पीछे बैठा तो कैलाश ने कहा, "यार यहाँ जो लोग खड़े हैं इन का परिचय तो बता दो चुपके से!" चन्दर ने सभी का परिचय बताया। कामिनी, प्रभा, लीला सभी के बारे में जब चन्दर बता रहा था तो बिनती बोली, "बड़े लालची मालूम देते हैं आप? एक से सन्तोष नहीं है क्या? वाह रे जीजाजी!" कैलाश ने मुसकरा कर चन्दर से पूछा, "इस का ब्याह तय हुआ कि नहीं?"

"हो गया।" चन्दर ने कहा।

"तभी बोलने का अभ्यास कर रही है, मण्डप में भी इसीलिए बैठी है क्या?" कैलाश ने कहा। बिनती झेंप गयी और उठ कर चली गयी।

संस्कार शुरू हुआ। कैलाश के हाथ में नारियल और कैलाश की मुट्ठी पर सुधा के दोनों हाथ। सुधा अब चुप थी। इतनी चुप इतनी चुप कि लगता था उस के होठों ने कभी बोलना जाना ही नहीं। संस्कार के दौरान में ही पारस्परिक वचन का समय आया। कैलाश ने सभी प्रतिज्ञाएँ स्वयं कहीं। शंकर बाबू ने कहा लड़की भी शिक्षित है और उसे भी स्वयं वचन कहने होंगे। सुधा ने सिर हिला दिया। एक असन्तोष की लहर-सी बरातियों में फैल गयी। चन्दर ने बिनती को बुलाया। उस के कान में कहा—"जा कर सुधा से कह दो कि पागलपन नहीं करते! इस से क्या फ़ायदा?" बिनती ने जा कर बहुत धीरे से सुधा के कान में कहा। सुधा ने सिर उठा कर देखा। सामने बरामदे की सीढ़ियों पर चन्दर बैठा हुआ बड़ा चिन्तित-सा कभी शंकर बाबू की ओर देखता और कभी सुधा की ओर। सुधा से उस की निगाह मिली और वह सिहर सा उठा, सुधा क्षण-भर उस की ओर देखती रही। चन्दर ने जाने क्या कहा

ओर सुधा ने आंखो-ही-आंखो मे उसे जाने क्या जवाब दे दिया। उस के बाद सुधा नीचे रखे हुए पूजा के नारियल पर लगे हुए सिन्दूर को देखती रही और फिर एक बार चन्दर की ओर देखा। विचित्र-सी थी वह निगाह, जिस में कातरता नही थी, करुणा नही थी, आंसू नही थे, कमजोरी नही थी, था एक गम्भीरतम विश्वास, एक उपमाहीन स्नेह, एक सम्पूर्णतम समर्पण। लगा, जैसे वह कह रही—सचमुच तुम कह रहे हो, फिर सोच लो चन्दर इतने दृढ़ हो इतने कठोर हो ""मुझ से मुँह से क्यो कहलवाना चाहते हो क्या सारा सुख लूट कर थोडी-सी आत्म-वचना भी मेरे पास नही छोडोगे ? ""अच्छा लो मेरे देवता! और उस ने हार कर सिसकियो से सने स्वरो में अपने को कैलाश को समर्पित कर दिया। प्रतिज्ञाएँ दोहरा दी और उस के बाद साडी का एक छोर खीच कर छिपा कर, नथ की डोरी ठीक करने के बहाने उस ने आंसू पोछ लिये।

चन्दर ने एक गहरी सांस ली और बग़ल में बैठी हुई बुआजी से कहा—

"बुआजी अब तो बैठा नही जाता। आँखों में जैसे किसी ने मिर्च भर दी हो।"

"जाओ जाओ, सोय रहो ऊपर, खाट बिछी है। कल सुबह दस बजे बिदा करे को है। कुछ खायो पियो नैं, तो पडे रहवो!" बुआ ने बडे स्नेह से कहा।

चन्दर ऊपर गया तो देखा एक खाट पर बिनती औंधी पडी सिसक रही है। "बिनती! बिनती!" उस ने बिनती को पकड कर हिलाया। बिनती फूट-फूटकर रो पडी।

"उठ पगली, हमें तो समझाती है, खुद अपने-आप पागलपन कर रही है।" चन्दर ने रुँधे गले से कहा।

बिनती उठकर एकदम चन्दर की गोद मे छिप गयी और दर्दनाक स्वर मे बोली—"हाय चन्दर—अब " क्या"'होगा ?"

चन्दर की आँखों में आँसू आ गये, वह फूट पडा और बिनती को एक डूबते हुए के सहारे की तरह पकड कर उस की मांग पर मुँह रख कर फूट-फूट कर रो पडा। लेकिन फिर भी सम्हल गया और बिनती का माथा सहलाते हुए और अपनी सिसकियों को रोकते हुए कहा—"रो मत पगली!"

धीरे-धीरे बिनती चुप हुई। और खाट के पास नीचे छत पर बैठ गयी और चन्दर के घुटनों पर हाथ रख कर बोली—"चन्दर, तुम आना मत छोडना। तुम इसी तरह आते रहना! जब तक दीदी ससुराल से लौट न आयें।"

"अच्छा!" चन्दर ने बिनती की पीठ पर हाथ रख कर कहा—"घबडाते नहीं। तुम तो बहादुर लडकी हो न! सब चीज बहादुरी से सहना चाहिए। कैसी दीदी की बहन हो? क्यों?"

बिनती उठकर नीचे चली गयी।

चन्दर लेट रहा। उस की पोर-पोर में दर्द हो रहा था। नस नस को जैसे कोई तोड रहा हो, खींच रहा हो। हड्डियों के रेशे-रेशे में थकान मिल गयी थी लेकिन उसे नींद नहीं आयी। आँगन में पुरोहितजी के मन्त्र-पाठ का स्वर और बीच-बीच में आने वाली किसी बराती या औरतों की आवाजें उस के मन को अस्त-व्यस्त कर देती थीं। उस की थकान और उस की अशान्ति ही उस को बार-बार झटके से जगा देती थी। वह करवट बदलता कभी ऊपर देखता कभी आँख बन्द कर लेता कि शायद नींद आ जाये लेकिन नींद नहीं ही आयी। धीरे-धीरे नीचे का रव भी शान्त हो गया। सस्कार भी समाप्त हुआ। बराती उठ कर चलने लगे और वह आवाजों से यह पहचानने की कोशिश करने लगा कि अब कौन क्या कर रहा है। धीरे-धीरे सब शोर शान्त हो गया।

चन्दर ने फिर करवट बदली और आँख बन्द कर ली। धीरे-धीरे एक कोहरा उस के मन पर छा गया। वह इतना जागा कि जब अगर

ह आँख भी बन्द करता तो जब पलकें पुतलियो से छा जाती तो एक बहुत कड़वा दर्द होने लगता था। जैसे-तैसे उस की थोडी-सी आँख लगी

किसी ने सहसा जगा दिया। पलकें बन्द करने में जितना दर्द हुआ था उतना ही पलकें खोलने मे। उस ने पलकें खोली—देखा सामने सुधा खडी थी

मांग और माथे में सिन्दूर, कलाई में कगन, हाथ में अँगूठियाँ, कडे, चूडे, गले मे गहने, वडी-सी नथुनी डोरे के सहारे कान मे वँधी हुई, आंखें—जिन मे भादो की घटाओ की गरज खामोश हो रही वरसात-सी सो गयी थी।

वह क्षण-भर पैताने खडी रही। चन्दर उठ कर वैठ गया। उस का दिल इस तरह धडक रहा था जैसे किसी के सामने भाग्य का रूठा हुआ देवता खडा हो। सुधा कुछ वोली नही। उस ने दोनो हाथ जोडे और झुक कर चन्दर के पैरो पर माथा टेक दिया। चन्दर ने उस के सिर पर हाथ रख कर कहा—"ईश्वर तुम्हारा सोहाग अटल करे। तुम वहुत महान् हो। मुझे तुम पर आज से गर्व है। आज तक तुम जो कुछ थी उस मे कही ज्यादा हो मेरे लिए सुधा!"

सुधा कुछ वोली नही। आंचल से आंसू पोछती हुई वह पायताने जमीन पर वैठ गयी और अपने गले से एक वेले का हार उतारा। उसे तोड डाला और चन्दर के पांव खीच कर खाट के नीचे जमीन पर रख लिये।

"अरे यह क्या कर रही हो सुधा!" चन्दर ने कहा।

"जो मेरे मन में आयेगा!" वहुत मुश्किल से रुँधे गले से सुधा वोली, "मुझे किसी का डर नही, तुम जो कुछ दण्ड दे चुके हो, उस से वडा दण्ड तो अव भगवान् भी नही दे सकेंगे!" सुधा ने चन्दर के पाँवो पर फूल रख कर उन्हें चूम लिया और अपनी कलाई में वँधी हुई एक

पुडिया खोल कर उसमें-से थोडा-सा सिन्दूर उन फूलो पर छिडक कर, चन्दर के पाँवो पर सिर रख कर चुपचाप रोती रही।

थोडी देर वाद उठी और उन फूलों को समेटा। अपने आंचल के छोर मे उन्हे वांध लिया और उठ कर चली धीमे-धीमे निश्शब्द··

"कहाँ चली सुधा ?" चन्दर ने सुधा का हाथ पकड लिया।

"कही नही !" अपना हाथ छुडाते हुए सुधा ने कहा।

"नही-नही, सुधा लाओ ये हम रखेंगे !" चन्दर ने सुधा को रोकते हुए कहा।

"वेकार हैं चन्दर ! कल तक, परसों तक ये जूठे हो जायेंगे देवता मेरे !" और सुधा सिसकते हुए चली गयी।

एक चमकदार सितारा टूटा और पूरे आकाश पर फिसलते हुए जाने किस क्षितिज में खो गया।

दूसरे दिन आठ बजे तक सारा सामान स्टेशन पहुँच गया था। शंकर बाबू और डॉक्टर साहब पहले ही स्टेशन पहुँच गये थे। बराती भी सब वहीं चले गये थे। कैलाश और सुधा को स्टेशन तक लाने का जिम्मा चन्दर पर था। बहुत जल्दी कराते-कराते भी सवा नौ बज गये थे। उस ने फिर जा कर कहा। कैलाश और सुधा खडे हुए थे। पीछे से नाइन सुधा के सिर पर एक पखा रखे थी और बुआजी रोचना कर रही थीं। चन्दर के जल्दी मचाने पर अन्त मे उन्हें फुरसत मिली और वह आगे बढे। मोटर पर सुधा ने ज्यो ही पांव रखा कि बिनती पांव मे लिपट गयी और

रोने लगी। सुधा जोर से बिलख-बिलख कर रो पडी। चन्दर ने बिनती को छुडाया। सुधा पीछे बैठ कर खिडकी पर मुँह रख कर सिसकती रही। मोटर चल दी। सुधा मुड कर अपने घर की ओर देख रही थी। बिनती ने हाथ जोडे तो सुधा चीख कर रो पडी। फिर चुप हो गयी।

स्टेशन पर भी सुधा बिलकुल शान्त रही। सुधा और कैलाश के लिए सेकेण्ड क्लास में एक बर्थ सुरक्षित थी। बाकी लोग डयोढे में थे। शकर बाबू ने दोनों को उस डिब्बे मे पहुँचाया और बोले—"कैलाश, तुम जरा हमारे साथ आओ। मिस्टर कपूर, जरा बहू के पास आप रहिए। मैं डॉक्टर साहब को यहाँ भेज रहा हूँ।"

चन्दर खिडकी के पास खडा हो गया। शकर बाबू का छोटा बच्चा आ कर अपनी नयी चाची के पास बैठ गया और उन की रेशमी चादर से खेलने लगा। चन्दर चुपचाप खडा था।

सहसा सुधा ने उस के हाथो पर अपना मेंहदी लगा हाथ रख दिया और धीमे से कहा—"चन्दर!" चन्दर ने मुड कर देखा तो बोली—"अब कुछ सोचो मत। इधर देखो!" और सुधा ने जाने कितने दुलार से चन्दर से कहा—"देखो बिनती का घ्यान रखना। उसे तुम्हारे ही भरोसे छोड रही हूँ और सुनो, पापा को रात को सोते वक्त दूध में ओवल्टीन जरूर दे देना। खाने-पीने में गडबडी मत करना, यह मत समझना कि सुधा मर गयी तो फिर बिना दूध की चाय पीने लगो। हम जल्दी से आ जायेंगे। पम्मी का कोई खत आये तो हमें लिखना।"

इतने मे डॉक्टर साहब और कैलाश आ गये। कैलाश कम्पार्टमेण्ट में बाथरूम मे चला गया। डॉक्टर साहब आये और सुधा के सिर पर हाथ रख कर बोले—"बेटा! आज तेरी माँ होती तो कितना अच्छा होता। और देख, महीने-भर मे बुला लेंगे तुझे। वहाँ घबडाना मत।"

गाडी ने सीटी दी।

पापा ने कहा—"बेटा, अब ठीक से रहना और भावुकता या बचपन

मत करना। समझो !" पापा ने आँख से रूमाल लगा लिया "विवाह बहुत बडा उत्तरदायित्व है। अब तुम्हारी नयी जिन्दगी है। अब तक बेटी थी अब बहू हो "

सुधा बोली—"पापा, तुम्हारी ओवल्टीन का डिब्बा शीशे वाली मेज पर है। उसे पी लिया करना और पापा, विनती को गाँव मत भेजना। चन्दर को अब घर पर ही बुला लो। तुम अकेले पड गये ! और हमें जल्दी बुला लेना "

गार्ड ने सीटी दी। कैलाश ने जल्दी से डॉक्टर साहब के पैर छुए। चन्दर से हाथ मिला लिया। सुधा बोली—"चन्दर, ये पुर्जा विनती को देना और देखो मेरा नतीजा निकले तो तार देना।" गाडी चल पडी। अच्छा पापा, अच्छा चन्दर···" सुधा ने हाथ जोडे और खिडकी पर टिक कर रोने लगी। और बार-बार आँसू पोछ-पोछ कर देखने लगी। ···

गाडी प्लेटफॉर्म के बाहर चली गयी तब चन्दर मुडा। उस के बदन में पोर-पोर मे दर्द हो रहा था। वह कैसे घर पहुँचा उसे मालूम नही।

२

चन्दर को हफ्ते-भर तक होश नही रहा। शादी के दिनो में उसे एक नशा था जिस के बल पर वह मशीन की तरह काम करता गया। शादी के बाद इतनी भयकर थकावट उस के नशो में कसक उठी कि उस का चलना फिरना मुश्किल हो गया था। वह अपने घर से होटल तक खाना खाने नही जा पाता था। बस पडा-पडा सोता रहता। सुबह नौ बजे सोता, पांच बजे उठता, थोडी देर होटल में बैठ कर फिर वापस आ जाता। चुपचाप छत पर लेटा रहता और फिर सो जाता। उस का मन एक ऐसे उजडे हुए नीड की तरह था जिस में से विचार, अनुभूति, स्पन्दन और रस के विहगम कही दूर उड गये थे। लगता था जैसे वह सब कुछ भूल गया है। सुधा, बिनती, पम्मी, डॉक्टर साहब, रिसर्च, थीसिस, सभी कुछ! ये सब चीजें कभी-कभी उस के मन में नाच जाती लेकिन चन्दर को ऐसा लगता कि ये किसी ऐसी दुनिया की चीजें हैं जिस को वह भूल गया है, जो उस के स्मृति-पटल से मिट चुकी है, कोई ऐसी दुनिया जो कभी थी, कही थी, लेकिन किसी भयकर जलप्रलय ने जिस का कण-कण ध्वस्त कर दिया था। उस की दुनिया अपनी छत तक सीमित थी, छत के चारो ओर की ऊँची दीवारो और उन चार दीवारो से बंधे हुए आकाश के चौकोर टुकडे तक ही उस के मन की उडान बंध गयी थी। उजाला पाख था। पहले वह लुब्धक तारे की रोशनी देखता फिर धीरे-धीरे चाँद की दूधिया रोशनी सफेद कफ़न की तरह छा जाती और वह मन मे थके हुए स्वर में जैसे चांदनी को ओढ़ता हुआ-सा कहता—"सो

जा मुर्दे ''सो जा।''

छठे दिन उस का मन कुछ ठीक हुआ। थकावट जो एक केंचुल की तरह उस पर छायी हुई थी, धीरे-धीरे उतर गयी और उसे लगा जैसे मन में कुछ टूटा हुआ-सा दर्द कसक रहा है। यह दर्द क्यों है, कैसा है, यह उस के कुछ समझ में नहीं आता था। पाँच बजे थे लेकिन धूप बिलकुल नहीं थी। पीले उदास बादलों की एक झीनी तह ने ढलते हुए आषाढ़ के सूरज को ढँक लिया था। हवा में एक ठण्डक आ गयी थी, लगता था कि झोंके किसी वर्षा के देश से आ रहे हैं। वह उठा, नहाया और सुधा के घर चल पड़ा।

डॉक्टर शुक्ला लॉन पर हाथ में किताब लिये टहल रहे थे। पाँच दिनों में जैसे वह बहुत बूढ़े हो गये थे। कुछ झुके हुए-से, निस्तेज चेहरा, डबडबायी आँखें और चाल में जैसे उम्र थक गयी हो। उन्होंने चन्दर का स्वागत भी उस तरह नहीं किया जैसे पहले करते थे। सिर्फ इतना बोले—''चन्दर, दो दफे ड्राइवर को भेज कर बुलवाया तो मालूम हुआ तुम सो रहे हो। अब अपना सामान यहीं ले आओ।'' और वे बैठ कर किताब उलट-पलट कर देखने लगे। अभी तक वे बूढ़े थे, उन का व्यक्तित्व तरुण था। आज लगता था जैसे उन के व्यक्तित्व पर भी झुर्रियाँ पड़ने लगी हैं, उन के व्यक्तित्व की कमर भी झुक गयी है। चन्दर कुछ नहीं बोला। चुपचाप खड़ा रहा। सामने आकाश पर एक अजब-सी जर्दी छा रही थी। डॉक्टर साहब ने किताब बन्द की और बोले—''सुना है कालेज के प्रिंसिपल आ गये हैं। जाऊँ जरा उन से तुम्हारे बारे में बात कर आऊँ। तुम जाओ सुधा का खत आया है, बिनती के पास।''

''बुआजी हैं?'' चन्दर ने पूछा।

''नहीं, आज ही सुबह तो गयी। हम लोग कितना रोकते रहे लेकिन उन्हें कहीं और चैन ही नहीं पड़ती। बिनती को बड़ी मुश्किल से रोका मैं ने।'' और डॉक्टर साहब गैरेज की ओर चल पड़े।

चन्दर भीतर गया। सारा घर इतना सुनसान था, इतना भयकर सन्नाटा कि चन्दर के रोये-रोये खडे हो गये। शायद मौत के बाद का घर भी इतना नीरव और इतना भयानक न लगता होगा जितना यह शादी के बाद का घर। सिर्फ रसोई से कुछ खटपट की आवाज आ रही थी। "विनती!" चन्दर ने पुकारा। विनती चौके में थी। वह निकल आयी। विनती को देखते ही चन्दर दग हो गया। वह लडकी इतनी दुबली हो गयी थी कि जैसे बीमार हो। रो-रोकर उस की आँखें सूज गयी थी और होठ मोटे पड गये थे। चन्दर को देखते ही उस ने कडाही उतार कर नीचे रख दी और बिखरी हुई लटें सुधार कर, आँचल ठीक कर बाहर निकल आयी। कमरे से खीच कर एक चौकी आँगन में डाल कर चन्दर से बहुत उदास स्वर मे बोली—"बैठिए।"

"घर कितना सूना लग रहा है विनती, तुम अकेले कैसे रहती होगी?" चन्दर ने कहा। विनती की आँखो में आँसू छलछला आये।

'विनती रोती क्यो हो? छि! मुझे देखो। मैं कैसे पत्थर बन गया हूँ। क्यो? तुम तो इतनी अच्छी लडकी हो।" चन्दर ने विनती के कन्धे पर हाथ रख कर कहा।

विनती ने आँसू-भरी पलकें चन्दर की ओर उठायी और बडे ही कातर स्वर में कहा—"आप देवता हो सकते हैं, लेकिन हरेक तो देवता नही है। फिर आप ने कहा था आप आयेंगे बराबर! पिछले हफ्ते से आये भी नही। यह भी नही सोचा कि हमारा क्या हाल होगा! रोज सुबह-शाम कोई भी आये तो हम दौड कर देखते थे कि आप आये हैं या नही। दीदी आप की थी। बस उन तक आप का रिश्ता था। हम तो आप के कोई नही हैं।"

"नही विनती! इतने थक गये थे हम कि कही आने-जाने की हिम्मत ही नही पडती थी। बुआजी को क्यो जाने दिया तुम ने? उन्हें रोक लेती!" चन्दर ने कहा।

"अरे वह थी तो रोने भी नही देती थी। मैं दो-तीन दिन तक रोयी तो मुझ पर बहुत बिगडी और महराजिन से बोली—"हम ने तो ऐसी लडकी ही नही देखी। बडी बहन का ब्याह हो गया तो मारे जलन के दिन-रात आँसू बहा-बहा कर अमगल मनाती है। जब बखत आयेगा तभी शादी करेंगे कि अभी ही किसी के साथ निकाल दें!" विनती ने एक गहरी साँस लेकर कहा, "आप समझ नही सकते कि हमारी जिन्दगी कितनी खराब है। अब तो हमारी तबीयत होती है कि मर जायें। अभी-तक दीदी थी, सहारा दिये रहती थी। हिम्मत बँधाये रहती थी, अब तो कोई नही है हमारा।"

"छि, ऐसी बातें नही करते विनती! महीने-भर मे सुधा आ जायेगी। और माँ की बातो का क्या बुरा मानना?"

"आप लडकी होते तो समझते चन्दर बाबू!" विनती बोली और जाकर एक तश्तरी मे नाश्ता ले आयी—"लो, दीदी कह गयी थी कि चन्दर के खाने-पीने का खयाल रखना लेकिन यह किस को क्या मालूम था कि दीदी के जाते ही चन्दर गैर हो जायेंगे।"

"नही विनती, तुम गलत समझ रही हो। जाने क्यो एक अजब-सी खिन्नता मन में आ गयी थी। कुछ करने की तबीयत ही नही होती थी। आज कुछ तबीयत ठीक हुई तो सब से पहले तुम्हारे ही पास आया विनती! अब सुधा के बाद मेरा है ही कौन सिवा तुम्हारे?" चन्दर ने बहुत उदास स्वर में कहा।

"तभी न! उस दिन मैं बुलाती रह गयी और आप यह गये, वह गये और आँख से ओझल! मैं ने तो उसी दिन समझ लिया था कि अब पुराने चन्दर बाबू बदल गये।" विनती ने रोते हुए कहा।

चन्दर का मन भर आया था, गले में आँसू अटक रहे थे लेकिन आदमी की जिन्दगी भी कैसी अजब होती है। वह रो भी नही सकता था, माथे पर दुःख की रेखा भी नहीं झलकने दे सकता था, इस लिए कि

सामने कोई ऐसा था, जो खुद दुखी था और सुधा की थाती होने के नाते विनती को समझाना उस का पहला कर्त्तव्य था। विनती के आँसू रोकने के लिए वह खुद अपने आँसू पी गया और विनती से बोला—"लो कुछ तुम भी खाओ।" विनती ने मना किया तो उस ने अपने हाथ से विनती को खिला दिया। विनती चुप-चाप बैठी खाती रही और रह-रह कर आँसू पोछती रही।

इतने में महराजिन आयी। विनती ने चौके का काम समझा दिया और चन्दर से बोली—"चलिए ऊपर चलें।" चन्दर ने चारो ओर देखा। घर का सन्नाटा वैसा ही था। सहसा उस के मन में एक अजब-सी बात आयी। सुधा के साथ कभी भी कही भी वह जा सकता था, लेकिन विनती के साथ छत पर अकेले जाने में जाने क्यो उस के अन्त-करण ने गवाही नही दी। वह चुपचाप बैठा रहा। विनती कुछ भी हो, कितने ही समीप क्यो न हो, विनती सुधा नही थी, सुधा नही हो सकती थी। "नही, यही ठीक है।" चन्दर बोला।

विनती गयी। सुधा का पत्र ले आयी। चन्दर का मन जाने कैसा होने लगा। लगता था जैसे अब आँसू नही रुकेंगे। उस के मन में सिर्फ़ इतना आया कि अभी बहत्तर घण्टे पहले सुधा यही थी, इस घर की प्राण थी, आज लगता है जैसे कभी इस घर में सुधा थी ही नही...

आँगन में अँधेरा होने लगा था। वह उठ कर सुधा के कमरे के सामने पडी हुई कोच पर बैठ गया और विनती ने बिजली जला दी। खत छोटा-सा था—

"डॉक्टर चन्दर बाबू,

क्या तुम कभी सोचते थे कि तुम इतनी दूर होगे और मैं तुम्हें खत लिखूगी। लेकिन खैर—

अब तो घर मे चैन की वंसी वजाते होगे। एक अकेले मैं ही काँटे-जैसी खटक रही थी, उसे भी तुम ने निकाल फेंका। अब तुम्हें न कोई

"अरे वह थी तो रोने भी नही देती थी। मैं दो-तीन दिन तक रोयी तो मुझ पर वहुत विगडी और महराजिन से वोली—"हम ने तो ऐसी लडकी ही नही देखी। वडी वहन का व्याह हो गया तो मारे जलन के दिन-रात आँसू वहा-वहा कर अमगल मनाती है। जव वखत आयेगा तभी शादी करेंगे कि अभी ही किसी के साथ निकाल दें!" विनती ने एक गहरी साँस लेकर कहा, "आप समझ नही सकते कि हमारी जिन्दगी कितनी खराव है। अव तो हमारी तवीयत होती है कि मर जायें। अभी-तक दीदी थी, सहारा दिये रहती थी। हिम्मत वँधाये रहती थी, अव तो कोई नही है हमारा।"

"छि, ऐसी वातें नही करते विनती! महीने-भर में सुधा आ जायेगी। और माँ की वातो का क्या वुरा मानना?"

"आप लडकी होते तो समझते चन्दर वावू!" विनती वोली और जाकर एक तश्तरी में नाश्ता ले आयी—"लो, दीदी कह गयी थी कि चन्दर के खाने-पीने का खयाल रखना लेकिन यह किस को क्या मालूम था कि दीदी के जाते ही चन्दर ग़ैर हो जायेंगे।"

"नही विनती, तुम ग़लत समझ रही हो। जाने क्यों एक अजव-सी खिन्नता मन में आ गयी थी। कुछ करने की तवीयत ही नही होती थी। आज कुछ तवीयत ठीक हुई तो सव से पहले तुम्हारे ही पास आया विनती! अब सुधा के वाद मेरा है ही कौन सिवा तुम्हारे?" चन्दर ने वहुत उदास स्वर में कहा।

"तभी न! उस दिन मैं वुलाती रह गयी और आप यह गये, वह गये और आँख से ओझल! मैं ने तो उसी दिन समझ लिया था कि अव पुराने चन्दर वावू वदल गये।" विनती ने रोते हुए कहा।

चन्दर का मन भर आया था, गले में आँसू अटक रहे थे लेकिन आदमी की ज़िन्दगी भी कैसी अजव होती है। वह रो भी नही सकता था, माथे पर दुःख की रेखा भी नही झलकने दे सकता था, इस लिए कि

सामने कोई ऐसा था, जो खुद दु:खी था और सुधा की थाती होने के नाते विनती को समझाना उस का पहला कर्त्तव्य था। विनती के आँसू रोकने के लिए वह खुद अपने आँसू पी गया और विनती से बोला—"लो कुछ तुम भी खाओ।" विनती ने मना किया तो उस ने अपने हाथ से विनती को खिला दिया। विनती चुप-चाप बैठी खाती रही और रह-रह कर आँसू पोंछती रही।

इतने में महराजिन आयी। विनती ने चौके का काम समझा दिया और चन्दर से बोली—"चलिए ऊपर चलें।" चन्दर ने चारों ओर देखा। घर का सन्नाटा वैसा ही था। सहसा उस के मन में एक अजब-सी बात आयी। सुधा के साथ कभी भी कहीं भी वह जा सकता था, लेकिन विनती के साथ छत पर अकेले जाने में जाने क्यों उस के अन्त:करण ने गवाही नहीं दी। वह चुपचाप बैठा रहा। विनती कुछ भी हो, कितने ही समीप क्यों न हो, विनती सुधा नहीं थी, सुधा नहीं हो सकती थी। "नहीं, यहीं ठीक है।" चन्दर बोला।

विनती गयी। सुधा का पत्र ले आयी। चन्दर का मन जाने कैसा होने लगा। लगता था जैसे अब आँसू नहीं रुकेंगे। उस के मन में सिर्फ़ इतना आया कि अभी बहत्तर घण्टे पहले सुधा यहीं थी, इस घर की प्राण थी, आज लगता है जैसे कभी इस घर में सुधा थी ही नहीं...

आँगन में अँधेरा होने लगा था। वह उठ कर सुधा के कमरे के सामने पड़ी हुई कोच पर बैठ गया और विनती ने बिजली जला दी। खत छोटा-सा था—

"डॉक्टर चन्दर बाबू,

क्या तुम कभी सोचते थे कि तुम इतनी दूर होगे और मैं तुम्हें खत लिखूँगी! लेकिन खैर—

अब तो घर में चैन की बंसी बजाते होगे। एक अकेले मैं ही काँटे-जैसी खटक रही थी, उसे भी तुम ने निकाल फेंका। अब तुम्हें न कोई

परेशान करता होगा, न तुम्हारे पढ़ने-लिखने मे बाधा पहुँचती होगी। अब तो तुम एक महीने में दस-बारह थीसिस लिख डालोगे।

जहाँ दिन मे चौबीस घण्टे तुम आँख के सामने रहते थे, वहाँ अब तुम्हारे बारे में एक शब्द सुनने के लिए तडप उठती हूँ। कई दफे तबीयत आयी कि जैसे बिनती से तुम्हारे बारे में बातें करती थी वैसे ही इन से (तुम्हारे मित्र से) तुम्हारे बारे में बातें करूँ लेकिन ये तो जाने कैसी-कैसी बातें करते हैं।

और सब ठीक है। यहाँ बहुत आज़ादी है मुझे। माँजी भी बहुत अच्छी हैं। परदा बिलकुल नही करती। अपने पूजा के सारे बरतन पहले ही दिन हम से मॅंजवाये।

देखो पापा का ध्यान रखना। और बिनती को जैसे मैं छोड आयी हूँ उतनी ही मोटी रहे। मैं महीने-भर बाद आ कर तुम्ही से बिनती को वापस लूँगी, समझे ? यह न करना कि मैं न रहूँ तो मेरे बजाय बिनती को रुला-रुला कर, कुढा-कुढा कर मार डालो, जैसी तुम्हारी आदत है।

चाय ज्यादा मत पीना—खत का जवाब फौरन!

तुम्हारी—सुधा"

चन्दर ने चिट्ठी एक बार पढी, दो बार पढी, और बार-बार पढ़ता गया। हलके हरे काग़ज़ पर छोटे-छोटे काले अक्षर जाने कैसे लग रहे थे। जाने क्या कह रहे थे, छोटे-छोटे अर्थात् कुछ उन में अर्थ था जो शब्द से भी ज्यादा गम्भीर था। युगो पहले वैयाकरणो ने उन शब्दो के जो अर्थ निश्चित किये थे, सुधा की क़लम से जैसे उन शब्दो को एक नया अर्थ मिल गया था। चन्दर बेसुध-सा तन्मय हो कर उस खत को बार-बार पढ़ता गया और किस समय वे छोटे-छोटे नादान अक्षर उस के हृदय के चारो ओर कवच-जैसे बौद्धिकता और सन्तुलन के लोह पत्र को चीर कर अन्दर बिंध गये और हृदय की धडकनो को मरोडना शुरू कर दिया, यह चन्दर को खुद नही मालूम हुआ जब तक कि उस को पलको से एक

गरम आंसू खत पर नही टपक पडा। लेकिन उस ने विनती से वह आंसू छिपा लिया और खत मोड कर विनती को दे दिया। विनती ने खत ले कर रख लिया और वोली, "अब चलिए खाना खा लीजिए!" चन्दर इनकार नही कर सका।

महराजिन ने थाली लगायी और वोली—"भइया नीचे अवहिन आंगन धोवा जाई, आप जाय के ऊपर खाय लेव।"

चन्दर को मजवूरन ऊपर जाना पडा। विनती ने खाट बिछा दी। एक स्टूल डाल दिया। पानी रख दिया और नीचे थाली लाने चली गयी। चन्दर का मन वहुत भारी हो गया था। यह वही जगह है, वही खाट है जिस पर शादी की रात को वह सोया था। इसी के पैताने सुधा आ कर वैठी थी अपने नये सुहाग में लिपटी हुई-सी। यही पर सुधा के आंसू गिरे थे ...।

विनती थाली ले कर आयी और नीचे वैठ कर पखा करने लगी।

"हमारी तवीयत तो है ही नही खाने की विनती!" चन्दर ने भर्राये हुए स्वर में कहा।

"अरे विना खाये-पीये कैसे काम चलेगा? और फिर आप ऐसा करेंगे तो हमारी क्या हालत होगी? दीदी के वाद और कौन सहारा है हमारा! खाइए!" और विनती ने अपने हाथ से एक कौर वना कर चन्दर को खिला दिया। चन्दर खाने लगा। चुप था वह जाने क्या-क्या सोच रहा था। विनती चुपचाप वैठी पखा झल रही थी।

"क्या सोच रहे हैं आप?" विनती ने पूछा।

"कुछ नही!" चन्दर ने उतनी ही उदासी से कहा।

"नही वताइएगा?" विनती ने वडे कातर स्वर से कहा।

चन्दर एक फ़ीकी मुसकान के साथ वोला—"विनती! अव तुम इतना ध्यान न रखा करो! तुम समझती नही, वाद में कितनी तकलीफ होती है। सुधा ने क्या कर दिया है यह वह खुद नही समझती!"

"कौन नही समझता !" विनती एक गहरी साँस ले कर बोली—"दीदी नही समझती, या हम नही समझते ! सब समझते हैं लेकिन जाने मन कैसा पागल है कि सब कुछ समझ कर धोखा खाता है। अरे ! दही तो आप ने खाया ही नही।" वह पूडी लाने चली गयी।

और इस तरह दिन कटने लगे। जब आदमी अपने हाथ से आँसू मोल लेता है, अपने-आप दर्द का सौदा करता है, तब दर्द और आँसू तकलीफ़-देह नही लगते। और जब कोई ऐसा हो जो आप के दर्द के आधार पर आप को देवता बनाने के लिए तैयार हो और आप के एक-एक आँसू पर अपने सौ-सौ आँसू बिखेर दे, तब तो कभी-कभी तकलीफ़ भी भली मालूम देने लगती है। लेकिन फिर भी चन्दर के दिन कैसे कट रहे थे यह वही जानता था। लेकिन अकबर के महल में जलते हुए दीपक को देख कर अगर किसी ने जाडे की रात जमुना के घुटनो-घुटनो पानी में खडे हो कर काट दी, तो चन्दर अगर सुधा के प्यारे-प्यारे खतो के सहारे समय काट रहा था कोई ताज्जुब नही। अपने अध्ययन में प्रौढ, अपने विचारो मे उदार होने के बावजूद चन्दर अपने स्वभाव में बच्चा था, जिस से जिन्दगी कुछ भी करवा सकती थी बशर्ते जिन्दगी को यह आता हो कि इस भोले-भाले बच्चे को कैसे बहलावा दिया जाये।

बहलावे के लिए मुसकानें ही जरूरी नही होती हैं, शायद आँसुओ से मन जल्दी बहल जाता है। विनती के आँसुओ में चन्दर सुधा की तसवीर देखता था और बहल जाता था। वह रोज शाम को आता और

विनती से सुधा की बातें करता, जाने कितनी बातें जानें, कैसी बातें और विनती के माध्यम से सुधा में डूब कर चला आता था। चूंकि सुधा के बिना उस का दिन कटना मुश्किल था, एक क्षण कटना मुश्किल था इस लिए विनती उस की एक जरूरत बन गयी थी। वह जब तक विनती से सुधा की बात नहीं कर लेता था, तब तक जैसे वह बेचैन रहता था, तब तक उस की किसी काम में तबीयत नहीं लगती थी।

जब तक सुधा सामने रही कभी भी उसे यह नहीं मालूम हुआ कि सुधा का क्या महत्त्व है उस की जिन्दगी में ! आज जब सुधा दूर थी तो उस ने देखा कि सुधा उस की सांसों से भी ज्यादा आवश्यक थी उस की जिन्दगी के लिए। लगता था वह एक क्षण सुधा के बिना जिन्दा नहीं रह सकता। सुधा के अभाव में विनती के माध्यम से वह सुधा को ढूंढता था और जैसे सूरज के डूब जाने पर चाँद सूरज की रोशनी उधार ले कर रात को उजियारा कर देता है उसी तरह विनती सुधा की याद से चन्दर के प्राणों पर उजियारी बिखेरती रही। चन्दर विनती को इस तरह अपने सांसों की छांह में दुबकाये रहा जैसे विनती सुधा का स्पर्श हो, सुधा का प्यार हो।

विनती भी चन्दर के माथे पर उदासी के बादल देखते ही तड़प उठती थी। लेकिन फिर भी विनती चन्दर को हँसा नहीं पायी। चन्दर का पुराना उल्लास लौटा नहीं। सांप का काटा हुआ जैसे लहरें लेता है वैसे ही चन्दर की नसों में फैला हुआ उदासी का जहर रह-रह कर चन्दर को झकझोर देता था। उन दिनों दो-दो तीन-तीन दिन तक चन्दर कुछ नहीं करता था, विनती के पास भी नहीं जाता था, विनती के आँसुओं की भी परवाह नहीं करता था। खाना नहीं खाता था, और अपने को जितनी तकलीफ़ हो सकती थी, देता था। फिर ज्यों ही सुधा का कोई खत आता था, वह उसे चूम लेता और फिर स्वस्थ हो जाता था। विनती चाहे जितना करे लेकिन चन्दर की इन भयकर उदासी की लहरों को

चन्दर से नही छीन पायी थी। चांद कितनी ही कोशिश क्यो न करे, वह रात को दिन नही वना सकता।

लेकिन आदमी हँसता है, दु ख, दर्द सभी में आदमी हँसता है। जैसे हँसते-हँसते आदमी की प्रसन्नता थक जाती है वैसे ही कभी-कभी रोते-रोते आदमी की उदासी थक जाती है और आदमी करवट वदलता है ताकि हँसी की छाँह मे कुछ विश्राम कर फिर वह आंसुओ की कडी धूप में चल सके।

ऐसी ही एक सुवह थी जव कि चन्दर की उदासी के मन में आ रहा था कि वह थोडी देर हँस भी ले। वात यो हुई थी कि उसे शेली की एक कविता वहुत पसन्द थी जिस में शेली ने भारतीय मलयज को सम्वोधित किया है। उस ने अपना शेली कीट्स का ग्रन्थ उठाया और उसे खोला तो वही आम के अँचार के दाग़ सामने पड गये जो सुधा ने शरारतन डाल दिये थे। वस वह शेली की कविता तो भूल गया और उसे याद आ गयी आम की फांक और सुधा की शरारत से भरी शोख आँखे। फिर तो एक के वाद दूसरी शरारत प्राणों में उठ-उठ कर चन्दर की नसो को गुदगुदाने लगी और चन्दर उस दिन जाने क्यो हँसने के लिए व्याकुल हो उठा। उसे ऐसा लगा जैसे सुधा की यह दूरी, यह अलगाव सभी कुछ झूठ हैं। सच तो वे सुनहरे दिन थे जो सुधा की शरारतो मे मुसकराते थे, सुधा के दुलार में जगमगाते थे। और कुछ भी हो जाये, सुधा उस के जीवन का एक ऐसा अमर सत्य है जो कभी भी डगमगा नही सकता। अगर वह उदास होता है, दु खी होता है तो यह ग़लत है। वह अपने ही आदर्श को झूठा वना रहा है, अपने ही सपने का अपमान कर रहा है। और उसी दिन सुधा का एक खत भी आया था जिस मे सुधा ने साफ़-साफ तो नही पर इशारे से लिखा था कि वह चन्दर के भरोसे ही किसी तरह दिन काट रही थी। उस ने सुधा को एक पत्र लिखा, जिस में वही शरारत, वही खिजाने की वातें थी जो वह हमेशा से सुधा से करता था लेकिन

जिसे वह पिछले तीन महीने मे भूल गया था ।

उस के बाद वह विनती के यहाँ गया ।

विनती अपनी धोती में क्रोशिया की बेल टाँक रही थी । "ले गिलहरी तेरी दीदी का खत ! लाओ मिठाई खिलाओ !"

"हम काहें को खिलाये । आप खिलाइए जो खिले पड रहे हैं आज !" विनती बोली ।

"हम ! हम क्यो खिलेंगे ! यहाँ तो सुधा का नाम सुनते ही तबीयत कुढ जाती है !"

"अरे चलिए, आप का घर मेरा देखा है । मुझ से नही बन सकते आप ! विनती ने मुँह चिढा कर कहा, "आज बडे खुश हैं !"

"हाँ, विनती....." एक गहरी साँस ले कर चन्दर चुप हो गया, कभी-कभी उदासी भी थक जाती है !" और मुँह झुका कर बैठ गया ।

"क्यो क्या हुआ ?" विनती ने चन्दर की बाँह में सुई चुभा दी—चन्दर चौंक उठा । "हमारी शकल देखते ही आप के चेहरे पर मुहर्रम छा जाता है !"

"अजी नही, आप का मुख-मण्डल देख कर तो आकाश में चन्द्रमा भी लज्जित हो जाता होगा, श्रीमती विनती विदुषी !" चन्दर ने हँस कर कहा । आज चन्दर बहुत खुश था ।

विनती लजा गयी और फिर उस के गालो में फूल के कटोरे खिल गये और उस ने चन्दर के कन्धे में फिर सुई चुभो कर कहा—"आप से एक बडे मजे की बात बतानी है आज !"

"क्या ?"

"फिर हँसिएगा मत ! और चिढाइएगा नही !" विनती बोली ।

"कुछ तेरे ब्याह की बात होगी !" चन्दर ने कहा ।

"नही ब्याह की नही, प्रेम की !" विनती ने हँस कर कहा और फिर झेंप गयी ।

"अच्छा, गिलहरी को यह रोग कब से ?" चन्दर ने हँस कर पूछा—"अपनी मां जी की शकल देखी है न, काट कर कुएँ में फेंक देंगी तुझे।"

"अब क्या करें, कोई सिर पर प्रेम मढ ही दे तो।" बिनती ने बड़े आत्मविश्वास से कहा। थी बडी खुले स्वभाव की लडकी।

"आखिर कौन अभागा है वह ? जरा नाम तो सुनें।" चन्दर बोला।

"हमारे महाकवि मास्टर साहब।" विनती ने हँस कर कहा।

"अच्छा! यह कब से! तूने पहले तो कभी बताया नही।"

"अब तो जाकर हमें मालूम हुआ। पहले सोचा दीदी को लिख दें। फिर कहा वहां जाने किस के हाथ में चिट्ठी पडे। तो सोचा तुम्हें बता द।"

"हुआ क्या आखिर ?" चन्दर ने पूछा।

"बात यह हुई कि पहले तो हम और दीदी साथ पढते थे तब तो मास्टर साहब कुछ नही बोलते थे, इधर जब से हम अकेले पढने लगे तब से वह कविताएँ समझाने के बहाने दुनिया-भर की बातें करते रहे। एक बार स्कन्दगुप्त पढाते-पढाते बडी ठण्डी साँस लेकर बोले, काश कि आप भी देवसेना बन सकती। बडा गुस्सा आया मुझे। मन में आया कह दूं कि मैं तो देवसेना बन जाती लेकिन आप अपना कवि-सम्मेलन का पेशा छोड कर स्कन्दगुप्त कैसे बन पायेंगे। लेकिन फिर मैं ने कुछ कहा नही। दीदी से सब बात कह दी। दीदी तो हैं ही लापरवाह। कुछ कहा ही नही उन्होंने। और मास्टर साहब वैसे अच्छे हैं, पढाते भी अच्छा हैं, लेकिन यह फ़ितूर जाने कैसे उन के दिमाग़ में चढ गया।" विनती बडे सहज स्वभाव से बोली।

"लेकिन इधर क्या हुआ ?" चन्दर ने पूछा।

"अभी कल आये, एक हाथ में उन के एक मोटी-सी कापी थी। दे गये तो देखा वह उन की कविताओं का संग्रह है और उस का नाम उन्हों-ने रखा है, 'विनती'। अभी आते होंगे। क्या करें कुछ समझ में नही

आता। अभी तक दीदी के भरोसे हम ने सब छोड दिया था। वह पता नही कब आयेंगी ?"

"अच्छा लाओ वह सग्रह हमे दे दो।" चन्दर ने कहा—"और बिसरिया से कह देना वह चन्दर के हाथ पड गया। फिर कल सुबह तुम्हें मज़ा दिखलायेंगे। लेकिन हां, यह पहले बता दो कि तुम्हारा तो कुछ झुकाव नही है, उधर, वरना बाद में हमें कोसो ?" चन्दर ने छेडते हुए कहा।

"अरे हां मुसलमान भी हो तो बेहना के सग! कवियो से प्यार लगा कर कौन बबालत पाले" बिनती ने झेंपते हुए कहा।

दूसरे दिन सुबह चन्दर पहुँचा तो बिसरिया साहब पढा रहे थे। बिसरिया की शक्ल पर कुछ मायूसी, कुछ परेशानी, कुछ चिन्ता थी। उस से बिनती ने बता दिया कि सग्रह चन्दर के पास पहुँच गया है। चन्दर को देखते ही वह बोला, "अरे कपूर क्या हाल है ?" और उस के बाद अपने को निर्दोष बताने के लिए फौरन बोला, "कहो हमारा सग्रह देखा है ?"

"हां देखा, ज़रा आप इन्हें पढा लीजिए। आप से कुछ ज़रूरी बातें करनी हैं।" चन्दर ने इतने कठोर स्वर मे कहा कि बिसरिया के दिल की धडकनें डूबने-सी लगी। वह कांपती हुई आवाज़ में बहुत मुश्किल से अपने को सम्हालते हुए बोला, "कैसी बातें ? कपूर, तुम कुछ गलत समझ रहे हो।"

कपूर एक उपेक्षा की हँसी हँसा और चला गया। डॉक्टर साहब

पूजा कर के उठे थे। दोनो में बातें होती रही। उन से मालूम हुआ कि अगले महीने में सम्भवत चन्दर की नियुक्ति हो जायेगी और तीन दिन बाद डॉक्टर साहब खुद सुधा को लाने के लिए शाहजहाँपुर जायेंगे। उन्होने बुआजी को पत्र लिखा है कि यदि वह आ जायें तो अच्छा है, वरना चन्दर को दो-तीन दिन बाद यही रहना पडेगा क्योकि बिनती अकेली है। चन्दर की बात दूसरी है लेकिन और लोगो के भरासे डॉक्टर साहब बिनती को अकेले नही छोड सकते।

अविश्वास आदमी की प्रवृत्तियो को जितना बिगाडता है विश्वास आदमी को उतना ही बनाता है। डॉक्टर साहब चन्दर पर जितना विश्वास करते थे, सुधा चन्दर पर जितना विश्वास करती थी और इधर बिनती उस पर जितना विश्वास करने लगी थी उस के कारण चन्दर के चरित्र में इतनी दृढ़ता आ गयी थी कि वह फौलाद बन गया था। ऐसे अवसरों पर जब मनुष्य को गम्भीरतम उत्तरदायित्व सौंपा जाता है तब स्वभावतया आदमी के चरित्र में एक विचित्र-सा निखार आ जाता है। यह निखार चन्दर के चरित्र में बहुत उभर कर आया था और यहाँ तक कि बुआजी अपनी लडकी पर अविश्वास कर सकती थी, वह भी चन्दर को देवता ही मानती थी, बिनती पर और चाहे जो बन्धन हो लेकिन चन्दर के हाथ में बिनती को छोड कर वे निश्चिन्त थी।

डॉक्टर साहब और चन्दर बैठे बातें कर ही रहे थे कि बिनती ने आ कर कहा, "चलिए, मास्टर साहब आप का इन्तजार कर रहे है।" चन्दर उठ खडा हुआ। रास्ते में बिनती बोली, "हम से बहुत नाराज है। कहते हैं तुम्हें हम ऐसा नही समझते थे।" चन्दर कुछ नही बोला। जा कर बिसरिया के सामने कुरसी पर बैठ गया। "तुम जाओ बिनती!" बिनती चली गयी तो चन्दर ने कहा, बहुत गम्भीर स्वरो मे, "बिसरिया साहब, आप का सग्रह देख कर बहुत खुशी हुई लेकिन मेरे मन मे सिर्फ एक शका है। यह 'बिनती' नाम के क्या माने है?

विसरिया ने अपने गले की टाई ठीक की, वह गरमी में भी टाई लगता था, और दिन मे नाईट कैप पहनता था। टाई ठीक कर, खँखार कर बोला, "मैं भी यही समझता था कि आप को यह गलत-फ़हमी हुई होगी। लेकिन वास्तविक बात है कि मुझे मध्यकाल की कविता बहुत पसन्द है खासतौर से उस में विनती (प्रार्थना) शब्द बडा मधुर है। मैंने यह सग्रह तो बहुत पहले तैयार किया था। मुझे बडा ताज्जुब हुआ जब मैं विनती जी से मिला। मैंने उन से कहा कि यह सग्रह भी विनती नाम का है। फिर मैंने उन्हें ला कर दिखला दिया।"

चन्दर मुसकराया और मन-ही-मन कहा, "है विसरिया बहुत चालाक। लेकिन खैर मैं हार नही मान सकता।" और बहुत गम्भीर हो कर बैठ गया।

"तो यह सग्रह इस लडकी के नाम पर नही है ?"

"बिलकुल नही।"

"और विनती के लिए आप के मन में कही कोई आकर्षण नहीं ?"

"बिलकुल नही। छि, आप मुझे क्या समझते हैं।" विसरिया बोला।

"छि, मैं भी कैसा आदमी हूँ माफ़ करना विसरिया! मैंने व्यर्थ में शक किया।" बिसरिया यह नही जानता था कि यह दावँ इतना सफल होगा। वह खुशी से फूल उठा। सहसा चन्दर ने एक गहरी साँस ली। "क्या बात है चन्दर बाबू ?" बिसरिया ने पूछा।

"कुछ नही बिसरिया, आज तक मुझे तुम्हारी प्रतिभा, तुम्हारी भावना, तुम्हारी कला पर विश्वास था। आज से उठ गया।"

"क्यो ?"

"क्यो क्या ? अगर विनती-जैसी लडकी के साथ रह कर भी तुम उस के आन्तरिक सौन्दर्य से अपनी कला को अभिसिंचित न कर सके तो तुम्हारे मन में कलात्मकता है, यह मैं विश्वास नही कर पाता। तुम

जानते हो मैं पुराने विचारों का संकीर्ण, बड़ा बुजुर्ग तो हूँ नहीं, मैं भी भावनाओं को समझता हूँ। मैं सौन्दर्य-पूजा या प्यार को पाप नहीं समझता और मुझे तो बहुत खुशी होती यह जान कर कि तुम ने यह कविताएँ बिनती पर लिखी हैं, उस की प्रेरणा से लिखी हैं। यह मत समझना कि मुझे इस से ज़रा भी बुरा लगता। यह तो कला का सत्य है। पाश्चात्य देशों में तो लोग हर कवि को प्रेरणा देने वाली लड़कियों की खोज में वर्षों बिता देते हैं, उस की कविता से ज्यादा महत्त्व उस की कविता के पीछे रहने वाले व्यक्तित्व को देते हैं। हिन्दोस्तान में पता नहीं क्यों हम नारी को इतना महत्त्वहीन समझते हैं, या डरते हैं, यह हम में इतना नैतिक साहस नहीं है। तुम्हारा स्वभाव, तुम्हारी प्रतिभा किसी हालत में मुझे विदेश के किसी कवि से कम नहीं लगती। मैंने सोचा था जब तुम अपनी कविताओं के प्रेरणात्मक व्यक्तित्व का नाम घोषित करोगे तो सारी दुनिया बिनती को और हमारे परिवार को जान जायेगी। लेकिन खैर मैंने ग़लत समझा था कि बिनती तुम्हारी प्रेरणा-बिन्दु थी।" और चन्दर चुपचाप गम्भीरता से बिसरिया के संग्रह के पृष्ठ उलटने लगा।

बिसरिया के मन में कितनी उथल-पुथल मची हुई थी। चन्दर का मन इतना विशाल है यह उसे कभी नहीं मालूम था। यहाँ तो कुछ छिपाने की ज़रूरत ही नहीं और जब चन्दर इतनी स्पष्ट बातें कर रहा है तो बिसरिया क्यों छिपावे।

"कपूर, मैं तुम से कुछ नहीं छिपाऊँगा। मैं कह नहीं सकता कि बिनती जी मेरे लिए क्या हैं। शेक्सपीयर की मिराण्डा, प्रसाद का देवसेना, डाण्टे की बीएट्रिस, कीट्स की फैनी और सूर की राधा से बढ़ कर माधुर्य अगर मुझे कहीं मिला है तो बिनती में। इतना, इतना डूब गया मैं बिनती में कि एक कविता भी नहीं लिख पाया। मेरा संग्रह छपने जा रहा था तो मैंने सोचा कि इस का नाम ही क्यों न 'बिनती' रखूँ।"

चन्दर ने बडी मुश्किल स अपनी हँसी रोकी। दरवाजे के पास छिपो खडी हुई विनती खिलखिला कर हँस पडी। चन्दर बोला—नाम तो 'विनती' बहुत अच्छा सोचा तुम ने, लेकिन सिर्फ एक बात है। मेरे-जैसे विचार के लोग सभो नही होते। अगर घर के और लोगों को यह मालूम हो गया, मसलन डॉक्टर साहब को, तो वह न जाने क्या कर डालेंगे। इन लोगो को कविता और उस को प्रेरणा का महत्त्व ही नही मालूम। उस हालत मे अगर तुम्हारो बहुत बेइज्जती हुई तो न हम कुछ बोल पायेंगे न विनती। और तुम्हारे-जैसा महान् कवि, मेरा मतलब जो आगे चल कर होने जा रहा है उसे डॉक्टर साहब पुलिस को सौंप दें यह अच्छा नही लगता। वैसे मेरी तो राय है कि तुम विनती ही नाम रखो, बडा नया नाम है लेकिन यह समझ लो कि डॉक्टर साहब बहुत सख्त हैं इस मामले में।"

बिसरिया के समझ मे नही आता था वह क्या करे। थोडी देर तक सिर खुजलाता रहा, फिर बोला—"क्या राय है कपूर तुम्हारी ? अगर मैं कोई दूसरा नाम रखूँ तो कैसा रहेगा ?"

"बहुत अच्छा रहेगा और सुरक्षित रहेगा। अभी अगर तुम बदनाम हो गये तो आगे तुम्हारो उन्नति के सभो मार्ग बन्द हो जायेंगे। आदमी प्रेम करे मगर जरा सोच समझ कर, मैं तो इस पक्ष में हूँ।"

"भावना को कोई नही समझता इस दुनिया मे। कोई नही समझता हम कलाकारो की कितनी मुसीबत है।" एक गहरी साँस लेकर बिसरिया बोला—"लेकिन खैर! अच्छा तो कपूर क्या राय है तुम्हारी ? मैं क्या नाम रखूँ इस का ?"

चन्दर गम्भीरता से सिर झुकाये थोडी देर सोचता रहा। फिर बोला—"तुम्हारी कविताओ मे बहुत रस है। कैसा रहे अगर तुम इस का नाम 'गडेरियाँ' रखो!"

"क्यो ?" बिसरिया ताज्जुब से बोला।

"हाँ, हाँ गडेरियाँ, मेरा मतलब है गन्ने की गडेरियाँ !" दरवाजे के पीछे विनती से न रहा गया और वह खिलखिलाकर हँस पडी और सामने आ गयी। चन्दर भी अट्टहास कर पडा।

बिसरिया क्षण-भर आँख फाडे दोनो की ओर देखता रहा। उस के बाद वह ज्यो ही मज़ाक समझा, उस का चेहरा लाल हो गया। हैट उठाकर बोला—"अच्छा, आप लोग मज़ाक बना रहे थे मेरा। कोई बात नही मैं देखूँगा। मिस्टर कपूर, आप अपने को क्या समझते हैं ?" वह चल दिया।

"अरे सुनो बिसरिया !" चन्दर ने पुकारा, वह हँसी नही रोक पा रहा था। बिसरिया मुडा। मुड कर बोला—"कल से मैं पढाने नही आ सकता। मैं आप की शकल नही देखना चाहता।" उस ने विनती से कहा।

"तो मुँह फेर कर पढा दीजिएगा !" चन्दर बोला। विनती फिर हँस पडी। बिसरिया ने मुड कर बडे गुस्से से देखा और पैर पटकते हुए चला गया।

"बेचारे कवि, कलाकार आज की दुनिया में प्यार भी नही कर पाते।" चन्दर ने कहा और दोनो की हंसी बहुत देर तक गूँजती रही।

अगस्त की उदास शाम थी, पानी रिमझिमा रहा था और डाक्टर शुक्ला के सूने बँगले के बरामदे में कुरसी डाले, लान पर छोटे-छोटे गड्ढो मे पख धोती और कुलेलें करती हुई गौरैयो की तरफ अपलक देखता हुआ चन्दर जाने किन खयालो में डूबा हुआ था। डाक्टर साहब सुधा को

लिवाने के लिए शाहजहांपुर गये थे। बिनती भी जिद कर के उन के साथ गयी थी। वहाँ से वे लोग दिल्ली घूमने के लिए चले गये थे लेकिन आज पन्द्रह रोज़ हो गये उन लोगो का कोई भी खत नही आया था। डॉक्टर साहव ने ब्यूरो को महज एक अर्जी भेज दी थी। चन्दर को डॉक्टर साहव के जाने के पहले ही कॉलेज मे जगह मिल गयी थी और उस ने क्लास लेने शुरू कर दिये थे। वह अब इसी बंगले में आ गया था। सुवह तो क्लास के पाठ की तैयारी करने और नोट्स बनाने मे कट जाती थी, दोपहर कॉलिज में कट जाती थी लेकिन शामें बडी उदास गुजरती थी और फिर पन्द्रह दिन से सुधा का कोई भी खत नही आया। वह उदास बैठा सोच रहा था।

लेकिन यह उदासी थी, दुःख नही था। और वह भी उदासी, एक देवता की उदासी जो दुःख-भरी न होकर सुन्दर और सुकुमार अधिक होती है। एक वात जरूर थी। जव कभी वह उदास होता था तो जाने क्यो वह यह हमेशा सोचने लगता था कि उस के जीवन में जो कुछ हो गया है उस पर उसे गर्व करना चाहिए। जैसे वह अपनी उदासी को अपने गर्व से मिटाने का प्रयास करता था। लेकिन इस वक्त एक वात रह-रह कर उभर आती थी उस के मन मे, "सुधा ने खत क्यो नही लिखा ?"

पानी बिलकुल वन्द हो गया था। पच्छिम के दो-एक वादल खुल गये थे। और पके जामुन के रंग के एक वहुत वडे वादल के पीछे से डूवते सूरज की उदास किरणें झांक रही थी। इधर की ओर एक इन्द्र-धनुष खिल गया था जो मोटर गैरेज की छत से उठ कर दूर पर युकि-लिप्टस की लम्बी शाखो में उलझ गया था।

इतने में छाता लगाये पोस्टमैन आया, उस ने पोर्टिको में अपने जूतो मे लगी कीचड झाडी, पैर पटके और किरमिच के झोले से खत निकाले और सीढी पर फैला दिये। उन में से ढूंढ कर तीन लिफ़ाफे निकाले और चन्दर को दे दिये। चन्दर ने लपक कर लिफाफ़े ले लिये। पहला

लिफाफा बुआजी का था विनती के नाम, दूसरा था ओरियण्टल इन्श्या-रेन्स का लिफाफा डॉक्टर साहब के नाम, और तीसरा एक सुन्दर-सा नीला लिफ़ाफा था। यही सुधा का होगा। पोस्टमैन जा चुका था। उस ने इतने प्यार से लिफ़ाफ़े को चूमा जितने प्यार से डूबता हुआ सूरज नीली घटाओं को चूम रहा था। "पगली कहीं की! परेशान कर डालती है। यहाँ थी तो वही आदत, वहाँ है तो वही आदत?" चन्दर ने मन में कहा और लिफ़ाफ़ा खोल डाला।

लिफ़ाफ़ा पम्मी का था, मसूरी से आया। उस ने झल्ला कर लिफाफ़ा फेंक दिया। सुधा कितनी लापरवाह है। वह जानती है कि चन्दर को यहाँ कैसा लग रहा होगा। विनती ने बता दिया होगा फिर भी वही लापरवाही। मारे गुस्से के . .

थोड़ी देर बाद उस ने पम्मी का खत पढ़ा। छोटा-सा खत था। पम्मी अभी मसूरी में ही है। अक्टूबर तक आयेगी। लगभग सभी यात्री जा चुके हैं लेकिन उसे पहाड़ों की बरसात बहुत अच्छी लग रही है। बर्टी इलाहाबाद चला गया है। उस के साथ यहाँ से एक पहाड़ी ईसाई लड़की भी गयी है। बर्टी कहता है कि वह उस के साथ शादी करेगा। बर्टी अब बहुत स्वस्थ है। चन्दर चाहे तो जा कर बर्टी से मिल ले।

सुधा के ख़त के न आने से चन्दर के मन में बहुत बेचैनी थी। इसे ठीक से मालूम भी नहीं हो पा रहा था कि ये लोग हैं कहाँ? बर्टी के आने की खबर मिलने पर उसे सन्तोष हुआ, चलो एक दिन बर्टी से ही मिल आयेंगे। अब देखें कैसे हैं वह?

तीसरे या चौथे दिन जब अकस्मात् पानी बन्द था तो वह कार लेकर बर्टी के यहाँ गया। बरसात में इलाहाबाद की सिविल लाइन्स का सौन्दर्य और भी निखर आता है। रूखे-सूखे फुटपाथों और मैदानों पर घास जम जाती है, बंगले की उजाड़ चहारदीवारियों तक हरी-भरी हो जाती हैं। लम्बे और घने पेड़ और झाड़ियाँ निखर कर, धुल कर हरे

मखमली रग की हो जाती हैं और कोलतार की सडको पर थोडी-थोडी पानी की चादर-सी लहरा उठती है जिस मे पेडो की हरी छायाएँ बिछ जाती है। बँगले मे पली हुई बत्तको के दल सडक पर चलती हुई मोटरो को रोक लेते हैं और हर बँगले में से रेडियो या ग्रामोफोन के सगीत की लहरें मचलती हुई वातावरण पर छा जाती हैं।

कॉलेज से लौट कर, एक प्याला चाय पी कर, कार ले कर चन्दर बर्टी के यहाँ चल दिया। वह बहुत दिन बाद बर्टी को देखने जा रहा है। जितने व्यक्तियो को उस ने अपने जीवन मे देखा था, बर्टी शायद उन सभी से निराला था, अद्भुत था। लेकिन कितना अभागा था। नही, अभागा नही, कमजोर था बर्टी। और वही क्या कमज़ोर था, यह सारी दुनिया कितनी कमज़ोर है।

बर्टी का बँगला आ गया था। वह उतर कर अन्दर गया। बाहर कोई नही था। बरामदे में एक पिंजरा टँगा हुआ था जिस में एक बहुत छोटा तोते का बच्चा टँगा था। चन्दर भीतर जाने मे हिचक रहा था क्योकि एक तो पम्मो नही थी और दूसरे कोई और लडकी भी बर्टी के साथ आयी थी, बर्टी की भावी पत्नी। चन्दर ने आवाज़ दी। अन्दर कोई बहुत भारी पुरुष-स्वर में एक साधारण गीत गा रहा था। चन्दर ने फिर आवाज़ दी। बर्टी बाहर आया। चन्दर उसे देख कर दग रह गया। बर्टी का चेहरा भर गया था, जवानी लौट आयी थी, पीलेपन के बजाय चेहरे पर खून दौड गया था, सीना उभर आया था। बर्टी खाकी रग का कोट, बहुत मोटा खाकी हैट, खाकी ब्रिचेज शिकारी बूट पहने हुए था और कन्धे पर बन्दूक लटक रही थी। वह आया। ड्राइङ् रूम के दरवाज़े पर पीठ झुका कर एक हाथ से बन्दूक पकड कर और एक हाथ आँखो के आगे रख कर उस ने इस तरह देखा जैसे वह शिकार ढूँढ रहा हो। चन्दर के प्राण सख गये। उस ने मन-ही-मन सोचा, पहली बार तो वह कुश्ती में बर्टी से जीत गया था, लेकिन अब की बार जीतना मुश्किल है।

कहाँ बेकार फँसा आ कर। उस ने घबड़ायी हुई आवाज़ में कहा—

"यह मैं हूँ मिस्टर बर्टी, चन्दर कपूर, पम्मी का मित्र!"

"हाँ हाँ, मैं जानता हूँ।" बर्टी तन कर खड़ा हो गया और हँस कर बोला—"मैं आप को भूला नहीं, मैं तो आप को यह दिखला रहा था कि मैं अब पागल नहीं हूँ, शिकारी हो गया हूँ।" और उस ने चन्दर के कन्धे पकड़ कर इतनी ज़ोर से झकझोर दिया कि चन्दर की पसलियाँ चरमरा उठीं। "आओ!" उस ने चन्दर के कन्धे दबा कर बरामदे की ही कोच पर बिठा दिया और सामने कुरसी पर बैठता हुआ बोला—"मैं तुम्हें अन्दर ले चलता, लेकिन अन्दर जेनी है और एक मेरा मित्र। दोनों बात कर रहे हैं। आज जेनी की सालगिरह है। तुम जेनी को जानते हो न? वह तराई के क़स्बे में रहती थी। मुझे मिल गयी। बहुत ख़राब औरत है! मैं तन्दुरुस्त हो गया हूँ न!"

"बहुत, मुझे ताज्जुब है कि तन्दुरुस्ती के लिए तुम ने क्या किया तीन महीने तक।"

"नफरत मिस्टर कपूर! औरतों से नफ़रत। उस से ज्यादा अच्छा टॉनिक तन्दुरुस्ती के लिए कोई नहीं है।"

"लेकिन तुम तो शादी करने जा रहे हो, लड़की ले आये हो वहाँ से।"

"अकेली लड़की नहीं मिस्टर! मैं वहाँ से दो चीज़ लाया हूँ। एक तो यह तोते का बच्चा और एक जेनी, वही लड़की। तोते को मैं बहुत प्यार करता हूँ, यह बड़ा हो जायेगा, बोलने लगेगा तो इसे गोली मार दूँगा। और लड़की से मैं बहुत नफरत करता हूँ, उस से शादी कर लूँगा। क्यों है न ठीक? इस को शिकार का चाव कहते हैं और अब मैं शिकारी हूँ न!"

चन्दर हाँ कहे या न कहे। अभी बर्टी का दिमाग बिलकुल वैसा ही है, इस में कोई शक नहीं। वह क्या बात करे? अन्त में बोला—

"यह बन्दूक़ तो उतार कर रखिए। हमेशा बांधे रहते हैं!"

"हाँ, और क्या? शिकार का पहला सिद्धान्त है कि जहाँ खतरा हो, जगली जानवर हो वहाँ कभी बिना बन्दूक के नही जाना चाहिए।" और, बहुत धीमे से चन्दर के कान में बर्टी बोला—"तुम जानते हो चन्दर, एक औरत है जो चौबीस घण्टे घर में रहती है। मैं एक क्षण को बन्दूक़ अलग नही रखता।"

सहसा अन्दर से कुछ गिरने की आवाज आयी, कोई चीखा और लगा जैसे कोई चीज पियानो पर गिरी और परदो को तोडती हुई नीचे आ गयी। फिर कुछ झगडे की आवाज आयी।

चन्दर चौंक कर उठा। "क्या बात है बर्टी, देखो तो!"

बर्टी ने हाथ पकड कर चन्दर को खीच लिया—"बैठो, बैठो अन्दर मेरे मित्र और जेनी सालगिरह मना रहे हैं। अन्दर मत जाना।"

"लेकिन यह आवाजें कैसी है?" चन्दर ने चिन्ता से पूछा।

"शायद वे लोग प्रेम कर रहे होंगे!" बर्टी बोला और निश्चिन्तता से बैठ गया।

और क्षण-भर बाद उस ने अजब-सा दृश्य देखा। एक बर्टी का ही हमउम्र आदमी हाथ से माथे का खून पोछता हुआ आया। वह नशे में चूर था। और बहुत भद्दी गालियाँ देता हुआ चला आ रहा था। वह गिरता-पडता आया और उस ने बर्टी को देखते ही घूँसा ताना—"तुम ने मुझे धोखा दिया। मुझ से पचास रुपये उपहार ले लिया · मैं अभी तुम्हें बताता हूँ।" चन्दर स्तब्ध था। क्या करे क्या न करे? इतने में अन्दर से जेनी निकली। लम्बी तगडी, कम से कम तीस वर्ष की औरत। उस ने आते ही पीछे से उस आदमी की कमीज पकडी और उसे सीढी के नीचे कीचड मे ढकेल दिया और सैकडो गाली देते हुए बोली—"जा सोचे वरना हड्डी नही बचेगी यहाँ।" वह फिर उठा तो खुद भी नीचे कूद पडी और घसीटती हुई दरवाजे के बाहर ढकेल आयी।

वर्टी साँस रोके अपराधी-सा खड़ा था। वह लौटी और वर्टी का कालर पकड लिया—" मैं निर्दोष हूँ! मैं कुछ नही जानता!" सहमा जेनी ने चन्दर की ओर देखा—"हूँ, यह भी तुम्हारा दोस्त है। अभी बताती हूँ!" और जो वह चन्दर की ओर बढी तो चन्दर ने मन-ही-मन पम्मो का स्मरण किया। कहाँ फँसाया उस कमबख्त ने खत लिख कर। ज्यो ही जेनी ने चन्दर का कालर पकडा कि वर्टी बडे कातर स्वर में बोला—"उसे छोड दो! वह मेरा नही, पम्मी का मित्र है!" जेनी रुक गयी। "तुम पम्मी के मित्र हो? अच्छा बैठ जाओ, बैठ जाओ, तुम शरीफ़ आदमी मालूम पडते हो। मगर आगे से तुम्हारा कोई मित्र आया तो मैं उस की हत्या कर डालूँगी। समझे कि नही वर्टी?"

वर्टी ने सिर हिलाया—'हाँ, समझ गये।" जेनी अन्दर चल दी, फिर सहसा बाहर आयी और वर्टी को पकड कर घसीटती हुई बोली—"पानी बरस रहा है, इतनी सर्दी बढ गयी है और तुम ने स्वेटर नहीं पहना, चलो पहनो। मरने की ठानी है। मैं साफ बताय देती हूँ चाहे दुनिया इधर की उधर हो जाये मैं बिना शादी किये मरने नही दूंगी तुम्हें!" और वह बकरे की तरह वर्टी का कान पकड कर अन्दर घसीट ले गयी।

चन्दर ने मन मे कहा यह कुछ इस रहस्यमय बंगले का असर है कि हरेक का दिमाग़ खराब ही मालूम देता है। दो मिनिट बाद जब वर्टी लौटा तो उस के गले में गुलूबन्द, ऊनी स्वेटर, ऊनी मोजे थे। वह हाँफता हुआ आकर बैठ गया।

"मिस्टर कपूर! तुम्हें मानना होगा कि यह लडकी, यह डाइन जेनी बहुत क्रूर है।"

'मानता हूँ वर्टी। सोलहो आना मानता हूँ।" चन्दर ने मुसकराहट रोक कर कहा—"लेकिन यह झगडा क्या है?"

"झगडा क्या होता? औरतों को समझाना बहुत मुश्किल है।"

"इस औरत के फन्दे में फँसे कैसे तुम ?" चन्दर ने पूछा ।

"शी ! शी !" होठ पर हाथ रख कर धीरे-धीरे बोलने का इशारा करते हुए बर्टी ने कहा—"धीरे बोलो—बात ऐसी हुई कि जब मैं तराई में शिकार खेल रहा था तो एक बार अकेले छूट गया । यह एक पेन्शनर फारेस्ट गार्ड की अनब्याही लड़की थी । शिकार में बहुत होशियार । मैं भटकते हुए पहुँचा तो उस का बाप बीमार था । मैं रुक गया । तीसरे दिन वह मर गया । उसे जाने कौन-सा रोग था कि उस का चेहरा बहुत डरावना हो गया था और पेट फूल गया था । रात को इसे बहुत डर लगा तो यह मेरे पास आकर लेट गयी । बीच में बन्दूक रख कर हम लोग सो गये । रात को इस ने बीच से बन्दूक हटा दी और अब यह कहती है कि मुझी से ब्याह करेगी और नही करूँगा तो मार डालेगी । पम्मी भी मुझ से बोली तुम्हें अब ब्याह करना ही होगा । अब मजबूरी है मिस्टर कपूर !"

चन्दर चुप बैठा सोच रहा था । कैसी विचित्र जिन्दगी है इस अभागे की ! मानो प्रकृति ने सारे आश्चर्य इसी की किस्मत के लिए रख छोड़े थे । फिर बोला—

"यह आज क्या झगड़ा था ?"

"कुछ नही । आज इस की सालगिरह थी । यह बोली मुझे कुछ उपहार दो । मैं बहुत देर तक सोचता रहा । क्या दूँ इसे ? कुछ समझ ही मे नही आता था । बहुत देर तक सोचने के बाद मैंने सोचा—मैं तो इस का पति होने जा रहा हूँ । इसे एक प्रेमी उपहार में दूँ । मैं ने अपने एक मित्र से कहा कि तुम मेरी भावी पत्नी से आज शाम को प्रेम कर सकते हो । वह राजी हो गया । मैं ले आया ।"

चन्दर जोर से हँस पड़ा ।

"हँसो मत, हँसो मत मिस्टर कपूर !" बर्टी बहुत गम्भीर बन कर बोला—"इस के मतलब यह है कि तुम औरतों को समझते नही । देखो,

एक औरत उसी चीज़ को ज्यादा पसन्द करती है, उसी के प्रति समर्पण करती है जो उस की जिन्दगी में नही होता। मस्लन एक औरत है जिस का व्याह हो गया है, या होने वाला है। उसे यदि एक नया प्रेमी मिल जाये तो उस की प्रसन्नता का ठिकाना नही रहता। वह अपने पति की बहुत कम परवाह करेगी अपने प्रेमी के सामने। और अगर क्वांरी लडकी है तो वह अपने प्रेमी की भावनाओ की पूरी तौर से हत्या कर सकती है यदि उसे एक पति मिल जाये तो। मैं तो समझता हू कि कोई भी पति अपनी पत्नी को यदि कोई अच्छा उपहार दे सकता है तो वह है एक नया प्रेमी और कोई भी प्रेमी अपनी रानी को यदि कोई अच्छा उपहार दे सकता है तो वह यह कि उसे एक पति प्रदान कर दे। तुम्हारी अभी शादी तो नही हुई ?"

"न।"

"तो तुम प्रेम तो जरूर करते होगे··न, सिर मत हिलाओ·· मैं यक़ीन नही कर सकता।··मैं इतनी सलाह तुम्हें दे रहा हू कि अगर तुम किसी लडकी से प्यार करते हो तो ईश्वर के वास्ते उस से शादी मत करना—तुम मेरा क़िस्सा सुन चुके हो। अगर दिल से प्यार करना चाहते हो और चाहते हो कि वह लडकी जीवन-भर तुम्हारी कृतज्ञ रहे तो तुम उस की शादी करा देना · यह लडकियो के सेक्स जीवन का अन्तिम सत्य है ·! हा ! हा ! हा !" बर्टी हँस पडा।

चन्दर को लगा जैसे आग की लपट उसे तपा रही है। उस ने भी तो यही किया है सुधा के साथ जिसे बर्टी कितने विचित्र स्वरो मे कह रहा है। उसे लगा जैसे इस प्रेत-लोक में सारा जीवन विकृत दिखाई देता है। यहाँ साधना की पवित्रता भी कीचड और पागलपन मे उलझ कर गन्दी हो जाती है। छि, कहाँ बर्टी की बातें और कहाँ उस की सुधा।

वह उठ खडा हुआ। जल्दी से विदा माँग कर इस तरह भागा जैसे उस के पैरो के नीचे अगारे छिपे हो।

फिर उसे नीद नही आयी। चैन नही आया। रात को सोया तो वह बार-बार चौंक-सा उठा। उस ने सपना देखा, एक बहुत बडा कपूर का पहाड है। बहुत बडा। मुलायम कपूर की बडी-बडी चट्टानें और इतनी पवित्र खुशबू कि आदमी की आत्मा बेले का फूल बन जाये। वह और सुधा उन सौरभ की चट्टानो के बीच चढ रहे हैं। केवल वह है और सुधा सुधा सफेद बादलो की साडी पहने है और चन्दर किरनो की चादर लपेटे है। जहाँ-जहाँ चन्दर जाता है कपूर की चट्टानो पर इन्द्रधनुप खिल जाते है और सुधा अपने बादलो के आँचल में इन्द्रधनुप के फूल बटोरती चलती है।

सहसा एक चट्टान हिली और उस में से एक भयकर प्रेत निकला। एक सफ़ेद ककाल—जिस के हाथ में अपनी खोपडी और एक हाथ में जलती मशाल और उस मुण्डहीन ककाल ने अपनी खोपडी हाथ में लेकर चन्दर को दिखायी। खोपड़ी हँसी और बोली—"देखो जिन्दगी का अन्तिम सत्य यह है। यह !" और उस ने अपने हाथ की मशाल ऊँची कर दी। "यह कपूर का पहाड, यह बादलो की साडी, यह किरनो का परिधान, यह इन्द्रधनुप के फूल, यह सब झूठे हैं। यह मशाल जो अपने एक स्पर्श में इस सब को पिघला देगी।"

और उसने अपनी मशाल एक ऊँचे शिखर से छुआ दी। वह शिखर धधक उठा। पिघली हुई आग की एक धार बरसाती नदी की तरह उमड कर बहने लगी।

"भागो सुधा !" चन्दर ने चीख कर कहा—"भागो।"

सुधा भागी—चन्दर भागा और वह पिघले हुए आग की महानदी लहराते हुए अजगर की तरह उन्हें अपनी गुँजलिका में लपेटने के लिए चल पडी। शैतान हँस पडा "हा ! हा ! हा !" चन्दर ने देखा, सुधा शैतान की गोद में थी।

चन्दर चौंक कर जाग गया। पानी बन्द था लेकिन घनघोर अँधेरा

था। और पिशाचिनी की तरह पागलहवा पेडो को झकझोर रही थी जैसे युग के जमे हुए विश्वासो को उखाड फेकना चाहती हो। चन्दर कांप रहा था, उस का माथा पसीने से तर था।

वह उठ कर नीचे आया। उस के कदम ठीक नही पड रहे थे। बरामदे की बत्ती जलायी। महराजिन उठी—"का है भइया!" उन्होने पूछा।

"कुछ नही, अन्दर सोऊँगा।" चन्दर ने कहा और सुधा के कमरे में जा कर बत्ती जलायी। सुधा की चारपाई पर लेट गया। फिर उठा, चारो ओर के दरवाज़े बन्द कर दिये कि कही कोई फिर ऐसा सपना बाहर के भयकर अँधेरे में से न चला आये।

लेकिन बर्टी की बातो से अन्दर-ही-अन्दर उस के मन मे जाने कहाँ क्या टूट गया जो फिर बन नही पाया। अभी तक उसे अपने पर गर्व था, विश्वास था, अब कभी-कभी वह अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण करने लगा था। अब वह कभी-कभी अपने विश्वासो पर सिर ऊँचा करने के बजाय वह सामने फेक देता और एक निरपेक्ष वैज्ञानिक की तरह उन को चीर-फाड करता, उन की शव-परीक्षा किया करता था। अभी तक उस के पास विश्वास का सम्बल था, अब किसी ने उसे तर्क का अस्त्र-शस्त्र दे दिया था। जाने किस राक्षसी प्रेरणा से उस ने अपनी आतमा को चीरना शुरू किया। और इस तर्क-वितर्क और अविश्वास के भयकर जल-प्रलय की एक लहर ने उसे एक दिन नरक के किनारे ले जा पटका।

सुधा का खत आया था। दिल्ली मे पापा कुछ अपने काम से रुके थे और सुधा की तबीयत खराब हो गयी थी। अब वह दो-तीन रोज़ मे आ जायेगी।

लेकिन चन्दर के मन पर एक अजब-सा असर हुआ था इस खत का। सुधा का पत्र नही आया था, सुधा दूर थी तब वह खुश था, वह उल्लसित था। सुधा का पत्र आते ही सहसा वह उदास हो गया। उदास तो क्या उसे जैसे उबकाई-सी आने लगी। उसे यह सब सहसा, पता नही क्यो एक नाटक-सा लगने लगा था, एक बहुत सस्ता, नीचे स्तर का नाटक। उसे लगता था—ये सब चारो ओर का, त्याग, साधना, सौन्दर्य, यह सब झूठ है। सुधा भी अन्ततोगत्वा वही साधारण लडकी है जो क्वांरे जीवन में पति और विवाहित जीवन में प्रेमी की भूखी होती है।

वह अभी शैतान से पूर्णतया हारा नही था। वह लडने की कोशिश करता था लेकिन वह हार रहा था, यह भी उसे मालूम था। और चन्दर के जिस गर्व ने उस की जीत में साथ दिया था, वही गर्व उस की हार मे साथ दे रहा था। उस ने मन मे सोच लिया कि वह सुधा से, सभी लडकियो से, इस सारे नाटक से नफ़रत करता है। सुधा का विवाह होना ही था, सुधा को विवाह करना ही था, सुधा के आँसू झूठे थे, अगर चन्दर सुधा को न भी समझाता तो घूम-फिर सुधा विवाह ही करती।

तब फिर विश्वास काहे का, त्याग काहे का ?

विश्वास टूट चुका था, गर्व जिन्दा था, गर्व घमण्ड मे बदल गया था, घमण्ड नफ़रत मे, और नफरत नसो को चूर-चूर कर देने वाली उदासी में।

सुधा जब आयी तो उस ने चन्दर को बिलकुल बदला हुआ पाया। एक बात और हुई जिस ने और भी आग सुलगा दी। यह लोग दोपहर को एक बजे के लगभग आये जब कि चन्दर कॉलेज गया था। पापा तो आते ही नहा-धोकर सोने चले गये। सुधा और बिनती ने आते ही अपने कमरे की सफ़ाई शुरू की। कमरे की सारी किताबें झाडी, कपडे ठीक

किये, मेजे साफ की और उस के वाद कमरा धोने में लग गयी। विनती वाल्टी में पानी भर-भर कर लाने लगी और सुधा झाड़ू से फ़र्श धोने लगी। हाथों में चूड़े अब भी थे, पाँवों में विछिया और माँग में सिन्दूर— चेहरा बहुत पीला पड़ गया था सुधा का, चेहरे की हड्डियाँ निकल आयी थी और आँखों की रोशनी भी मैली पड़ गयी थी। वह जाने क्यों कमजोर भी हो गयी थी।

झाड़ू लगाते-लगाते सुधा विनती से बोली—"आज मालूम पड़ता है कि मैं आदमी हूँ! कल तक तो हैवान थी। पापा को भी जाने क्या सूझा कि उन्हें भी साथ दिल्ली ले गये। मैं तो शरम से मरी जाती थी।"

थोड़ी देर वाद चन्दर आया। वाहर ही से उसे मालूम हो गया था कि सब लोग आ गये हैं। उसे जाने क्यों ऐसा लगा कि वह उलटे पावों लौट जाये, वह अगर इस घर में गया तो जाने उस से क्या अनर्थ हो जायेगा, लेकिन वह बढ़ता ही गया। स्टडी रूम में डॉक्टर साहब सो रहे थे। वह लौटा और अपने कपड़े उतारने के लिए ड्राइंग रूम की ओर चला। सुधा ने ज्यों ही आहट पायी वह फ़ौरन झाड़ू फेंक कर भागी, सिर खुला, धोती कमर में खुसी हुई, हाथ गन्दे, वाल बिखरे और बेतहाशा दौड़ कर चन्दर से लपट गयी और बच्चों की भोली हँसी हँस कर बोली—"चन्दर, चन्दर हम आ गये। अब बताओ?" और चन्दर को इस तरह कस लिया कि अब कभी छोड़ेगी नहीं।

"छि, दूर हटो सुधा! यह क्या नाटक करती हो! अब तुम बच्ची नहीं हो।" और सुधा को बड़ी रुखाई से परे हटा कर अपने कोट पर-से सुधा के हाथ से लगी हुई मिट्टी झाड़ते हुए चन्दर चुपचाप अपने कमरे में चला गया।

सुधा पर जैसे बिजली गिर पड़ी हो। वह पत्थर की तरह खड़ी रही। फिर जैसे लड़खड़ाती हुई अपने कमरे में गयी और अपनी चारपाई पर लेट कर फूट-फूट कर रोने लगी। चन्दर सुधा से नहीं ही बोला।

डॉक्टर साहब के जगते ही वह उन से बातें करने लगा, शाम को वह साइकिल लेकर घूमने निकल गया। लौट कर ऊपर छत पर चला गया और विनती को पुकार कर कहा—"अगर तकलीफ न हो तो ज़रा ऊपर खाना दे जाओ।"

विनती ने थाली लगायी और सुधा से कहा—"लो दीदी! दे आओ!" सुधा ने सिर हिला कर कहा—"तू ही दे आ! मैं अब कौन रह गयी उन की।" विनती के बहुत समझाने पर सुधा ऊपर खाना ले गयी। चन्दर लेटा था गुमसुम। सुधा ने स्टूल खींच कर खाना रखा। चन्दर कुछ नहीं बोला। उस ने पानी रखा। चन्दर कुछ नहीं बोला।

"खाओ न!" सुधा ने कहा और एक कौर बना कर चन्दर को देने लगी।

"तुम जाओ!" चन्दर ने बड़े रूखे स्वर में कहा, "मैं खा लूँगा!"

सुधा ने कौर थाली में रख दिया और चन्दर के पायताने बैठ कर बोली—"चन्दर! तुम क्यों नाराज़ हो, बताओ हम से क्या पाप हो गया है? पिछले डेढ़ महीने हम ने एक-एक क्षण गिन-गिन कर काटे हैं कि कब तुम्हारे पास जायें हमें क्या मालूम था कि तुम ऐसे हो गये हो। मुझे जो चाहो सजा दे लो लेकिन ऐसे न करो। तुम तो कुछ भी नहीं समझते।" और सुधा ने चन्दर के पैरों पर सिर रख दिया। चन्दर ने पैर झटक दिये—"सुधा, इन सब बातों से फ़ायदा नहीं है। अब इस तरह की बातें करना और सुनना मैं भूल गया हूँ। कभी इस तरह की बातें करते अच्छा लगता था। अब तो किसी सोहागिन के मुँह से यह शोभा नहीं देता।"

सुधा तिलमिला उठी, "तो यह बात है तुम्हारे मन में! मैं पहले से समझती थी। लेकिन तुम्हीं ने तो कहा था चन्दर! अब तुम्हीं ऐसे कर रहे हो? शरम नहीं आती तुम्हें!" और सुधा ने हाथ से ब्याह वाले चूड़े उतार कर छत पर फेंक दिये, बिछिया उतारने लगी—और

पागलों की तरह फटी आवाज में बोली, "जो तुम ने कहा मैंने किया, अब जो कहोगे वह करूँगी। यही चाहते हो न ?" और अन्त में उस ने अपनी बिछिया उतार कर छत पर फेंक दी।

चन्दर काँप गया। उस ने इस दृश्य की कल्पना भी नहीं की थी। "बिनती ! बिनती !" उस ने घबड़ा कर पुकारा और सुधा से बोला, "अरे यह क्या कर रही हो ! कोई देखेगा क्या तो सोचेगा ! पहनो जल्दी से।"

"मुझे किसी की परवाह नहीं। तुम्हारा तो जी ठण्डा पड़ जायेगा !"

चन्दर उठा। उस ने जबरदस्ती सुधा के हाथ पकड़ लिये। बिनती आ गयी थी।

"लो इन्हें चूड़े तो पहना दो !" बिनती ने चुपचाप चूड़े और बिछिया पहना दी। सुधा चुपचाप उठी और नीचे चली गयी।

चन्दर अपनी खाट पर सिर झुकाये लज्जित-सा बैठा था।

"लीजिए खाना खा लीजिए।" बिनती बोली।

"मैं नहीं खाऊँगा।" चन्दर रुँधे गले से कहा।

"खाइए, वरना अच्छी बात नहीं होगी। आप दोनों मिल कर मुझे मार डालिए बस क़िस्सा खत्म हो जाये। न आप सीधे मुँह से बोलते हैं, न दीदी। पता नहीं, आप लोगों को क्या हो गया है ?"

चन्दर कुछ नहीं बोला।

"खाइए, आप को हमारी क़सम है। वरना दीदी खाना नहीं खायेंगी ! आप को मालूम नहीं, दीदी की तबीयत इधर बहुत खराब है। उन्हें सुबह-शाम बुखार रहता है। दिल्ली में बहुत तबीयत खराब हो गयी थी। आप ऐसे कर रहे हैं। बताइए, उन का क्या हाल होगा। आप समझते होंगे यह बहुत सुखी होंगी लेकिन आप को क्या मालूम ! पहले आप दीदी के एक आँसू पर पागल हो उठते थे, अब आप को क्या हो गया है ?"

चन्दर ने सिर उठाया—और गहरी साँस लेकर बोला—"जाने

क्या हो गया है, विनती ! मैं कभी नही सोचता था कि सुधा को मैं इतना दु ख दे सकूँगा । इतना अभागा हूँ मैं कि खुद भी इधर घुलता रहा और सुधा को भी इतना दु खी कर दिया ।" और सचमुच चन्दर की आँख मे आँसू भर आये ।

विनती चन्दर के पीछे खडी थी । चन्दर का सिर अपनी छाती से लगा कर आँसू पोछती हुई बोली—"छि , अब और दु खी होइएगा तो दीदी और भी रोयेगी । लीजिए, खाइए !"

"जाओ दीदी को बुला लो और उन्हें भी खिला दो !" चन्दर ने कहा । विनती गयी । फिर लौट कर बोली—"बहुत रो रही है । अब आज उसका नशा उतर जाने दीजिए, तब कल बात कीजिएगा ।"

"फिर सुधा ने न खाया तो ?"

"नही, आप खा लीजिएगा तो वे खा लेगी । उनको खिलाये बिना मैं नही खाऊँगी ।" विनती बोली और अपने हाथ से कौर बना कर चन्दर को देने लगी । चन्दर ने खाना शुरू किया और धीरे से गहरी साँस लेकर बोला—"विनती ! तुम हमारी और सुधा की उस जन्म की कौन हो ?"

सुबह के वक़्त चन्दर जब नाश्ता करने बैठा तो डॉक्टर साहब के साथ ही बैठा । सुधा आयी और प्याला रख कर चली गयी । वह बहुत उदास थी । चन्दर का मन भर आया । सुधा की उदासी उसे कितना लज्जित कर रही थी, कितना दु खी कर रही थी । दिन-भर किसी काम में उस की तबीयत नही लगी । उस ने क्लास छोड दिये । लाइब्रेरी में भी जा कर किताबें उलट-पलट कर चला आया । उस के बाद प्रेस गया जहाँ उसे अपनी थीसिस छपने को देनी थी, उस के बाद ठाकुर साहब के यहाँ गया । लेकिन कही भी वह टिक नही पाया । जब तक वह सुधा को हँसा न ले, सुधा के आंसू सुखा न दे, उसे चैन नही मिलेगा ।

शाम को वह लौटा तो खाना तैयार था । विनती से उस ने पूछा—

"कहाँ है सुधा ?" "अपनी छत पर।" विनती ने कहा। चन्दर ऊपर गया। पानी परसों से बन्द था और बादल भी खुले हुए थे। लेकिन तेज़ पुरवैया चल रही थी। तीज का चाँद शरमीली दुल्हन-सा बादलों में मुँह छिपा रहा था। हवा के तेज़ झकोरों पर बादल उड रहे थे और कचनार बादलों में तीज का धनुपाकार चाँद आँखमिचौनी खेल रहा था। सुधा ने अपनी खाट बरसाती के बाहर खींच ली थी। छत पर धुँधला अँधेरा था और रह-रह कर सुधा पर चाँदनी के फूल बरस जाते थे। सुधा चुपचाप लेटी हुई बादलों को देखती हुई जाने क्या सोच रही थी।

चन्दर गया। चन्दर को देखते ही सुधा उठ खडी हुई और उस ने बिजली जला दी और चुपचाप बैठ गयी। चन्दर बैठ गया। वह कुछ भी नही बोली। बगल में बिछी हुई विनती की खाट पर सुधा बैठ गयी।

चन्दर को समझ नही आता था कि वह क्या कहे। सुधा को इतना दु:ख दिया उस ने। सुधा उस से कल शाम से बोली तक नही।

"सुधा, तुम नाराज़ हो गयी ! मुझे जाने क्या हो गया था ? लेकिन माफ नही करोगी ?" चन्दर ने बहुत काँपती हुई आवाज़ में कहा। सुधा कुछ नही बोली—चुपचाप बादलों की ओर देखती रही।

"सुधा !" चन्दर सुधा के दो कबूतरों-जैसे उजले मासूम पैरों को ले कर अपनी गोद में रख लिया और भरे हुए गले से बोला—"सुधा, मुझे जाने क्या हो जाता है कभी-कभी ! लगता है वह पहले वाली ताक़त टूट गयी। मैं बिखर रहा हूँ। तुम आयी और तुम्हारे सामने मन का जाने कौन-सा तूफान फूट पडा। तुम ने उस का इतना बुरा मान लिया। बताओ अगर तुम ही ऐसा करोगी तो मुझे सम्हालने वाला फिर कौन है, सुधा ?" और चन्दर की आँखों से एक बूँद आँसू सुधा के पाँवों पर चू पडा। सुधा ने चौंक कर अपने पाँव खींच लिये। और उठ कर चन्दर की खाट पर बैठ गयी और चन्दर के कन्धे पर सिर रख कर फूट-फूट कर रो पडी। बहुत रोयी बहुत रोयी। उस के बाद उठी और

सामने बैठ गयी।

"चन्दर! तुम ने गलत नहीं किया। मैं सचमुच कितनी अपराधिन हूँ। मैं ने तुम्हारी ज़िन्दगी चौपट कर दी है। लेकिन मैं क्या करूँ? किसी ने भी तो मुझे कोई रास्ता नहीं बताया था। अब हो ही क्या सकता है चन्दर! तुम भी बरदाश्त करो और हम भी करें।" चन्दर नहीं बोला। उस ने सुधा के हाथ अपने होंठो से लगा लिये। "लेकिन मैं तुम्हें इस तरह बिखरने नहीं दूँगी! तुम ने अब अगर इस तरह किया तो अच्छी बात नहीं होगी। फिर हम तो बराबर हर पल तुम्हारे ही बारे में सोचते रहे और तुम्हारी ही बातें सोच-सोच कर अपने को धीरज देते रहे और तुम इस तरह करोगे तो . . ."

"नहीं सुधा, मैं अपने को टूटने नहीं दूँगा। तुम्हारा प्यार मेरे साथ है। लेकिन इधर मुझे जाने क्या हो गया था।"

"हाँ, समझ लो चन्दर! तुम्हें हमारे सुहाग की लाज है, हम कितने दुःखी हैं तुम समझ नहीं सकते। एक तुम्हीं को देख कर हम थोड़ा-सा दुःख-दर्द भूल जाते हैं, सो तुम भी इस तरह करने लगे! हम लोग कितने अभागे हैं!" और वह फिर चुपचाप लेट कर ऊपर देखती हुई जाने क्या सोचने लगी। चन्दर ने एक बार धुँधली रेशमी चाँदनी में मुरझाये हुए सोनजुही के फूल-जैसे मुँह की ओर देखा और सुधा के नरम गुलाबी होंठो पर उँगलियाँ रख दीं। थोड़ी देर वह आँसू में भीगे हुए गुलाब की दुःख-भरी पाँखुरियों से उँगलियाँ उलझाये रहा और फिर बोला—

"क्या सोच रही थी?" चन्दर ने बहुत दुलार से सुधा के माथे पर हाथ फेर कर कहा। सुधा एक फीकी हँसी हँस कर बोली—

"जैसे आज लेटी हुई बादलों को देख रही हूँ और पास तुम बैठे हो, उसी तरह एक दिन कॉलेज में दोपहर को मैं और गेसू लेटे हुए बादलों को देख रहे थे। उस दिन उस ने एक शेर सुनाया था। 'कैफ़ बरदोश बादलों को न देख, बेख़बर तू कुचल न जाय कहीं।' उस का कहना

कितना सच निकला ! भाग्य ने कहाँ ले जा पटका मुझे !"

"क्यों वहाँ तुम्हें कोई तकलीफ़ तो नहीं ?" चन्दर ने पूछा।

"हाँ समझते तो सब यही हैं, लेकिन जो तकलीफ़ है वह मैं जानती हूँ या बिनती जानती है।" सुधा ने गहरी साँस ले कर कहा—"वहाँ आदमी भी बने रहने का अधिकार नहीं।"

"क्यों ?" चन्दर ने पूछा।

"क्या बतायें तुम्हें ? चन्दर कभी-कभी मन में आता है डूब मरूँ। ऐसा भी जीवन होगा मेरा, यह कभी मैं नहीं सोचती थी।" सुधा ने कहा।

"क्या बात है ? बताओ न !" चन्दर ने पूछा।

"बता दूँगी देवता ! तुम से भला क्या छिपाऊँगी लेकिन आज नहीं फिर कभी !" सुधा ने कहा—"तुम परेशान मत हो। कहाँ तुम, कहाँ दुनिया ! काश कि कभी तुम्हारी गोद से अलग न होती मैं !" और सुधा ने अपना मुँह चन्दर की गोद में छिपा लिया। चन्दर ने सुधा की भौंराली अलकों पर अपना सिर रख दिया। बादल हट गये और ढेर की ढेर चाँदनी की पाँखुरियाँ बरस पड़ीं।

उल्लास और रोशनी का मलय पवन फिर लौट आया था। फिर एक बार चन्दर, सुधा और बिनती के प्राणों को विभोर कर गया था। चन्दर भूल गया था कि सुधा को महीने-भर बाद ही जाना है और सुधा भूल गयी थी कि शाहजहाँपुर से भी उस का कोई नाता है। बिनती का इम्तहान हो

गया था और अकसर चन्दर और सुधा विनती के व्याह के लिए गहने और कपडे खरीदने जाते। जिन्दगी फिर खुशी के हिलकोरो पर झूलने लगी थी। विनती का व्याह उतरते अगहन में होने वाला था। अब दो-ढाई महीने रह गये थे। सुधा और चन्दर जा कर कपडे खरीदते और लौट कर विनती को जबरदस्ती पहनाते और गुडिया की तरह उसे सजा-कर खूब हँसते। दोनो के बडे-बडे हौसले थे विनती के लिए। सुधा विनती को सलवार और चुन्नी का एक सेट और गरारा और कुरते का एक सेट देना चाहती थी। चन्दर विनती को एक हीरे की अँगूठी देना चाहता था। चन्दर विनती को बहुत स्नेह करने लगा था। वह विनती के व्याह में भी जाना चाहता था लेकिन गाँव का मामला, कान्यकुब्जो की बारात, शहर में सुधा, विनती और चन्दर को जितनी आजादी थी उतनी वहाँ भला क्यो हो सकती थी। फिर कहने वालो की जबान, कोई क्या कह बैठे? यही सब सोच कर सुधा ने चन्दर को मना कर दिया था। इस लिए चन्दर यही विनती को जितने उपहार और आशीर्वाद देना चाहता था, दे रहा था। सुधा का बचपन लौट आया था और दिन-भर उस की शरारतों और किलकारियो से घर हिलता था। सुधा ने चन्दर को इतनी ममता में डुबो लिया था कि एक क्षण वह चन्दर को अपने से अलग नही रहने देती थी। जितनी देर चन्दर घर में रहता, सुधा उसे अपने दुलार में अपने साँसों की गरमाई में समेटे रहती थी। चन्दर के माथे पर हर क्षण वह जाने कितना स्नेह बिखेरती रहती थी।

एक दिन चन्दर आया तो देखा कि विनती कही गयी है और सुधा चुपचाप बैठी हुई बहुत से पुराने खतो को सम्हाल रही है। एक गम्भीर उदासी का बादल घर मे छाया हुआ है। चन्दर आया। देखा, सुधा आंख में आंसू भरे बैठी है।

"क्या बात है सुधा?"

"रुखसती की चिट्ठी आ गयी चन्दर परसो शकर बाबू आ रहे है।"

चन्दर के हृदय की धड़कनो पर जैसे किसी ने हथौड़ा मार दिया। वह चुपचाप बैठ गया। "अब सब खत्म हुआ चन्दर !" सुधा ने बडी ही करुण मुसकान से कहा—"अब साल-भर के लिए विदा और उस के बाद जाने क्या होगा ?"

चन्दर कुछ नही बोला। वही लेट गया और बोला—"सुधा, दु खी मत हो। आखिर कैलाश इतना अच्छा है, शकर बाबू इतने अच्छे हैं। दु ख किस बात का ? रहा मैं, तो अब मैं सशक्त रहूँगा। तुम मेरे लिए मत घबडाओ !"

सुधा एक-टक चन्दर की ओर देखती रही। फिर बोली—"चन्दर ! तुम्हारे-जैसे सब क्यो नही होते ? तुम सचमुच इस दुनिया के योग्य नही हो ! ऐसे ही बने रहना चन्दर मेरे ! तुम्हारी पवित्रता ही मुझे जिन्दा रख सकेगी वरना मैं तो जिस नरक में जा रही हूँ • "

"तुम उसे नरक क्यों कहती हो ? मेरी समझ में नही आता !"

"तुम नही समझ सकते ! तुम अभी बहुत दूर हो इन सब बातो से, लेकिन•••" सुधा बडी देर तक चुप रही। फिर खत सब एक ओर खिसका दिये और बोली—"चन्दर, उन में सब कुछ है। वे बहुत अच्छे हैं, बहुत खुले विचार के हैं, मुझे बहुत चाहते हैं, मुझ पर कही से कोई बन्धन नही, लेकिन इस सारे स्वर्ग का मोल जो दे कर चुकाना पडता है उस से मेरी आत्मा का कण-कण विद्रोह कर उठता है।" और सहसा घुटनो में मुँह छिपा कर रो पडी।

चन्दर उठा और सुधा के माथे पर हाथ रख कर बोला—"छि, रोओ मत, सुधा ? अब तो जैसा है, जो कुछ भी है, बरदाश्त करना पडेगा।"

"कैसे करूँ, चन्दर ! वह इतने अच्छे हैं और इस के अलावा इतना अच्छा व्यवहार करते हैं कि मैं उन से क्या कहूँ ? कैसे कहूँ ?" सुधा बोली।

"जाने दो सुधी, जैसी जिन्दगी हो वैसा निवाह करना चाहिए। इसी में सुन्दरता है। और जहाँ तक मेरा खयाल है वैवाहिक जीवन के प्रथम चरण में ही यह नशा रहता है फिर किस को यह सूझता है। आओ, चलो चाय पीयें! उठो, पागलपन नही करते। परसो चली जाओगी, रुला कर नही जाना होता। उठो!" चन्दर ने अपने मन की जुगुप्सा पी कर ऊपर से बहुत स्नेह से कहा।

सुधा उठी और चाय ले आयी। चन्दर ने अपने हाथ से एक कप मे चाय बनायी और सुधा को पिला कर उसी में पीने लगा। चाय पीते-पीते सुधा बोली—

"चन्दर, तुम ब्याह मत करना! तुम इस के लिए नही बने हो।"

चन्दर सुधा को हँसाना चाहता था—"चल स्वार्थी कही की! क्यो न करूँ ब्याह? जरूर करूँगा! और जनाब दो-दो करूँगा! अपने-आप ने तो कर लिया, मुझे उपदेश दे रही हैं।"

सुधा हँस पडी। चन्दर ने कहा—

"बस ऐसे ही हँसती रहना, हमेशा हमारी याद कर के और अगर रोयी तो समझ लो हम उसी तरह फिर अशान्त हो उठेंगे जैसे अभी तक थे। • " फिर प्याला सुधा के होठो से लगा कर बोला—"अच्छा सुधी, कभी तुम सुनो कि मैं उतना पवित्र नही रहा जितना कि हूँ तो तुम क्या करोगी? कभी मेरा व्यक्तित्व अगर बिगड गया, तब क्या होगा?"

"होगा क्या? मैं रोकने वाली कौन होती हूँ? मैं खुद ही क्या रोक पायी अपने को! लेकिन चन्दर तुम ऐसे ही रहना। तुम्हें मेरे प्राणो की सौगन्ध है, तुम अपने को बिगाडना मत।"

चन्दर हँसा—"नही सुधा, तुम्हारा प्यार मेरी ताकत है। मैं कभी गिर नही सकता जब तक तुम मेरी आत्मा में गुँथी हुई हो।"

तीसरे दिन शंकर बाबू आये और सुधा चन्दर के पैरो की धूल माथे

पर लगा कर चली गयी ·····इस बार वह रोयी नही, शान्त थी जैसे वधस्थल पर जाता हुआ बेबस अपराधी ।

जब तक आसमान में बादल रहते हैं तब तक झील में बादलो की छाँह रहती है । बादलो के खुल जाने के बाद कोई भी झील उन की छाँह को सुरक्षित नही रख पायी । जब तक सुधा थी, चन्दर की ज़िन्दगी की फिर एक बार उल्लास और ताक़त लौट आयी थी, सुधा के जाते ही वह फिर सब कुछ खो बैठा। उस के मन में कोई स्थायित्व नही रहा । लगता था जैसे वह एक जलागार है जो बहुत गहरा है, लेकिन जिस में हर चाँद, सूरज, सितारे और बादल की छाँह पडती है और उन के चले जाने के बाद फिर वह उन का प्रतिबिम्ब धो डालता है और बदल कर फिर वैसा ही हो जाता है । कोई चीज़ भी पानी को रँग नही पाती, उसे छू नही पाती, हाँ, लहरो में उनकी छाया का रूप विकृत हो जाता है ।

चन्दर को चारो ओर की दुनिया सहज गुज़रते हुए बादलो का निस्सार तमाशा-सी लग रही थी । कॉलिज की चहल-पहल, ढलती हुई बरसात का पानी, थीसिस और डिग्री, बर्टी का पागलपन और पम्मी के खत ये सभी उस के सामने आते और सपनो की तरह गुज़र जाते । कोई चीज उस के हृदय को छू न पाती । ऐसा लगता था कि चन्दर एक खोखला व्यक्ति है जिस में सिर्फ़ एक सापेक्ष अन्त करण मात्र है, कोई निरपेक्ष आत्मा नही और हृदय भी जैसे समाप्त हो गया था । एक जलहीन हल्के बादल की तरह वह हवा के हर झोंके पर तैर रहा था । लेकिन

टिकता कभी भी नही था। उस की भावनाएँ, उस का मन, उस की आत्मा, उस के प्राण, उस का सब कुछ सो गया था और वह जैसे नीद में चल-फिर रहा था, नीद में सब कुछ कर रहा था। जाने के आठ-नौ रोज़ बाद सुधा का एक खत आया—

"मेरे भाग्य !

मैं इस बार तुम्हे जिस तरह छोड आयी हूँ उस से मुझे पल-भर को भी चैन नही मिलता। अपने को तो बेच चुकी, अपने मन के मोती को कीचड में फेंक चुकी, तुम्हारी रोशनी को ही देख कर कुछ सन्तोष है। मेरे दीपक, तुम बुझना मत। तुम्हें मेरे स्नेह की लाज है।

मेरी ज़िन्दगी का नरक फिर मेरे अगो में भिदना शुरु हो गया। तुम कहते हो कि जैसे हो निवाह करना चाहिए। तुम कहते हो कि अगर मैंने उन से निबाह नही किया तो यह तुम्हारे प्यार का अपमान होगा। ठीक है, मैं अपने लिए नहीं तुम्हारे लिए निवाह करूँगी, लेकिन मैं कैसे सम्हालूँ अपने को ? दिल और दिमाग़ बेबस हो रहे हैं, नफरत से मेरा खून उबला जा रहा है। कभी-कभी जब तुम्हारी सूरत सामने होती है तो जैसे अपना सुख-दु ख भूल जाती हूँ, लेकिन अब तो ज़िन्दगी का तूफ़ान जाने कितना तेज़ होता जा रहा है कि लगता है तुम्हें भी मुझ से खीच कर अलग कर देगा।

लेकिन तुम्हें अपने देवत्व की क़सम है, तुम मुझे अब अपने हृदय से दूर न करना। तुम नही जानते कि तुम्हारी याद के ही सहारे मैं यह नरक झेलने मे समर्थ हूँ। तुम मुझे कही छिपा लो—मैं क्या करूँ मेरा अग अग मुझी पर व्यग्य कर रहा है। आंखो की नीद खतम है। पाँवो में इतना तीखा दर्द है कि कुछ कह नही सकती। उठते-बैठते चक्कर आने लगा है। कभी-कभी बदन काँपने लगता है। आज वह बरेली गये हैं तो लगता है मैं आदमी हूँ। तभी तुम्हें लिख भी रही हूँ। तुम दु खी मत होना। चाहती थी कि तुम्हें न लिखूँ लेकिन बिना लिखे मन नही मानता।

मेरे अपने ! तुम ने तो यही सोच कर मुझे यहाँ भेजा था कि इस से अच्छा लडका नही मिलेगा लेकिन कौन जानता था कि फूल में कीडे भी होगे।

अच्छा, अब माँ जी नीचे बुला रही हैं" चलती हूँ देखो अपने किसी खत में इन सब बातो का जिक्र मत करना ! और इसे फाड कर फेंक देना।

तुम्हारी अभागिन
सुधी"

चन्दर को खत मिला तो एक बार जैसे उस की मूर्छा टूट गयी। उस ने खत लिया और बिनती को बुलाया। बिनती हाथ में साग और डलिया लिये आयी और पास बैठ गयी। चन्दर ने वह खत बिनती को दे दिया। बिनती ने पढा और चन्दर को वापस दे दिया और चुपचाप तरकारी काटने लगी।

वह उठा और चुपचाप अपने कमरे में चला गया। थोडी देर बाद बिनती चाय ले कर आयी और चाय रख कर बोली—"आप दीदी को कब खत लिख रहे हैं ?"

"मैं नही लिखूंगा !" चन्दर बोला।

"क्यो ?"

"क्या लिखूँ बिनती, कुछ समझ में नही आता !" कुछ झल्ला कर चन्दर ने कहा। बिनती चुपचाप बैठ गयी। थोडी देर बाद चन्दर बडे मुलायम स्वर में बोला—"बिनती, एक दिन तुम ने कहा था कि मैं देवता हूँ, तुम्हें मुझ पर गर्व है। आज भी तुम्हें मुझ पर गर्व है ?"

"पहले से ज्यादा !" बिनती बोली।

"अच्छा, ताज्जुब है !" चन्दर बोला—"अगर तुम जानती कि आज-कल कभी-कभी मैं क्या सोचता हूँ तो तुम्हें ताज्जुब होगा ! तुम जानती हो, सुधा के इस खत से मुझे जरा-सा भी दुःख नही हुआ, सिर्फ झल्लाहट ही हुई है। मैं सोच रहा था कि क्यो सुधा इतना स्वाँग भरती है दुःख

और अन्तर्द्वन्द्व का। किस लडकी को यह सब पसन्द नही ? किस लडकी के प्यार में शरीर का अश नही होता ? लाख प्रतिभाशालिनी लडकियाँ हो लेकिन अगर वह किसी को प्यार करेंगी तो उसे अपनी प्रतिभा नही देंगी अपना शरीर ही देंगी और यदि वह अस्वीकार कर दिया जाये तो शायद प्रतिहिंसा से तडप भी उठेंगी। अब तो मुझे ऐसा लगने लगा कि सेक्स ही प्यार है, प्यार का मुख्य अश है, बाकी सभी कुछ उस की तैयारी है, उस के लिए एक समुचित वातावरण और विश्वास का निर्माण करना है। जाने क्यो मुझे इस सब से बहुत नफरत होती जाती है। अभी तक मैं सेक्स और प्यार को दो चीजें समझता था, प्यार पर विश्वास करता था, सेक्स से नफरत, अब मुझे दोनो ही एक चीज लगते हैं और जाने कैसी अरुचि-सी हो गयी इस जिन्दगी से। तुम्हारी क्या राय है विनती ?"

"मेरी ? अरे हम बे-पढे-लिखे आदमी, हम क्या आप से बात करेंगे। लेकिन एक बात है। ज्यादा पढना-लिखना अच्छा नही होता।"

"क्यो ?" चन्दर ने पूछा।

"पढने-लिखने से ही आप और दीदी जाने क्या-क्या सोचते हैं। हम ने देहात में देखा है कि वहाँ सभी लडकियाँ समझती हैं कि उन्हें क्या करना है। इस लिए कभी इन सब बातो पर अपना मन नही बिगाडती। बल्कि मैं ने तो देखा है सभी शादी के बाद मोटी हो कर आती हैं। और दीदी अब छोटी-सी नही कि ऐसे उन की तबीयत खराब हो जाये। यह सब मन में घुटने का नतीजा है। जब यह होना ही है तो क्यो दीदी दु खी होती है ? उन्हें तो और मोटी होना चाहिए।" विनती बोली।

इस समस्या का इतना सरल समाधान सुन कर चन्दर को हँसी आ गयी।

"अब तुम ससुराल जा रही हो। मोटी हो कर आना।"

"धत्, आप तो मजाक करने लगे।"

"लेकिन विनती, तुम इस मामले में बडी विद्वान् मालूम देती हो।

अभी तक यह विद्वत्ता कहाँ छिपा रखी थी ?"

"नही, आप मज़ाक न वनाइए तो मैं सच वताऊँ कि देहाती लडकियाँ शहर की लडकियो से ज्यादा होशियार होती हैं इन सब मामलो में।"

"सच ?" चन्दर ने पूछा। वह गाँवो की ज़िदगी को वेहद निरीह समझता था।

"हाँ और क्या ? वहाँ इतना दुराव, इतना गोपन नही है। सभी कुछ उन के जीवन का उन्मुक्त है। और व्याह के पहले ही वहाँ लडकियाँ सभी कुछ..."

"अरे नही !" चन्दर ने वेहद ताज्जुब से कहा।

"लो, यक़ीन नही होता आप को ? मुझे कैसे मालूम हुआ इतना। मैं आप से कुछ नही छिपाती, वहाँ तो सब लोग इसे इतना स्वाभाविक समझते हैं जितना खाना-पीना, हँसना वोलना। वस लडकियाँ इस वात में सचेत रहती हैं कि किसी मुसीवत में न फँसें।"

चन्दर चुपचाप वैठा चाय पीता रहा। आज तक वह ज़िन्दगी को कितना पवित्र मानता रहा था लेकिन ज़िन्दगी कुछ और ही है। ज़िन्दगी अव भी वही है जो सृष्टि के आरम्भ में थी और दुनिया कितनी चालाक है। कितना भुलावा देती है। अन्दर से मन में ज़हर छिपा कर भी होंठो पर कैसी अमृतमयी मुसकान झलकाती रहती है। यह विनती जो इतनी शान्त, सयत और भोली लगती थी, इस में भी सभी गुन भरे हैं। कल्पना और भावना के आधार पर अपना आदर्श ले कर चलने वाले कितने मूर्ख वने रहते हैं इस दुनिया में ? चन्दर ने ज़िन्दगी को परखने में कितना वडा धोखा खाया है। ज़िन्दगी यह है। मासलता और प्यास और उस के साथ-साथ अपने को छिपाने की कला।

यह वैठा-वैठा सोचता रहा। सहसा उस ने अकस्मात् पूछा—

"विनती, तुम भी देहात में रही हो और सुधा भी। तुम लोगो की ज़िन्दगी में भी वह सब कभी आया !"

विनती क्षण-भर चुप रही, फिर बोली—"क्यो, क्या नफरत करोगे सुन कर ?"

"नही विनती, जितनी नफरत और अरुचि दिल मे आ गयी है उस से ज्यादा क्या आ सकती है भला ! बताना चाहो तो बता दो। अब मैं जिन्दगी को समझना चाहता हूँ, वास्तविकता के स्तर पर !" चन्दर ने गम्भीरता से पूछा।

"मैं ने आप से कुछ नही छिपाया, न अब छिपाऊँगी। पता नही क्यो दीदी से भी ज्यादा आप पर विश्वास जमता जा रहा है। सुधा दीदी की जिन्दगी में तो यह सब नही आ पाया। वे बडी विचित्र-सी थी। सब से अलग रहती थी और पढती और कमल के पोखरे में फूल तोडती थी, बस ! मेरी जिन्दगी मे ..."

चन्दर ने चाय का प्याला खिसका दिया। जाने किस भाव से उस ने विनती के चेहरे की ओर देखा। वह शान्त थी, निर्विकार थी और बिना किसी हिचक के कहती जा रही थी।

चन्दर चुप था। विनती ने अपने, पाँवो से चन्दर के पाँवो की उँगलियाँ दबाते हुए पूछा—"क्या सोच रहे हैं आप ? सुन रहे हैं न ?"

"जाने दो मैं नही सुनूँगा। लेकिन तुम मुझ पर इतना विश्वास क्यो करती हो ?" चन्दर ने पूछा।

"जाने क्यो ? यहाँ आ कर मैं ने दीदी के साथ आप का व्यवहार देखा। फिर पम्मी वाली घटना हुई। मेरे तन-मन में एक विचित्र-सी श्रद्धा आप के लिए छा गयी। जाने कैसी अरुचि मेरे मन में दुनिया के लिए थी, आप को देख कर मैं फिर स्वस्थ हो गयी।"

'ताज्जुब है तुम्हारे मन की अरुचि दूर हो गयी दुनिया के प्रति और मेरे मन की अरुचि बढ गयी। कैसे अन्तर्विरोध होते हैं मन की प्रतिक्रियाओ में ! एक बात पूछूँ विनती ! तुम मेरे इतने समीप रही हो। सैकडो बार ऐसा हुआ होगा जो मेरे विषय में तुम्हारे मन में शका पैदा

कर देता, तुम सैकड़ो बार मेरे सिर को अपने वक्ष पर रख कर मुझे सान्त्वना दे चुकी हो। तुम मुझे बहुत प्यारी हो, लेकिन तुम जानती हो मैं तुम्हें प्यार नही करता हूँ, फिर यह सब क्या है, क्यो है ?"

विनती चुप रही—"पता नही क्यो है ? मुझे इस में कभी कोई पाप नही दिखा और कभी दिखा भी तो मन में कहा कि आप इतने पवित्र हैं, आप का चरित्र इतना ऊँचा है कि मेरा पाप भी आप को छू कर पवित्र हो जायेगा।"

"लेकिन विनती ··"

"बस !" विनती ने चन्दर को टोक कर कहा—"इस से अधिक आप कुछ मत पूछिए, मैं हाथ जोडती हूँ !"

चन्दर चुप हो गया।

चन्दर जितना सुलझाने का प्रयास कर रहा था चीजें उतनी ही उलझती जा रही थी। सुधा ने जिन्दगी का एक पक्ष चन्दर के सामने रखा था। विनती उसे दूसरी दुनिया में खीच लायी। कौन सच है कौन झूठ ? वह किस का तिरस्कार करे किस को स्वीकार करे ! अगर सुधा ग़लती पर है तो चन्दर का जिम्मा है, चन्दर ने सुधा की हत्या की है' लेकिन कितनी विभिन्न हैं दोनो बहनें ! विनती कितनी व्यावहारिक, कितनी यथार्थ, कितनी सयत और सुधा कितनी आदर्श, कितनी कल्पनामयी, कितनी सूक्ष्म, कितनी ऊँची, कितनी सुकुमार और पवित्र।

जीवन की समस्याओ के अन्तर्विरोधो में जब आदमी दोनो पक्षो को

समझ लेता है तब उस के मन मे एक ठहराव आ जाता है। वह भावना से ऊपर उठ कर स्वच्छ बौद्धिक धरातल पर जिन्दगी को समझने की कोशिश करने लगता है। चन्दर अब भावना से अलग हट कर जिन्दगी को समझने की कोशिश करने लगा था। वह अब भावना से डरता था। भावना के तूफ़ान में इतनी ठोकरें खा कर अब उस ने बुद्धि की शरण ली थी और एक पलायनवादी की तरह भावना से भाग कर बुद्धि की एकागिता में छिप गया था। कभी भावुकता से नफ़रत करता था, अब वह भावना से ही नफरत करने लगा था। इस नफरत का भोग सुधा और विनती दोनो को ही भुगतना पडा। सुधा को उस ने एक भी खत नही लिखा और विनती से एक दिन भी ठीक से बातें नही की।

जब भावना और सौन्दर्य के उपासक को बुद्धि और वास्तविकता की ठेस लगती है तब वह सहसा कटुता और व्यग्य से उबल उठता है। इस वक़्त चन्दर का मन भी कुछ ऐसा ही हो गया था। जाने कितने ज़हरीले काँटे उस की वाणी में उग आये थे जिन्हें वह कभी भी किसी को चुभाने से बाज नही आता था। एक निर्मम निरपेक्षता से वह अपने जीवन की सीमा में आने वाले हर व्यक्ति को कटुता के ज़हर से अभिषिक्त करता चलता था। सुधा को वह कुछ लिख नही सकता था। पम्मी यहाँ थी नही, ले दे कर बची अकेली विनती जिसे इन ज़हरीले वाणो का शिकार होना पड रहा था। सितम्बर बीत रहा था और अब वह गाँव जाने की तैयारी कर रही थी। डॉक्टर साहब ने दिसम्बर तक की छुट्टी ली थी और वे भी गाँव जाने वाले थे। शादी के महीने-भर पहले से उन का जाना ज़रूरी था।

चन्दर खुश नही था, नाराज़ नही था। एक स्वर्गभ्रष्ट देवदूत जिसे पिशाचो ने खरीद लिया हो, उन्ही की तरह वह ज़िन्दगी के सुख-दुःख को ठोकर मारता हुआ किनारे खडा सभी पर हँस रहा था। खास तौर से नारी पर उस के मन का सारा ज़हर बिखरने लगा था और उस में उसे

यह भी अकसर ध्यान नही रहता था कि वह किस से क्या बात कर रहा है। विनती सब कुछ चुपचाप सहती जा रही थी, विनती को सुधा की तरह रोना नही आता था, न उस की चन्दर इतनी परवाह ही करता था जितनी सुधा की। दोनो में बातें भी बहुत कम होती थी, लेकिन विनती मन-ही-मन दुखी थी। वह क्या करे! एक दिन उस ने चन्दर के पैर पकड कर बहुत अनुनय से कहा—"आप को यह क्या होता जा रहा है? अगर आप ऐसे ही करेंगे तो हम दीदी को लिख देंगे!"

चन्दर बडी भयावनी हँसी हँसा—"दीदी को क्या लिखोगी? मुझे अब उन की परवाह नही। वह दिन गये विनती! बहुत बन लिये हम।"

"हाँ चन्दर बाबू, आप लडकी होते तो समझते!"

"सब समझता हूँ मैं, कैसा दोहरा नाटक खेलती है लडकियाँ! इधर अपराध करना, उधर मुखबिरी करना!"

विनती चुप हो गयी। एक दिन जब चन्दर कॉलेज से आया तो उस के सिर में दर्द हो रहा था। वह आ कर चुपचाप लेट गया। विनती ने आ कर पूछा तो बोला—"क्यो, क्यो मैं बतलाऊँ कि क्या है, तुम मिटा दोगी?"

विनती ने चन्दर के सिर पर हाथ रख कर कहा—"चन्दर, तुम्हें क्या होता जा रहा है। देखो कैसी हड्डियाँ निकल आयी हैं इधर? इस तरह अपने को मिटाने से क्या फ़ायदा?"

"मिटाने से?" चन्दर उठ कर बैठ गया—"मैं मिटाऊँगा अपने को लडकियो के लिए? छि तुम लोग अपने को क्या समझती हो? क्या है तुम लोगों में सिवाय एक नशीली मासलता के? उस के लिए मैं अपने को मिटाऊँगा!"

विनती ने चन्दर को फिर लिटा दिया।

"इस तरह अपने को धोखा देने से क्या फ़ायदा चन्दर बाबू? मैं जानती हूँ दीदी के न होने से आप की जिन्दगी में कितना बडा अभाव है लेकिन....."

"दीदी के न होने पर ? क्या मतलब है तुम्हारा ?"

"मेरा मतलब आप खूब समझते है। मैं जानती हूँ दीदी होती तो आप इस तरह न मिटाते अपने को। मैं जानती हूँ दीदी के लिए आप के मन मे क्या था ?" विनती ने सिर में तेल डालते हुए कहा।

"दीदी के लिए क्या था ?" चन्दर हँसा बडी विचित्र हँसी—"दीदी के लिए मेरे मन में एक आदर्शवादी भावुकता थी जो अधकचरे मन की उपज थी, एक ऐसी भावना थी जिस के औचित्य पर ही मुझे विश्वास नही, वह एक सनक थी।"

"सनक!" विनती थोडी देर चुपचाप सिर मे तेल ठोकती रही। फिर बोली—"अपनी साँसो से बनायी देवमूर्ति पर इस तरह लात तो न मारिए। आप को शोभा नही देता!" विनती की आँख मे आँसू आ गये, कितनी अभागी है दीदी!

चन्दर एकटक विनती की ओर देखता रहा और फिर बोला—"मैं अब पागल हो जाऊँगा, विनती!"

"मैं आप को पागल नही होने दूँगी। मैं आप को छोड कर नही जाऊँगी!"

"मुझे छोड कर नही जाओगी!" चन्दर फिर हँसा "जाइए आप! अब आप श्रीमती विनती जी होने वाली हैं। आप का व्याह होगा। मैं पागल हो रहा हूँ इस से क्या हुआ ? इन सब बातो से दुनिया नही रुकती, शहनाइयाँ नही बन्द होती, वन्दनवार नही तोडे जाते!"

'मैं नही जाऊँगी चन्दर अभी, तुम मुझे नही जानते। तुम्हारी इतनी ताडना और व्यग्य सह कर भी तुम्हारे पास रही, अब दुनिया-भर की लाछना और व्यग्य सह कर भी तुम्हारे पास रह सकती हूँ।" विनती ने तीखे स्वर में कहा।

'क्यो ? तुम्हारे रहने से क्या होगा ? तुम सुधा नही हो। तुम सुधा नही हो सकती! जो सुधा है मेरी जिन्दगी में, वह कोई नही हो सकता।

पम्मी ने माला लेने के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि गले के बटन चट से टूट गये ··बरफ़ानी चाँदनी उफन कर छलक पड़ी। चन्दर को लगा उस के गालों के नीचे बिजलियों के फूल सिहर उठे हैं और एक मदमाता नशा टूटते हुए सितारों की तरह उस के शरीर को चीरता हुआ निकल गया। वह काँप उठा, सचमुच काँप उठा। नशे में चूर वह उठ कर बैठ गया और उस ने पम्मी को अपनी गोद में डाल लिया। पम्मी अनग के धनुष की प्रत्यचा की तरह दोहरी हो कर उस की गोद में पड़ रही। तरुणाई का चाँद टूट कर दो टुकड़े हो गया था और वासना के तूफ़ान ने झीने बादल भी हटा दिये थे। ज़हरीली चाँदनी ने नागिन बन कर चन्दर को लपेट लिया। चन्दर ने पागल हो कर पम्मी को अपनी बाँहों में कस लिया, इतनी प्यास से कि लगा पम्मी का दीपशिखा-सा तन चन्दर के तन में समा जायेगा। पम्मी निश्चेष्ट आँखें बन्द किये थी लेकिन उस के गालों पर जाने क्या खिल उठा था। चन्दर के गले में उस ने मृणाल-सी बाँहें डाल दी थी। चन्दर ने पम्मी के होठों को जैसे अपने होठों में समेट लेना चाहा इतनी आग ˙ इतनी आग नशा ˙

"ठाँय!" सहसा बाहर बन्दूक की आवाज़ हुई। चन्दर चौंक उठा। उसने अपने बाहुपाश ढीले कर दिये। लेकिन पम्मी उस के गले में बाँहें डाले बेहोश पड़ी थी। चन्दर ने क्षण-भर पम्मी के भरपूर रूप-यौवन को आँखों से पी लेना चाहा, पम्मी ने अपनी बाँहें हटा ली और नशे में मख़मूर-सी चन्दर की गोद से एक ओर लुढ़क गयी। उसे अपने तन-बदन का होश नहीं था। चन्दर ने उस के वस्त्र ठीक किये और फिर झुक कर उस की नशे में चूर पलकें चूम ली।

"ठाँय!" बन्दूक की दूसरी आवाज़ हुई। चन्दर घबड़ा कर उठा।

"यह क्या है पम्मी?"

"होगा कुछ, जाओ मत।" बड़ी अलसायी हुई नशीली आवाज़ में पम्मी ने कहा और उसे फिर खींच कर बिठा लिया। और फिर, बाँहों में

उसे समेट कर उस का माथा चूम लिया।

"ठाँय !" फिर तीसरी आवाज़ हुई।

चन्दर उठ खडा हुआ और जल्दी से बाहर दौड गया। देखा बर्टी की बन्दूक बरामदे मे पडी है, और वह पिंजडे के पास मरे हुए तोते का पख पकड कर उठाये हुए है। उस के घावो से बर्टी के पतलून पर खून चू रहा था। चन्दर को देखते ही बर्टी हँस पडा, "देखा ! तीन गोली में इसे बिलकुल मार डाला, वह तो कहो सिर्फ़ एक ही लगी वरना ..." और पख पकड कर तोते की लाश को झुलाने लगा।

"छि ! फेंको उसे, हत्यारे कही के ! मार क्यो डाला उसे ?" चन्दर ने कहा।

"तुम से मतलब ! तुम कौन होते हो पूछने वाले ? मैं प्यार करता था उसे, मैं ने मार डाला !" बर्टी बोला—और आहिस्ते से उसे एक पत्थर पर रख दिया। रूमाल निकाल कर फाड डाला। आधा रूमाल उस के नीचे बिछा दिया और आधे से उस का खून पोछने लगा। फिर चन्दर के पास आया। चन्दर के कन्धे पर हाथ रख कर बोला—"कपूर ! तुम मेरे दोस्त हो न ! ज़रा अपना रूमाल दे दो।" और चन्दर से रूमाल ले कर तोते के पास खडा हो गया। बडी हसरत से उसकी ओर देखता रहा। फिर झुक कर उसे चूम लिया और उस पर रूमाल ओढा दिया। और बडे मातम की मुद्रा में उसी के पास सिर झुका कर बैठ गया।

"बर्टी, बर्टी, पागल हो गये क्या ?" चन्दर ने उस का कन्धा पकड कर हिलाते हुए कहा—"यह क्या नाटक हो रहा है ?"

बर्टी ने आँख खोली और चन्दर को भी हाथ पकड कर वही बिठाल लिया और बोला—"देखो कपूर, एक दिन तुम आये थे तो मैंने तोता और जेनी दोनो को दिखा कर कहा था कि जेनी से मैं नफरत करता हूँ उस से शादी कर लूँगा और तोते से मैं प्यार करता हूँ इसे मार डालूँगा। कहा था कि नही ? कहो हाँ।"

"हाँ कहा था।" चन्दर बोला—"लेकिन क्यों कहा था ?"

"हाँ, अब पूछा तुमने ! तुम पूछोगे 'मैं ने क्यों मार डाला' तो मैं कहूँगा कि इसे अब मर जाना चाहिए था, इसलिए इसे मार डाला। तुम पूछोगे इसे क्यों मर जाना चाहिए ? तो मैं कहूँगा जब कोई जीवन की पूर्णता पर पहुँच जाता है तो उसे मर जाना चाहिए। अगर वह अपनी जिन्दगी का लक्ष्य पूरा कर चुका है और नहीं मरता तो यह उस का अन्याय है। वह अपनी जिन्दगी का लक्ष्य पूरा कर चुका था फिर भी नहीं मरता था। मैं इसे प्यार करता था लेकिन यह अन्याय नहीं सह सकता था, अत मैं ने इसे मार डाला !"

"अच्छा, तो तुम्हारे तोते की भी जिन्दगी का कोई लक्ष्य था ?"

"हरेक की जिन्दगी का लक्ष्य होता है। और वह लक्ष्य होता है सत्य को, चरम सत्य को जान जाना। वह सत्य जान लेने के बाद आदमी अगर जिन्दा रहता है तो उस की यह असीम बेहयाई है। मैं ने इसे वह सत्य सिखा दिया। फिर भी यह नहीं मरा तो मैं ने मार डाला। फिर तुम पूछोगे कि वह चरम सत्य क्या है ? वह सत्य है कि मौत आदमी के शरीर की हत्या करती है। और आदमी की हत्या गला घोंट देती है। मसलन तुम अगर किसी औरत के पास जा रहे हो या किसी औरत के पास से आ रहे हो और सम्भव है उस ने तुम्हारी आत्मा की हत्या कर डाली हो "

"ऊँह ! अब तुम जल्दी ही पूरे पागल हो जाओगे !" चन्दर ने कहा और फिर वह पम्मी के पास लौट गया। पम्मी उसी तरह मदहोश लेटी थी। उस ने जाते ही फिर बाँहें फैला कर चन्दर को समेट लिया और चन्दर उस के वक्ष की रेशमी गरमाई में डूब गया।

जब वह लौटा तो बर्टी हाथ में खुरपा लिये एक गड्ढा बन्द कर रहा था। "सुनो कपूर ! यहाँ मैंने उसे गाड़ दिया। यह उस की समाधि है। और देखो आते-जाते यहाँ सिर झुका देना। वह बेचारा जीवन का

सत्य जान चुका है। समझ लो वह सेण्ट पैरट (सन्त शुकदेव) हो गया है!"

"अच्छा, अच्छा!" चन्दर सिर झुका कर हँसते हुए आगे बढ़ा।

"सुनो, रुको कपूर!" फिर बर्टी ने पुकारा और पास आ कर चन्दर के कन्धे पर हाथ रख कर बोला—"कपूर, तुम मानते हो नहीं कि पहले मैं एक असाधारण आदमी था।"

"अब भी हो।" चन्दर हँसते हुए बोला।

"नहीं, अब मैं असाधारण नहीं हूँ कपूर! देखो तुम्हें आज रहस्य बताऊँ। वही आदमी असाधारण होता है जो किसी परिस्थिति में किसी भी तथ्य को स्वीकार नहीं करता, उन का निषेध करता चलता है। जब वह किसी को भी स्वीकार कर लेता है, तब वह पराजित हो जाता है। मैं तो कहूँगा असाधारण आदमी बनने के लिए सत्य को भी स्वीकार नहीं करना चाहिए।

"क्या मतलब बर्टी! तुम तो दर्शन की भाषा में बोल रहे हो। मैं अर्थशास्त्र का विद्यार्थी हूँ भाई!" चन्दर ने कौतूहल से कहा।

"देखो, अब मैं ने विवाह स्वीकार कर लिया। जेनी को स्वीकार कर लिया। चाहे यह जीवन का सत्य ही क्यों न हो पर महत्ता तो निषेध में होती है। सब से बड़ा आदमी वह होता है जो अपना भी निषेध कर दे लेकिन मैं अब साधारण आदमी हूँ। सस्ते किस्म का अदना व्यक्ति। मुझे कितना दुःख है आज। मेरा तो तोता भी मर गया और मेरी असाधारणता भी।" और बर्टी फिर तोते की कब्र के पास सिर झुका कर बैठ गया।

"हाँ कहा था।" चन्दर बोला—"लेकिन क्यों कहा था ?"

"हाँ, अब पूछा तुमने ! तुम पूछोगे 'मैं ने क्यों मार डाला' तो मैं कहूँगा कि इसे अब मर जाना चाहिए था, इसलिए इसे मार डाला। तुम पूछोगे इसे क्यों मर जाना चाहिए ? तो मैं कहूँगा जब कोई जीवन की पूर्णता पर पहुँच जाता है तो उसे मर जाना चाहिए। अगर वह अपनी जिन्दगी का लक्ष्य पूरा कर चुका है और नहीं मरता तो यह उस का अन्याय है। वह अपनी जिन्दगी का लक्ष्य पूरा कर चुका था फिर भी नहीं मरता था। मैं इसे प्यार करता था लेकिन यह अन्याय नहीं सह सकता था, अत मैं ने इसे मार डाला !"

"अच्छा, तो तुम्हारे तोते की भी जिन्दगी का कोई लक्ष्य था ?"

"हरेक की जिन्दगी का लक्ष्य होता है। और वह लक्ष्य होता है सत्य को, चरम सत्य को जान जाना। वह सत्य जान लेने के बाद आदमी अगर जिन्दा रहता है तो उस की यह असीम बेहयाई है। मैं ने इसे वह सत्य सिखा दिया। फिर भी यह नहीं मरा तो मैं ने मार डाला। फिर तुम पूछोगे कि वह चरम सत्य क्या है ? वह सत्य है कि मौत आदमी के शरीर की हत्या करती है। और आदमी की हत्या गला घोंट देती है। मसलन तुम अगर किसी औरत के पास जा रहे हो या किसी औरत के पास से आ रहे हो और सम्भव है उस ने तुम्हारी आत्मा की हत्या कर डाली हो "

"ऊँह ! अब तुम जल्दी ही पूरे पागल हो जाओगे !" चन्दर ने कहा और फिर वह पम्मी के पास लौट गया। पम्मी उसी तरह मदहोश लेटी थी। उस ने जाते ही फिर बाँहें फैला कर चन्दर को समेट लिया और चन्दर उस के वक्ष की रेशमी गरमाई में डूब गया।

जब वह लौटा तो बर्टी हाथ में खुरपा लिये एक गड्ढा बन्द कर रहा था। "सुनो कपूर ! यहाँ मैंने उसे गाड दिया। यह उस की समाधि है। और देखो आते-जाते यहाँ सिर झुका देना। वह बेचारा जीवन का

सत्य जान चुका है। समझ लो वह सेण्ट पैरट (सन्त शुकदेव) हो गया है !"

"अच्छा, अच्छा !" चन्दर सिर झुका कर हँसते हुए आगे बढा।

"सुनो, रुको कपूर !" फिर बर्टी ने पुकारा और पास आ कर चन्दर के कन्धे पर हाथ रख कर बोला—"कपूर, तुम मानते हो नही कि पहले मैं एक असाधारण आदमी था।"

"अब भी हो।" चन्दर हँसते हुए बोला।

"नही, अब मैं असाधारण नही हूँ कपूर ! देखो तुम्हें आज रहस्य बताऊँ। वही आदमी असाधारण होता है जो किसी परिस्थिति में किसी भी तथ्य को स्वीकार नही करता, उन का निषेध करता चलता है। जब वह किसी को भी स्वीकार कर लेता है, तब वह पराजित हो जाता है। मैं तो कहूँगा असाधारण आदमी बनने के लिए सत्य को भी स्वीकार नही करना चाहिए।

"क्या मतलब बर्टी ! तुम तो दर्शन की भाषा में बोल रहे हो। मैं अर्थशास्त्र का विद्यार्थी हूँ भाई !" चन्दर ने कौतूहल से कहा।

"देखो, अब मैं ने विवाह स्वीकार कर लिया। जेनी को स्वीकार कर लिया। चाहे वह जीवन का सत्य ही क्यों न हो पर महत्ता तो निषेध मे होती है। सब से बडा आदमी वह होता है जो अपना भी निषेध कर दे लेकिन मैं अब साधारण आदमी हूँ। सस्ते किस्म का अदना व्यक्ति। मुझे कितना दु ख है आज। मेरा तो तोता भी मर गया और मेरी असाधारणता भी।" और बर्टी फिर तोते की क़ब्र के पास सिर झुका कर बैठ गया।

वह घर पहुँचा तो उस के पाँव जमीन पर नहीं पड रहे थे। उस ने उफनी हुई चाँदनी चूमी थी, उस ने तरुणाई के चाँद को स्पर्शों से सिहरा दिया था, उस ने नीली बिजलियाँ चूमी थीं। प्राणो की सिहरन और गुदगुदी से खेल कर वह आ रहा था, वह पम्मी के होठों के गुलाबों को चूम-चूम कर गुलाबों के देश में पहुँच गया था और उस की नसों में बहते हुए रस मे गुलाब झूम उठे थे। वह सिर से पैर तक एक मदहोश प्यास बना हुआ था। घर पहुँचा तो जैसे उल्लास से उस का अंग-अंग नाच रहा हो। बिनती के प्रति दोपहर को जो भी आक्रोश उस के मन में उभर आया था वह भी शान्त हो गया था।

बिनती ने आ कर खाना रखा। चन्दर ने बहुत हँसते हुए, बडे मीठे स्वर में कहा—"बिनती, आज तुम भी खाओ।"

"नही, मैं नीचे खाऊँगी।"

"अरे चल बैठ, गिलहरी!" चन्दर ने बहुत दिन पहले के स्नेह के स्वर में कहा और बिनती के पीठ में एक घूँसा मार कर उसे पास बिठा लिया—"आज तुम्हें नाराज नही रहने देंगे। ले खा, पगली!"

नफ़रत से नफ़रत बढ़ती है, प्यार से प्यार जागता है। बिनती के मन का सारा स्नेह सूख-सा गया था। वह चिडचिडी, स्वाभिमानी, गम्भीर और रूखी हो गयी थी लेकिन औरत बहुत कमजोर होती है। ईश्वर न करे कोई उस के हृदय की ममता को छू ले। वह सब कुछ बरदाश्त कर लेती है लेकिन अगर कोई किसी तरह से उस के मन के रस को जगा दे, तो वह फिर अपना सब अभिमान भूल जाती है। चन्दर ने जब वह यहाँ आयी थी तभी से उस के हृदय की ममता जीत ली थी।

इस लिए वह चन्दर के सामने सदा झुकती आयी लेकिन पिछली वार से चन्दर ने ठोकरें मार कर उस के मन का सारा स्नेह बिखेर दिया था। उस के वाद उस के व्यक्तित्व का रस सूखता ही गया। क्रोध जैसे उस की भवो पर रखा रहता था।

आज चन्दर ने उस को इतने दुलार से बुलाया तो लगा वह जाने कितने दिनो का भूला स्वर सुन रही है। चाहे चन्दर के प्रति उस के मन में कुछ भी आक्रोश क्यो न हो लेकिन वह इस स्वर का आग्रह नही टाल सकती, यह वह भली प्रकार जानती थी। वह वैठ गयी। चन्दर ने एक कौर वना कर विनती के मुँह में दे दिया। विनती ने खा लिया। चन्दर ने विनती की वाँह में चुटकी काट कर कहा—

"अव दिमाग ठीक हो गया पगली का! इतने दिनो से अकडी फिरती थी!"

"हूँ!" विनती ने वहुत दिन के भूले हुए स्नेह के स्वर में कहा— "खुद ही तो अपना दिमाग विगाडे रहते हैं और हमें इलजाम लगाते हैं। तरकारी ठण्डी तो नही है?"

दोनो में सुलह हो गयी "'जाडा अव काफी वढ गया था। खाना खा चुकने के वाद विनती शाल ओढे चन्दर के पास आयी और वोली—"लो इलायची खाओगे?" चन्दर ने ले ली। छील कर आधे दाने खुद खा लिये, आधे विनती के मुँह में दे दिये। विनती ने धीरे से चन्दर की अँगुली दाँत से दवा दी। चन्दर ने हाथ खीच लिया। विनती उसी के पलग पर पास ही वैठ गयी और वोली—"याद है तुम्हें? इसी पलग पर तुम्हारा सिर दवा रही थी तो तुम ने शीशी फेंक दी थी।"

"हाँ याद है! अव कहो तुम्हें उठा कर फेंक दूँ।" चन्दर आज वहुत खुश था।

"मुझे क्या फेकोगे" विनती ने शरारत से मुँह वना कर कहा—"मैं तुम से उठूँगी ही नही!"

जब अगो का तूफ़ान एक बार उठना सीख लेता है तो दूसरी बार उठते हुए उसे देर नही लगती। अभी वह अपने तूफ़ान में पम्मी को पीस कर आया था। सिरहाने बैठी हुई थी बिनती, हलका बादामी शाल ओढे, रह-रहकर मुसकराती और गालो पर फूलो के कटोरे खिल जाते, आंख में एक नयी चमक। चन्दर थोडी देर देखता रहा, उस के बाद उस ने बिनती को खींच कर कुछ हिचकते हुए बिनती के माथे पर अपने होठ रख दिये। बिनती कुछ नही बोली। चुपचाप अपने को छुडा कर सिर झुकाये बैठी रही और चन्दर के हाथ को अपने हाथ में ले कर उस की अँगुलियाँ चिटकाती रही। सहसा बोली—"अरे, तुम्हारे कफ का बटन टूट गया है, लाओ सिल दूँ।"

चन्दर को पहले कुछ आश्चर्य हुआ, फिर कुछ ग्लानि। बिनती कितना समर्पण करती है उस के सामने वह 'लेकिन उस ने अच्छा नही किया। पम्मी की बात दूसरी है बिनती की बात दूसरी। बिनती के साथ एक पवित्र अन्तर ही ठीक रहता''''

बिनती आयी और उस के कफ़ में बटन सीने लगी '' सीते-सीते बचे हुए डोरे को दाँत से तोडती हुई बोली—"चन्दर, एक बात कहें मानोगे?"

"क्या?"

"पम्मी के यहाँ मत जाया करो।"

"क्यो?"

"पम्मी अच्छी औरत नही है। वह तुम्हें प्यार नही करती, तुम्हें बिगाडती है।"

"यह बात गलत है बिनती! तुम इसीलिए कह रही हो न कि उस में वासना बहुत तीखी है!"

"नही, यह नही। उस ने तुम्हारी जिन्दगी में सिर्फ़ एक नशा, एक वासना दी, कोई ऊँचाई कोई पवित्रता नही। कहाँ दीदी, कहाँ पम्मी? किस स्वर्ग से उतर कर तुम किस नरक में फँस गये।"

"पहले मैं भी यही सोचता था बिनती, लेकिन बाद में मैं ने सोचा कि माना किसी लड़की के जीवन में वासना ही तीखी है, तो क्या इसी से वह निन्दनीय है ? क्या वासना स्वत मे निन्दनीय है ? गलत ! यह तो स्वभाव और व्यक्तित्व का अन्तर है बिनती ! हरेक से हम कल्पना नही मांग सकते, हरेक से वासना नही पा सकते । बादल है, उस पर किरन पडेगी, इन्द्रधनुष ही खिलेगा, फूल है उस पर किरन पडेगी, तबस्सुम ही आयेगा । बादल से हम मांगने लगें तबस्सुम और फूल से मांगने लगें इन्द्रधनुष, तो यह तो हमारी एक कवित्वमयी भूल होगी । माना एक लडकी के जीवन में प्यार आया, उस ने अपने देवता के चरणो पर अपनी कल्पना चढ़ा दी । दूसरी के जीवन में प्यार आया उन ने चुम्बन आलिंगन और गुदगुदी की बिजलियां दी । एक बोली—'देवता मेरे ! मेरा शरीर चाहे जिस का हो, मेरी पूजा-भावना, मेरी आत्मा तुम्हारी है और वह जन्म-जन्मान्तर तक तुम्हारी रहेगी ' और दूसरी दीपशिखा-सी लहरा कर बोली—'दुनिया कुछ कहे अब तो मेरा तन-मन तुम्हारा है । मैं तो बेकाबू हूं ! मैं करूं क्या ? मेरे तो अंग-अंग जैसे अलसा कर चूर हो रहे है तुम्हारी गोद में गिर पडने के लिए, मेरी तरुणाई पुलक उठी है तुम्हारे आलिंगन में पिस जाने के लिए । मेरे लाज के बन्धन जैसे शिथिल हुए जाते हैं । मैं करूं तो क्या करूं ? कैसा नशा पिला दिया है तुम ने, मैं सब कुछ भूल गयी हूं ! तुम चाहे जिसे अपनी कल्पना दो । अपनी आत्मा दो, लेकिन एक बार अपने जलते हुए होठो में मेरे नरम गुलाबी होठ समेट लो न !' बताओ बिनती, क्यो पहली को भावना ठीक है और दूसरी की प्यास गलत ?"

बिनती कुछ देर तक चुप रही, फिर बोली—"चन्दर, तुम बहुत गहराई से सोचते हो । लेकिन मैं तो एक मोटी-सी बात जानती हूं कि जिस के जीवन में वह प्यास लग जाती है वह फिर किसी भी सीमा तक गिर सकता है । लेकिन जिस ने त्याग किया, जिस की कल्पना जागी,

वह किसी भी सीमा तक उठ सकता है। मैं ने तो तुम्हें उठते हुए देखा है।"

"ग़लत है विनती! तुम ने गिरते हुए देखा है मुझे। तुम मानोगी कि सुधा से मुझे कल्पना ही मिली थी, त्याग ही मिला था। पवित्रता ही मिली थी। पर वह कितने दिन टिकी! और तुम यह कैसे कह सकती हो कि वासना आदमी को नीचे ही गिराती है। तुम आज ही की घटना लो। तुम यह तो मानोगी कि अभी तक मैं ने तुम्हें अपमान और तिरस्कार दिया था।"

"ख़ैर, उस की बात जाने दो!" विनती बोली।

"नहीं, बात आ गयी तो मैं साफ़ कहता हूँ कि आज मैं ने तुम्हारा प्रतिदान देने की सोची, आज तुम्हारे लिए मन में बडा स्नेह उमड आया। क्यों? जानती हो? पम्मी ने आज अपने बाहुपाश में कस कर जैसे मेरे मन की सारी कटुता, सारा विष खींच लिया। मुझे लगा बहुत दिन बाद मैं फिर पिशाच नहीं, आदमी हूँ। यह वासना का ही दान है। तुम कैसे कहोगी कि वासना आदमी को नीचे ही ले जाती है।"

विनती कुछ नहीं बोली, चन्दर भी थोडी देर चुप रहा। फिर बोला ......"लेकिन एक बात पूछूँ विनती?"

"क्या?"

"बहुत अजब-सी बात है। सोच रहा हूँ पूछूँ या न पूछूँ!"

"पूछो न!"

"अभी मैं ने तुम्हारे माथे पर होठ रख दिये, तुम कुछ भी नहीं बोली, और मैं जानता हूँ यह कुछ अनुचित-सा था। तुम पम्मी नहीं हो! फिर भी तुम ने कुछ भी विरोध नहीं किया ?"

विनती थोडी देर चुपचाप अपने पाँव की ओर देखती रही। फिर शाल के छोर से एक डोरा खींचते हुए बोली—"चन्दर, मैं अपने को कुछ समझ नहीं पाती। इतना सिर्फ़ जानती हूँ कि मेरे मन में तुम जाने क्या

हो, इतने महान् हो, इतने महान् हो कि मैं तुम्हें प्यार नही कर पाती, लेकिन तुम्हारे लिए कुछ भी करने से अपने को रोक नही सकती। लगता है तुम्हारा व्यक्तित्व, उस की शक्ति और उस की दुर्बलताएँ, उस की प्यास और उस का सन्तोष, इतना महान् है, इतना गहरा है कि उस के सामने मेरा व्यक्तित्व कुछ भी नही है। मेरी पवित्रता, मेरी अपवित्रता, इन सब से ज्यादा महान् तुम्हारी प्यास है। लेकिन अगर तुम्हारे मन मे मेरे लिए जरा भी स्नेह है तो तुम पम्मी से सम्बन्ध तोड लो। दीदी से अगर मैं बताऊँगी तो जाने क्या हो जायेगा। और तुम जानते नही दीदी अब कैसी हो गयी हैं! तुम देखो तो आँसू • "

"बस! बस!" चन्दर ने अपने हाथ से विनती का मुँह बन्द करते हुए कहा "सुधा की बात मत करो, तुम्हें हमारी कसम है। जिन्दगी के जिस पहलू को हम भूल चुके है, उसे कुरेदने से क्या फायदा?"

"अच्छा, अच्छा!" चन्दर का हाथ हटा कर विनती बोली—"लेकिन पम्मी को अपनी जिन्दगी से हटा दो।"

"यह नही हो सकता विनती!" चन्दर बोला—"और जो कहो वह मैं कर दूँगा। हाँ, तुम्हारे प्रति आज तक जो भी दुर्व्यवहार हुआ है, उस के लिए मैं तुम से क्षमा माँगता हूँ।"

"छि चन्दर! मुझे शरमिन्दा मत करो।" काफ़ी रात हो गयी थी। चन्दर लेट गया। विनती ने उसे रज़ाई उढ़ा दी और टेबल पर बिजली का स्टैण्ड रख कर बोली—"अब चुपचाप सो जाओ।"

विनती चली गयी। चन्दर पडा पडा सोचने लगा दुनिया ग़लत कहती है कि वासना पाप है। वासना से भी पवित्रता और क्षमाशीलता आती है। पम्मी से उसे जो कुछ मिला वह अगर पाप है तो आज चन्दर ने जो विनती को दिया उस में इतनी क्षमा, इतनी उदारता और इतनी शान्ति क्यों थी?

उस के बाद विनती को वह बहुत दुलार और पवित्रता से रखने

लगा। कभी-कभी जब वह घूमने जाता तो बिनती को भी ले जाता था। न्यू-ईयर्स-डे के दिन पम्मी ने दोनों की दावत की। बिनती पम्मी के पीछे चाहे चन्दर से पम्मी का विरोध कर ले पर पम्मी के सामने बहुत शिष्टता और स्नेह का बरताव करती थी।

डॉक्टर साहब की दिल्ली जाने की तैयारी हो गयी थी। बिनती ने कार्यक्रम में कुछ परिवर्तन करा लिया था। अब वह पहले डॉक्टर साहब के साथ शाहजहाँपुर जायेगी और तब दिल्ली।

निश्चय करते-करते अन्त में पहली फरवरी को वे लोग गये। स्टेशन पर बहुत-से विद्यार्थी और डॉक्टर साहब के मित्र उन्हें विदा देने के लिए आये थे। बिनती विद्यार्थियों की भीड़ से घबरा कर इधर चली आयी और चन्दर को बुला कर कहने लगी—"चन्दर! दीदी के लिए एक खत तो दे दो!"

"नहीं!" चन्दर ने बहुत रूखे और दृढ़ स्वरों में कहा।

बिनती, कुछ क्षण तक एकटक चन्दर की ओर देखती रही, फिर बोली—"चन्दर, मन की श्रद्धा चाहे अब भी वैसी हो, लेकिन तुम पर अब विश्वास नहीं रहा।"

चन्दर ने कुछ जवाब नहीं दिया, सिर्फ़ हँस पड़ा। फिर बोली—"चन्दर, अगर कभी कोई जरूरत हो तो जरूर लिखना, मैं चली आऊँगी, समझे!" और फिर चुपचाप जा कर बैठ गयी।

जब चन्दर लौटा तो उस के साथ कई साथी प्रोफेसर थे। घर पहुँच कर वह कार ले कर पम्मी के यहाँ चल दिया। पता नहीं क्यों बिनती के जाने का चन्दर को कुछ थोड़ा-सा दुःख था।

गरमी का मौसम आ गया था। चन्दर सुबह कॉलेज जाता, दोपहर को सोता और शाम को वह नियमित रूप से पम्मी को लेकर घूमने जाता। डॉक्टर साहब कार छोड गये थे। कार पम्मी और चन्दर को लेकर दूर-दूर का चक्कर लगाया करती थी। इस बार उस ने अपनी छुट्टियां दिल्ली में ही बिताने की सोची थी। पम्मी ने भी तय किया था कि मन्सूरी से लौटते समय जुलाई मे वह एक हफ्ते आकर डॉक्टर शुक्ला की मेहमानी करेगी और दिल्ली के पूर्व परिचितो से भी मिल लेगी।

यह नही कहा जा सकता कि चन्दर के दिन अच्छी तरह नही बीत रहे थे। उसने अपना अतीत भुला दिया था और वर्तमान को वह पम्मी की नशीली निगाहों मे डुबो चुका था। भविष्य की उसे कोई खास चिन्ता नही थी। उसे लगता था कि यह पम्मी की निगाहो के बादलो और स्पर्शों के फूलो की जादू-भरी दुनिया अमर है, शाश्वत है। इस जादू ने हमेशा के लिए उस की आत्मा को अभिभूत कर लिया है, ये होठ कभी अलग न होगे, यह बाहुपाश सदा इसी तरह उसे घेरे रहेंगे और पम्मी की गरम तरुण सांसें सदा इसी प्रकार उस के कपोलो को सिहराती रहेंगी। आदमी का विश्वास हमेशा सीमाएँ और अन्त भूल जाने का आदी होता है। चन्दर भी सब कुछ भूल चुका था।

अप्रैल की एक शाम। दिन-भर लू चल कर अब थक गयी थी। लेकिन दिन-भर की लू की वजह से आसमान में इतनी धूल भर गयी थी कि धूप भी हलकी पड गयी थी। माली बाहर छिडकाव कर रहा था। चन्दर सो कर उठा था और सुस्ती मिटा रहा था। थोडी देर के बाद वह उठा, दिशाओं की ओर निरुद्देश्य देखने लगा। बडी उदास-सी शाम थी।

सडक भी विलकुल सूनी थी, सिर्फ़ दो-एक साइकिल सवार लू से बचाव के लिए कान में तौलिया लपेटे हुए चले जा रहे थे। एक वरफ का ठेला भी चला जा रहा था। "जाओ, वरफ ले आओ!" चन्दर ने माली को पैसे देते हुए कहा। माली ने ठेले वाले को बुलाया। ठेला वाला आ कर फाटक पर रुक गया। माली वरफ तुडवा ही रहा था कि एक रिक्शा जिस पर परदा बँधा था, वह भी फाटक के पास मुडा और ठेले के पास आ कर रुक गया। ठेला वाले ने ठेला पीछे किया। रिक्शा अन्दर आया। रिक्शे में कोई परदानशीन औरत वैठी थी, लेकिन रिक्शे के साथ कोई नही था। चन्दर को ताज्जुब हुआ, कौन परदानशीन यहाँ आ सकती है? रिक्शा पोर्टिको में आ कर रुक गया। शिष्टतावश चन्दर अलग हट कर खडा हो गया। रिक्शे से एक लडकी उतरी जिसे चन्दर नही जानता था, लेकिन वाहर का परदा जितना गन्दा और पुराना था लडकी की पोशाक उतना ही साफ और चुस्त। वह सफेद रेशम की सलवार, सफेद रेशम का चुस्त कुरता और उस पर वहुत हलके शरवती फ़ालसई रग की चुन्नी ओढे हुई थी। वह उतरी और रिक्शे वाले से वोली—"अव घण्टे-भर में आ कर मुझे ले जाना।" रिक्शा वाला सिर हिला कर चल दिया और वह सीधे अन्दर चल दी। चन्दर को वडा अचरज हुआ। यह कौन हो सकता है जो इतनी वेतकल्लुफी से अन्दर चल दिया। उस ने सोचा शायद शरणार्थियो के लिए चन्दा मांगने वाली कोई लडकी हो। मगर अन्दर तो कोई है नही! उस ने चाहा कि रोक दे, फिर उस ने नही रोका। सोचा खुद ही अन्दर खाली देख कर लौट आयेगी।

माली वरफ लेकर आया और अन्दर चला गया। वह लडकी लौटी। उस के चेहरे पर कुछ आश्चर्य और कुछ चिन्ता की रेखाएँ थी। अव चन्दर ने उसे देखा। एक सांवली लडकी थी, कुछ उदास, कुछ वीमार-सी लगती थी। आँखें वडी-वडी लगती थी जो रोना भूल चुकी हैं और हँसने में भी अशक्त हैं। चेहरे पर एक पीली छाँह थी। ऐसा लगता

था देखने ही से कि लडकी दु खी है पर अपने को सम्हालना जानती है।

वह आयी, और वडी फीकी मुसकान के साथ, वडी शिष्टता के स्वर मे वोली—"चन्दर भाई, सलाम! सुधा क्या ससुराल में है?"

चन्दर का आश्चर्य और भी वढ गया। यह तो चन्दर को जानती भी है।

"जी हाँ, वह ससुराल में है। आप ''

"और विनती कहाँ है?" लडकी ने वात काट कर पूछा।

"विनती दिल्ली में है।"

"क्या उस की भी शादी हो गयी?"

"जी नहीं, डॉक्टर साहव आजकल दिल्ली में है। वह उन्ही के पास पढ रही है। वैठ तो जाइए!" चन्दर ने कुरसी खिसका कर कहा।

"अच्छा, तो आप यही रहते हैं अव? नौकर हो गये होंगे?"

"जी हाँ!" चन्दर ने अचरज में डूव कर कहा—"लेकिन आप इतनी जानकारी और परिचय की वातें कर रही हैं, मैं ने आप को पहचाना नही, क्षमा कीजिएगा ''

वह लडकी हँसी, जैसे अपनी क़िस्मत, जिन्दगी, अपने इतिहास पर हँस रही हो।

"आप मुझ को कैसे पहचान सकते हैं? मैं जरूर आप को देख चुकी थी। मेरे आप के वीच में दरअसल एक रोशनदान था। मेरा मतलव सुधा से है!"

"ओह! मैं समझा आप गेसू हैं!"

"जी हाँ!" और गेसू ने वहुत तमीज से अपनी चुन्नी ओढ ली।

"आप तो शादी के वाद जैसे विलकुल खो ही गयी। अपनी सहेली को भी एक खत नहीं लिखा। अख्तर मियाँ मजे में हैं?"

"आप को यह सव कैसे मालूम?" वहुत आकुल हो कर गेसू वोली

और उस की पीली आँखो मे और भी मैलापन आ गया।

"मुझे सुधा से मालूम हुआ था। मैं तो उम्मीद कर रहा था आप हम लोगो को एक दावत जरूर देंगी। लेकिन कुछ मालूम ही नही हुआ। एक वार सुधाजी ने मुझे आप के यहाँ भेजा तो मालूम हुआ कि आप लोगो ने मकान ही छोड दिया है।"

"जी हाँ, मैं देहरादून में थी। अम्मीजान वगैरह सभी वही थी। अभी हाल में वहाँ कुछ पनाहगीर पहुँचे ..."

"पनाहगीर ?"

"जी पजाव के सिक्ख वगैरह। कुछ झगडा हो गया तो हम लोग चले आये। अव हम लोग यही हैं।"

"अख्तर मियाँ कहाँ हैं ?"

"मिरज़ापुर मे पीतल का रोजगार कर रहे हैं।"

'और उन की वीवी देहरादून में थी। यह सज़ा क्यो दी आप ने उन्हें ?"

"सज़ा की कोई वात नही" गेसू का स्वर घुटता हुआ-सा मालूम दे रहा था। "उन की वीवी उन के साथ हैं।"

"क्या मतलव ? आप तो अजव सी वातें कर रही हैं। अगर मैं भूल नही करता तो आप की शादी ..."

"जी हाँ!" वडी ही उदास हँसी हँस कर गेसू वोली—"आप से चन्दर भाई, मैं क्या छिपाऊँगी, जैसे सुधा वैसे आप! मेरी शादी उन से नही हुई!"

"अरे! गुस्ताखी माफ कीजिएगा, सुधा तो मुझ से कह रही थी कि अख्तर ..."

"मुझ से मुहव्वत करते हैं!" गेसू वात काट कर वोली और वडी गम्भीर हो गयी और अपनी चुन्नी के छोर में टँके हुए सितारे को तोडती हुई वोली—"मैं सचमुच नही समझ पायी कि उन के मन में क्या था।

उन के घर वालो ने मेरे बजाय फूल को ज्यादा पसन्द किया। उन्होंने फूल से ही शादी कर ली। अब अच्छी तरह निभ रही है दोनों की। फूल तो इतने अरसे में एक बार भी लोगों से मिलने नहीं आयी।"

"अच्छा…" चन्दर चुप हो कर सोचने लगा। कितनी बडी प्रवंचना हुई इस लडकी की जिन्दगी में। और कितने दबे शब्दो में यह कह कर चुपचाप हो गयी। एक भी आँसू नहीं, एक भी सिसकी नहीं। संयत स्वर और फीकी मुसकान, बस। चन्दर चुपचाप उठ कर अन्दर गया। महराजिन आ गयी थी। कुछ नाश्ता और शरबत भेजने के लिए कह कर चन्दर बाहर आया। गेसू चुपचाप लॉन की ओर देख रही थी, शून्य निगाहों से। चन्दर आ कर बैठ गया और बोला—

"बहुत धोखा दिया गया आप को।"

"छि! ऐसी बात नहीं कहते, चन्दर भाई! कौन जानता है यह अख्तर की मजबूरी रही हो! जिस को मैं ने अपना सिरताज माना उस के लिए ऐसा खयाल भी दिल में लाना गुनाह है। मैं इतनी गिरी हुई नहीं कि यह सोचूँ कि उन्होंने धोखा दिया।" गेसू दाँत तले जबान दबा कर बोली।

चन्दर दंग रह गया। क्या गेसू अपने दिल से कह रही है? इतना अखण्ड विश्वास है गेसू को अख्तर पर! शरबत आ गया था। गेसू ने तकल्लुफ़ नहीं किया। लेकिन बोली—"आप बडे भाई हैं। पहले आप शुरू कीजिए।"

"आप से फिर कभी अख्तर से मुलाक़ात नहीं हुई?" चन्दर ने एक घूँट पी कर कहा।

"हुई क्यों नहीं? कई बार वह अम्मीजान के पास आये।"

"आप ने कुछ नहीं कहा?"

"कहती क्या? यह सब बातें कहने-सुनने की होती हैं! और फिर फूल वहाँ आराम से है अख्तर भी फूल को जान से ज्यादा प्यार से

रखते हैं, यही मेरे लिए बहुत है। और अब कह कर क्या करूँगी, जब फूल से शादी तय हुई और वे राजी हो गये तभी मैं ने कुछ नहीं कहा, अब तो फूल की माँग, फूल का सुहाग मेरे लिए सुबह की अजान से ज्यादा पाक है!" गेसू ने शरबत में निगाहें डुबाये हुए कहा। चन्दर क्षण-भर चुप रहा फिर बोला—

"अब आप की शादी अम्मीजान कब कर रही हैं?"

"कभी नही! मैं ने क़स्द कर लिया है कि मैं शादी ताउम्र नही करूँगी। देहरादून के मैटर्निटी सेण्टर मे काम सीख रही थी। कोर्स पूरा हो गया। अब किसी अस्पताल में काम करूँगी।"

"आप!"

"क्यो आप को ताज्जुब क्यों हुआ! मैं ने अम्मीजान को इस बात के लिए राजी कर लिया है। मैं अपने पैरो पर खडी होना चाहती हूँ।"

"चन्दर ने शरबत से बरफ़ निकाल कर फेंकते हुए कहा—

"मैं आप की जगह होता तो दूसरी शादी करता और अख्तर से भरसक बदला लेता!"

"बदला!" गेसू मुसकरा कर बोली—"छि चन्दर भाई! बदला, गुरेज़, नफरत इस से आदमी न कभी सुधरा है न सुधरेगा! बदला और नफ़रत तो अपने मन की कमजोरी को जाहिर करते हैं। और फिर बदला मैं लूँ किस से? उस से, दिल की तनहाइयों में मैं जिस के सिजदे पड़ती हूँ। यह कैसे हो सकता है!"

गेसू के माथे पर विश्वास का तेज दमक उठा, उस की बीमार आँखों में धूप लहलहा उठी और उस का कचनलता-सा तन जगमगाने लगा। कुछ ऐसी दृढ़ता थी उस की आवाज में, ऐसी गहराई थी उस की ध्वनि में कि चन्दर देखता ही रह गया। वह जानता था कि गेसू के दिल में अख्तर के लिए कितना प्रेम था, कि वह यह भी जानता था गेसू अख्तर से शादी के लिए किस तरह पागल थी। वह सारा सपना ताश के महल

की तरह गिर गया, और परिस्थितियो से नही। खुद अख्तर ने धोखा दिया, लेकिन गेसू है कि माथे पर शिकन नही, भौंह मे बल नही, होंठो पर शिकायत नही। नारी के जीवन का यह कैसा अमिट विश्वास था। यानी जिसे गेसू ने अपने प्रेम का स्वर्णशिखर समझा था वह ज्वालामुखी बन कर फूट गया और उस ने दर्द की पिघली आग की धारा मे गेसू को डुबो देने की कोशिश की लेकिन गेसू है कि अटल चट्टान की तरह खडी है।

चन्दर के मन मे कही पर कोई टीस उठी। उस के दिल की धडकनो ने कही पर उस से पूछा ' ''और चन्दर तुम ने क्या किया? तुम पुरुष थे। तुम्हारे सबल कन्धे किसी के प्यार का बोझ क्यो नही ढो पाये चन्दर? लेकिन चन्दर ने अपने अन्त करण की आवाज को अनसुनी करते हुए कहा—

"तो आप के मन में जरा भी दर्द नही अख्तर को न पाने का?"

"दर्द!" गेसू की आवाज डूबने लगी, निगाहो की जर्द पांखुरियो पर हलकी पानी की लहर दौड गयी—"दर्द, यह तो सिर्फ़ सुधा समझ सकती है चन्दर भाई! बचपन से वह मेरे लिए क्या थे यह वही जानती है। मैं तो उन का सपना देखते-देखते उन का सपना ही बन गयी थी, लेकिन खैर दर्द इनसान के यक़ीदे को और मजबूत न कर दे, आदमी के क़दमो को और ताक़त न दे, आदमी के दिल की ऊँचाई न दे तो इनसान क्या? दर्द का हाल पूछते हैं आप! क़यामत के रोज तक मेरी मय्यत उन्ही का आसरा देखेगी, चन्दर भाई! लेकिन इस के लिए जिन्दगी में तो खामोश ही रहना होगा। बन्द घर में जलते हुए चिराग़ की तरह घुलना होगा। और अगर मैं ने उन को अपना माना है तो वह मिल कर ही रहेंगे। आज न सही क़यामत के बाद सही। मुहब्बत की दुनिया में जैसे एक दिन उन के बिना कट जाता है वैसे एक जिन्दगी उन के बिना कट जायेगी ''लेकिन उस के बाद वे मेरे हो कर रहेंगे!"

चन्दर का दिल काँप उठा। गेसू की आवाज़ में तारे बरस रहे थे··

"और आप से क्या कहूँ चन्दर भाई! क्या आप की बात मुझ से छिपी है! मैं जानती हूँ। सब कुछ मैं जानती हूँ। सच पूछिए तो जब मैं ने देखा कि आप कितनी खामोशी से अपनी दुनिया में आग लगते देख रहे हैं, और फिर भी हँस रहे हैं, तो मैं ने आप से सबक लिया। हमें नहीं मालूम था कि हम और आप, दोनों भाई-बहनों की क़िस्मत एक-सी है।"

चन्दर के मन में जाने कितने घाव कसक उठे। उस के मन में जाने कितना दर्द उभड़ने-सा लगा। गेसू उसे क्या समझ रही है मन में और वह कहाँ पहुँच चुका है। जिस ने चन्दर की ज़िन्दगी से अपने मन का दीप जलाया, वह आज देवता के चरण तक पहुँच गया, लेकिन चन्दर के मन की दीपशिखा? उस ने अपने प्यार की चिता जला डाली। चन्दर के मुँह पर ग्लानि की कालिमा छा गयी। गेसू चुपचाप बैठी थी। सहसा बोली—"चन्दर भाई, आप को याद है पिछले साल इन्हीं दिनों में सुधा से मिलने आयी थी और हसरत आप को मेरा सलाम कहने गया था?"

"याद है!" चन्दर ने बहुत भारी स्वरों में कहा।

"इस एक साल में दुनिया कितनी बदल गयी है!" गेसू ने गहरी साँस ले कर कहा—"एक बार ये दिन चले जाते हैं, फिर बेदर्द कभी नहीं लौटते। कभी-कभी सोचती हूँ कि सुधा होती तो फिर कॉलेज जाते, क्लास में शोर मचाते, भाग कर घास में लेटते, बादलों को देखते, शेर कहते और वह चन्दर की और हम अख्तर की बातें करते" गेसू का गला भर आया और एक आँसू चू पड़ा· "सुधा और सुधा की ब्याह-शादी का हाल बताइए। कैसे हैं उन के शौहर?"

चन्दर के मन में आया वह कह दे कि गेसू क्यों लज्जित करती हो! मैं वह चन्दर नहीं हूँ। मैं ने अपने विश्वास का मन्दिर भ्रष्ट कर दिया है। मैं प्रेत हूँ····मैं ने सुधा के प्यार का गला घोंट दिया है लेकिन पुरुष का गर्व! पुरुष का छल! उस ने यह भी नहीं मालूम होने दिया कि

उस का विश्वास चूर-चूर हो चुका है। और पिछले कितने ही महीनो से उस ने सुधा को खत लिखना भी वन्द कर दिया है और यह भी नही मालूम करने का प्रयास किया कि सुधा मरती है या जीती।

घण्टे-भर तक दोनो सुधा के वारे में वात करते रहे। इतने में रिक्शे वाला लौट आया। गेसू ने उसे ठहरने का इशारा किया और वोली—"अच्छा, जरा सुधा का पता लिख दीजिए।" चन्दर ने एक कागज पर पता लिख दिया। गेसू ने उठने का उपक्रम किया तो चन्दर वोला—"वैठिए अभी, आप से वाते कर के आज जाने कितने दिनो की वातें याद आ रही है।"

गेसू हँसी और वैठ गयी। चन्दर वोला—"आप अभी तक कविताएँ लिखती है?"

"कविताएँ" गेसू फिर हँसी और वोली—"जिन्दगी कितनी हमागोर है जितनी पुरशोर, और इस शोर मे नग़मो की हकीकत कितनी? अव हड्डियाँ, नसें, प्रेशरप्वाइण्ट पट्टियाँ और मलहमो में दिन वीत जाता है। अच्छा चन्दर भाई, सुधा अव उतनी ही शोख है? उतनी ही शरारती है?"

"नही।" चन्दर ने वहुत उदास स्वर में कहा—"जाओ, कभी देख आओ न।"

"नही, जव तक कही जगह नही मिल जाती, तव तक तो इतनी आजादी नही मिलेगी। अभी यही हूँ। उसी को वुलवाऊँगी और उस के पतिदेवता को लिखूँगी। कितना सूना लग रहा है घर जैसे भूतों का वसेरा हो। जैसे परेत रहते हो।"

"क्यो परेत वना रही है आप? मैं रहता हूँ इसी घर मे।" चन्दर वोला।

"अरे, मेरा यह मतलव नही था" गेसू हँसते हुए वोली—"अच्छा, अव मुझे तो अम्मीजान नही भेजेंगी, आज जाने कैसे अकेले जाने को

इजाजत दे दी। आप को किसी दिन बुलवाऊँ तो आइएगा जरूर।"

"हाँ आऊँगा गेसू, जरूर आऊँगा।" चन्दर ने बहुत स्नेह से कहा।

"अच्छा भाईजान, सलाम।"

"नमस्ते।"

गेसू जाकर रिक्शे पर बैठ गयी और परदा तन गया। रिक्शा चल दिया। चन्दर एक अजब-सी निगाह से देखता रहा जैसे अपने अतीत की कोई खोयी हुई चीज ढूँढ रहा हो और फिर धीरे-धीरे लौट आया। सूरज डूब गया था। वह गुसलखाना बन्द कर नहाने बैठ गया। जाने कहाँ-कहाँ मन भटक रहा था उस का। चन्दर मन का अस्थिर था, मन का बुरा नहीं था। गेसू ने आज उस के सामने अचानक वह तसवीर रख दी थी जिस में वह स्वर्ग की ऊँचाइयों पर मँडराया करता था। और जाने कैसा दर्द-सा उस के मन में उठ गया था, गेसू ने अपने अजाने ही में चन्दर के अविश्वास, चन्दर की प्रतिहिंसा को बहुत बड़ी हार दी थी। उस ने सिर पर पानी डाला तो उसे लगा यह पानी नहीं है यह जिन्दगी की धारा है, पिघले हुए अंगारों की धारा जिस में पड़ कर केवल वही जिन्दा बच पाया है जिस के अंगों में प्यार का अमृत है। और चन्दर के मन में क्या है? महज वासना का विष वह सड़ा हुआ, गला हुआ शरीर मात्र है जो केवल सन्निपात के जोर से चल रहा है। उस ने अपने मन के अमृत को गली में फेंक दिया है उस ने क्या किया है?

वह नहा कर आया और शीशे के सामने खड़ा हो कर बाल काढ़ने लगा – फिर शीशे की ओर एकटक देख कर बोला—"मुझे क्यों देख रहे हो चन्दर बाबू! मुझे तो तुम ने बरबाद कर डाला। आज कई महीने हो गये और तुम ने एक चिट्ठी तक नहीं लिखी। छि!" और उस ने शीशा उलट कर रख दिया।

महराजिन खाना ले आयी। उस ने खाना खाया और सुस्त-सा पड़ रहा।"भइया, आज घूमैं न जावो?"

"नही !" चन्दर ने कहा और पडा-पडा सोचने लगा। पम्मी के यहाँ नही गया।

यह गेसू दूसरे कमरे में बैठी थी। इस कमरे मे बिनती उसे कैलाश का चित्र दिखा रही थी। चित्र उस के मन में घूमने लगे "चन्दर क्या इस दुनिया मे तुम्ही रह गये थे फ़ोटो दिखा कर पसन्द कराने के लिए चन्दर का हाथ उठा। तड से एक तमाचा चन्दर चोट तो नही आयी "मान लिया तो मेरे मन ने मुझ से न कहा हो, तुम से तो मेरा मन कोई बात नही छिपाता ' तो चन्दर तुम शादी कर क्यो नही लेते ? पापा लडकी देख आयेंगे हम भी देख लेंगे" तो फिर तुम बैठो दो हम पढेंगे, वरना हमें शरम लगती है चन्दर तुम शादी मत करना, तुम इस सब के लिए नही बने हो नही सुधा, तुम्हारे वक्ष पर सिर रख कर कितना सन्तोष मिलता है '

आसमान में एक-एक कर के तारे टूटते जा रहे थे।

वह पम्मी के यहाँ नही गया। एक दिन"''''''दो दिन" तीन दिन अन्त में चौथे दिन शाम को पम्मी खुद आयी। चन्दर खाना खा चुका था और लॉन पर टहल रहा था। पम्मी आयी। उस ने स्वागत किया लेकिन उस की मुसकराहट में उल्लास नही था।

"कहो कपूर, आये क्यो नही ? मैं समझी, तुम बीमार हो गये !" पम्मी ने लॉन पर पडी एक कुरसी पर बैठते हुए कहा—"आओ बैठो न !" उस ने चन्दर की ओर कुरसी खिसकायी।

"नही, तुम बैठो, मैं टहलता रहूँगा।" चन्दर बोला और कहने लगा—"पता नही क्यो पम्मी, दो-तीन दिन से तबीयत बहुत उदास-सी है। तुम्हारे यहाँ आने को तबीयत नही हुई।।"

"क्यो, क्या हुआ ?" पम्मी ने पूछा और चन्दर का हाथ पकड लिया। चन्दर पम्मी की कुरसी के पीछे खडा हो गया। पम्मी ने चन्दर के दोनो हाथ पकड कर अपने गले मे डाल लिये और अपना सिर चन्दर से टिका कर चन्दर की ओर देखने लगी। चन्दर चुप था। न उस ने पम्मी के गाल थपथपाये, न हाथ दवाया, न अलकें बिखेरी और न निगाहो में नशा ही बिखेरा।

औरत अपने प्रति आने वाले प्यार और आकर्षण को समझने मे चाहे एक बार भूल कर जाये, लेकिन वह अपने प्रति आने वाली उदासी और उपेक्षा को पहचानने में कभी भूल नही करती। वह होठो पर होठो के स्पर्शों के गूढतम अर्थ समझ सकती है, वह आप के स्पर्श में आप की नसो में चलती हुई भावना पहचान सकती है। वह आप के वक्ष से सिर टिका कर आप के दिल की धडकनो की भाषा समझ सकती है, यदि उसे थोडा-सा भी अनुभव है और आप उस के हाथ पर हाथ रखते हैं तो स्पर्श की अनुभूति से ही जान जायेगी कि आप उस से कोई प्रश्न कर रहे है ? कोई याचना कर रहे हैं ? सान्त्वना दे रहे हैं या सान्त्वना माग रहे है ? क्षमा माँग रहे हैं या क्षमा दे रहे हैं ? प्यार का प्रारम्भ कर रहे हैं या समाप्त कर रहे हैं ? स्वागत कर रहे हैं या विदा दे रहे हैं ? यह पुलक का स्पर्श या उदासी का चाव और नशे का स्पर्श है या खिन्नता और बेमनी का ?

पम्मी चन्दर के हाथो को छूते ही जान गयी कि हाथ चाहे गरम हो, लेकिन स्पर्श बडा शीतल है, बडा नीरस। उस में वह पिघली हुई आग की शराब नही है जो अभी तक चन्दर के होठो पर धधकती थी, चन्दर के स्पर्शों में बिखरती थी।

"कुछ तबीयत खराब है कपूर, बैठ जाओ।" पम्मी ने उठ कर

चन्दर को जबरदस्ती बिठाल दिया, आजकल बहुत मेहनत पडती है क्यो ? चलो तुम हमारे यहाँ रहो !"

पम्मी मे केवल शरीर की प्यास थी यह कहना पम्मी के प्रति अन्याय होगा। पम्मी में एक बहुत गहरी हमदर्दी थी चन्दर के लिए। चन्दर अगर शरीर की प्यास को जीत भी लेता तो उस की हमदर्दी को वह नही ठुकरा पाता था। उस हमदर्दी का तिरस्कार होने से पम्मी दु खी होती थी और उसे वह तभी स्वीकृत समझती थी जब चन्दर उस के रूप के आकर्षण में डूबा रहे। अगर पुरुषो के होठो में तीखी प्यास न हो, बाहु-पाशो में जहर न हो तो वासना की इस शिथिलता से नारी फौरन समझ जाती है कि सम्बन्धो में दूरी आती जा रही है। सम्बन्धो की घनिष्टता को नापने का नारी के पास एक ही मापदण्ड है, चुम्बन का तीखापन !

चन्दर के मन में ही नही वरन् स्पर्शों में भी इतनी बिखरती हुई उदासी थी, इतनी उपेक्षा थी कि पम्मी मर्माहत हो गयी। उस के लिए यह पहली पराजय थी ! आजकल पम्मी के हाथो को हाथ में लेते ही चन्दर की नस-नस में अंगडाइयाँ मचलने लगती थी और पम्मी जान जाती थी कि चन्दर का रोम-रोम इस वक्त पम्मी की साँसो में डूबा हुआ है।

लेकिन पम्मी ने देखा कि चन्दर उस की बाँहो में होते हुए भी दूर, बहुत दूर न जाने किन विचारो में उलझा हुआ है। वह उस से दूर चला जा रहा है, बहुत दूर। पम्मी की धडकनें अस्त-व्यस्त हो गयी। उस की समझ में नही आया वह क्या करे। चन्दर को क्या हो गया। क्या पम्मी का जादू टूट रहा है ! पम्मी ने अपनी पराजय से कुण्ठित हो कर अपना हाथ हटा लिया और चुपचाप मुँह फेर कर उधर देखने लगी। चन्दर चाहे जितना उदास हो लेकिन पम्मी की उदासी वह नही सह सकता था। बुरी या भली, पम्मी इस वक्त उस की सूनी जिन्दगी का अकेला सहारा थी। और पम्मी की हमदर्दी का वह बहुत कृतज्ञ था। वह समझ गया

पम्मी क्यो उदास है। उस ने पम्मी का हाथ खीच लिया और अपने होठ उस की हथेलियो पर रख दिये और खीच कर पम्मी का सिर अपने कन्धे पर रख लिया

पुरुप के जीवन में एक क्षण आता है जब वासना उस की कमजोरी, उस की प्यास, उस का नशा, उस का आवेश नही रह जाती। जब वासना उस की हमदर्दी का, उस की सान्त्वना का साधन बन जाती है। जब वह नारी को इसलिए बाँहो में नही समेटता कि उस की बाँहें प्यासी है, वह इसलिए उसे बाँहो में समेट लेता है कि नारी अपना दु ख भूल जाये। जिस वक्त वह नारी की सीपिया पलको के नशे में नही वरन्, उस की आँखो के आँसू सुखाने के लिए उस की पलको पर होठ रख देता है, जीवन के उस क्षण में पुरुप जिस नारी से सहानुभूति रखता है, उस के मन की पराजय को भुलाने के लिए वह नारी को बाहुपाशो के नशे में बहला देना चाहता है। लेकिन इन बाहुपाशो मे प्यास ज़रा भी नही होती, आग ज़रा भी नही होती, सिर्फ नारी को बहलावा देने का प्रयास मात्र होता है।

इस में कोई सन्देह नही कि चन्दर के मन पर छाया हुआ पम्मी के रूप का गुलाबी बादल उचटता जा रहा था, नशा उखड-सा रहा था। लेकिन चन्दर पम्मी को दु खी नही करना चाहता था, वह भरसक पम्मी को बहलाये रखता था ··लेकिन उस के मन में कही-न-कही फिर अन्तर्द्वन्द्व का एक तूफान चलने लगा था····

गेसू ने उस के सामने उस की साल-भर पहले की ज़िन्दगी का वह चित्र रख दिया था, जिस की एक झलक उस अभागे को पागल कर देने के लिए काफी थी। चन्दर जैसे-तैसे अपने मन को पत्थर बना कर, अपनी आत्मा को रूप की शराब में डुबो कर, अपने विश्वासो मे छल कर उस को भुला पाया था। उसे जीत पाया था। लेकिन गेसू ने और गेसू की

वातो ने जैसे उस के मन में मूच्छित पडी हुई अभिशाप की छाया मे फिर प्राण-प्रतिष्ठा कर दी थी और आधी रात के सन्नाटो में फिर चन्दर को सुनाई देता था कि उस के मन में कोई काली छाया वार-वार सिसकने लगती है और चन्दर के हृदय से टकरा कर वह रोदन वार-वार कहता था—'देवता ! तुम ने मेरी हत्या कर डाली ! मेरी हत्या जिसे तुम ने स्वर्ग और ईश्वर से वढ कर माना था " और चन्दर इन आवाजो से घवरा उठता था ।

विस्मरण की एक तरग जहाँ चन्दर को पम्मी के पास खीच लायी थी, वहाँ अतीत के स्मरण की दूसरी तरग उसे अपने वेग मे उलझा कर जैसे फिर उसे दूर खीच ले जाने के लिए व्याकुल हो उठी । उस को लगा कि पम्मी के लिए उस के मन में जो एक मादक नशा था, उस पर ग्लानि का कोहरा छाता जा रहा है और अभी तक उस ने जो कुछ किया था उस के लिए उसी के मन में कही-न-कही पर हलकी-सी अरुचि झलकने लगी थी । लेकिन फिर भी पम्मी का जादू वदस्तूर क़ायम था । वह पम्मी के प्रति कृतज्ञ था और वह पम्मी को कही, किसी भी हालत में दु खी नही करना चाहता था । भले वह गुनाह कर के अपनी कृतज्ञता जाहिर क्यो न कर पाये, लेकिन जैसे विनती के मन में चन्दर के प्रति जो श्रद्धा थी, वह नैतिकता-अनैतिकता के वन्धन से ऊपर उठ कर थी, लगता था, वैसे ही चन्दर के मन में पम्मी के प्रति कृतज्ञता पुण्य और पाप के वन्धन से ऊपर उठ कर थी । विनती ने एक दिन चन्दर से कहा था कि यदि वह चन्दर को असन्तुष्ट करती है, तो वह उसे इतना वडा गुनाह लगता है कि उस के सामने उसे किसी भी पाप-पुण्य की परवाह नही है । उसी तरह चन्दर सोचता था कि सम्भव है कि उस का और पम्मी का यह सम्वन्ध पापमय हो, लेकिन इस सम्वन्ध को तोड कर पम्मी को असन्तुष्ट और दु खी करना इतना वडा पाप होगा कि जो अक्षम्य है ।

लेकिन वह नशा टूट चुका था, वह साँस धीमी पड गयी थी अपनी

हर कोशिश के बावजूद वह पम्मी को उदास होने से बचा न पाता था।

एक दिन सुबह जब वह कालेज जा रहा था कि पम्मी की कार आयी। पम्मी बहुत ही उदास थी। चन्दर ने आते ही उस का स्वागत किया। उस के कानों में एक नीले पत्थर का बुन्दा था, जिस की हल्की छाँह गालों पर पड रही थी। चन्दर ने झुक कर वह नीली छाँह चूम ली।

पम्मी कुछ नही बोली। वह बैठ गयी और फिर चन्दर से बोली—"मैं लखनऊ जा रही हूँ कपूर।"

"कब, आज?"

"हाँ, अभी कार से।"

"क्यो?"

"यो ही, मन ऊब गया। पता नही, कौन-सी छाँह मुझ पर छा गयी है। मैं शायद लखनऊ से मन्सूरी चली जाऊँ।"

"मैं तुम्हे जाने नही दूँगा, पहले तो तुम ने बताया ही नही।"

"तुम्ही ने कहाँ पहले बताया था।"

"क्या?"

"कुछ भी नही। अच्छा चल रही हूँ।"

"सुनो तो।"

"नही, अब रोक नही सकते, तुम ......बहुत दूर जाना है। चन्दर ..." और वह चल दी। फिर वह लौटी और जैसे युगों-युगो की प्यास बुझा रही हो, चन्दर के गले मे झूल गयी और कस लिया चन्दर को ... पाँच मिनिट बाद वह सहसा अलग हो गयी और फिर बिना कुछ बोले अपनी कार पर बैठ गयी। "पम्मी, पम्मी ... तुम्हे हुआ क्या यह?"

"कुछ नही कपूर", पम्मी कार स्टार्ट करते हुए बोली—"मैं तुम से जितनी ही दूर रहूँ उतना ही अच्छा है, मेरे लिए भी, तुम्हारे लिए

भी। "तुम्हारे इन दिनो के व्यवहार ने मुझे बहुत कुछ सिखा दिया है।"

चन्दर सिर से पैर तक ग्लानि से कुण्ठित हो उठा। सचमुच वह कितना अभागा है। वह किसी को भी सन्तुष्ट नही रख पाया। उस के जीवन में सुधा भी आयी और पम्मी भी, एक को उस के पुण्य ने उस से छीन लिया, दूसरे को उस का गुनाह उस से छीने लिये जा रहा है। जाने उस के ग्रहो का मालिक कितना क्रूर खिलाडी है कि हर कदम पर उस की राह उलट देता है। नही, वह पम्मी को नही खो सकता—उस ने पम्मी का कालर पकड लिया, "पम्मी, तुम्हें हमारी कसम है—बुरा मत मानो! मैं तुम्हें जाने नही दूँगा।"

पम्मी हँसी—बडी ही करुण लेकिन सशक्त हँसी। अपने कालर को धीमे से छुडा कर चन्दर की अँगुलियो को कपोलो से दबा दिया और फिर वक्ष के पास से एक लिफ़ाफ़ा निकाल कर चन्दर के हाथो में दे दिया और कार स्टार्ट कर दी पीछे मुड कर नही देखा •नही देखा।

कार एक कडुए धुएँ का बादल चन्दर की ओर उडा कर आगे चल दी।

जब कार ओझल हो गयी, तब चन्दर को होश आया कि उस के हाथ में एक लिफाफा भी है। उस ने सोचा, फ़ौरन कार ले कर जाये और पम्मी को रोक दे। फिर सोचा पहले पढ तो ले, यह है क्या चीज़? उस ने लिफाफा खोला और पढने लगा—

"कपूर, एक दिन तुम्हारी आवाज़ और बर्टी की चीख सुन कर अपूर्ण वेश में ही अपने शृंगार-गृह से भाग आयी थी और तुम्हें फूलों के बीच में पाया था, आज तुम्हारी आवाज़ मेरे लिए मूक हो गयी है और असन्तोष और उदासी के कांटो के बीच मे तुम्हें छोड कर जा रही हूँ।

जा रही हूँ, इस लिए कि अब तुम्हें मेरी जरूरत नही रही! झूठ क्यों बोलूँ, अब क्या, कभी भी तुम्हें मेरी जरूरत नही रही थी, लेकिन मैं ने हमेशा तुम्हारा दुरुपयोग किया। झूठ क्यों बोलें, तुम मेरे पति से भी

अधिक समीप रहे हो। तुम से कुछ छिपाऊँगी नही। मैं तुम से मिली थी, जब मैं एकाकी थी, उदास थी, लगता था कि उस समय तुम मेरी सुनसान की दुनिया मे रोशनी के देवदूत की तरह आये थे। तुम उस समय बहुत भोले, बहुत सुकुमार, बहुत ही पवित्र थे। मेरे मन में उस दिन तुम्हारे लिए जाने कितना प्यार उमड आया। मैं पागल हो उठी। मैं ने तुम्हें उस दिन सेलामी की कहानी सुनायी थी, सिनेमाघर में, उसी अभागिन सेलामी की तरह मैं भी पैग़म्बर को चूमने के लिए व्याकुल हो उठी।

देखा, तुम पवित्रता को प्यार करते हो। सोचा, यदि तुम से प्यार ही जीतना है, तो तुम से पवित्रता की ही बातें करूँ। मैं जानती थी कि सेक्स प्यार का आवश्यक अग है। लेकिन मन मे तीखी प्यास ले कर भी मैं ने तुम से सेक्स-विरोधी बाते करनी शुरू की। मुँह पर पवित्रता और अन्तर में भोग का सिद्धान्त रखते हुए भी मेरा अग-अग प्यासा हो उठा था…तुम्हें होठो तक खीच लायी थी, लेकिन फिर साहस नही हुआ।

फिर मैं ने उस छोकडी को देखा, उस नितान्त प्रतिभाहीन दुर्बलमना छोकडी मिस सुधा को। वह कुछ भी नही थी, लेकिन मैं देखते ही जान गयी थी कि वह तुम्हारे भाग्य का नक्षत्र है, जाने क्यो उसे देखते ही मैं अपना आत्मविश्वास खो-सा बैठी। उस के व्यक्तित्व में, कुछ भी न होते हुए भी कम से कम एक अजब सा जादू था, यह मैं भी स्वीकार करती हूँ, लेकिन थी वह छोकडी ही।

तुम्हें न पाने की निराशा, और तुम्हे न पाने की असीम प्यास, दोनो के पीस डालने वाले सघर्ष से भाग कर, मैं हिमालय में चली आयी। जितना तीखा आकर्षण होता है कपूर, कभी-कभी नारी उतनी ही दूर भागती है। अगर कोई प्याला मुँह से न लगा कर दूर फेंक दे, तो समझ लो कि वह बेहद प्यासा है, इतना प्यासा कि तृप्ति की कल्पना से भी घबराता है। दिन रात उन पहाडो की धवल चोटियो मे तुम्हारी निगाहें मुसकराती थी, पर मैं लौटने का साहस न करती थी।

लौटी तो देखा कि तुम अकेले हो, निराश हो। और थोडा-थोडा उलझे हुए भी हो। पहले मैं ने तुम पर पवित्रता की आड में विजय पानी चाही थी, अब तुम पर वासना का सहारा ले कर छा गयी। तुम मुझे बुरा समझ सकते हो, लेकिन काश कि तुम मेरी प्यास को समझ पाते कपूर! तुम ने मुझे स्वीकार किया। वैसे नही जैसे कोई फूल शब-नम को स्वीकार करे। तुम ने मुझे उस तरह स्वीकार किया जैसे कोई बीमार आदमी मार्फ़िया (अफ़ीम) के इन्जेक्शन को स्वीकार करे। तुम्हारी प्यासी और बीमार प्रवृत्तियाँ बदली नही, सिर्फ बेहोश हो कर सो गयी।

लेकिन कपूर, पता नही किस के स्पर्श से वे एकाएक बिखर गयी। मैं जानती हूँ, इधर तुम मे क्या परिवर्तन आ गया है। मैं तुम्हें उस के लिए अपराधी नही ठहराती कपूर। मैं जानती हूँ तुम मेरे प्रति अब भी कितने कृतज्ञ हो। कितने स्नेहशील हो लेकिन अब तुम में वह प्यास नही, वह नशा नही। तुम्हारे मन की वासना अब मेरे लिए एक तरस में बद-लती जा रही है।

मुझे वह दिन याद है, अच्छी तरह याद है, चन्दर, जब तुम्हारे जलते हुए होठो ने इतनी गहरी वासना से मेरे होठो को समेट लिया था कि मेरे लिए अपना व्यक्तित्व ही एक सपना बन गया था। लगता था, सभी सितारो का तेज भी इस की एक चिनगारी के सामने फीका है! लेकिन आज होठ, होठ हैं, आग के फूल नही रहे—पहले मेरी एक झलक से तुम्हारे रोम-रोम में सैकडा इच्छाओ की आँधियाँ गरज उठती थी·· आज तुम्हारी नसो का खून ठण्डा है। तुम्हारी निगाहें पथरायी हुई हैं और तुम इस तरह वासना मेरी ओर फेंक देते हो, जैसे तुम किसी पालतू बिल्ली को पावरोटी का टुकडा दे रहे हो।

मैं जानती हूँ कि हम दोनो के सम्बन्धो की उष्णता खत्म हो गयी है। अब तुम्हारे मन मे महज एक तरस है, एक कृतज्ञता है, और कपूर,

वह मैं स्वीकार नही कर सकूँगी। क्षमा करना, मेरा भी स्वाभिमान है।

लेकिन मैं ने कह दिया कि मैं तुम से छिपाऊँगी नही। तुम इस भ्रम मे कभी मत रहना कि मैं ने तुम्हें प्यार किया था। पहले मैं भी यही सोचती थी। कल मुझे लगा कि मैं ने अपने को आज तक धोखा दिया था। मैं ने इधर तुम्हारी खिन्नता के बाद अपने जीवन पर बहुत सोचा, तो मुझे लगा कि प्यार-जैसी स्थायी और गहरी भावना शायद मेरे-जैसे रंगीन बहिर्मुख स्वभाव वाली के लिए है ही नही। प्यार-जैसी गम्भीर और खतरनाक तूफानी भावना को अपने कन्धो पर ढोने का खतरा देवता या बुद्धिहीन ही उठा सकते हैं—तुम उसे वहन कर सकते हो। (कर रहे हो प्यार की प्रतिक्रिया भी प्यार की ही परिचायक है कपूर), मेरे लिए आँसुओ की लहरो में डूब जाना सम्भव नही। या तो प्यार आदमी को बादलो की ऊँचाई तक उठा ले जाता है, या स्वर्ग से पाताल में फेंक देता है। लेकिन कुछ प्राणी हैं, जो न स्वर्ग के हैं न नरक के, वे दोनो लोको के बीच मे अन्धकार की परतो में भटकते रहते हैं। वे किसी को प्यार नही करते, छायाओ को पकडने का प्रयास करते हैं, या शायद प्यार करते हैं या निरन्तर नयी अनुभूतियो के पीछे दीवाने रहते हैं और प्यार बिलकुल करते ही नही। उन को न दुःख होता है न सुख, उन की दुनिया मे केवल सशय, अस्थिरता और प्यास होती है कपूर, मैं उसी अभागे लोक की एक प्यासी आत्मा थी। अपने एकान्त से घबरा कर तुम्हे अपने बाहुपाश मे बाँध कर तुम्हारे विश्वास के स्वर्ग से खींच लायी थी। तुम स्वर्ग-भ्रष्ट देवता, भूल कर मेरे अभिशप्त लोक में आ गये थे।

आज मालूम होता है फिर तुम्हारे विश्वास ने तुम्हें पुकारा है। मैं अपनी प्यास में खुद धधक उठूँ, लेकिन तुम्हें मैं ने अपना मित्र माना था। तुम पर मैं आँच नही आने देना चाहती। तुम मेरे योग्य नही, तुम अपने विश्वासो के लोक मे लौट जाओ।

मैं जानती हूँ तुम मेरे लिए चिन्तित हो। लेकिन मैं ने अपना रास्ता निश्चित कर लिया है। स्त्री बिना पुरुष के आश्रय के नही रह सकती। उस अभागी को जैसे प्रकृति ने कोई अभिशाप दे दिया है। मै थक गयी हूँ इस प्रेतलोक की भटकन से। मैं अपने पति के पास जा रही हूँ। वे क्षमा कर देंगे, मुझे विश्वास है।

उन्ही के पास क्यो जा रही हूँ ? इसलिए, मेरे मित्र, कि मैं अब सोच रही हूँ कि स्त्री स्वाधीन नही रह सकती। उस के पास पत्नीत्व के सिवा कोई चारा नही। जहाँ वह जरा स्वाधीन हुई कि वह उसी अन्धकूप में जा पडती है जहाँ मै थी। वह अपना शरीर भी खो कर तृप्ति नही पाती। फिर प्यार से तो मेरा विश्वास जैसे उठता जा रहा है, प्यार स्थायी नही होता। पत्नीत्व स्थायी होता है। मैं ईसाई हूँ, पर सभी अनुभवो के बाद मुझे पता लगता है कि हिन्दुओ के यहाँ प्रेम नही वरन् धर्म और सामाजिक परिस्थितियो के आधार पर विवाह की रीति बहुत वैज्ञानिक और नारी के लिए सब से ज्यादा लाभदायक है। उस में नारी को थोडा बन्धन चाहे क्यो न हो लेकिन स्थायित्व रहता है, सन्तोष रहता है, वह अपने घर की रानी रहती है। काश कि तुम समझ पाते कि खुले आकाश में इधर-उधर भटकने के बाद तूफ़ानो से लडने के बाद मैं कितनी आतुर हो उठी हूँ बन्धनो के लिए, और किसी सशक्त डाल पर बने हुए सुखद, सुकोमल नीड मे बसेरा लेने के लिए। जिस नीड को मैं इतने दिनो पहले उजाड चुकी थी, आज वह फिर मुझे पुकार रहा है। हर नारी के जीवन मे यह क्षण आता है और शायद इसीलिए हिन्दू प्रेम के बजाय विवाह को अधिक महत्त्व देते है।

मैं तुम्हारे पास नही रुकी। मैं जानती थी कि हम दोनो के सम्बन्धो मे प्रारम्भ से इतनी विचित्रताएँ थी कि हम दोनो का सम्बन्ध स्थायी नही रह सकता था, फिर भी जिन क्षणो में हम दोनो एक ही तूफान में फँस गये थे, वे क्षण मेरे लिए अमूल्य निधि रहेंगे। तुम बुरा न मानना।

मैं तुम से ज़रा भी नाराज नहीं हूँ। मैं न अपने को गुनहगार मानती हूँ, न तुम्हें, फिर भी अगर तुम मेरी सलाह मान सको तो मान लेना। किसी अच्छी-सी सीधी-सादी हिन्दू लड़की से अपना विवाह कर लेना। किसी बहुत बौद्धिक लड़की से जो तुम्हें प्यार करने का दम रखती हो उस के फन्दे मे न फँसना। कपूर, मैं उम्र और अनुभव दोनों से तुम से बड़ी हूँ। विवाह में भावना या आकर्षण अकसर ज़हर बिखेर देता है। ब्याह करने के बाद एक-आध महीने के लिए अपनी पत्नी सहित मेरे पास जरूर आना कपूर। मैं उसे देख कर वह सन्तोष देख लूँगी, जो हमारी सभ्यता ने हम अभागो से छीन लिया है।

अभी मैं साल-भर तक तुम से नहीं मिलूँगी। मुझे तुम से अब भी डर लगता है। लेकिन इस बीच मे तुम बर्टी का खयाल रखना। कभी-कभी उसे देख लेना। रुपये की कमी तो उसे न होगी। बीबी भी उसे ऐसी मिल गयी है, जिस ने उसे ठीक कर दिया है उस अभागे भाई से अलग होते हुए मुझे कैसा लग रहा है, यह तुम जानते अगर तुम बहन होते।

अगला पत्र तुम्हें तभी लिखूँगी जब मेरे पति से मेरा समझौता हो जायेगा " नाराज तो नहीं हो ?

—पमिला डिक्रूज़"

चन्दर पम्मी को लौटाने नहीं गया। कालेज भी नहीं गया। एक लम्बा-सा खत बिनती को लिखता रहा और इस की प्रतिलिपि कर दोनों नत्थी कर भेज दिये और उस के बाद थक कर सो गया बिना खाना खाये।

३

गरमियो की छुट्टियाँ हो गयी थी और चन्दर छुट्टियाँ विताने दिल्ली गया था। सुधा भी आयी हुई थी। लेकिन चन्दर और सुधा में बोलचाल नही थी। एक दिन शाम के वक्त डॉक्टर साहब ने चन्दर से कहा—"चन्दर, सुधा इधर वहुत अनमनी रहती है, जाओ इसे कही घुमा लाओ।" चन्दर वडी मुश्किल से राजी हुआ। दोनो पहले कनाट प्लेस पहुँचे। सुधा ने वहुत फीकी और टूटती हुई आवाज मे कहा—"यहाँ वहुत भीड है, मेरी तवीयत घवडाती है।" चन्दर ने कार घुमा दी शहर से वाहर 'रोहतक की सडक पर दिल्ली से पन्द्रह मील दूर। चन्दर ने एक वहुत हरी-भरी जगह में कार रोक दी। किसी वहुत पुराने पीर का टूटा-फूटा मजार था और क़ब्र के चवूतरे को फोड कर एक नीम का पेड उग आया था। चवूतरे के दो-तीन पत्थर गिर गये थे। चार-पांच नीम के पेड लगे थे और क़ब्र के पत्थर के पास एक चिराग़ वुझा हुआ पडा था और कई एक सूखी हुई फूल-मालाएँ हवा से उड कर नीचे गिर गयी थी। कब्र के आस-पास ढेरो नीम के तिनके और सूखे हुए नीम के फूल जमा थे।

सुधा जा कर चवूतरे पर वैठ गयी। दूर-दूर तक सन्नाटा था। न आदमी न आदमजाद। सिर्फ गोधूलि के अलसाते हुए झोको में नीम चरमरा उठते थे। चन्दर आ कर सुधा की दूसरी ओर वैठ गया। चवूतरे पर इस ओर सुधा और उस ओर चन्दर, वीच में चिर-नीरव क़ब्र

सुधा थोडी देर वाद मुडी और चन्दर की ओर देखा। चन्दर एकटक क़ब्र की ओर देख रहा था। सुधा ने एक सूखा हार उठाया और चन्दर पर फेंक कर कहा "चन्दर, क्या हमेशा मुझे इसी भयानक नरक में

रखोगे ? क्या सचमुच हमेशा के लिए तुम्हारा प्यार खो दिया मैं ने ?"

"मेरा प्यार ?" चन्दर हँसा, उस की हँसी उस सन्नाटे से भी ज्यादा भयकर थी · "मेरा प्यार ! अच्छी याद दिलायी तुम ने ! मै आज प्यार मे विश्वास नही करता ! या यह कहूँ कि प्यार के उस रूप मे विश्वास नही करता !"

"फिर ?"

"फिर क्यो, उस समय मेरे मन मे प्यार का मतलब था त्याग, कल्पना, आदर्श। आज मैं समझ चुका हूँ कि यह सब झूठी बाते हैं, खोखले सपने हैं !"

"तब ?"

"तब ? आज मैं विश्वास करता हूँ कि प्यार के माने सिर्फ एक है, शरीर का सम्बन्ध ! कम से कम औरत के लिए। औरत बडी बातें करेगी, आत्मा, पुनर्जन्म, परलोक का मिलन, लेकिन उस की सिद्धि सिर्फ शरीर में है और वह अपने प्यार की मंजिले पार कर पुरुष को अन्त में एक ही चीज़ देती है—अपना शरीर। मैं तो अब यह विश्वास करता हू सुधा कि वही औरत मुझे प्यार करती है जो मुझे शरीर दे सकती है। बस इस के अलावा प्यार का कोई रूप अब मेरे भाग्य मे नही।" चन्दर की आंख मे कुछ धधक रहा था सुधा उठी, और चन्दर के पास खडी हो गयी—"चन्दर, तुम भी एक दिन ऐसे हो जाओगे इस की मुझे कभी उम्मीद नही थी। काश कि तुम समझ पाते कि · " सुधा ने बहुत दर्द-भरे स्वर में कहा।

"स्नेह है !" चन्दर ठठाकर हँस पडा—और उस ने सुधा की ओर मुड कर कहा—"और अगर मैं उस स्नेह का प्रमाण मांगूँ तो ? सुधा !" दांत पीस कर चन्दर बोला—"अगर तुम से तुम्हारा शरीर मांगू तो ?"

"चन्दर !" सुधा चीख कर पीछे हट गयी। चन्दर उठा और पागलो की तरह उस ने सुधा को पकड लिया—"यहाँ कोई नही है सिवा इस

कब्र के। तुम क्या कर सकती हो सुधा ? बहुत दिन से मन मे एक आग सुलग रही है। आज तुम्हें बरबाद कर दूँ तो मन की नारकीय वेदना बुझ जाये। बोलो।" उस ने अपनी आंख की पिघली हुई आग सुधा की आखो में भर कर कहा।

सुधा क्षण-भर सहमी पथरायी हुई दृष्टि से चन्दर की ओर देखती रही फिर सहसा शिथिल पड गयी और बोली—"चन्दर, मैं किसी की पत्नी हूँ। यह जन्म उन का है। यह मांग का सिन्दूर उन का है। इस शरीर का शृंगार उन का है। मुझे गला घोट कर मार डालो। मैं ने तुम्हें बहुत तकलीफ़ दी है। लेकिन—"

"लेकिन—" चन्दर हँसा और सुधा को छोड दिया—"मैं तुम्हें स्नेह करती हूँ, लेकिन यह जन्म उन का है। यह शरीर उन का है—ह। ह। क्या-क्या अन्दाज हैं प्रवचना के। जाओ सुधा—मैं तुम से मज़ाक़ कर रहा था। तुम्हारे इस जूठे तन में रखा ही क्या है ?"

सुधा अलग हट कर खडी हो गयी। उस की आंख से चिनगारियां झरने लगी, "चन्दर, तुम जानवर हो गये हो, मैं आज कितनी शरमिन्दा हूँ। इस मे मेरा क़सूर है चन्दर। मैं अपने को दण्ड दूँगी चन्दर! मैं मर जाऊँगी। लेकिन तुम्हें इनसान बनना पडेगा चन्दर!" और सुधा ने अपना सिर एक टूटे हुए खम्भे पर पटक दिया।

चन्दर की आंख खुल गयी, वह थोडी देर तक सपने पर सोचता रहा। फिर उठा बहुत अजब-सा मन था उस का। बहुत पराजित, बहुत खोया हुआ-सा, बेहद खिसियाहट से भरा हुआ था। उस के मन में एकाएक खयाल आया कि वह किसी मनोरंजन में जा कर अपने को डुबो दे—बहुत दिनो से उस ने सिनेमा नही देखा था। उन दिनो बर्नार्ड शॉ का 'सीजर एण्ड क्लियो-पैट्रा' लगा हुआ था। उस ने सोचा कि पम्मी की मित्रता का परिपाक सिनेमा में हुआ था, उस का अन्त भी वह सिनेमा

देख कर मनायेगा। उस ने कपडे पहने, चार वजे से मैटिनी था, और वक्त हो रहा था। कपडे पहन कर वह शीशे के सामने आ कर बाल सँवारने लगा। उसे लगा शीशे में पडती हुई उस की छाया उस से कुछ भिन्न है, उस ने और गौर से देखा—छाया रहस्यमय ढग मे मुसकरा रही है, वह सहसा बोली—

"क्या देख रहे हो ? मुखडा क्या देखे दरपन मे। एक लडकी से पराजित और दूसरी से सपने में प्रतिहिंसा लेने का कलक नही दीख पडता तुझे ? अपनी छवि निरख रहा है ? पापी ! पतित !"

कमरे की दीवारो ने दोहराया—पापी ! पतित !

दीवारो की तसवीरो ने दोहराया—पापी ! पतित !

चन्दर तडप उठा, पागल-सा हो उठा। कघा फेंक कर बोला—"कौन है पापी ? मैं हूँ पापी ! मैं हूँ पतित ? गलत ! मुझे तुम नही समझते। मैं चिर पवित्र हूँ। मुझे कोई नही जानता।"

"कोई नही जानता ! हा, हा !" प्रतिबिम्ब हँसा—"मैं तुम्हारी नस-नस जानता हूँ। तुम वही हो न जिस ने आज से डेढ साल पहले सपना देखा सुधा के हाथ मे ले कर अमृत बाँटने का, दुनिया को नया सन्देश दे कर पैगम्बर बनने का, नया सन्देश ! खूब नया सन्देश दिया मसीहा ! पम्मी बिनती सुधा कुछ और छोकडियाँ बटोर ले। चरित्रहीन !"

"मैं ने किसी को नही बटोरा। जो मेरी जिन्दगी मे आया अपने-आप आया, जो चला गया उसे मैं ने रोका नही। मेरे मन में कही भी अहम् की प्यास नही थी, कही भी स्वार्थ नही था। क्या मैं चाहता तो सुधा को अपने एक इशारे मे अपनी बाँहो मे नही बाँध सकता था !"

शाबाश ! और नही बाँध पाये तो सुधा से भी जी भर कर बदला निकाल रहा है। वह मर रही है और तू उस पर नमक छिडकने मे बाज नही आया। और आज तो उसे एकान्त में भ्रष्ट करने का सपना देखा। अपनी पलकों को देवमन्दिर की तरह पवित्र बना लिया तू ने। कितनी

उन्नति की है तेरी आत्मा ने ! इधर आ, तेरा हाथ चूम लूँ ।"

"चुप रहो ! पराजय की इस वेला मे कोई भी व्यग्य करने से बाज नही आता ! मैं पागल हो जाऊँगा ।"

'और अभी क्या पागलो से कम है तू ? अहकारी पशु ! तू वर्टी से भी गया-गुजरा है। वर्टी पागल था, लेकिन पागल कुत्तो की तरह काटना नही जानता था। तू काटना भी जानता है और अपने भयानक पागलपन को साधना और त्याग भी साबित करता रहता है। दम्भी !"

"बस करो, अब तुम सीमा लांघ रहे हो। चन्दर ने मुट्ठियाँ कस कर जवाब दिया।

"क्यो गुस्सा हो गये मेरे दोस्त ! अहवादी इतने बडे हो और अपनी तसवीर देख कर नाराज होते हो। आओ तुम्हें आहिस्ते से समझाऊँ, अभागे ! तू कहता है तूने स्वार्थ नही किया। विकलाग देवता ! वही स्वार्थी है जो अपने से ऊपर नही उठ पाता ! तेरे लिए अपनी एक साँस भी दूसरे के मन के तूफान से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण रही है। तू ने अपने मन की उपेक्षा के पीछे सुधा को भट्ठी में झोक दिया। पम्मी के अस्वस्थ मन को पहचान कर भी उस के रूप का उपयोग करने में नही हिचका, विनती को प्यार न करते हुए भी विनती को तू ने स्वीकार किया, फिर सबो का तिरस्कार करता गया और कहता है तू स्वार्थी नही। वर्टी पागल हो लेकिन स्वार्थी नही है।"

"ठहरो, गालियाँ मत दो, मुझे समझाओ न कि मेरे जीवन-दर्शन में कहाँ पर ग़लती रही है। गालियो से मेरा कोई समझौता नही है।"

"अच्छा, समझो ! देखो, मैं यह नही कहता कि तुम ईमानदार नही हो, तुम शक्तिशाली नही हो। लेकिन तुम अन्तर्मुखी रहे, घोर व्यक्तिवादी रहे, अहंकारग्रस्त रहे। अपने मन की विकृतियो को भी तुम ने अपनी ताक़त समझने की कोशिश की। कोई भी जीवन-दर्शन सफल नही होता अगर उस मे वाह्य यथार्थ और व्यापक-सत्य धूप-छाँह की तरह न मिला

हो। मैं मानता हूँ कि तू ने सुधा के साथ ऊँचाई निभायी, लेकिन अगर तेरे व्यक्तित्व को, तेरे मन को जरा-सी ठेस पहुँचती तो तू गुमराह हो गया होता। तू ने सुधा के स्नेह का निषेध कर दिया। तू ने बिनती की श्रद्धा का तिरस्कार किया। तू ने पम्मी को पवित्रता भ्रष्ट की और इसे अपनी साधना समझता है? तू याद कर, कहाँ था तू एक वर्ष पहले और अब कहाँ है?"

चन्दर ने बड़ी कातरता से प्रतिबिम्ब की ओर देखा और बोला—"मैं जानता हूँ मैं गुमराह हूँ। लेकिन मैं बेईमान नहीं! तुम मुझे क्यों धिक्कार रहे हो! तुम्हीं कोई रास्ता बता दो न! एक बार उसे भी आजमा लूँ।"

"रास्ता बताऊँ! जो रास्ता तुम ने एक बार बनाया था, उसी पर तुम मजबूत रह पाये? फिर क्या एक के बाद दूसरे रास्ते पर चहल-कदमी करना चाहते हो? देखो कपूर, ध्यान से सुनो। तुम से शायद किसी ने कभी कहा था, शायद बर्टी ने कहा था कि आदमी तभी तक बड़ा रहता है जब तक वह निषेध करता चलता है। पता नहीं किस मानसिक आवेश में वह एक के बाद दूसरे तत्त्व का विध्वंस और विनाश करता चलता है। हर चट्टान को उखाड़ कर फेंकता रहता है और तुम ने यही जीवन-दर्शन अपना लिया था, भूल से या अपने अनजाने में ही। तुम्हारी आत्मा में एक शक्ति थी, एक तूफान था। लेकिन वह लक्ष्यभ्रष्ट था। तुम्हारी जिन्दगी में लहरें उठने लगीं लेकिन गहराई नहीं। और याद रखो चन्दर, सत्य उसे मिलता है जिस की आत्मा शान्त और गहरी होती है। समुद्र के अन्तराल की तरह, समुद्र की ऊपरी सतह की तरह जो विक्षुब्ध और तूफानी होता है, उस के अन्तर्द्वन्द्व में चाहे कितनी गरज हो लेकिन सत्य की शान्त अमृतमयी आवाज़ नहीं होती।"

"लेकिन वह गहराई मुझे मिली नहीं?"

"बताता हूँ—घबराते क्यों हो। देखो, तुम में बहुत बड़ा धैर्य रहा

है। शक्ति रही, पर धैर्य और दृढता बिलकुल नही। तुम गम्भीर समुद्र-तल न बन कर एक सशक्त लेकिन अशान्त लहर बन गये जो हर किनारे से टकरा कर उसे तोडने के लिए व्यग्र हो उठी। तुम मे ठहराव नही था। साधना नही थी ! जानते हो क्यो ? तुम्हें जहाँ से ज़रा भी तकलीफ मिली, अवरोध मिला, वही से तुम ने अपना हाथ खीच लिया। वही तुम भाग खडे हुए। तुम ने हमेशा उस का निषेध किया—पहले तुम ने समाज का निषेध किया, व्यक्ति को साधना का केन्द्र बनाया, फिर व्यक्ति का भी निषेध किया। अपने विचारों में अन्तर्मुखी भावनाओ में डूब गये, कर्म का निषेध किया। फिर तो कर्म से ऐसी भाग-दौड, ऐसी विमुखता शुरू हुई कि बस ! न मानवता का प्यार जीवन में प्रतिफलित कर सका, न सुधा का। पम्मो हो या विनती, हरेक से तू एक निष्क्रिय खिलौने की तरह खेलता गया। काश कि तू ने समाज के लिए कुछ किया होता। सुधा के लिए कुछ किया होता लेकिन तू कुछ न कर पाया। जिस ने तुझे जिधर चाहा उधर उत्प्रेरित कर दिया और तू अन्धे और इच्छाविहीन परतन्त्र अन्धड की तरह उधर ही हू-हू करता हुआ दौड गया। माना मैंने कि समाज के आधार पर बने जीवन-दर्शन में कुछ कमियाँ हैं, लेकिन अगर तू उसे स्वीकार कर कुछ काम करता, माना कि सुधा के प्यार से तुझे तकलीफ हुई पर उस की महत्ता के ही आधार पर तू कुछ निर्माण कर ले जाता। लेकिन तू तो जरा-से अवरोध के बहाने सम्पूर्ण का निषेध करता गया। तेरा जीवन निषेधो की निष्क्रियता की मानसिक प्रतिक्रियाओ की शृंखला रहा है। अभागे, तू ने हमेशा जिन्दगी का निषेध किया है। दुनिया को स्वीकार करता, यथार्थ को स्वीकार करता, जिन्दगी को स्वीकार करता और उस के आधार पर अपने मन को, अपने मन के प्यार को, अपने जीवन को सन्तुलित करता, आगे बढता, लेकिन तू ने अपने मन की गंगा को व्यक्ति की छोटी-सी सीमा में बाँध लिया, उसे एक पोखरा बना दिया, पानी सड गया, उस में गन्ध आने लगी, सुधा के प्यार

हो । मैं मानता हूँ कि तू ने सुधा के साथ ऊँचाई निभायी, लेकिन अगर तेरे व्यक्तित्व को, तेरे मन को ज़रा-सी ठेस पहुँचती तो तू गुमराह हो गया होता। तू ने सुधा के स्नेह का निषेध कर दिया। तू ने बिनती की श्रद्धा का तिरस्कार किया। तू ने पम्मी की पवित्रता भ्रष्ट की' और इसे अपनी साधना समझता है? तू याद कर, कहाँ था तू एक वर्ष पहले और अब कहाँ है?"

चन्दर ने बड़ी कातरता से प्रतिबिम्ब की ओर देखा और बोला—"मैं जानता हूँ मैं गुमराह हूँ। लेकिन मैं बेईमान नहीं! तुम मुझे क्यों धिक्कार रहे हो! तुम्हीं कोई रास्ता बता दो न! एक बार उसे भी आज़मा लूँ।"

"रास्ता बताऊँ! जो रास्ता तुम ने एक बार बनाया था, उसी पर तुम मज़बूत रह पाये? फिर क्या एक के बाद दूसरे रास्ते पर चहल-क़दमी करना चाहते हो? देखो कपूर, ध्यान से सुनो। तुम से शायद किसी ने कभी कहा था, शायद बर्टी ने कहा था कि आदमी तभी तक बड़ा रहता है जब तक वह निषेध करता चलता है। पता नहीं किस मानसिक आवेश में वह एक के बाद दूसरे तत्त्व का विध्वंस और विनाश करता चलता है। हर चट्टान को उखाड़ कर फेंकता रहता है और तुम ने यही जीवन-दर्शन अपना लिया था, भूल से या अपने अनजाने में ही। तुम्हारी आत्मा में एक शक्ति थी, एक तूफ़ान था। लेकिन वह लक्ष्यभ्रष्ट था। तुम्हारी ज़िन्दगी में लहरें उठने लगी लेकिन गहराई नहीं। और याद रखो चन्दर, सत्य उसे मिलता है जिस की आत्मा शान्त और गहरी होती है। समुद्र के अन्तराल की तरह, समुद्र की ऊपरी सतह की तरह जो विक्षुब्ध और तूफ़ानी होता है, उस के अन्तर्द्वन्द्व में चाहे कितनी गरज हो लेकिन सत्य की शान्त अमृतमयी आवाज़ नहीं होती।"

"लेकिन वह गहराई मुझे मिली नहीं?"

"बताता हूँ—घबराते क्यों हो। देखो, तुम में बहुत बड़ा अधैर्य रहा

है। शक्ति रही, पर धैर्य और दृढता विलकुल नही। तुम गम्भीर समुद्र-तल न वन कर एक सशक्त लेकिन अशान्त लहर बन गये जो हर किनारे से टकरा कर उसे तोडने के लिए व्यग्र हो उठी। तुम मे ठहराव नही था। साधना नही थी! जानते हो क्यो? तुम्हें जहाँ से ज़रा भी तकलीफ मिली, अवरोध मिला, वही से तुम ने अपना हाथ खीच लिया। वही तुम भाग खडे हुए। तुम ने हमेशा उस का निषेध किया—पहले तुम ने समाज का निषेध किया, व्यक्ति को साधना का केन्द्र बनाया, फिर व्यक्ति का भी निषेध किया। अपने विचारो में अन्तर्मुखी भावनाओ में डूब गये, कर्म का निषेध किया। फिर तो कर्म से ऐसी भाग-दौड, ऐसी विमुखता शुरू हुई कि बस! न मानवता का प्यार जीवन में प्रतिफलित कर सका, न सुधा का। पम्मो हो या बिनती, हरेक से तू एक निष्क्रिय खिलौने की तरह खेलता गया। काश कि तू ने समाज के लिए कुछ किया होता। सुधा के लिए कुछ किया होता लेकिन तू कुछ न कर पाया। जिस ने तुझे जिधर चाहा उधर उत्प्रेरित कर दिया और तू अन्धे और इच्छाविहीन परतन्त्र अन्धड की तरह उधर ही हू-हू करता हुआ दौड गया। माना मैंने कि समाज के आधार पर बने जीवन-दर्शन में कुछ कमियाँ हैं, लेकिन अज्ञात ही उसे स्वीकार कर कुछ काम करता, माना कि सुधा के प्यार से तुझे तक्लीफ हुई पर उस की महत्ता के ही आधार पर तू कुछ निर्माण कर ले जाता। लेकिन तू तो ज़रा-से अवरोध के बहाने सम्पूर्ण का निषेध करता गया। तेरा जीवन निषेधो की निष्क्रियता की मानसिक प्रतिक्रियाओ की शृंखला रहा है। अभागे, तू ने हमेशा जिन्दगी का निषेध किया है। दुनिया को स्वीकार करता, यथार्थ को स्वीकार करता, जिन्दगी को स्वीकार करता और उस के आधार पर अपने मन को, अपने मन के प्यार को, अपने जीवन को सन्तुलित करता, आगे बढता, लेकिन तू ने अपने मन की गंगा को व्यक्ति की छोटी-सी सीमा में बाँध लिया, उसे एक पोखरा बना दिया, पानी सड गया, उस में गन्ध आने लगी, सुधा के प्यार

की सीपी जिस में सत्य और सफलता का मोती वन सकता था, वह मर गयी और रुके हुए पानी में विकृति और वासना के कीडे कुलबुलाने लगे। शावाश ! क्या अमृत पाया है तू ने ! धन्य है, अमृत-पुत्र !"

"वस करो ! यह व्यग्य मैं नही सह सकता ! मैं क्या करता !"

"कैसी लाचारी का स्वर है ! छि, असफल पैग़म्बर ! साधना यथार्थ को स्वीकार कर के चलती है, उस का निषेध करके नही। हमारे यहाँ ईश्वर को कहा गया है नेति, नेति, इस का मतलव यह नही कि ईश्वर, परम निषेध-स्वरूप है। गलत, नेति मे 'न' तो केवल एक वर्ण है। 'इति' दो वर्ण है। एक निषेध तो कम से कम दो स्वीकृतियाँ। इसी अनुपात में कल्पना और यथार्थ का समन्वय क्यो नही किया तू ने ?"

"मैं नही समझ पाता यह दर्शन मेरी समझ में नही आता !"

"देखो इस को ऐसे समझो। घवराओ मत ! कैलाश ने अगर नारी के व्यक्तित्व को नही समझा, सुधा की पवित्रता को तिरस्कृत किया, लेकिन उस ने समाज के लिए कुछ तो किया। गेसू ने अपने विवाह का निषेध किया, लेकिन अख्तर के प्रति अपने प्यार का निषेध तो नही किया। अपने व्यक्तित्व का निर्माण किया। अपने चरित्र का निर्माण किया। यानी गेसू, एक लडकी से तुम हार गये, छि !"

"लेकिन मैं कितना थक गया था, यह तो सोचो। मन को कितनी ऊँची-नीची घाटियो से, मौत से भी भयानक रास्तो से गुजरने में और कोई होता तो मर गया होता। मैं जिन्दा तो हूँ !"

"वाह, क्या जिन्दगी है !"

"तो क्या करूँ, यह रास्ता छोड दूँ ? यह व्यक्तित्व तोड डालूँ ?"

"फिर वही निषेध और विध्वस की वाते। छि देखो, चलने को तो गाडी का वैल भी रास्ते पर चलता है ! लेकिन सैकडो मील चलने के वाद भी वह गाडी का वैल ही वना रहता है। क्या तुम गाडी के वैल वनना चाहते हो ? नही कपूर ! आदमी जिन्दगी का सफर तय करता है। राह

की ठोकरें और मुसीबतें उस के व्यक्तित्व को पुख्ता बनाती चलती हैं, उस की आत्मा को परिपक्व बनाती चलती हैं। क्या तुम में परिपक्वता आयी ? नही। मैं जानता हूँ, तुम अब मेरा भी निषेध करना चाहते हो। तुम मेरी आवाज़ को भी चुप करना चाहते हो। आत्म-प्रवचना तो तेरा पेशा हो गया है। कितना खतरनाक है तू अब तू मेरा "भी···· तिरस्कार करना चाहता··· है" और छाया, धीरे-धीरे वह एक बिन्दु बन कर अदृश्य हो गयी।

चन्दर चुपचाप शीशे के सामने खड़ा रहा।

फिर वह सिनेमा नही गया।

चन्दर सहसा बहुत शान्त हो गया। एक ऐसे भोले बच्चे की तरह जिस ने अपराध कम किया, जिस से नुकसान ज्यादा हो गया था, और जिस पर डाँट बहुत पड़ी थी। अपने अपराध की चेतना से वह बोल भी नही पाता था। अपना सारा दु ख अपने ऊपर उतार लेना चाहता था। वहाँ एक ऐसा सन्नाटा था जो न किसी को आने के लिए आमन्त्रित कर सकता था, न किसी को जाने से रोक सकता था। वह एक ऐसा मैदान था जिस पर की सारी पगडण्डियाँ तक मिट गयी हो, एक ऐसी डाल थी जिस पर के सारे फूल झर गये हो, सारे घोसले उजड़ गये हो। मन में उस के असीम कुण्ठा और वेदना थी, ऐसा था कि कोई उस के घाव छू ले तो वह आसुओ में बिखर पड़े। वह चाहता था, वह सब से क्षमा मांग ले, बिनती से, पम्मी से, सुधा से और फिर हमेशा के लिए उन की दुनिया से चला

जाये, कितना दु ख दिया था उस ने सब को ।

इसी मन स्थिति मे एक दिन गेसू ने उसे बुलाया । वह गया । गेसू की अम्मीजान तो सामने आयी पर गेसू ने परदे में से ही बातें की । गेसू ने बताया कि सुधा का खत आया है कि वह जल्दी ही आयगी, गेसू से मिलने । गेसू को बहुत ताज्जुब हुआ कि चन्दर के पास कोई खबर क्यों नही आयी !

चन्दर जब घर पहुँचा तो कैलाश का एक खत मिला—

"प्रिय चन्दर,

बहुत दिन से तुम्हारा कोई खत नही आया, न मेरे पास, न इन के पास । क्या नाराज हो हम दोनो से ? अच्छा तो लो तुम्हें एक खुशखबरी सुना दूँ। मैं सास्कृतिक मिशन में शायद आस्ट्रेलिया जाऊँ। डॉक्टर साहब ने कोशिश कर दी है । आधा रुपया मेरा, आधा सरकार का ।

तुम्हें भला क्या फुरसत मिलेगी यहाँ आने की ! मैं ही इन्हें ले कर दो रोज के लिए आऊँगा । इन की कोई मुसलमान सखी है वहाँ उस से ये भी मिलना चाहती हैं । हमारी खातिर का इन्तजाम रखना—मैं ११ मई को सुबह की गाडी से पहुँचूँगा ।

तुम्हारा—कैलाश"

सुधा के आने के पहले चन्दर ने घर की ओर नजर दौडायी । सिवा ड्राइङ् रूम और लॉन के सचमुच बाकी घर इतना गन्दा पडा था कि गेसू सच ही कह रही थी कि जैसे घर में प्रेत रहते हो । आदमी चाहे जितना सफाई पसन्द और सुरुचिपूर्ण क्यो न हो लेकिन औरत के हाथ में जाने क्या जादू है कि वह घर को छूकर ही चमका देती है । औरत के बिना घर की व्यवस्था सम्हल ही नही सकती । सुधा और बिनती कोई भी नही थी और तीन ही महीने में बँगले का रूप बिगड गया था ।

उस ने सारा बँगला साफ कराया । हालाँ कि दो ही दिन के लिए सुधा और कैलाश आ रहे थे । लेकिन उस ने इस तरह बँगले की सफाई

करायी जैसे कोई नया समारोह हो। सुधा का कमरा बहुत सजा दिया था और सुधा की छत पर दो पलग डलवा दिये थे। लेकिन इन सब इन्तजामो के पीछे उतनी ही निष्क्रिय भावहीनता थी जैसे कि वह एक होटल का मैनेजर हो और दो आगन्तुको का इन्तजाम कर रहा हो। बस।

मानसून के दिनो मे अगर कभी किसी ने ग़ौर किया हो तो वारिश होने के पहले ही हवा में एक नमी, पत्तियो पर एक हरियाली और मन में एक उमग-सी छा जाती है। आसमान का रग बतला देता है कि बादल छाने वाले है, बूंदें रिमझिमाने वाली हैं। जब बादल बहुत नज़दीक आ जाते हैं, बूंदे पडने के पहले ही दूर पर गिरती हुई बूंदो की आवाज़ वातावरण पर छा जाती है जिसे घुरवा कहते हैं।

ज्यो-ज्यो सुधा के आने का दिन नज़दीक आ रहा था चन्दर के मन में हवाएँ करवटें बदलने लग गयी थी। मन के उदास सुनसान में घुरवा उमडने-घुमडने लगा था। मन उदास सुनसान आकुल प्रतीक्षा में बेचैन हो उठा था। चन्दर अपने को समझ नही पा रहा था। नसो में एक अजब-सी घबराहट मचलने लगी थी जिस का वह विश्लेपण नही करना चाहता था। उस का व्यक्तित्व अब पता नही क्यो कुछ भयभीत-सा था।

इम्तहान खत्म हो रहे थे, और जब मन की बेचैनी बहुत बढ़ जाती थी तो परीक्षको की आदत के मुताबिक वह कापियाँ जांचने बैठ जाता था। जिस समय परीक्षको के घर में पारिवारिक कलह हो, मन में अतर्द्वन्द्व हो या दिमाग में फितूर हो उस समय उन्हें कॉपियाँ जांचने से अच्छा शरणस्थल नही मिलता। अपने जीवन की परीक्षा में फेल हो जाने की खीझ उतारने के लिए लडको को फेल करने के अलावा कोई अच्छा रास्ता ही नही है। चन्दर जब बेहद दु खी होता तो वह कापियाँ जाँचता।

जिस दिन सुबह सुधा आ रही थी, उस रात को तो चन्दर का मन बिल्कुल बेक़ाबू-सा हो गया। लगता था जैसे उस ने सोचने-विचारने से ही

इनकार कर दिया हो। उस दिन चन्दर एक क्षण को भी अकेला न रह कर भीड-भाड में खो जाना चाहता था। सुबह वह गगा नहाने गया, कार ले कर। कॉलेज से लौट कर दोपहर को अपने एक मित्र के यहाँ चला गया। लौट कर आया तो नहा कर एक किताव की दुकान पर चला गया और शाम होने तक वही खडा-खडा किताबें उलटता और खरीदता रहा। वहाँ उस ने विसरिया का गीत-सग्रह देखा जो 'बिनती' नाम वदल उस ने 'विप्लव' नाम से छपवा लिया था और प्रमुख प्रगतिशील कवि वन गया था। उस ने वह सग्रह भी खरीद लिया।

अव सुधा के आने में मुश्किल से वारह घण्टे की देर थी। उस की तवीयत वहुत घवडाने लगी थी और वह विसरिया के काव्य-सग्रह में डूव गया। उन सडे हुए गीतो में ही अपने को भुलाने की कोशिश करने लगा और अन्त में उस ने अपने को इतना थका डाला कि तीन वजे का अलार्म लगा कर वह सो गया। सुधा की गाडी साढे चार वजे आती थी।

जव वह जागा तो रात अपने मखमली पख पसारे नीद में डूबी हुई दुनिया पर शान्ति का आशीर्वाद विखेर रही थी। ठण्डे झोके लहरा रहे थे और उन झोको पर पवित्रता छायी हुई थी। यह पछुआ के झोंके थे। ब्राह्म मुहूर्त में प्राचीन आर्यों ने जो रहस्य पाया था वह धीरे-धीरे चन्दर की आँखो के सामने खुलने-सा लगा। उसे लगा जैसे यह उस के व्यक्तित्व की नयी सुवह है। एक वडा शान्ति सगीत उस की पलको पर ओस की तरह थिरकने लगा।

क्षितिज के पास एक वडा-सा सितारा जगमगा रहा था। चन्दर को लगा जैसे यह उस के प्यार का सितारा है जो जाने किस अज्ञात पाताल में डूव गया था और आज से वह फिर उग आया है। उस ने एक अन्ध-विश्वासी भोले वच्चे की तरह उस सितारे को हाथ जोड कर कहा—"मेरी कचन-जैसी सुधा रानी के प्यार, तुम कहाँ खो गये थे? तुम मेरे सामने नही रहे, मैं जाने किन तूफानो में उलझ गया था। मेरी आत्मा में सारी

गुरुता सुधा के प्यार की थी। वह मैं ने खो दिया। उस के बाद मेरी आत्मा पीले पत्ते की तरह तूफान में उड कर जाने किस कीचड में फँस गयी थी। तुम मेरी सुधा के प्यार हो न! मैं ने तुम्हें सुधा की भोली आँखो में जगमगाते हुए देखा था। वेदमन्त्रो-जैसे इस पवित्र सुबह में आज तुम फिर मेरे पाप में लिप्त तन को अमृत से धोने आये हो। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आज सुधा के चरणो पर अपने जीवन के सारे गुनाहो को चढा कर हमेशा के लिए क्षमा माँग लूँगा। लेकिन मेरी साँसो की साँस सुधा! मुझे क्षमा कर दोगी न?" और विचित्र से भावावेश और पुलक मे उस की आँख में आँसू आ गये। उसे याद आया एक दिन सुधा ने उस की हथेलियो को होठो से लगा कर कहा था—जाओ, आज तुम सुधा के स्पर्श से पवित्र हो' काश कि आज भी सुधा अपने मिसरी-जैसे होठो से चन्दर की आत्मा को चूम कर कहे—जाओ चन्दर, अभी तक जिन्दगी के तूफान ने तुम्हारी आत्मा को बीमार, अपवित्र कर दिया था' आज से तुम वही चन्दर हो। अपनी सुधा के चन्दर! हरिणी-जैसी भोली-भाली सुधा के महान् पवित्र चन्दर

तैयार हो कर चन्दर जब स्टेशन पहुँचा तो वह जैसे मोहाविष्ट-सा था। जैसे वह किसी जादू या टोना पढा हुआ-सा घूम रहा था और वह जादू था सुधा के प्यार का पुनरावर्तन।

गाडी घण्टे-भर लेट थी। चन्दर को एक पल काटना मुश्किल हो रहा था। अन्त मे सिगनल डाउन हुआ। कुलियों में हलचल मची और चन्दर

पटरी पर झुक कर देखने लगा। सुबह हो गयी थी और इंजन दूर पर एक काले दाग-सा दिखाई पड रहा था। धीरे-धीरे वह दाग़ बडा लगा और लम्बी-सी हरी पूँछ की तरह लहराती हुई ट्रेन आती दिखाई पडी। चन्दर के मन में आया वह पागल की तरह दौड कर वहाँ पहुँच जाये। जिस दिन एक घोर अविश्वासी में विश्वास जाग जाता है उस दिन वह पागल सा हो उठता है। उसे लग रहा था जैसे इस गाडी में सभी डिब्बे खाली हैं। सिर्फ एक डिब्बे में अकेली सुधा होगी जो आते ही चन्दर को अपनी प्यार-भरी निगाहों में समेट लेगी।

गाडी प्लेटफ़ॉर्म पर आते ही हलचल बढ गयी। कुलियों की दौड-धूप, मुसाफिरों की हडबडी, सामान की उठा-धरी से प्लेटफॉर्म भर गया। चन्दर पागलों-सा इस सब भीड को चीर कर डिब्बे देखने लगा। एक दफे पूरी गाडी का चक्कर लगा गया। कहीं भी सुधा नहीं दिखाई दी। जैसे आँसू से उस का गला रुँधने लगा। क्या आये नहीं ये लोग? क़िस्मत कितना व्यंग्य करती है उस से। आज जब वह किसी के चरणों पर अपनी आत्मा उत्सर्ग कर फिर पवित्र होना चाहता था तो सुधा ही नहीं आयी। उस ने एक चक्कर और लगाया और निराश हो कर लौट पडा। सहसा एक सेकेण्ड क्लास के एक छोटे-से डिब्बे में से कैलास ने झाँक कर कहा—"कपूर!" चन्दर मुडा, देखा कि कैलाश झाँक रहा है। एक कुली सामान उतार कर खडा है। सुधा नहीं है।

जैसे किसी ने झोंके से उस के मन का दीप बुझा दिया। सामान बहुत थोडा-सा था। वह डिब्बे में चढ कर बोला—"सुधा नहीं आयी?"

"आयी हैं। देखो न! कुछ तबीयत खराब हो गयी है। जी मितला रहा है।" और उस ने बाथ-रूम की ओर इशारा कर दिया। सुधा बाथ-रूम में बगल में लोटा रखे सिर झुकाये बैठी थी—"देखो! देखती हो?" कैलाश बोला, "देखो कपूर आ गया।" सुधा ने देखा और मुश्किल से हाथ जोड पायी होगी कि उसे मितली आ गयी कैलाश दौडा और

उस की पीठ पर हाथ फेरने लगा और चन्दर से बोला—"पंखा लाओ !"
चन्दर हतप्रभ था। उस के मन ने सपना देखा था 'सुधा सितारों की तरह जगमगा रही होगी और अपनी रोशनी की बाँहों में चन्दर के प्राणों को सुला देगी। जादूगरनी की तरह अपने प्यार के पंखों से चन्दर की आत्मा के दाग़ पोंछ देगी। लेकिन यथार्थ कुछ और था। सुधा जादूगरनी, आत्मा की रानी, पवित्रता की सम्राज्ञी सुधा, बाथ-रूम में बैठी है और उस का पति उसे सान्त्वना दे रहा था।

"क्या कर रहे हो चन्दर !....पंखा उठाओ जल्दी से।" कैलाश ने व्यग्रता से कहा। चन्दर चौंक उठा और जा कर पंखा झलने लगा। थोड़ी देर बाद मुँह धो कर सुधा उठी और कराहती हुई-सी जा कर सीट पर बैठ गयी। कैलाश ने एक तकिया पीछे लगा दिया और आँख बन्द कर के लेट गयी।

चन्दर ने अब सुधा को देखा। सुधा उजड़ चुकी थी। उस का रस मर चुका था। वह अपने यौवन और रूप, चंचलता और मिठास की एक जर्द छाया मात्र रह गयी थी। चेहरा दुबला पड़ गया था और हड्डियाँ निकल आयी थीं। चेहरा दुबला होने से लगता था आँखें फटी पड़ती हैं। वह चुपचाप आँख बन्द किये पड़ी थी। चन्दर पंखा हाँक रहा था, कैलाश एक सूटकेश खोल कर दवा निकाल रहा था। गाड़ी वहीं आ कर रुक जाती है, इसलिए कोई जल्दी नहीं थी। कैलाश ने दवा दी। सुधा ने दवा पी और फिर बहुत उदास, बहुत बारीक, बहुत बीमार स्वर में बोली—"चन्दर, अच्छे तो हो ! इतने दुबले कैसे लगते हो ? अब कौन तुम्हारे खाने-पीने की परवाह करता होगा !" सुधा ने एक गहरी साँस ली। कैलाश बिस्तर लपेट रहा था।

"तुम्हें क्या हो गया है सुधा ?"

"मुझे सुख रोग हो गया है।" सुधा बहुत क्षीण हँसी हँस कर बोली—"बहुत सुख में रहने से ऐसा ही हो जाता है।"

चन्दर चुप हो गया। कैलाश ने बिस्तर कुली को देते हुए कहा—"इन्होने तो बीमारी के मारे हम लोगो को परेशान कर रखा है। जाने बीमारियो को क्या मुहब्बत है इन से ! चलो उठो।" सुधा उठी।

कार पर सुधा के साथ पीछे सामान रख दिया गया और आगे कैलाश और चन्दर बैठे। कैलाश बोला—"चन्दर, बहुत धीमे ड्राइव करना वरना इन्हें चक्कर आने लगेगा" कार चल दी। चन्दर कैलाश की विदेश-यात्रा और कैलाश चन्दर के कॉलेज के बारे मे बात करता रहा। मुश्किल से घर तक कार पहुँची होगी कि कैलाश बोला—"यार चन्दर, तुम्हें तकलीफ तो होगी लेकिन एक दिन के लिए कार तुम मुझे दे सकते हो ?"

"क्यो ?"

"मुझे जरा रीवाँ तक बहुत जरूरी काम से जाना है, वहाँ कुछ लोगो से मिलना है, कल दोपहर तक मैं चला आऊँगा।"

"इस के मतलब मेरे पास नही रहोगे एक दिन भी !"

"नही, इन्हें छोड जाऊँगा। लौट कर दिन-भर यही रहूँगा।"

"इन्हें छोड जाओगे ? नही भाई, तुम जानते हो आजकल घर में कोई नही है !" चन्दर ने कुछ घबरा कर कहा।

"तो क्या हुआ, तुम तो हो !" कैलाश बोला और चन्दर के चेहरे की घबराहट देख कर हँस कर बोला—"अरे यार, अब तुम पर इतना अविश्वास नही है। अविश्वास करना होता तो ब्याह के पहले ही कर लेते।"

चन्दर मुसकरा उठा, कैलाश ने चन्दर के कन्धे पर हाथ रख कर धीमे से कहा ताकि सुधा न सुन पाये—"वैसे चाहे मुझ कुछ भी असन्तोष क्यो न हो, लेकिन इन का चरित्र तो सोने का है, यह मैं खूब परख चुका हूँ। इन का ऐसा चरित्र बनाने के लिए तो मैं तुम्हे बधाई दूँगा चन्दर ! और फिर आज के युग में !"

चन्दर ने कुछ जवाव नही दिया ।

कार पोर्टिको में लगी । सुधा, कैलाश, चन्दर उतरे। माली और नौकर दौड आये, सुधा ने सव से उन का हाल पूछा। अन्दर जाते ही महराजिन दौड कर सुधा से लिपट गयी । सुधा को वहुत दुलार किया ।

कैलाश मुँह-हाथ धो चुका था, नहाने चला गया । महराजिन चाय वनाने लगी । सुधा भी मुँह-हाथ धोने और नहाने चली । कैलाश तौलिया लपेटे नहा कर आया और वैठ गया । कैलाश वोला—"आज और कल को छुट्टी ले लो चन्दर ! इन की तवीयत ठीक नही है और मुझे जाना जरूरी है ।"

"अच्छा, लेकिन आज तो जा कर हाजिरी देना जरूरी होगा। फिर लौट आऊँगा ।" महराजिन चाय और नाश्ता ले आयी। कैलाश ने नाश्ता लौटा दिया तो महराजिन वोली—"वाह, दामाद हुइके अकेली चाय पीवो भइया, अवहिन डॉक्टर साहव सुनिहैं तो का कहिहैं !"

"नही माँ जी, मेरा पेट ठीक नही है । दो दिन के जागरण से आ रहा हूँ । फिर लौट कर खाऊँगा । लो चन्दर, चाय पियो ।"

"सुधा को आने दो ।" चन्दर वोला ।

"वह पूजा-पाठ कर के खाती है ।"

"पूजा-पाठ", चन्दर दग रह गया—"सुधा पूजा-पाठ करने लगी ।"

"हाँ भाई, तभी तो हमारी माताजी अपनी वहू पर मरती है । असल मे वह पूजा-पाठ करती थी । शुरुआत को इन्होने पूजा के वरतन धोने से और अव तो उन से भी ज्यादा पक्की पुजारिन वन गयी हैं । कैलाश ने इधर-उधर देखा और वोला—"यार, यह मत समझना मैं सुधा की शिकायत कर रहा हूँ, लेकिन तुम लोगो ने मुझे ठीक नही चुना ।"

"क्यो ?" चन्दर कैलाश के व्यवहार पर मुग्ध था ।

"इन-जैसी लडकी के लिए तुम कोई कवि या कलाकार या भावुक

लडका ढूँढ़ते तो ठीक था। मेरे-जैसा व्यावहारिक और नीरस राजनीतिक इन के उपयुक्त नही है। घर-भर इन से बेहद खुश है। जब से यह गयी हैं, माँ और शकर भइया दोनो ने मुझे नालायक क़रार दे दिया है। इन्ही से पूछ कर सब करते है, लेकिन मैं ने जो सोच रखा था वह मुझे नही मिल पाया।"

"क्यो, क्या बात है ?" चन्दर ने पूछा—"ग़लती बताओ तो हम इन्हें समझायें।"

"नही, देखो गलत मत समझो। मैं यह नही कहता कि इन की ग़लती है। यह तो एक ग़लत चुनाव की बात है।" कैलाश बोला—"न इस में मेरा क़सूर न इन का! मैं चाहता था कोई लडकी जो मेरे साथ राजनीति का काम करती, मेरी सबलता और दुर्बलता दोनो की सगिनी होती। इसी लिए इतनी पढी-लिखी लडकी से शादी की। लेकिन इन्हें धर्म और साहित्य से जितनी रुचि है उतनी राजनीति से नही। इसी लिए मेरे व्यक्तित्व को ग्रहण भी नही कर पायी। वैसे मेरी शारीरिक प्यास को इन्होने चाहे समर्पण किया, वह भी एक बेमनी से, उस से तन की प्यास भले बुझ जाती हो कपूर, लेकिन मन तो प्यासा ही रहता है ''बुरा न मानना। मैं बहुत स्पष्ट बातें करता हूँ। तुम से छिपाना क्या ? ''और स्वास्थ्य के मामले में ये इतनी लापरवाह हैं कि मैं बहुत दु खी रहता हूँ।" इतने में सुधा नहा कर आती हुई दीख पडी। कैलाश चुप हो गया। सुधा की ओर देख कर बोला—"मेरी अटैची भी ठीक कर दो। मैं अभी चला जाऊँ वरना दोपहर में तपना होगा।" सुधा चली गयी। सुधा के जाते ही कैलाश बोला—"भरसक मैं इन्हे दु खी नही होने देता। हाँ, अकसर ये दु खी हो जाती हैं, लेकिन मैं क्या करूँ यह मेरी मजबूरी है, वैसे मैं इन्हें भरसक सुखी रखने का प्रयास करता हूँ और ये भी मेरी जायज़-नाजायज हर इच्छा के सामने झुक जाती हैं, लेकिन इन के दिल में मेरे लिए कोई जगह नही है वह जो एक पत्नी के

मन में होती है। लेकिन खैर, जिन्दगी चलती जा रही है। अब तो जैसे हो निभाना ही है।"

इतने में सुधा आयी और बोली—"देखिए, अटैची सँवार दी है, आप भी देख लीजिए ···" कैलाश उठ कर चला गया। चन्दर बैठा-बैठा सोचने लगा—कैलाश कितना अच्छा है, कितना साफ और स्वच्छ दिल का है। लेकिन सुधा ने अपने को किस तरह मिटा डाला···

इतने में सुधा आयी और चन्दर से बोली—"चन्दर, चलो, वो बुला रहे हैं।"

चन्दर चुपचाप उठा और अन्दर गया। कैलाश ने फिर यात्रा के कपड़े पहन लिये थे। देखते ही बोला—"अच्छा चन्दर, अब मैं चलता हूं। कल शाम तक आ जाने की कोशिश करूँगा। हां देखो, इन्हें ज्यादा घुमाना मत। इन की सखी को यहां बुलवा लो तो अच्छा है।" फिर बाहर निकलता हुआ बोला—"इन की जिद थी आने की, वरना इन की हालत आने वाली नहीं थी। माताजी से मैं कह आया हूँ कि लखनऊ मेडिकल कॉलेज ले जा रहा हूं।"

कैलाश कार पर बैठ गया। फिर बोला—"देखो चन्दर, दवा इन्हें दे देना याद से, वहीं रखी है।" कार स्टार्ट हो गयी।

चन्दर लौटा। बरामदे में सुधा खड़ी थी। चुपचाप बुझी हुई-सी। चन्दर ने उस की ओर देखा, उस ने चन्दर की ओर देखा, फिर दोनों ने निगाहें झुका लीं। सुधा वहीं खड़ी रही। चन्दर ड्राइङ्-रूम में जा कर किताबें वगैरह उठा लाया और कॉलेज जाने के लिए निकला। सुधा अब भी बरामदे में खड़ी थी। गुम-सुम ·चन्दर कुछ कहना चाहता था ·· लेकिन क्या ? क्या ? कुछ था, जो न जाने कब से संचित होता आ रहा था, जो वह व्यक्त करना चाहता था, लेकिन सुधा कैसी हो गयी है। यह वह सुधा तो नहीं जिस के सामने वह अपने को सदा व्यक्त कर देता था। कभी संकोच नहीं करता था, लेकिन यह सुधा कैसी है अपने में सिमटी-

सकुची, अपने में बँधी-बँधायी, अपने में इतनी छिपी हुई कि लगता था दुनिया के प्रति इस में कहीं कोई खुलाव ही नहीं। चन्दर के मन में जाने कितनी आवाजें तड़प उठीं लेकिन कुछ नहीं बोल पाया। वह बरामदे में ठिठक गया, निरुद्देश्य वहाँ अपनी किताबें खोल कर देखने लगा, जैसे वह याद करना चाहता था कि कहीं भूल तो नहीं आया है कुछ लेकिन उस के अन्तर्मन में केवल एक ही बात थी। सुधा कुछ तो बोले। यह इतना गहरा, इतना घुटने वाला मौन, यह तो जैसे चन्दर के प्राणों पर घुटने की तरह बैठता जा रहा था। सुधा ''निर्वात निवास में दीप शिखा सी' अचल निस्पन्द थमे हुए तूफ़ान की तरह मौन। चन्दर ने अन्त में नोट लिये, घड़ी देखी और चल दिया। जब वह सीढ़ी तक पहुँचा तो सहसा सुधा की छाया-मूर्ति में हरकत हुई। सुधा ने पाँव के अँगूठे से फ़र्श पर एक लकीर खींचते हुए नीचे निगाह झुकाये हुए कहा—"कितनी देर में आओगे?" चन्दर रुक गया। जैसे चन्दर को सितारों का राज मिल गया हो। सुधा भला बोली तो! लेकिन फिर भी अपने मन का उल्लास उस ने जाहिर नहीं होने दिया, बोला—"कम से कम दो घण्टे तो लगेंगे ही।"

सुधा कुछ नहीं बोली, चुपचाप रह गयी। चन्दर ने दो क्षण प्रतीक्षा की कि सुधा अब कुछ बोले लेकिन सुधा फिर भी चुप। चन्दर फिर मुड़ा। क्षण-भर बाद सुधा ने पूछा—"चन्दर, और जल्दी नहीं लौट सकते?"

जल्दी! सुधा अगर कहे तो चन्दर जाये भी न, चाहे उसे इस्तीफ़ा देना पड़े। क्या सुधा भूल गयी कि चन्दर के व्यक्तित्व पर अगर किसी का शासन है तो सुधा का! वह जो अपनी जिद से, उलझ कर, लड़ कर, रूठ कर चन्दर से हमेशा मनचाहा काम करवाती रही है आज वह इतनी दीनता से, इतनी विनय से, इतने अन्तर और इतनी दूरी से क्यों कह रही है, कि जल्दी नहीं लौट सकते? क्यों नहीं वह पहले की तरह दौड़ कर चन्दर का कालर पकड़ लेती और मचल कर कहती—"ए, अगर जल्दी नहीं लौटे तो ..." लेकिन अब तो सुधा बरामदे में खड़ी हो कर गम्भीर-

ती डूबती हुई-सी आवाज में पूछ रही है—जल्दी नही लौट सकते !
चन्दर का मन टूट गया। चन्दर की उमग चट्टान से टकरा कर बिखर
गयी उस ने बहुत भारी-सी आवाज मे पूछा—"क्यो ?"

"जल्दी लौट आते तो पूजा कर के तुम्हारे साथ नाश्ता कर लेते !
लेकिन अगर ज्यादा काम हो तो रहने दो मेरी वजह से हर्ज मत करना !"
उस ने उसी ठण्डे, शिष्ट और भावनाहीन स्वर में कहा।

हाय सुधा ! अगर तुम जानती होती कि महीनो से उद्भ्रान्त चन्दर का टूटा और प्यासा मन तुम से पुराने स्नेह की एक बूँद के लिए तरस उठा है तो भी क्या तुम इसी दूरी से बातें करती ! काश, कि तुम समझ पाती कि चन्दर ने अगर तुम से कुछ दूरी भी निभायी है तो उस से खुद चन्दर कितना बिखर गया है। चन्दर ने अपना देवत्व खो दिया है, अपना सुख खो दिया है, अपने को बरबाद कर दिया है और फिर भी चन्दर के बाहर से शान्त और सुगठित दीखने वाले हृदय के अन्दर तुम्हारे प्यार की कितनी गहरी प्यास धधक रही है उस के रोम-रोम में कितनी जहरीली तृष्णा की बिजलियाँ कौंध रही हैं, तुम से अलग होने के बाद अतृप्ति का कितना बडा रास्ता उस ने आग की लपटो में झुलसते हुए बिताया है। अगर तुम इसे समझ लेती तो तुम चन्दर को एक बार दुलार कर उस के जलते हुए प्राणो पर अमृत की चाँदनी बिखेरने के लिए व्यग्र हो उठती, लेकिन सुधा, तुम ने उस के बाह्य विद्रोह को ही समझा, तुम ने उस गम्भीर प्यार को समझा ही नही जो इस बाहरी विद्रोह, इस बाहरी विध्वस के मूल में पयस्विनी की पावन धारा की तरह बहता जा रहा है। सुधा, अगर तुम एक क्षण के लिए इसे समझ लो एक क्षण-भर के लिए चन्दर को पहले की तरह दुलरा लो, बहला लो, रूठ लो, मना लो तो सुधा, चन्दर की जलती हुई आत्मा, नरक चिताओ में फिर से अपना गौरव पा ले, फिर से अपनी खोयी हुई पवित्रता जीत ले, फिर से अपना विस्मृत देवत्व लौटा ले लेकिन सुधा, तुम बरामदे में चुपचाप

खडी इस तरह की बातें कर रही हो जैसे चन्दर कोई अपरिचित हो। सुधा, यह क्या हो गया तुम्हें ? चन्दर, बिनती, पम्मी सभी की जिन्दगी में जो भयंकर तूफान आ गया है, जिस ने सभी को झकझोर कर थका डाला है, इस का समाधान सिर्फ तुम्हारे प्यार में था, सिर्फ़ तुम्हारी आत्मा में था लेकिन अगर तुम ने इन के चरित्रों का अन्तर्निहित सत्य न देख कर बाहरी विध्वंस से ही अपना आगे का व्यवहार निश्चित कर लिया है तो कौन इन्हें इस चक्रवात से खींच निकालेगा ! क्या ये अभागे इसी चक्रवात में फँस कर चूर हो जायेंगे ''सुधा

लेकिन सुधा और कुछ नहीं बोली। चन्दर चल दिया। जा कर लगा जैसे कॉलेज के परीक्षा-भवन में जाना भी भारी मालूम दे रहा था। वह जल्दी ही भाग आया। हालाँ कि सुधा के व्यवहार ने उस का मन जैसे तोड-सा दिया था लेकिन फिर भी जाने क्यों वह अब आज सुधा को एक प्रकाशवृत्त बन कर लपेट लेना चाहता था।

जब चन्दर लौट कर आया तो उस ने देखा सुधा तो उसी के कमरे में है। उस ने उस के कमरे के एक कोने से दरी हटा दी है, वहाँ पानी छिडक दिया और एक कुश के आसन पर सामने चौकी पर कोई पोथी धरे बैठी है। चौकी पर एक श्वेत वस्त्र बिछा कर धूपदानी रख दी है जिस में धूप सुलग रही है। लॉन से शायद कुछ फूल तोड लायी थी जो धूपदानी के पास रखे हुए थे। बगल में एक रुद्राक्ष की माला रखी थी। एक शुद्ध श्वेत रेशम की धोती और केवल एक चोली पहने हुए पल्ले से बाँहों तक

ढँके हुए वह एकाग्र मनोयोग से ग्रन्थ का पारायण कर रही थी। धूपदानी से धूम्र-रेखाएँ मचलती हुई लहराती हुई उस के कपोलों पर झूलती हुई सूखी-रूखी अलकों से उलझ रही थीं। उस ने नहा कर केश बाँधे नहीं थे चन्दर ने जूते बाहर ही उतार दिये और चुपचाप पलंग पर बैठ कर सुधा को देखने लगा। सुधा ने सिर्फ़ एक बार बहुत शान्त, बहुत गहरी आकाश-जैसी स्वच्छ निगाहों से चन्दर को देखा और तब पढ़ने लगी। सुधा के चारों ओर एक विचित्र-सा वातावरण था, एक अपार्थिव स्वर्गिक ज्योति के रेशों से बुना हुआ झीना प्रकाश उस पर छाया हुआ था। गले में पड़ा हुआ आँचल, पीठ पर बिखरे हुए रूखे सुनहले बाल, अपना सब कुछ खो कर विरक्ति में खिन्न सुहाग पर छाये हुए वैधव्य की तरह सुधा लग रही थी। माँग सूनी थी, माथे पर रोली का एक बड़ा-सा टीका था और चेहरे पर स्वर्ग के मुरझाये हुए फूलों की घुलती हुई उदासी जैसे किसी ने चाँदनी पर हरसिंगार के पीले छींटे दे दिये हों।

थोड़ी देर तक सुधा अस्पष्ट स्वरों में पढ़ती रही। उस के बाद उस ने पोथी बन्द कर रख दी। उस के बाद आँख बन्द कर न जाने किस अज्ञात देवता को हाथ जोड़ कर नमस्कार किया ''फिर उठ खड़ी हुई और आ कर फ़र्श पर चन्दर के पास बैठ गयी। आँचल कमर में खोंस लिया और बिना सिर उठाये बोली—''चलो नाश्ता कर लो।''

''यहीं ले आओ।'' चन्दर बोला। सुधा उठी और नाश्ता ले आयी। चन्दर ने उठा कर एक टुकड़ा मुँह में रख लिया। लेकिन जब सुधा उसी तरह फ़र्श पर चुपचाप बैठी रही तो चन्दर ने कहा—''तुम भी खाओ।''

''मैं।'' वह एक फीकी हँसी हँस कर बोली—''मैं खा लूँ तो अभी क़ै हो जाये। मैं सिवा नीबू के शरबत और खिचड़ी के अन्न कुछ भी नहीं खाती। और वह भी एक वक़्त।''

''क्यों?''

"असल में पहले मैं ने एक व्रत किया पन्द्रह दिन तक केवल प्रात काल खाने का, तब से कुछ ऐसा हो गया है कि शाम को खाते ही मन विगड जाता है। इधर और भी कई रोग हो गये हैं।"

चन्दर का मन रो आया। "सुधा, तुम चुपचाप इस तरह अपने को मिटाती रही! मान लिया चन्दर ने तुम्हे एक खत में लिख ही दिया था कि अब पत्र-व्यवहार वन्द कर दो! लेकिन क्या अगर तुम पत्र भेजती तो चन्दर की हिम्मत थी कि वह उत्तर न देता! अगर तुम समझ पाती कि चन्दर के मन में कितना दु ख है!"

चन्दर चाहता था कि सुधा की गोद में अपने मन की सभी बातें विखेर दे लेकिन सुधा कुछ कहे, कुछ शिकायत करे तो चन्दर अपनी सफ़ाई दे लेकिन सुधा तो है कि शिकायत ही नही करती, सफ़ाई देने का मौक़ा ही नही देती यह देवत्व की मूर्ति-सी पथरीली सुधा! यह चन्दर की सुधा तो नही। चन्दर का मन वहुत भर आया। उस ने रुंधे गले से पूछा—"सुधा, तुम बहुत वदल गयी हो। खैर, और तो जो कुछ है उस के लिए अब मैं क्या कहूँ, लेकिन अपनी तन्दुरुस्ती विगाड कर क्या तुम मुझे सुख दे रही हो! अव यो भी मेरी जिन्दगी में क्या रहा है। लेकिन एक ही सन्तोष था कि तुम सुखी हो। लेकिन तुम ने मुझ से वह सहारा छीन लिया पूजा किस की करती हो?"

"पूजा कहाँ, पाठ करती हूँ चन्दर! गीता का, और भागवत का, कभी-कभी सूर-सागर का! पूजा भला अब किस की करूँगी! मुझ-जैसी अभागिनो की पूजा भला स्वीकार कौन करेगा?"

"तब यह एक वक्त का भोजन क्यो?"

"यह तो प्रायश्चित्त है चन्दर?" सुधा ने एक गहरी साँस ले कर कहा।

"प्रायश्चित्त?" चन्दर ने अचरज से कहा।

"हाँ प्रायश्चित्त ..." सुधा ने अपने पाँव की विछियो को धोती के

छोर से रगड़ते हुए कहा—"हिन्दू-गृह तो एक ऐसा जेल होता है जहाँ क़ैदी को उपवास कर के प्राण छोड़ने की भी इजाज़त नही रहती अगर धर्म का वहाना न हो। धर्म के वहाने उपवास कर के कुछ सुख मिल जाता है।"

एक क्षण आता है कि आदमी प्यार से विद्रोह कर चुका है, अपने जीवन की प्रेरणा-मूर्ति की गोद से वहुत दिन तक निर्वासित रह चुका है, उस का मन पागल हो उठता है फिर से प्यार करने को, वेहद प्यार करने को, अपने मन का दुलार फूलो की तरह विखरा देने को। आज विद्रोह का तूफान उतर जाने के वाद अपनी उजडी हुई जिन्दगी में वीमार सुधा को पा कर चन्दर का मन तड़प उठा। सुधा की पीठ पर लहराती हुई सूखी अलकें हाथ में ले ली। उन्हें गूँथने का असफल प्रयास करते हुए वोला—

"सुधी, यह तो सच है कि मैं ने तुम्हारे मन को वहुत दुखाया है, लेकिन तुम तो हमारी हर वात को, हमारे हर क्रोध को क्षमा करती रही हो, इस वात का तुम इतना वुरा मान गयी।"

"किस वात का चन्दर।" सुधा ने चन्दर की ओर देख कर कहा—"मैं किस वात का वुरा मान गयी।"

"जिस वात का प्रायश्चित कर रही हो तुम, इस तरह अपने को मिटा कर!"

"प्रायश्चित्त तो मैं अपनी दुर्वलता का कर रही हूँ, चन्दर।"

"दुर्वलता?" चन्दर ने सुधा की अलको को घटाओ की तरह छिटका कर कहा।

"दुर्वलता—चन्दर। तुम्हें ध्यान होगा एक दिन हम लोगो ने निश्चय किया था कि हमारे प्यार की कसौटी यह रहेगी चन्दर, दूर रह कर भी हम लोग ऊँचे उठेंगे, पवित्र रहेंगे। दूर हो जाने के वाद चन्दर तुम्हारा प्यार तो मुझ मे एक दृढ आत्मा और विश्वास भरता रहा, उसी के

सहारे मैं अपने जीवन के तूफानो को पार कर ले गयी, लेकिन पता नही मेरे प्यार मे कौन-सी दुर्बलता रही कि तुम उसे ग्रहण नही कर पाये मैं तुम से कुछ नही कहती। मगर अपने मन मे कितनी कुण्ठित हूँ कि कह नही सकती। पता नही दूसरा जन्म होता है या नही, लेकिन इस जन्म मे तुम्हें पा कर तुम्हारे चरणो पर अपने को न चढा पायी। तुम्हें अपने मन की पूजा में यकीन न दिला पायी, इस से बढ कर और दुर्भाग्य क्या होगा? मैं अपने व्यक्तित्व को कितना गर्हित, कितना छिछला समझने लगी हूँ चन्दर!"

चन्दर ने नाश्ता खिसका दिया। अपनी आँख में झलकते हुए आँसू को छिपाते हुए चुपचाप बैठ गया।

"नाश्ता कर लो चन्दर! इस तरह तुम्हें अपने पास बिठा कर खिलाने का सुख अब कहाँ नसीब होगा। लो!" और सुधा ने अपने हाथ से उसे एक नमकीन सेव खिला दिया। चन्दर के भरे हुए आँसू सुधा के हाथो पर चू पडे।

"छि, यह क्या चन्दर!"

"कुछ नही · " चन्दर ने आँसू पोछ डाले।

इतने में महराजिन आयी और सुधा से बोली—"बिटिया रानी! लेव ई नानखटाई हम कल्है से बनाय के रख दिया रहा कि तोके खिलइबे!"

"अच्छा! हम भी महराजिन इतने दिन से तुम्हारे हाथ के खाने के लिए तरस गये, तुम चलो हमारे साथ।"

"हियाँ चन्दर भइया के कौन देखी! अब बिटिया इनहूँ के ब्याह कर देव, तो हम चली तोहरे साथ!"

सुधा हँस पडी, चन्दर चुपचाप बैठा रहा। महराजिन खिचडी डालने चली गयी। सुधा ने चुपचाप नानखटाई की तश्तरी उठा कर एक ओर रख दी—चन्दर चुप, अब क्या बात करे। पहले वह दोनो घण्टो

क्या वात करते थे ? उसे वडा ताज्जुब हुआ। इस वक्त कोई बात ही नही सूझती थी। पहले जाने कितना वक्त गुजर जाता था, दोनो की बातो का खात्मा ही नही होता था। सुधा भी चुप थी। थोडी देर बाद चन्दर बोला—"सुधी, तुम सचमुच पूजा-पाठ मे विश्वास करती हो…"

"क्यो, करती तो हूँ चन्दर ! हाँ मूर्ति जरूर नही पूजती, पर कृष्ण को जरूर पूजती हूँ। जब सभी सहारे टूट गये, तुम ने भी मुझे छोड दिया, तब मुझे गीता और रामायण में बहुत सन्तोष मिला। पहले मैं खुद ताज्जुब करती थी कि औरतें इतना पूजा-पाठ क्यो करती हैं, फिर मैं ने सोचा हिन्दू नारी इतनी असहाय होती है, उसे पति से, पुत्र से, सभी से इतना लाछन, अपमान और तिरस्कार मिलता है कि पूजा-पाठ न हो तो पशु बन जाये। पूजा-पाठ ही ने हिन्दू नारी का चरित्र अभी तक इतना ऊँचा रखा है।"

"मैं तो समझता हूँ यह अपने को भुलावा देना है।"

"मानती हूँ चन्दर, लेकिन अगर कोई हिन्दू धर्म की इन किताबो को ध्यान से पढे तब वह जाने कि क्या है इन में ! जाने कितनी ताकत देती है, ये अभी तक जिन्दगी में मैं ने यह सीखा है कि पुरुष हो या नारी, सभी के जीवन का एक मात्र सम्बल विश्वास है, और इन ग्रन्थो में सभी सशयो को मिटा कर विश्वास का इतना गहन उपदेश है कि मन पुलक उठता है। मैं तुम से कुछ नही छिपाती। चन्दर, जब विनती के व्याह में तुम ने मेरा पत्र लौटा दिया तो मैं तडप उठी। एक अविश्वास मेरी नस-नस में गुँथ गया। मैं ने समझ लिया कि तुम्हारी सारी बातें झूठी थी। एक जाने कैसी आग मुझे हरदम झुलसाती रहती थी। मेरा स्वभाव बहुत बिगड गया था। मुझे हरेक से नफरत हो गयी थी। हरेक पर झल्ला उठती थी किसी बात मे मुझे चैन नही मिलता था। धीरे-धीरे मैं ने इन किताबो को पढना शुरू किया। मुझे लगने लगा कि शान्ति धीरे-धीरे मेरी आत्मा पर उतर रही है। मुझे लगा कि यह सभी ग्रन्थ पुकार-पुकार कर

कह रहे हैं—अविश्वास पाप है, सशय पाप है। इन सबो का एक ही अन्त था—सशयात्मा विनश्यति ! धीरे-धीरे मैं ने इन बातों को अपने जीवन पर घटाना शुरू किया, तो मैं ने देखा कि सारी भक्ति की किताबे और उन का दर्शन बडा मनोहर रूपक है चन्दर ! कृष्ण प्यार के देवता हैं। वशी की ध्वनि, विश्वास की पुकार है। धीरे-धीरे तुम्हारे प्रति मेरे मन मे जगा हुआ अविश्वास मिट गया, मैं ने कहा तुम मुझ से अलग ही कहाँ हो। मैं तो तुम्हारी आत्मा का एक टुकडा हूँ जो एक जन्म के लिए अलग हो गयी। लेकिन हमेशा तुम्हारे चारो ओर चन्द्रमा की तरह चक्कर लगाती रहूँगी जिस दिन मैं ने पढा—

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेक शरण व्रज।
अह त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच ॥

तो मुझे लगा कि तुम्हारा खोया हुआ प्यार मुझे पुकार कर कह रहा है—मेरी शरण में चली आओ, और सिवा तुम्हारे प्यार के मेरा भगवान् और है ही क्या ? उस के बाद से चन्दर, मेरे मन में विश्वास और प्रेम झलक आया, अपने जीवन की परिधि मे आने वाले हर व्यक्ति के लिए। सभी मुझे बहुत चाहने लगे लेकिन चन्दर जब बिनती यहाँ से दिल्ली जाते वक्त मेरे साथ गयी और उस ने सब हाल बताया तो मुझे कितना दु ख हुआ। कितनी ग्लानि हुई। तुम्हारे ऊपर नही, अपने ऊपर।"

बातें भावनात्मक स्तर से उठ कर बौद्धिक स्तर पर आ चुकी थी। चन्दर फौरन बोला—"सुधा, ग्लानि की तो कोई बात नही, कम से कम मैं ने जो कुछ किया है उस पर मुझे जरा-सी भी शरम नही !" चन्दर के स्वर में फिर एक बार गर्व और कडुआहट-सी आ गयी थी—"मैं ने जो कुछ किया है उसे मैं पाप नही मानता। तुम्हारे भगवान् ने तुम्हे जो कुछ रास्ता दिखलाया वह तुम ने किया। मेरे भगवान् ने जो रास्ता मुझे दिखलाया, वह मैं ने किया। तुम जानती हो मेरी जिन्दगी की पवित्रता तुम

थी, तुम्हारी भोली निष्पाप साँसें मेरे सभी गुनाह, मेरी सभी कमज़ोरियाँ सुलाती रही हैं। जिस दिन तुम मेरी ज़िन्दगी से चली गयी, कुछ दिन तक मैं ने अपने को सम्हाला। उस के बाद मेरी आत्मा का कण-कण द्रोह कर उठा—मैं ने कहा—स्वर्ग के मालिक, साफ़-साफ़ सुनो। तुम ने मेरी ज़िन्दगी की पवित्रता को छीन लिया है, मैं तुम्हारे स्वर्ग में वासना की आग धधका कर उसे नरक से बदतर बना दूँगा। और मैं ने होठों के किनारे चुम्बनों की लपटें सुलगानी शुरू कर दीं। धीरे-धीरे महाश्मशान के सन्नाटे में करोड़ों वासना की लपटें ज़हरीले साँपों की तरह फुफकारने लगीं। मेरे मन को इस में बहुत सन्तोष मिला, बहुत शान्ति मिली। यहाँ तक कि बिनती के लिए मैं अपने मन की सारी कटुता भूल गया। मैं कैसे कह दूँ कि यह सब गुनाह था। सुधा, अगर ठीक से देखो, गम्भीरता से समझो तो जो कुछ तुम्हारे लिए मेरे मन में था उसी की प्रतिक्रिया वह है जो मेरे मन में पम्मी के लिए है। तुम्हारा दुलार और पम्मी की वासना दोनों ही एक सिक्के के दो पहलू हैं। अपने पहलू को सही और दूसरे पहलू को गलत क्यों कहती हो ? देवता की आरती में जलता हुआ दीपक पवित्र है और उस से निकला हुआ धुआँ अपवित्र ? दीप-शिखा नैतिक है और धूम-रेखा अनैतिक ? ग्लानि किस बात की सुधा ?" चन्दर ने बहुत आवेश में कहा।

"छि चन्दर ! तुम मुझे समझे नहीं ! मैं नैतिक-अनैतिक की बात ही नहीं करती। मेरे भगवान् ने, मेरे प्यार ने मुझे अब उस दुनिया में पहुँचा दिया है जो नैतिक-अनैतिक से उठ कर है। तुम ने अपने भगवान् से विद्रोह किया लेकिन उन्होंने तुम्हारी बात पर कोई फ़ैसला भी तो दिया होता। वे इतने दयालु हैं कि कभी मानव के कार्यों पर फ़ैसला ही नहीं देते। दण्ड तो दूर की बात, वे तो केवल आदमी को समझ कर, उस की कमज़ोरियाँ समझ कर उसे क्षमा करने और उसे प्यार करने की बात कहते हैं, चन्दर ! वहाँ नैतिकता-अनैतिकता का प्रश्न ही नहीं।"

"तब ? यह ग्लानि किस बात को तुम्हें !" चन्दर ने पूछा।

"ग्लानि तो मुझे अपने पर थी चन्दर! रहा तुम्हारा पम्मी से सम्बन्ध तो मैं बिनती की तरह नही सोचती, इतना विश्वास रखो। मेरी पाप और पुण्य की तराजू ही दूसरी है। फिर कम से कम अब इतना देख-सुन कर मैं यह नही मानती कि शरीर की प्यास ही पाप है! नही चन्दर, शरीर की प्यास भी उतनी ही पवित्र और स्वाभाविक है जितनी आत्मा की पूजा। आत्मा की पूजा और शरीर की प्यास दोनो अभिन्न हैं। आत्मा की अभिव्यक्ति शरीर से है, शरीर का सस्कार, शरीर का सन्तुलन आत्मा से है। जो आत्मा और शरीर को अलग कर देता है वही मन के भयकर तूफानो में उलझ कर चूर-चूर हो जाता है। चन्दर, मैं तुम्हारी आत्मा थी। तुम मेरे शरीर थे। पता नही कैसे हम लोग अलग हो गये। तुम्हारे बिना मैं केवल सूक्ष्म आत्मा रह गयी। शरीर की प्यास, शरीर की रगीनियाँ मेरे लिए अपरिचित हो गयी। पति को शरीर दे कर भी मैं सन्तोप न दे पायी और मेरे बिना तुम केवल शरीर रह गये। शरीर में डूब गये ' पाप का जितना हिस्सा तुम्हारा उतना ही मेरा ··पाप की वैतरणी के इस किनारे जब तक तुम तडपोगे, तभी तक मैं भी तडपूँगी·· दोनो में से किसी को भी चैन नही और कभी चैन नही मिलेगा "

"लेकिन फिर "

"हटाओ इन सब बातो को चन्दर! तुम ने व्यर्थ यह बाते उठायी। मैं अब बात करना भूलती जा रही हूँ। मैं तो आयी थी तुम्हे देख कर कुछ मन का ताप मिटाने। उठो खाना खायें!" सुधा बोली।

"नही, मैं चाहता हूँ, बातें सुलझ जाये सुधा!" चन्दर ने सुधा के हाथ पर अपना सिर रख कर कहा—"मेरी तकलीफ अब बेहद बढती जा रही है। मै पागल न हो जाऊँ!"

"छि, ऐसी बात नही सोचते। उठो!" चन्दर को उठा कर सुधा

बोली। दोनों ने खाना खाया। महराजिन बडे दुलार से परसती रही और सुधा से बातें करती रही। खाना खा कर चन्दर लेट गया और सोचने लगा। अब क्या सचमुच उस के और सुधा के बीच मे कोई इतना भयकर अन्तर आ गया कि दोनो पहले-जैसे नही हो सकते।

लगभग चार बजे वह जागा तो उस ने देखा कि उस के पांवो के पास सिर रख कर सुधा सो रही है। पखे की हवा वहाँ तक नही पहुँचती। वह पसीने से तर-बतर हो रही है। चन्दर उठा, उसे नीद में ऐसा लगा कि जैसे इधर कुछ हुआ ही नही है। सुधा वही सुधा है, चन्दर वही चन्दर है। उस ने सुधा के पल्ले से सुधा के माथे और गले का पसीना पोछ दिया और हाथ बढा कर पखा उस की ओर घुमा दिया। सुधा ने आँखें खोली, एक अजब-सी निगाह से चन्दर की ओर देखा और चन्दर के पांवों को खीच कर वक्ष से लगा कर फिर आंख बन्द कर के लेट गयी। चन्दर ने अपना एक हाथ सुधा के माथे पर रख लिया और वह चुपचाप बैठा सोचने लगा, आज से लगभग साल-भर पहले की बात, जब उस ने पहले-पहल सुधा को कैलाश का चित्र दिखाया था, और सुधा रो-धोकर उस के पांवो में इसी तरह मुँह छिपा कर सो गयी थी ··और आज सुधा साल-भर मे कहाँ से कहाँ जा पहुँची है। चन्दर कहाँ से कहाँ पहुँच गया है। काश कि कोई उन की जिन्दगी की स्लेट से इस वर्ष-भर में खिंची हुई मानसिक रेखाओ को मिटा सके तो कितने सुखी हो जायें दोनो। चन्दर ने सुधा को हिलाया और बोला—

"सुधा, सो रही हो ?"

"नही।"

"उठो।"

"नही चन्दर, पडी रहने दो। तुम्हारे चरणो मे सब कुछ भूल कर एक क्षण के लिए भी सो सकूँगी, मुझे इस का विश्वास नही था। सब कुछ छीन लिया है तुम ने, एक क्षण की आत्म-प्रवचना क्यो छीनते हो ?" सुधा ने उसी तरह पडे हुए जवाब दिया।

"अरी उठ पगली !" चन्दर के मन में जाने कहाँ मरा पडा हुआ उल्लास फिर से जिन्दा हो उठा था। उस ने सुधा की बाँह मे जोर से चुटकी काटते हुए कहा—"उठती है या नही, आलसी कही की !"

सुधा उठ कर बैठ गयी। क्षण-भर चन्दर की ओर पथरायी हुई निगाह से देखती रही और बोली—"चन्दर, मैं जाग रही हूँ। तुम्ही ने उठाया है मुझे ··चन्दर ! कही सपना तो नही है कि फिर टूट जाये !" और सुधा सिसक-सिसक कर रो पडी। चन्दर की आँखो मे आँसू आ गये। थोडी देर बाद वह बोला—"सुधा, कोई जादूगर अगर हम लोगो के मन से यह काँटा निकाल देता तो मैं कितना सुखी होता ! लेकिन सुधा, अब मैं तुम्हें दु खी नही करूँगा।"

"यह तो तुम ने पहले भी कहा था चन्दर ! लेकिन तुम इधर जाने कैसे हो गये। लगता है तुम्हारे चरित्र मे कही स्थायित्व नहीं इसी का तो मुझे दु ख है चन्दर !"

"अब रहेगा सुधा ! तुम्हें खो कर, तुम्हारे प्यार को खो कर मैं देख चुका हूँ कि मैं आदमी नही रह पाता, जानवर बन जाता हूँ। सुधा, अगर तुम आज से महीनो पहले मिल जाती तो जो जहर मेरे मन मे घुट रहा है वह तुम्हारे सामने व्यक्त कर के मैं फिर बिल्कुल निश्चिन्त हो जाता। अच्छा सुधा, यहाँ आओ। चुपचाप लेट जाओ, मैं तुम से सब कह डालूँ,

फिर सब भूल जाऊँ। बोलो सुनोगी ?"

सुधा चुपचाप लेट गयी और बोली—"चन्दर या तो मत बताओ या फिर सभी स्पष्ट बता दो "

"हाँ, बिलकुल स्पष्ट सुधी, तुम से कुछ छिपा सकता हूँ भला।" चन्दर ने हलकी-सी चपत मार कर कहा—"आज मन जैसे पागल हो रहा है तुम्हारे चरणों पर बिखर जाने के लिए जादूगरनी कहीं की! देखो सुधा—पिछली दफे तुम ने मुझे बहुत कुछ बताया था, कैलाश के बारे में।"

"हाँ।"

"बस, उस के बाद से एक अजब-सी अरुचि मेरे मन में तुम्हारे लिए होने लगी थी मैं तुम से कुछ छिपाऊँगा नहीं। तुम्हारे जाने के बाद बर्टी आया। उस ने मुझ से कहा कि औरत केवल नयी संवेदना, नया स्वाद चाहती है और कुछ नहीं, अविवाहित लड़कियाँ विवाह, और विवाहित लड़कियाँ नये प्रेमी ' बस यही उन का चरम लक्ष्य है। लड़कियाँ शरीर के प्यास के अलावा और कुछ नहीं चाहती ''जैसे अराजकता के दिनों में किसी देश में कोई भी चालाक नेता शक्ति छीन लेता है, वैसे ही मानसिक शून्यता के क्षणों में बर्टी जैसे मेरा दार्शनिक गुरु हो गया। उस के बाद आयी पम्मी। उस से मैं ने कहा कि क्या आवश्यक है कि पुरुष और नारी के सम्बन्धों में सेक्स ही हो ? उस ने कहा—'हाँ, और यदि नहीं है तो प्लेटानिक (आदर्शवादी) प्यार की प्रतिक्रिया सेक्स की ही प्यास में होती है।' अब मैं तुम्हें अपने मन का चोर बतला दूँ। मैं ने सोचा कि तुम भी अपने वैवाहिक जीवन में रम गयी हो। शरीर की प्यास ने तुम्हें अपने में डुबा दिया है और जो अरुचि तुम मेरे सामने व्यक्त करती हो वह केवल दिखावा है। इसलिए मन-ही-मन मुझे तुम से चिढ़-सी हो गयी। पता नहीं क्यों यह संस्कार मुझ में दृढ़-सा हो गया और इसी के पीछे मैं तुम्हीं को नहीं पम्मी को छोड़ कर सभी लड़कियों से नफरत-सी

करने लगा। विनती को भी मैं ने बहुत दु:ख दिया। ब्याह में जाने के पहले वह बहुत दु:खी हो कर गयी। रही पम्मी की बात तो मैं उस पर इसीलिए खुश था कि उस ने बड़ी यथार्थ-सी बात कही थी। लेकिन उस ने मुझ से कहा कि आदर्शवादी प्यार की प्रतिक्रिया शारीरिक प्यास में होती है। तुम को इस का अपराधी मान कर तुम से तो नाराज़ हो गया लेकिन अन्दर-ही-अन्दर वह संस्कार मेरा व्यक्तित्व बदलने लगा। सुधा, पता नहीं, तुम्हारे जीवन में प्रतिक्रिया के रूप में शारीरिक प्यास जागी या नहीं पर मेरे मन के गुनाह तो तूफ़ान की तरह लहरा उठे। लेकिन तुम से एक बात नहीं छिपाऊँगा। वह यह कि ऐसे भी क्षण आये हैं जब पम्मी के समर्पण ने मेरे मन की सारी कटुता धो दी है... बोलो तुम कुछ तो बोलो सुधा!"

"तुम कहते चलो चन्दर! मैं सुन रही हूँ।"

"हाँ... लेकिन उस दिन गेसू आयी। उस ने मुझे फिर पुराने दिनों की याद दिला दी और फिर जैसे पम्मी के लिए आकर्षण उखड़-सा गया। अच्छा सुधा, एक बात बताओ। तुम यह मानती हो कि कभी-कभी एक व्यक्ति के माध्यम से दूसरे व्यक्ति की भावनाओं की अनुभूति होने लगती है?"

"क्या मतलब?"

"मेरा मतलब जैसे मुझे गेसू की बातों में उस दिन ऐसा लगा, जैसे तुम बोल रही हो। और दूसरी बात तुम्हें बताऊँ। तुम्हारे पीछे विनती रही मेरे पास। सारे अँधेरे में वही एक रोशनी थी, बड़ी क्षीण, टिम-टिमाती हुई, सारहीन-सी रोशनी। बल्कि मुझे तो लगता था कि वह रोशन ही इसलिए थी कि उस में रोशनी तुम्हारी थी। मैं ने कुछ दिन विनती को बहुत प्यार किया। मुझे ऐसा लगता था कि अभी तक तुम मेरे सामने थीं, अब तुम उस के माध्यम से आती हो। लगता था जैसे वह एक व्यक्तित्व नहीं है, तुम्हारे व्यक्तित्व का ही अंश है। उस लड़की

में जिस अंश तक तुम थी वह अंश बार-बार मेरे मन में रस उभार देता था। क्यों सुधा ! मन की यह भी कैसी अजब-सी गति है !"

सुधा थोड़ी देर तक चुप रही फिर बोली—"भागवत में एक जगह एक टीका में हम ने पढ़ा था चन्दर कि जिस को भगवान् बहुत प्यार करते हैं, उस में उन की अंशाभिव्यक्ति होती है। बहुत बड़ा वैज्ञानिक सत्य है यह ! मैं बिनती को बहुत प्यार करती हूँ चन्दर !"

"समझ गया मैं।" चन्दर बोला—"अब मैं समझा मेरे मन में इतने गुनाह कहाँ से आये। तुम ने मुझे बहुत प्यार किया और वही तुम्हारे व्यक्तित्व के गुनाह मेरे व्यक्तित्व में उतर आये।"

सुधा खिलखिला कर हँस पड़ी। चन्दर के कन्धे पर हाथ रख कर बोली—"इसी तरह हँसते-बोलते रहते तो क्यों यह हाल होता ? मन-मौजी हो। जब चाहा खुश हो गये, जब चाहा नाराज हो गये !"

उस के बाद वह उठी और बाहर से एक तश्तरी में कुछ फल काट कर लायी। चन्दर ने देखा—आम। "अरे आम ! अभी कहाँ से आम ले आयी ? कौन लाया ?"

"लखनऊ उतरी थी ! वहाँ से तुम्हारे लिए लेती आयी।"

चन्दर ने एक आम की फाँक उठा कर खायी और किसी पुरानी घटना की याद दिलाने के लिए आँचल में हाथ पोंछ दिये। सुधा हँस पड़ी और बड़ी दुलार-भरी ताड़ना के स्वर में बोली—"बोलो, अब तो दिमाग नहीं बिगाड़ोगे अपना ?"

"कभी नहीं सुधी, लेकिन पम्मी का क्या होगा ? पम्मी से मैं सम्बन्ध नहीं तोड़ सकता। व्यवहार जितना कहो सीमित कर दूँ।"

"मैं कब कहती हूँ, मैं तो तुम्हें कहीं से कभी बाँधना ही नहीं चाहती। जानती हूँ कि अगर चाहूँ भी तो कभी अपने मन के बाहुपाश ढीले कर तुम्हें चिरमुक्ति तो मैं न दे पाऊँगी, तो भला बन्धन ही क्यों दोऊँ। पम्मी शाम को आयेगी।"

"शायद•••"

दरवाज़ा खटका और गेसू ने प्रवेश किया। आ कर, दौड कर, सुधा से लिपट गयी। चन्दर उठ कर चला आया। "चले कहाँ भाई जान, बैठिए न।"

"नहा लूँ, तब आता हूँ" चन्दर चल दिया। वह इतना खुश था, इतना खुश कि बाथ-रूम में खूब गाता रहा और नहा चुकने के बाद उसे खयाल आया कि उस ने बनियाइन उतारी ही नहीं थी। नहा कर कपडे बदल कर वह आया तब भी गुनगुना रहा था। कमरे में आया तो देखा गेसू अकेली बैठी है।

"सुधा कहाँ गयी?" चन्दर ने नाचते हुए स्वरों में कहा।

"गयी है शरबत बनाने।" गेसू ने चुन्नी से सिर ढँकते हुए और पाँवों को सलवार से ढँकते हुए कहा। चन्दर इधर-उधर बक्स में रूमाल ढूँढ़ने लगा।

"आज बडे खुश हैं चन्दर भाई! कोई खोयी हुई चीज़ मिल गयी है क्या? अरे मैं बहन हूँ कुछ इनाम ही दे दीजिए।" गेसू ने चुटकी ली।

"इनाम की बात क्या, कहो तो वह चीज ही तुम्हें दे दूँ।"

"हाँ, कैलाश बाबू के दिल से पूछिए।" गेसू बोली।

"उन के दिल से तुम्हीं बात कर सकती हो।"

गेसू ने झेंप कर मुँह फेर लिया।

सुधा हाथ में दो गिलास लिये आयी। "लो गेसू पियो।" एक गिलास गेसू को दे कर बोली—"चन्दर, लो।"

"तुम पियो न!"

"नहीं, मैं नहीं पिऊँगी। बरफ मुझे नुकसान करेगा।" सुधा ने चुप-चाप कहा। चन्दर को याद आ गया। पहले सुधा चिट-चिढ़ कर अपने-आप चाय, शरबत पी जाती थी•• और आज

"क्या ढूँढ़ रहे हो चन्दर?" सुधा बोली।

"रूमाल कोई मिल ही नही रही है !"

"साल-भर में रूमाल खो दिये होगे ! मैं तो तुम्हारी आदत जानती हूं। आज कपडा ला दो, कल सुबह रूमाल सी दूं तुम्हारे लिए।" और उठ कर उस ने कैलाश के बक्स से एक रूमाल निकाल कर दे दिया।

उस के बाद चन्दर बाजार गया और कैलाश के लिए तथा सुधा के लिए कुछ कपडे खरीद लाया। इस के साथ ही कुछ नमकीन जो सुधा को पसन्द था, पेठा, एक तरबूज, एक बोतल गुलाब का शरबत, एक सुन्दर-सा पेन और जाने क्या-क्या खरीद लाया। सुधा ने देख कर कहा—'पापा नहीं है, फिर भी लगता है मैं मायके आयी हूं !" लेकिन वह कुछ खा-पी नही सकी।

चन्दर खाना खा कर लॉन में बैठ गया, वही उस ने अपनी चारपाई भी डलवा ली। सुधा के बिस्तर छत पर लगे थे। उस के पास महराजिन सोने वाली थी। सुधा एक तश्तरी में तरबूज काट कर ले आयी और कुरसी डाल कर चन्दर की चारपाई के पास बैठ गयी। चन्दर तरबूज खाता रहा थोडी देर बाद सुधा बोली—

"चन्दर, बिनती के बारे में तुम्हारी क्या राय है ?"

"राय ? राय क्या होती ? बहुत अच्छी लडकी है ! तुम से तो अच्छी ही है !" चन्दर ने छेडा।

"अरे मुझ से अच्छी तो दुनिया है, लेकिन एक बात पूछें ? बहुत गम्भीर बात है।"

"क्या ?"

"तुम बिनती से ब्याह कर लो।"

"बिनती से ! कुछ दिमाग तो नही खराब हो गया है ?"

'नही ! इस बारे में पहले-पहल 'ये' बोले कि चन्दर से बिनती का ब्याह क्यो नही करती, तो मैं ने चुपचाप पापा से पूछा। पापा बिलकुल राजी है, लेकिन बोले मुझ से कि तुम्ही कहो चन्दर से। कर लो चन्दर !

बुआजी अब दखल नही देंगी।"

चन्दर हँस पडा—"अच्छी खुराफातें तुम्हारे दिमाग में उठती है। याद है, एक बार और तुम ने ब्याह करने लिए कहा था ?"

सुधा के मुँह से एक हलका नि श्वास निकल पडा—"हाँ याद है। खैर तब की बात दूसरी थी अब तो तुम्हें कर लेना चाहिए।"

"नही सुधा, शादी तो मुझे नही ही करनी है। तुम कह क्यो रही हो ? तुम मेरे बिनती के सम्बन्धो को कुछ गलत तो नही समझ रही हो ?"

"नही जी, लेकिन यह जानती हूँ बिनती तुम पर अन्धश्रद्धा रखती है। उस से अच्छी लडकी तुम्हें मिलेगी नही। कम से कम जिन्दगी तुम्हारी व्यवस्थित हो जायेगी।"

चन्दर हँसा "मेरी जिन्दगी शादी से नही, प्यार से सुधरेगी सुधा ! कोई ऐसी लडकी ढूँढ दो जो तुम्हारी ऐसी हो और प्यार करे तो मैं समझूँ भी कि तुम ने कुछ किया मेरे लिए। शादी-वादी बेकार है और कोई बात करनी है या नही ?"

"नही चन्दर, शादी तो तुम्हें करनी ही होगी। अब मैं ऐसे तुम्हें नही रहने दूँगी। बिनती से न करो तो दूसरी लडकी ढूँढूँगी। लेकिन शादी करनी होगी और मेरी पसन्द से करनी होगी।"

चन्दर एक उपेक्षा की हँसी हँस कर रह गया।

सुधा उठ खडी हुई।

"क्यो, चल दी ?"

"हाँ, अब नीद आ रही होगी तुम्हें, सोओ।"

चन्दर ने रोका नही। उस ने सोचा था सुधा बैठेगी। जाने कितनी बातें करेंगे। वह सुधा से उस का सब हाल पूछेगा, लेकिन सुधा तो जाने कैसी तटस्थ, निरपेक्ष और अपने मे सीमित-सी हो गयी है कि कुछ समझ में नही आता। उस ने चन्दर से सब कुछ जान लिया लेकिन चन्दर के सामने उस ने अपने मन को कही जाहिर ही नही होने दिया। सुधा

उस के पास हो कर भी जाने कितनी दूर थी। सरोवर में डूब कर पछी प्यासा था।

क़रीब घण्टे-भर बाद सुधा दूध का गिलास ले कर आयी। चन्दर को नींद आ गयी थी। वह चन्दर के सिरहाने बैठ गयी—"चन्दर, सो गये क्या ? उठो।"

"क्यों ?" चन्दर घबरा कर उठ बैठा।

"लो दूध पी लो।" सुधा बोली।

"दूध हम नहीं पियेंगे।"

"पी लो, देखो बरफ़ और शरबत मिला दिया है, पी कर तो देखो!"

"नहीं, हम नहीं पियेंगे। अब जाओ हमें नींद लग रही है।" चन्दर गुस्सा था।

"पी ले मेरे राजदुलारे, चमक रहे हैं चांद सितारे......" सुधा ने लोरी गाते हुए चन्दर को अपनी गोद में खींच कर बच्चों की तरह गिलास चन्दर के मुँह से लगा दिया। चन्दर ने चुपचाप दूध पी लिया। सुधा ने गिलास नीचे रख कर कहा—"वाह, ऐसे तो मैं नीलू को दूध पिलाती हूँ।"

"नीलू कौन ?"

"अरे मेरा भतीजा ! शंकर बाबू का लड़का।"

"अच्छा !"

"चन्दर, तुम ने पखा तो छत पर लगा दिया है। तुम कैसे सोओगे ?"

"मुझे नींद आ जायेगी।"

चन्दर फिर लेट गया। सुधा उठी नहीं। वह दूसरी पाटी से हाथ टेक कर चन्दर के वक्ष के आर-पार फूलों के धनुष-सी झुक कर बैठ गयी। एकादशी का स्निग्ध पवित्र चन्द्रमा आसमान की नीली लहरों पर अध-खिले बेल के फूल की तरह कांप रहा था। दूध में नहाये हुए झोंके

चाँदनी से आँखमिचौनी खेल रहे थे। चन्दर आँखें बन्द किये पड़ा था और उस की पलकों पर, उस के माथे पर, उस के होठों पर, चाँदी की पाँखुरियाँ बरस रही थीं। सुधा ने चन्दर का कालर ठीक किया और बड़े ही मधुर स्वर में पूछा—"चन्दर, नींद आ रही है ?"

"नहीं, नींद उचट गयी!" चन्दर ने आँख खोल कर देखा। एकादशी का पवित्र चन्द्रमा आकाश में था, और पूजा से अभिषिक्त एकादशी की उदासी चाँदनी उस के वक्ष पर झुकी बैठी थी। उसे लगा जैसे पवित्रता और अमृत का चम्पई बादल उस के प्राणों में लिपट गया है।

उस ने करवट बदल कर कहा—"सुधा, जिन्दगी का एक पहलू खत्म हुआ, दर्द की एक मंजिल खत्म हो गयी। थकान भी दूर हो गयी, लेकिन अब आगे का रास्ता समझ में नहीं आता। क्या करूँ ?"

"करना बहुत है चन्दर! अपने अन्दर की बुराई से लड़ लिये, अब बाहर की बुराई से लड़ो। मेरा तो सपना था चन्दर कि तुम बहुत बड़े आदमी बनोगे। अपने बारे में तो जो कुछ सोचा था वह सब नसीब ने तोड़ दिया। अब तुम्हीं को देख कर कुछ सन्तोष मिलता है। तुम जितने ऊँचे बनोगे उतना ही चैन मिलेगा। वरना मैं तो नरक में भुन रही हूँ।"

"सुधा, तुम्हारी इसी बात से मेरी सारी हिम्मत, सारा बल टूट जाता है। अगर तुम अपने परिवार में सुखी होतीं तो मेरा भी साहस बँधा रहता। तुम्हारा यह हाल, तुम्हारा यह स्वास्थ्य, यह असमय वैराग्य और पूजा, यह घुटन देख कर लगता है क्या करूँ ? किस के लिए करूँ ?"

"मैं भी क्या करूँ चन्दर! मैं यह जानती हूँ कि अब ये भी मेरा बहुत खयाल रखते हैं, लेकिन इस बात पर मुझे और भी दुःख होता है। मैं इन्हें सन्तुलित कर नहीं पाती और इन की खुल कर उपेक्षा भी नहीं कर पाती। ये अजब-सा नरक है मेरा जीवन भी, लेकिन यह जरूर है चन्दर कि तुम्हें ऊँचा देख कर मैं यह नरक भी भोग ले जाऊँगी। तुम

दिल मत छोटा करो। एक ही जिन्दगी की तो बात है उस के बाद·····"

"लेकिन मैं तो पुनर्जन्म में विश्वास ही नही करता।"

"तब तो और भी अच्छा है, इसी जन्म में जो सुख दे सकते हो दे लो। जितना ऊँचे उठ सकते हो उठ लो।"

"तुम जो रास्ता बताओ वह मैं अपनाने के लिए तैयार हूँ। मैं सोचता हूँ अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठूँ··लेकिन मेरे साथ एक शर्त है। तुम्हारा प्यार मेरे साथ रहे।"

"तो वह अलग कब रहा चन्दर! तुम्ही ने जब चाहा मुँह फेर लिया। लेकिन अब नही। काश कि तुम एक क्षण का भी अनुभव कर पाते कि तुम से दूर वहाँ, वासना की कीचड मे फँसी हुई मैं कितनी व्याकुल, कितनी व्यथित हूँ तो तुम ऐसा कभी न करते। मेरे जीवन में जो कुछ अपूर्णता रह गयी है चन्दर, उस की पूर्णता, उस की सिद्धि तुम्ही हो। तुम्हे मेरे जन्म-जन्मान्तर की शान्ति की सौगन्ध है, तुम अब इस तरह न करना! बस ब्याह कर लो और दृढता से ऊँचाई की ओर उठते चलो।"

"ब्याह के अलावा तुम्हारी सब बाते स्वीकार है। लेकिन फिर तुम अपना प्यार वापस नही लोगी कभी ?"

"कभी नही।"

"और हम कभी नाराज भी हो जायें तो बुरा नही मानोगी ?"

"नही।"

"और हम कभी अगर फिसले तो तुम तटस्थ हो कर नहीं बैठोगी बल्कि बिना डरे हुए मुझे खीच लाओगी उस दलदल से ?"

"यह कठिन है चन्दर, आखिर मेरे भी बन्धन है। लेकिन खैर· अच्छा यह बताओ तुम दिल्ली कब आओगे ?"

"अब दिल्ली तो दशहरे मे आऊँगा। गरमियो में यही रहूँगा।··· लेकिन हो सका तो लौटने के बाद शाहजहाँपुर आऊँगा।"

चाँदनी से आँखमिचौनी खेल रहे थे। चन्दर आँखें बन्द किये पड़ा था और उस की पलकों पर, उस के माथे पर, उस के होंठों पर, चाँदी की पाँखुरियाँ बरस रही थीं। सुधा ने चन्दर का कालर ठीक किया और बड़े ही मधुर स्वर में पूछा—"चन्दर, नींद आ रही है?"

"नहीं, नींद उचट गयी!" चन्दर ने आँख खोल कर देखा। एकादशी का पवित्र चन्द्रमा आकाश में था, और पूजा से अभिषिक्त एकादशी की उदासी चाँदनी उस के वक्ष पर झुकी बैठी थी। उसे लगा जैसे पवित्रता और अमृत का चम्पई बादल उस के प्राणों में लिपट गया है।

उस ने करवट बदल कर कहा—"सुधा, जिन्दगी का एक पहलू खत्म हुआ, दर्द की एक मंजिल खत्म हो गयी। थकान भी दूर हो गयी, लेकिन अब आगे का रास्ता समझ में नहीं आता। क्या करूँ?"

"करना बहुत है चन्दर! अपने अन्दर की बुराई से लड़ लिये, अब बाहर की बुराई से लड़ो। मेरा तो सपना था चन्दर कि तुम बहुत बड़े आदमी बनोगे। अपने बारे में तो जो कुछ सोचा था वह सब नसीब ने तोड़ दिया। अब तुम्हीं को देख कर कुछ सन्तोष मिलता है। तुम जितने ऊँचे बनोगे उतना ही चैन मिलेगा। वरना मैं तो नरक में भुन रही हूँ।"

"सुधा, तुम्हारी इसी बात से मेरी सारी हिम्मत, सारा बल टूट जाता है। अगर तुम अपने परिवार में सुखी होतीं तो मेरा भी साहस बँधा रहता। तुम्हारा यह हाल, तुम्हारा यह स्वास्थ्य, यह असमय वैराग्य और पूजा, यह घुटन देख कर लगता है क्या करूँ? किस के लिए करूँ?"

"मैं भी क्या करूँ चन्दर! मैं यह जानती हूँ कि अब ये भी मेरा बहुत खयाल रखते हैं, लेकिन इस बात पर मुझे और भी दुःख होता है। मैं इन्हें सन्तुलित कर नहीं पाती और इन की खुल कर उपेक्षा भी नहीं कर पाती। ये अजब-सा नरक है मेरा जीवन भी, लेकिन यह जरूर है चन्दर कि तुम्हें ऊँचा देख कर मैं यह नरक भी भोग ले जाऊँगी। तुम

दिल मत छोटा करो। एक ही जिन्दगी की तो बात है उस के बाद·····"

"लेकिन मैं तो पुनर्जन्म में विश्वास ही नही करता।"

"तब तो और भी अच्छा है, इसी जन्म में जो सुख दे सकते हो दे लो। जितना ऊँचे उठ सकते हो उठ लो।"

"तुम जो रास्ता बताओ वह मैं अपनाने के लिए तैयार हूँ। मैं सोचता हूँ अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठूँ···लेकिन मेरे साथ एक शर्त है। तुम्हारा प्यार मेरे साथ रहे।"

"तो वह अलग कब रहा चन्दर! तुम्ही ने जब चाहा मुँह फेर लिया। लेकिन अब नही। काश कि तुम एक क्षण का भी अनुभव कर पाते कि तुम से दूर वहाँ, वासना की कीचड मे फँसी हुई मैं कितनी व्याकुल, कितनी व्यथित हूँ तो तुम ऐसा कभी न करते। मेरे जीवन में जो कुछ अपूर्णता रह गयी है चन्दर, उस की पूर्णता, उस की सिद्धि तुम्ही हो। तुम्हें मेरे जन्म-जन्मान्तर की शान्ति की सौगन्ध है, तुम अब इस तरह न करना! बस ब्याह कर लो और दृढता से ऊँचाई की ओर उठते चलो।"

"ब्याह के अलावा तुम्हारी सब बाते स्वीकार है। लेकिन फिर तुम अपना प्यार वापस नही लोगी कभी?"

"कभी नही।"

"और हम कभी नाराज़ भी हो जायें तो बुरा नही मानोगी?"

"नही!"

"और हम कभी अगर फिसले तो तुम तटस्थ हो कर नही बैठोगी बल्कि बिना डरे हुए मुझे खींच लाओगी उस दलदल से?"

"यह कठिन है चन्दर, आखिर मेरे भी बन्धन है। लेकिन खैर··· अच्छा यह बताओ तुम दिल्ली कब आओगे?"

"अब दिल्ली तो दशहरे मे आऊँगा। गरमियो मे यही रहूँगा।····लेकिन हाँ सरा तो लौटने के बाद शाहजहाँपुर आऊँगा।"

सुधा चुप बैठी रही। चन्दर भी चुपचाप लेट रहा। थोड़ी देर बाद चन्दर ने सुधा की हथेली अपने हाथों पर रख ली और आँखें बन्द कर ली। जब वह सो गया तो सुधा ने धीरे से हाथ उठाया, खड़ी हो गयी। थोड़ी देर अपलक उसे देखती रही और धीरे-धीरे चली आयी।

दूसरे दिन सुबह सुधा ने आ कर चन्दर को जगाया। चन्दर उठ बैठा तो सुधा बोली—

"जल्दी से नहा लो आज तुम्हारे साथ पूजा करेंगे।"

चन्दर उठ बैठा। नहा-धो कर आया तो सुधा ने चौकी के सामने दो आसन बिछा रखे थे। चौकी पर धूप सुलग रही थी और फूल गमक रहे थे। ढेर के ढेर बेले और अगस्त के फूल। चन्दर को बिठा कर सुधा बैठी। उस ने फिर वही वेश धारण कर लिया था। रेशम की धोती और रेशम का एक अन्तर्वासिक, गीले बाल पीठ पर लहरा रहे थे।

"लेकिन मैं बैठा बैठा क्या करूँगा?" उस ने पूछा।

सुधा कुछ नहीं बोली। चुपचाप अपना काम करती गयी। थोड़ी देर बाद उस ने भागवत खोली और बड़े मधुर स्वरों में गोपिका गीत पढ़ती रही। चन्दर संस्कृत नहीं समझता था, पूजा में विश्वास नहीं करता था, लेकिन वह क्षण जाने कैसा लग रहा था। चन्दर की साँस में धूप की पावन सौरभ के डोरे गुँथ गये थे। उस के घुटनों पर रह-रह कर सद्य-स्नाता सुधा के भीगे केशों से गीले मोती चू पड़ते थे। कृशकाय, उदास और पवित्र सुधा के पूजा के प्रसाद-जैसे मधुर स्वर में श्रीमद्भागवत के

श्लोक उस की आत्मा को अमृत से धो रहे थे। लगता था, जैसे इस पूजा की श्रद्धान्विता वेला मे उस के जीवन-भर की भूलें, कमजोरियाँ, गुनाह सभी धुलता जा रहा था। जब सुधा ने भागवत बन्द कर के रख दिया तो पता नही क्यो चन्दर ने प्रणाम कर लिया भागवत को या भागवत की पुजारिन को, यह नही मालूम।

थोडी देर बाद सुधा ने पूजा की थाली उठायी और उस ने चन्दर के माथे पर रोली लगा दी।

"अरे मैं!"

"हाँ तुम! और कौन? मेरे तो दूसरा न कोई!" सुधा बोली और ढेर के ढेर फूल चन्दर के चरणो पर चढा कर, झुक कर चन्दर के चरणो को प्रणाम कर लिया। चन्दर ने घबरा कर पाँव खींच लिये—"मैं इस योग्य नही हूँ सुधा! क्यो लज्जित कर रही हो?"

सुधा कुछ नही बोली। अपने आँचल से एक छलकता हुआ आँसू पोछ कर नाश्ता लाने चली गयी।

जब वह युनिवर्सिटी से लौटा तो देखा सुधा मशीन रखे कुछ सिल रही है। चन्दर ने कपडे बदल कर पूछा—"कहो क्या सिल रही हो?"

"रूमाल और बनियाइन! कैसे काम चलता था तुम्हारा? न सन्दूक मे एक भी रूमाल है, न एक भी बनियाइन। लापरवाही की भी हद है। तभी कहती हूँ ब्याह कर लो!"

"हाँ, किसी दर्जी की लडकी से ब्याह करवा दो!" चन्दर खाट पर बैठ गया और सुधा मशीन पर बैठी-बैठी सिलती रही। थोडी देर बाद सहसा उस ने मशीन रोक दी और एक दम से घबडा कर उठी।

"क्या हुआ सुधा?"

"बहुत दर्द हो रहा है!" वह उठी और खाट पर बेहोश-सी पड रही। चन्दर दौड कर पंखा उठा लाया और झलने लगा। "डॉक्टर बुला लाऊँ?"

"नही, अभी ठीक हो जाऊँगी। उबकाई आ रही है !" सुधा उठी।

"जाओ मत, मैं पीकदान उठा लाता हूँ।" चन्दर ने पीकदान उठा कर रख दिया और सुधा की पीठ सहलाने लगा। फिर सुधा हाँफती-सी लेट गयी। चन्दर दौड कर इलायची और पानी ले आया। सुधा ने इलायची खायी और फिर पड रही। उस के माथे पर पसीना झलक आया।

"अब कैसी तबीयत है सुधा ?"

"बहुत दर्द है अग-अग मे मशीन चलाना नुक़सान कर गया।"

सुधा ने बहुत क्षीण स्वरो में कहा।

"जाऊँ किसी डॉक्टर को बुला लाऊँ !"

"बेकार है चन्दर ! मैं तो लखनऊ में दिखा आयी। इस रोग का क्या इलाज है। यह तो जिन्दगी-भर का अभिशाप है !"

"क्या बीमारी बतायी तुम्हें ?"

"कुछ नही।"

"बताओ न ?"

"क्या बताऊँ चन्दर !" सुधा ने बडी कातर निगाहो से चन्दर की ओर देखा और फिर फूट-फूट कर रो पडी। बुरी तरह सिसकने लगी। सुधा चुपचाप पडी कराहती रही। चन्दर ने अटैची मे-से दवा निकाल कर दी। कॉलिज नही गया। दो घण्टे बाद सुधा कुछ ठीक हुई। उस ने एक गहरी साँस ली और तकिये के सहारे उठ कर बैठ गयी। चन्दर ने और कई तकिये पीछे रख दिये। दो ही घण्टे मे सुधा का चेहरा पीला पड़ गया। चन्दर चुपचाप उदास बैठा रहा।

उस दिन सुधा ने खाना नही खाया। सिर्फ फल लिये। दोपहर को दो बजे भयकर लू में कैलाश वापस आया, और आते ही चन्दर से पूछा—"सुधा की तबीयत तो ठीक रही ?" यह जान कर कि सुबह खराब हो गयी थी, वह कपडे उतारने के पहले सुधा के कमरे मे गया और अपने हाथ से दवा दे कर फिर कपडे बदल कर सुधा के कमरे मे जा कर सो गया।

वहुत थका मालूम पडता था।

चन्दर आ कर अपने कमरे में कॉपियाँ जाँचता रहा। शाम को कामिनी, प्रभा तथा कई लडकियाँ, जिन्हें गेसू ने खवर दे दी थी, आयी और सुधा और कैलाश को घेरे रही। चन्दर उन की खातिर-तवज्जो मे लगा रहा। रात को कैलाश ने उसे अपनी छत पर बुला लिया और चन्दर के भविष्य के कार्यक्रम के वारे में वात करता रहा। जव कैलाश को नीद आने लगी तव वह उठ कर लॉन पर लौट आया और लेट गया।

वहुत देर तक उसे नीद नही आयी। वह सुधा की तकलीफो के वारे में सोचता रहा। उधर सुधा वहुत देर तक करवटें वदलती रही। यह दो दिन सपनो की तरह वीत गये और कल वह फिर चली जायेगी चन्दर से दूर, न जाने कव तक के लिए।

सुवह से ही सुधा जैसे वुझ गयी थी। कल तक तो उस में उल्लास वापस आ गया था। वह जैसे कैलाश की छांह ने ही ग्रस लिया था। चन्दर के कॉलेज का आखिरी दिन था। चन्दर कैलाश को ले गया और अपने मित्रो से, प्रोफ़ेसरो से उस का परिचय करा लाया। एक प्रोफेसर, जिन की आदत थी कि वे कांग्रेस सरकार से सम्वन्धित हर व्यक्ति को दावत जरूर देते थे, उन्होने कैलाश को शाम को दावत दी क्योकि वह सास्कृतिक मिशन मे जा रहा था।

वापस जाने के लिए रात की गाडी तय रही। हफ्ते-भर वाद ही कैलाश को जाना था अत वह ज्यादा नही रुक सकता था। दोपहर का खाना दोनो ने साथ खाया। सुधा महराजिन का लिहाज़ करती थी अत. वह कैलाश के साथ खाने नही वैठी। निश्चय हुआ कि अभी से सामान वाध लिया जाये ताकि पार्टी के वाद सीधे स्टेशन जा सकें।

जव सुधा ने चन्दर के लाये हुए कपडे कैलाश को दिखाये तो उसे वडा ताज्जुव हुआ। लेकिन उस ने कुछ नही कहा, कपडे रख लिये और चन्दर से जाकर वोला—"अव जव तुम ने लेने-देने का व्यवहार ही निभाया

सुधा बोली—"तो सितम्बर में आओगे न चन्दर ?"

"हाँ-हाँ !"

"जरूर से ? फिर उस वक्त कोई बहाना न बना देना ।"

"जरूर आऊँगा !"

कैलाश उतर कर कुछ लेने गया तो सुधा ने अपनी आँख से आँसू पोंछ कर झुक कर चन्दर के पाँव छू लिये और रो कर बोली—"चन्दर अब बहुत टूट चुकी हूँ "अब हाथ न खींच लेना " और उस का गला रुंध गया ।

चन्दर ने सुधा के हाथों को अपने हाथ में ले लिया और कुछ भी नहीं बोला—सुधा थोडी देर चुप रही—फिर बोली—

"चन्दर, चुप क्यों हो ? अब तो नफरत नहीं करोगे ? मैं बहुत अभागी हूँ देवता ! तुम ने क्या बनाया था और अब क्या हो गयी ! देखो अब चिट्ठी लिखते रहना । नहीं सहारा टूट जाता है " और फिर वह रो पडी ।

कैलाश कुछ किताबें और पत्रिकाएँ खरीद कर वापस आ गया । दोनों बैठ कर बातें करते रहे । यह निश्चय हुआ कि जब कैलाश लौटेगा तो बजाय बम्बई से सीधे दिल्ली जाने के, वह प्रयाग से होता हुआ जायेगा ।

गाडी चली तो चन्दर ने कैलाश को बहुत प्यार से गले लगा लिया । जब तक गाडी प्लेटफ़ॉर्म के अन्दर रही, सुधा सिर निकाले झाँकती रही । प्लेटफॉर्म के बाहर भी पीली चाँदनी में सुधा का फहराता हुआ आँचल दीखता रहा । धीरे-धीरे वह एक सफ़ेद बिन्दु बन कर अदृश्य हो गया । गाडी एक विशाल अजगर की तरह चाँदनी में रेंगती चली जा रही थी ।

जब मन में प्यार जाग जाता है तो प्यार की किरन बादलों में छिप जाती है। अजब थी चन्दर की किस्मत। इस बार तो, सुधा गयी थी तो उस के तन-मन को एक गुलाबी नशे में शराबोर कर गयी थी। चन्दर उदास नहीं था। वह बेहद खुश था। खूब घूमता था, और गरमी के बावजूद खूब काम करता था। अपने पुराने नोट्स निकाल लिये थे और एक नयी किताब की रूपरेखा सोच रहा था। उसे लगता था कि उस का पौरुष, उस की शक्ति, उस का ओज, उस की दृढता, सभी कुछ लौट आया है। उसे हरदम लगता कि गुलाबी पाँखुरियों की एक छाया हमेशा उस की आत्मा को चूमती रहती है। वह जब कभी लेटता तो उसे लगता कि सुधा फूलों के धनुष की तरह उस के पलंग के आर-पार पाटी पर हाथ टेके बैठी है। उसे लगता—कमरे में अब भी धूप की सौरभ लहरा रही है और हवाओं में सुधा के मधुर कण्ठ के श्लोक गूँज रहे हैं।

दो ही दिन में चन्दर को लग रहा था कि उस की जिन्दगी में जहाँ जो कुछ टूट-फूट गया है वह सब सम्हल रहा है। वह सब अभाव धीरे-धीरे भर रहा है। उस के मन का पूजा-गृह जो खण्डहर हो चुका था, सहसा उस पर जैसे किसी ने आँसू छिड़क कर जीवन के वरदान से अभिषिक्त कर दिया था। पत्थर के बीच दब कर पिसे हुए पूजा-गीत फिर से सस्वर हो उठे थे। मुरझाये हुए पूजा-फूलों की पाँखुरियों में फिर रस छलक आया था। और रंग चमक उठे थे। धीरे-धीरे मन्दिर का कँगूरा फिर सितारों से समझौता करने की तैयारी करने लगा था। चन्दर की नसों ने वेद-मन्त्रों की पवित्रता और व्रज की वंशी की मधुराई पलकों में परखें डाल कर नाच उठे थे। सारा काम जैसे वह किसी अदृश्य आत्मा

की आज्ञा से करता था। वह आत्मा सिवा सुधा के और भला किस की थी। वह सुधामय हो रहा था। उस के क़दम-क़दम में, बात-बात में, साँस-साँस में सुधा का प्यार फिर से लौट आता था।

तीसरे दिन विनती का एक पत्र आया। विनती ने उसे दिल्ली बुलाया था और मामाजी (डॉक्टर शुक्ला) भी चाहते थे कि चन्दर कुछ दिन के लिए दिल्ली चला आये तो अच्छा है। चन्दर के लिए कुछ कोशिश भी कर रहे थे। उस ने लिख दिया कि वह मई के अन्त या जून के प्रारम्भ में आयेगा। और विनती को बहुत, बहुत-सा स्नेह। उस ने सुधा के आने की बात नहीं लिखी क्योंकि कैलाश ने मना कर दिया था।

सुबह चन्दर गंगा नहाता, नयी पुस्तकें पढ़ता अपने नोट्स दोहराता। दोपहर को सोता और रेडियो बजाता, शाम को घूमता और सिनेमा देखता, सोते वक्त कविताएँ पढ़ता और सुधा के प्यार के बादलों में मुँह छिपा कर सो जाता। जिस दिन कैलाश जाने वाला था, उसी दिन उस का एक पत्र आया कि वह और सुधा दिल्ली आ गये हैं। शंकर भइया और नीलू उसे पहुँचाने बम्बई जायेंगे। चन्दर सुधा के इलाहाबाद जाने का ज़िक्र किसी को भी न लिखे। यह उस के और चन्दर के बीच की बात थी। ख़त के नीचे सुधा की कुछ लाइनें थी—

"चन्दर,

राम-राम। तुम ने मुझे जो साड़ी दी थी वह क्या अपनी भावी श्रीमती के नाप की थी? वह मेरे घुटनों तक आती है। बूढ़ी हो कर घिस जाऊँगी तो उसे पहना करूँगी—अच्छा स्नेह। और जो तुम से कह आयी हूँ उन बातों का ध्यान रहेगा न? मेरी तन्दुरुस्ती ठीक है। इधर मैं ने गान्धीजी की आत्मकथा पढ़नी शुरू की है।

तुम्हारी ही सुधा"

—और हाँ, लालाजी मिठाई खिलाओ, दिल्ली में बहुत ख़बर है कि शरणार्थी विभाग में प्रयाग के एक और प्रोफ़ेसर आने वाले हैं।"

कैलाश तो अब बम्बई चल दिया होगा। बम्बई के पते से उस ने बधाई का एक तार भेज दिया और सुधा को एयर मेल से उस ने एक ख़त भेजा जिस में उस ने बहुत-सी मिठाइयों का चित्र बना दिया था।

लेकिन वह एक पशोपेश में पड गया। दिल्ली जाये या न जाये। वह अपने अन्तर्मन से सरकारी नौकरी का विरोधी था। उसे तत्कालीन भारतीय सरकार और ब्रिटिश सरकार में ज्यादा अन्तर नहीं लगता था। फिर हर दृष्टिकोण से वह समाजवादियों से अधिक समीप था। और अब वह सुधा से वायदा कर चुका था कि वह काम करेगा। ऊँचा बनेगा। प्रसिद्ध होगा, लेकिन पद स्वीकार कर ऊँचा बनना उस के चरित्र के विरुद्ध था। किन्तु डॉक्टर शुक्ला कोशिश कर रहे थे। चन्दर केन्द्रीय सरकार के किसी ऊँचे पद पर आवे, यह उन का सपना था। चन्दर को कॉलेज की स्वच्छन्द और ढीली नौकरी पसन्द थी। अन्त में उस ने यह सोचा कि पहले नौकरी स्वीकार कर लेगा। बाद में फिर कॉलेज चला आयेगा—एक दिन रात को जब वह बिजली बुझा कर, किताब बन्द कर सीने पर रख कर सितारों को देख रहा था और सोच रहा था कि अब सुधा दिल्ली से लौट गयी होगी, अगर दिल्ली वह गया तो बँगले में किसे टिका जायेगा इतने में किसी व्यक्ति ने फाटक खोल कर बँगले में प्रवेश किया। उसे ताज्जुब हुआ कि इतनी रात को कौन आ सकता है, और वह भी साइकिल ले कर! उस ने बिजली जला दी। तारवाला था।

साइकिल खड़ी कर, तारवाला लॉन पर चला गया और तार दे दिया। दस्तख़त कर के उस ने लिफाफा फाडा। तार डॉक्टर साहब का था। लिखा था कि "अगली ट्रेन से ही फौरन चले आओ। स्टेशन पर तुम्हारी कार होगी स्लेटी रंग की।" उस के मन ने फौरन कहा—चन्दर हो गये तुम केन्द्र में।

उस की आँखों में नींद गायब हो गयी। वह उठा, अगली ट्रेन सुबह तीन बजे जाती थी। ग्यारह बजे थे। अभी चार घण्टे थे। उस ने एक

अटैची में कुछ अच्छे से अच्छे सूट रखे, किताबें रखी, और माली को सहेज कर चल दिया। मोटर को स्टेशन से वापस लाने की दिक्कत होती, ड्राइवर अब था नहीं, अत नौकर को अटैची दे कर पैदल चल दिया। राह में सिनेमा से लौटता हुआ एक रिक्शा मिल गया।

चन्दर ने सेकेण्ड क्लास का टिकिट लिया और ठाट से चला। कानपुर पर उस ने सादी चाय पी और इटावे पर रेस्टोराँ-कार में जा कर खाना खाया। उस के बगल में एक मारवाडी दम्पत्ति बैठे थे जो सेकेण्ड क्लास का किराया खर्च कर के प्रायश्चित्तस्वरूप, एक आने की पकौडी और दो आने की दालमोट से उदर-पूर्ति कर रहे थे। हाथरस स्टेशन पर एक मजेदार घटना घटी। हाथरस में छोटी और बडी लाइनें क्राँस करती हैं। छोटी लाइन ऊपर पुल पर खडी होती है। स्टेशन के पास जब ट्रेन धीमी हुई तो सेठजी सो रहे थे। सेठानी ने बाहर झाँक कर देखा और निस्सकोच उन के पृथुल उदर पर कर-प्रहार कर के कहा—"हो! देखो रेलगाडी के सिर पर रेलगाडी!" सेठ एकदम चौंक कर जागे और उछल कर बोले—"बाप रे बाप! उलट गयी रेलगाडी। जल्दी सामान उतार। लुट गये राम! ये तो जगल है। कहते थे जेवर न ले चल।"

चन्दर खिलखिला कर हँस पडा। सेठजी ने परिस्थिति समझी और चुपचाप बैठ गये। चन्दर करवट बदल कर फिर पढने लगा।

इतने में ऊपर की गाडी से उतर कर कोई औरत हाथ में एक गठरी लिये आयी और अन्दर ज्यो ही घुसी कि मारवाडी बोला—"बुड्ढी, ये सैकेण्ड क्लास है।"

"होई! सैकेण्ड-थर्ड तो सब गोविन्द जी की माया है बच्चा!"

चन्दर का मुँह दूसरी ओर था, लेकिन उस ने सोचा गोविन्द जी की माया का वर्णन और विश्लेषण करते हुए रेल के डिब्बों के वर्गीकरण को भी माया जाल बताना शायद भागवतकार की दिव्यदृष्टि से सम्भव होगा। लेकिन वह मारवाडी कोई सुवा तो था नहीं कि वैष्णव साहित्य और

गोविन्द जी की माया का भक्त होता । जब उस ने कहा गार्ड साहब को बुलाऊँ—तो बुढ़िया गरज उठी—"बस-बस, चल हुआँ से, गार्ड का तोर दमाद लगत है जौन बुलाइहै । मोटका कद्दू !"

चन्दर हँस पड़ा कम से कम गाली की नवीनता पर । दूसरी बात, गाड़ी उस समय ब्रजक्षेत्र में थी, वहाँ यह अवधी का सफल वक्ता कौन है । उस ने घूम कर देखा । एक बुढ़िया थी, सिर मुड़ाये । उस ने कहीं देखा है इसे ।

"कहाँ जाओगी माई ?"

"कानपुर जाबै ।"

"लेकिन यह गाड़ी तो दिल्ली जायेगी ?"

"तुहूँ बोल्यो टुप्प से ! हम ऐसे धमकावे में नै आइत । ई कानपुरै जइहै ।" उस ने हाथ नचा कर चन्दर से कहा । और फिर जाने क्यों रुक गयी और चन्दर की ओर देखवे लगी । फिर बोली—"अरे चन्दर, बेटवा कहाँ से आवत हौ तू !"

"ओह ! बुआ जी हैं । सिर मुड़ा दिया तो पहचान में ही नहीं आती ।" चन्दर ने फौरन उठ कर पाँव छुए । बुआजी वृन्दावन से आ रही थी । वह बैठ गयी और बोली—"ऊ नटनियाँ मर गयी कि अबहिन है ?"

"कौन ?"

"ओही बिनती !"

"मरेगी क्यों ?"

"भइया ! सुकुल तो हमार कुल डुबोय दिहिन । लेकिन जैसे ऊ हमरी बिटिया को मटवा तरे से उठाय लिहिन वैसे भगवान चाही तो उनहू का लर्को से समझी !"

चन्दर कुछ नहीं बोला । थोड़ी देर बाद खुद बड़बड़ाती हुई बुआजी बोली—'अब हमे का करै को है । हम सब मोह-माया त्याग दिया ।

लेकिन हमरे त्याग में कुच्छौ समरथ है तो सुकुल को वदला मिलिहै !"

कानपुर की गाडी आयी तो चन्दर खुद उन्हें विठाल आया। विचित्र थी बुआजी, वेचारी कभी समझ ही न पायी कि विनती को उठा कर डॉक्टर साहव ने उपकार किया या अपकार और मजा तो यह है कि एक ही वाक्य के पूर्वार्द्ध में मायामोह से विरक्ति की घोपणा और उत्तरार्द्ध मे दुर्वासा का शाप हिन्दुस्तान के सिवा ऐसे नमूने कही भी मिलने मुश्किल हैं। इतने मे चन्दर को गाडी ने सीटी दी। वह भागा। बुआजी ने चन्दर का खयाल छोड कर अपने वग़ल के मुसाफिर से लडना शुरू कर दिया।

वह दिल्ली पहुँचा। दो-तीन साल पहले भी वह दिल्ली आया था लेकिन अव तो दिल्ली स्टेशन की चहल-पहल ही दूसरी थी। गाडी घण्टे-भर लेट थी। नौ वज चुके थे। अगर मोटर न मिली तो भी इतनी मशहूर सडक पर डॉक्टर साहव का वँगला था कि चन्दर को विशेप दिक़्क़त न होती। लेकिन ज्यो ही वह प्लेटफ़ॉर्म से वाहर निकला तो उस ने देखा कि जहाँ मरकरी की वडी सर्चलाइट लगी है ठीक उसी के नीचे स्लेटी रग की शानदार कार खडी थी जिस के आगे-पीछे क्राउन लगा था और सामने तिरगा, आगे लाल वर्दी पहने एक खानसामा वैठा है और पीछे एक सिख ड्राइवर खडा है। चन्दर का सूट चाहे जितना अच्छा हो लेकिन इस शान के लायक़ तो नही ही था। फिर भी वह वडे रोव से गया और ड्राइवर से वोला—"यह किस की मोटर है ?"

"सकारी गड्डी हैज्जी।" सिख ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया।

"क्या यह डॉक्टर शुक्ला ने भेजी है ?"

"जी हाँ हुजूर !" एकदम उस का स्वर वदल गया—"आप ही उन के लडके हैं—चन्दर वहादुर साहव ?" उस ने उतर कर सलाम किया। दरवाजा खोला, चन्दर वैठ गया। क़ुली को एक अटैची के लिए एक अठन्नी दी—मोटर उड चली।

चन्दर वहुत उदार विचारो का था लेकिन आज तक वह डॉक्टर साहब की उन्नीसवी सदी वाली पुरानी कार पर ही चढ़ा था। इस राज-मुकुट और राष्ट्रीय ध्वज से सुशोभित मोटर पर खानसामे के साथ चढने का उस का पहला ही मौक़ा था। उसे लगा जैसे इस समय तिरगे का गौरव और महान् ब्रिटिश साम्राज्य के इस क्राउन का शासनदम्भ उस के मन को उडाये लिये जा रहा है। चन्दर तन कर बैठा लेकिन थोडी देर वाद स्वय उसे अपने मन पर हँसी आ गयी। फिर वह सोचने लगा कि जिन लोगो के हाथ में आज शासन-सत्ता है, मोटरो और खानसामो ने उन के हृदय को इस तरह वदल दिया हैं। वे भी तो वेचारे आदमी हैं, इतने दिनो से प्रभुता के प्यासे। वेकार हम लोग उन्हें गाली देते हैं। फिर चन्दर उन लोगो का खयाल कर के हँस पडा।

दिल्ली मे इलाहावाद की अपेक्षा कम गरमी थी। कार एक वँगले के अन्दर मुडी और पोर्टिको में रुक गयी। वँगला नये सादे अमेरिकन ढग का वना हुआ था। खानसामे ने उतर कर दरवाजा खोला। चन्दर उतर पडा। ड्राइवर ने हार्न दिया। दरवाज़ा खुला और विनती निकली। उन का मुँह सूखा हुआ था, वाल अस्त-व्यस्त थे और आँखें जैसे रो-रो कर सूज गयी थी। चन्दर का दिल धक् से हो गया, राह-भर के सुनहरे सपने टूट गये।

"क्या वात है विनती ? अच्छी तो हो ?" चन्दर ने पूछा।

"आओ अन्दर !" विनती ने कहा और अन्दर जाते ही दरवाज़ा वन्द कर दिया और चन्दर की वाँह पकड कर सिसक-सिसक कर रो पडी। चन्दर घवडा गया। "क्या वात है ? वताओ न ? डॉक्टर साहव कहाँ है ?"

"अन्दर है।"

"तव क्या हुआ ? तुम इतनी दु खी क्यो हो ?" चन्दर ने विनती के सिर पर हाथ रख कर पूछा •उसे लगा जैसे इस समस्त वातावरण पर

किसी बडे भयानक मृत्यु-दूत के पखो की काली छाया है · "क्या बात है ? बताती क्यों नही ?"

विनती बडी मुश्किल से बोली—"दीदी, सुधा दीदी "

चन्दर को लगा जैसे उस पर बिजली टूट पडी—"क्या हुआ सुधा को ?" बिनती कुछ नही बोली, उसे ऊपर ले गयी और कमरे के पास जा कर बोली—"उसी में हैं दीदी !"

कमरे के अन्दर की रोशनी उदास, फीकी और बीमार थी। एक नर्स सफेद पोशाक पहने पलग के सिरहाने खडी थी, और एक कुरसी पर सिर झुकाये डॉक्टर साहब बैठे थे। पलग पर चादर ओढे सुधा पडी थी, नर्स सामने थी, अत: सुधा का चेहरा नही दिखाई पड रहा था। चन्दर के भीतर पांव रखते ही नर्स ने आँख के इशारे से कहा—"बाहर जाइए।" चन्दर ठिठक कर खडा हो गया, डॉक्टर साहब ने देखा, और वे भी उठ कर चले आये।

"क्या हुआ सुधा को ?" चन्दर ने बहुत व्याकुल, बहुत कातर स्वर में पूछा। डॉक्टर साहब कुछ नही बोले—चुपचाप चन्दर के कन्धे पर हाथ रखे हुए अपने कमरे में आये और बहुत भारी स्वर में बोले—"हमारी बिटिया गयी चन्दर !" और आँसू छलक आये।

"क्या हुआ उसे ?" चन्दर ने फिर उतने ही दु खी स्वर में पूछा।

डॉक्टर साहब क्षण-भर पथरायी आँखों से चन्दर की ओर देखते रहे फिर सिर झुका कर बोले—"एबार्शन !" थोडी देर बाद सिर उठा कर

व्याकुल की तरह चन्दर का कन्धा पकड कर वोले—"चन्दर किसी तरह वचाओ सुधा को, क्या करें कुछ समझ मे नही आता ' अव वचेगी नही परसो से होश नही आया। जाओ कपडे वदलो, खाना खा लो, रात-भर का जागरण होगा "

लेकिन चन्दर उठा नही, कुरसी पर सिर झुकाये वैठा रहा।

सहसा नर्स आ कर वोली—"व्लीडिङ् फिर शुरू हो गयी और नाडी डूव रही है। डॉक्टर को वुलाइए फौरन !" और वह लौट गयी।

डॉक्टर साहव उठ खडे हुए। उन की आँखो में वडी निराशा थी। वडी उदासी से वोले—"जा रहा हूँ चन्दर ! अभी आता हूँ।" चन्दर ने देखा कार वडी तेजी से जा रही है। विनती आ कर वोली—"खाना खा लो चन्दर !" चन्दर ने सुना ही नही।

"यह क्या हुआ विनती !" उस ने घवडायी आवाज में पूछा।

"कुछ समझ में नही आता, उस दिन सुवह जीजाजी गये। दोपहर मे पापा ऑफिस गये थे। मैं सो रही थी। सहसा जीजी चीखी। मैं जागी तो देखा दीदी वेहोश पडी है। मैं ने जल्दी से फोन किया। पापा आये, डॉक्टर आये। वस उस के वाद से पापा और नर्स के अलावा किसी को नही जाने देते दीदी के पास। मुझे भी नही।"

और विनती रो पडी। चन्दर कुछ नही वोला। चुपचाप पत्थर की मूर्ति-सा कुरसी पर वैठा रहा। खिडकी से वाहर की ओर देख रहा था।

थोडी देर में डॉक्टर साहव वापस आये। उन के साथ तीन डॉक्टर थे और एक नर्स। डॉक्टरो ने करीव दस मिनिट तक देखा, फिर अलग कमरे मे जा कर सलाह करने लगे। जव लौटे तो डॉक्टर साहव ने वहुत विह्वल हो कर कहा—"क्या उम्मीद है ?"

"घवडाइए मत, घवडाइए मत—अव तो जव तक अन्दरूनी सव साफ नही हो जायेगा तव तक खून जायेगा। नब्ज के लिए और होश के लिए एक इन्जेक्शन देते हैं—अभी।"

इन्जेक्शन देने के बाद डॉक्टर चले गये। पापा वहीं जा कर बैठ गये। विनती और चन्दर चुपचाप बैठे रहे। क़रीब पांच मिनिट के बाद सुधा ने भयकर स्वर में कराहना शुरू किया। उन कराहों में जैसे उस का कलेजा उलटा आता हो। डॉक्टर साहब उठ कर यहाँ चले आये और चन्दर से बोले—"वेहीमेण्ट ब्लीडिङ्....." और कुरसी पर सिर झुका कर बैठ गये। बग़ल के कमरे से सुधा की दर्दनाक कराहें उठती थी और सन्नाटे में छटपटाने लगती थी। अगर आप ने किसी जिन्दा मुर्ग़ी के पख और पूँछ नोचे जाते हुए देखा हो तभी आप उस का अनुमान कर सकते हैं, उस भयानकता का, जो उन कराहों में थी। थोडी देर तक कराहें बन्द हो गयी फिर सहसा इस बुरी तरह से सुधा चीखी जैसे गाय डकार रही हो। पापा उठ कर भागे—वह भयकर चीख उठी और सन्नाटे में मडराने लगी—विनती रो रही थी—चन्दर का चेहरा पीला पड गया था और पसीने से तर हो गया था वह।

पापा लौट कर आये, "हम लोग देख सकते हैं?" चन्दर ने पूछा।

"अभी नहीं—अब ब्लीडिङ् खत्म है। नर्स अभी कपडे बदल दे तो चलेंगे।"

थोडी देर में तीनों गये और जा कर खडे हो गये। अब चन्दर ने सुधा को देखा। उस का चेहरा सफेद पड गया था। जैसे जाडे के दिनों में थोडी देर पानी में रहने के बाद उँगलियों का रग रक्तहीन श्वेत हो जाता है। गालों की हड्डियाँ निकल आयी थी, और होठ काले पड गये थे। पलकों के चारों ओर कालापन गहरा गया था और आँखें जैसे बाहर निकल पडती थी। खून इतना अधिक गया था कि लगता था बदन पर चमडे की एक हलकी झिल्ली मढ दी गयी हो। यहाँ तक कि भीतर की हड्डी के उतार-चढाव तक स्पष्ट दीख रहे थे। चन्दर ने डरते-डरते माथे पर हाथ रखा। सुधा के होठों में कुछ हरकत हुई, उस ने मुँह खोल दिया और आँख बन्द किये हुए ही उस ने करवट बदली,

फिर कराही और सिर से पैर तक उस का बदन सिहर उठा। नर्स ने नाड़ी देखी और कहा अब ठीक है। कमजोरी बहुत है। थोड़ी देर बाद पसीना निकलना शुरू हुआ। पसीना पोंछते-पोंछते थक गये। विनती बोली डॉक्टर साहब से—"मामाजी, अब आप सो जाइए। हम लोग जग लेंगे आज। नर्स है ही।"

डॉक्टर साहब की आँखें लाल हो रही थीं। सब के कहने पर वह अपनी खाट पर लेट रहे। नर्स बोली—"मैं बाहर आरामकुर्सी पर थोड़ा लेट लूँ। कोई जरूरत हो तो बुला लेना।" चन्दर जा कर सुधा के सिरहाने बैठ गया। विनती बोली—"तुम थके हुए आये हो। जाओ तुम भी सो रहो। मैं देख रही हूँ।"

चन्दर ने कुछ जवाब नहीं दिया। चुपचाप बैठा रहा। विनती ने सभी खिड़कियाँ खोल दीं। और चन्दर के पास ही बैठ गयी। सुधा सो रही थी चुपचाप। थोड़ी देर बाद उठी, घड़ी देखा, मुँह खोल कर दवा दी। सहसा डॉक्टर साहब घबराये हुए-से आये—

"क्या बात है, सुधा क्यों चीखी!"

"कुछ नहीं, सुधा तो सो रही है चुपचाप!" विनती बोली।

"अच्छा, मुझे नींद में लगा कि वह चीखी है।" फिर वह खड़े-खड़े सुधा का माथा सहलाते रहे और फिर लौट गये। नर्स अन्दर थी। विनती चन्दर को बाहर ले आयी और बोली—"देखो, तुम कल जीजा-जी को एक तार दे देना!"

"लेकिन अब वह होंगे कहाँ?"

"विजगापट्टम या कोलम्बो में जहाजी कम्पनी के पते से दिलवा देना तार।"

दोनों फिर जा कर सुधा के पास बैठ गये। नर्स बाहर सो रही थी। साढ़े तीन बज गये थे। ठण्डी हवा चल रही थी। विनती चन्दर के कन्धे पर सिर रख कर सो गयी। सहसा सुधा के होंठ हिले और उस ने

इन्जेक्शन देने के बाद डॉक्टर चले गये। पापा वहीं जा कर बैठ गये। विनती और चन्दर चुपचाप बैठे रहे। क़रीब पांच मिनिट के बाद सुधा ने भयकर स्वर में कराहना शुरू किया। उन कराहों में जैसे उस का कलेजा उलटा आता हो। डॉक्टर साहब उठ कर यहां चले आये और चन्दर से बोले—"वेहीमेण्ट ब्लीडिङ्...." और कुरसी पर सिर झुका कर बैठ गये। बग़ल के कमरे से सुधा की दर्दनाक कराहें उठती थी और सन्नाटे में छटपटाने लगती थी। अगर आप ने किसी जिन्दा मुर्गी के पंख और पूंछ नोचे जाते हुए देखा हो तभी आप उस का अनुमान कर सकते हैं, उस भयानकता का, जो उन कराहों में थी। थोडी देर तक कराहें बन्द हो गयी फिर सहसा इस बुरी तरह से सुधा चीखी जैसे गाय डकार रही हो। पापा उठ कर भागे—वह भयकर चीख उठी और सन्नाटे में मडराने लगी—विनती रो रही थी—चन्दर का चेहरा पीला पड गया था और पसीने से तर हो गया था वह।

पापा लौट कर आये, "हम लोग देख सकते हैं ?" चन्दर ने पूछा।

"अभी नही—अब ब्लीडिङ् खत्म है। नर्स अभी कपडे बदल दे तो चलेंगे।"

थोडी देर में तीनो गये और जा कर खडे हो गये। अब चन्दर ने सुधा को देखा। उस का चेहरा सफ़ेद पड गया था। जैसे जाडे के दिनो में थोडी देर पानी में रहने के बाद उँगलियो का रग रक्तहीन श्वेत हो जाता है। गालो की हड्डियाँ निकल आयी थी, और होठ काले पड गये थे। पलको के चारो ओर कालापन गहरा गया था और आँखें जैसे बाहर निकल पडती थी। खून इतना अधिक गया था कि लगता था बदन पर चमडे की एक हलकी झिल्ली मढ दी गयी हो। यहां तक कि भीतर की हड्डी के उतार-चढाव तक स्पष्ट दीख रहे थे। चन्दर ने डरते-डरते माथे पर हाथ रखा। सुधा के होठो में कुछ हरकत हुई, उस ने मुंह खोल दिया और आंख बन्द किये हुए ही उस ने करवट बदली,

फिर कराही और सिर से पैर तक उस का वदन कांप उठा। नर्स ने नाडी देखी और कहा अब ठीक है। कमजोरी बहुत है। थोडी देर बाद पसीना निकलना शुरू हुआ। पसीना पोछते-पोछते एक बज गये। विनती बोली डॉक्टर साहब से—"मामाजी, अब आप सो जाइए। चन्दर देख लेंगे आज। नर्स है ही।"

डॉक्टर साहब की आंखें लाल हो रही थी। सब के कहने पर वह अपनी खाट पर लेट रहे। नर्स बोली—"मैं बाहर आरामकुरसी पर थोडा बैठ लूं। कोई ज़रूरत हो तो बुला लेना।" चन्दर जा कर सुधा के सिरहाने बैठ गया। विनती बोली—"तुम थके हुए आये हो। चलो तुम भी सो रहो। मैं देख रही हूं।"

चन्दर ने कुछ जवाब नही दिया। चुपचाप बैठा रहा। विनती ने सभी खिडकियां खोल दी। और चन्दर के पास ही बैठ गयी। सुधा सो रही थी चुपचाप। थोडी देर बाद उठी, घडी देखी, मुंह खोल कर दवा दी। सहसा डॉक्टर साहब घबडाये हुए-से आये—

"क्या बात है, सुधा क्यो चीखी !"

"कुछ नही, सुधा तो सो रही है चुपचाप !" विनती बोली।

"अच्छा, मुझे नीद में लगा कि वह चीखी है।" फिर वह खडे-खडे सुधा का माथा सहलाते रहे और फिर लौट गये। नर्स अन्दर थी। विनती चन्दर को बाहर ले आयी और बोली—"देखो, तुम कल जीजा-जी को एक तार दे देना !"

"लेकिन अब वह होंगे कहां ?"

"विजगापट्टम या कोलम्बो में जहाजी कम्पनी के पते से दिलवा देना तार।"

दोनों फिर जा कर सुधा के पास बैठ गये। नर्स बाहर सो रही थी। साढे तीन बज गये थे। ठण्डी हवा चल रही थी। विनती चन्दर के कन्धे पर सिर रख कर सो गयी। सहसा सुधा के होंठ हिले और उस ने

कुछ अस्फुट स्वर में कहा। चन्दर ने सुधा के माथे पर हाथ रखा। माथा सहसा जलने लगा था, चन्दर घबरा उठा। उस ने नर्स को जगाया। नर्स ने बग़ल में थर्मामीटर लगाया तापक्रम एक-सौ पांच था। सारा बदन जल रहा था और रह-रह कर वह कांप उठती थी। चन्दर ने फिर घबरा कर नर्स की ओर देखा। "घबराइए मत! डॉक्टर अभी आयेगा।" लेकिन थोडी देर में हालत और बिगड गयी। और फिर उसी तरह दर्दनाक कराहें सुबह की हवा में सिर पटकने लगी। नर्स ने इन लोगो को बाहर भेज दिया और बदन अँगोछने लगी।

थोडी देर में सुधा ने चीख कर पुकारा—"पापा " इतनी भयानक आवाज़ थी कि जैसे सुधा को नरक के दूत पकडे ले जा रहे हो। पापा गये। सुधा का चेहरा लाल था और वह हाथ पटक रही थी।···पापा को देखते ही बोली—"पापा चन्दर को इलाहाबाद से बुलवा दो।"

"चन्दर आ गया बेटा, अभी बुलाते हैं, ज्यो ही पापा ने माथे पर हाथ रखा कि सुधा चीख उठी··"तुम पापा नही हो ··कौन हो तुम? · दूर हटो, छुओ मत अरे बिनती "

डॉक्टर शुक्ला ने नर्स की ओर देखा। नर्स बोली—

'डेलीरियम (सन्निपात)! डॉक्टर को बुलाइए।"

सुधा ने फिर करवट बदली और नर्स को देख कर बोली—"कौन गेसू आओ बैठो। चन्दर नहा रहा है। अभी बुलाती हूं। अरे चन्दर····" और फिर हांफने लगी, आँखें बन्द कर ली और रो कर बोली—"पापा, तुम कहां चले गये?"

नर्स ने चन्दर और बिनती को बुलाया। बिनती पास जा कर खडी हो गयी—आँसू पोंछ कर बोली—"दीदी, हम आ गये।" और सुधा की बाँह पर हाथ रख दिया। सुधा ने आँखें नही खोली, बिनती के हाथ पर हाथ रख कर बोली—"बिनती, पापा कहां गये हैं?"

"खडे तो हैं मामा जी!"

"झूठ मत बोल कम्बख्त' अच्छा ले शरबत तैयार है, जा चन्दर स्टडी-रूम में पढ रहा है बुला ला, जा!" बिनती फफक कर रो पडी।

"रोती क्यो है?" सुधा ने कराह कर कहा—"मैं जाऊँगी तो चन्दर को तेरे पास छोड जाऊँगी। जा चन्दर को बुला ला नही बरफ घुल जायेगी—शरबत छान लिया है?"

चन्दर आगे आया। रुँधे गले से आँसू पीते हुए बोला—'सुधा, आँखे खोलो। हम आ गये सुधी!"

डॉक्टर साहब कुरसी पर पडे सिसक रहे थे सुधा ने आँखें खोली और चन्दर को देखते ही फिर बहुत जोर से चीखी "'तुम तुम आस्ट्रेलिया से लौट आये? झूठे! तुम चन्दर हो? क्या मैं, तुम्हें पहचानती नही? अब क्या चाहिए? इतना कहा, तुम से हाथ जोडा। मेरी क्या हालत है? लेकिन तुम्हें क्या? जाओ यहाँ से वरना मैं अभी सिर पटक दूँगी' " और सुधा ने सिर पटक दिया—"नही गये?" नर्स ने इशारा किया—चन्दर कमरे के बाहर आया और कुरसी पर सिर झुका कर बैठ गया। सुधा ने आँखें खोली और फटी-फटी आँखो से चारो ओर देखने लगी। फिर नर्स से बोली—

"गेसू, तुम बहुत बहादुर हो! तुम ने अपने को बेचा नही, अपने पैर पर खडी हो। किसी के आश्रय में नही हो। कोई खाना-कपडा दे कर तुम्हें खरीद नही सकता गेसू, बिनती कहाँ गयी…"

"मैं खडी तो हूँ दीदी!"

"है 'अच्छा पापा कहाँ है?" सुधा ने कराह कर पूछा।

डॉक्टर साहब उठ कर आ गये—"बेटा!" बडे दुलार से सुधा के माथे पर हाथ रख कर बोले—सुधा रो पडी—"कहाँ थे पापा अभी तक तुम? हम ने इतना पुकारा न तुम बोले न चन्दर बोला हमें तो डर लग रहा था इतना सूना था…जाओ महराजिन ने रोटी सेंक ली है—खा लो। हाँ, ऐसे बैठ जाओ। लो पापा, हम ने नानखटाई बनायी"

डॉक्टर शुक्ला रोते हुए चले गये—विनती ने चन्दर को बुलाया। देखा चन्दर कुरसी पर हथेली में मुँह छिपाये बैठा था। विनती गयी और चन्दर के कन्धे पर हाथ रखा। चन्दर ने देखा और फिर सिर झुका लिया, "चलो चन्दर, दीदी फिर बेहोश हो गयी।"

इतने में नर्स बोली—"वह फिर होश में आयी हैं, आप लोग वहीं चलिए।"

सुधा ने आँखें खोल दी थीं—चन्दर को देखते ही बोली—"चन्दर! आओ, कोई मास्टर ठीक किया तुम ने? जो कुछ पढ़ा था वह भी भूल रही हूँ। अब इस इम्तहान में पास नहीं होऊँगी।"

"डेलीरियम अब भी है"—नर्स बोली। सहसा सुधा ने चन्दर का हाथ छोड़ दिया और झट से हथेलियाँ आँखों पर रख ली और बोली—"ये कौन आ गया? ये चन्दर नहीं है। चन्दर नहीं है। चन्दर होता तो मुझे डाँटता—क्यों बीमार पड़ी? अब बताओ मैं चन्दर को क्या जवाब दूँगी? चन्दर को बुला दो गेसू! जिन्दगी में दुश्मनी निभायी, अब मौत में तो न निभाये..."

"उफ! मरीज़ के पास इतना आदमी? तभी डेलीरियम होता है।" सहसा डॉक्टर ने प्रवेश किया। कोई दूसरा डॉक्टर था, अँगरेज था। विनती और चन्दर बाहर चले आये। विनती बोली—"ये सिविल सर्जन हैं!" उस ने खून मँगवाया, देखा फिर डॉक्टर शुक्ला को भी हटा दिया। सिर्फ नर्स रह गयी। थोड़ी देर बाद वह निकला तो उस का चेहरा स्याह था। "क्या यह प्रेग्नेन्सी पहली मर्तबा थी?"

"जी हाँ?"

डॉक्टर ने सिर हिलाया और कहा—"अब मामला हाथ से बाहर है। इन्जेक्शन लगेंगे। अस्पताल ले चलिए।"

"डॉक्टर शुक्ला, मवाद आ रहा है, कल तक सारे बदन में फैल जायेगा, किस बेवक़ूफ़ डॉक्टर ने देखा था..."

चन्दर ने फोन किया। अम्बुलेन्स कार आ गयी। सुधा को उठाया गया' ''

दिन बडी ही चिन्ता मे बीता। तीन-तीन घण्टे पर इन्जेक्शन लग रहे थे। दोपहर को दो बजे इन्जेक्शन खत्म कर डॉक्टर ने एक गहरी सांस ली और बोला—"कुछ उम्मीद है—अगर बारह घण्टे तक हार्ट ठीक रहा तो मैं आप की लडकी आप को वापस दूँगा।"

बडा भयानक दिन था! बहुत ऊँची छत का कमरा, दालानो मे टाट के परदे पडे थे। और बाहर गरमी की भयानक लू हू-हू करती हुई दानवो की तरह मुँह फाड दौड रही थी। डॉक्टर साहब सिरहाने बैठे थे, पथरीली निगाहो से सुधा के पीले मृतप्राय चेहरे की ओर देखते हुए ' बिनती और चन्दर बिना कुछ खाये-पिये चुपचाप बैठे थे—रह-रह कर बिनती सिसक उठती थी, लेकिन चन्दर ने मन पर पत्थर रख लिया था। वह एकटक एक ओर देख रहा था ' कमरे में वातावरण शान्त था—रह-रह कर बिनती की सिसकियाँ, पापा की नि श्वासें तथा घडी की निरन्तर टिक-टिक सुनाई पड रही थी।

चन्दर का हाथ बिनती की गोद में था। एक मूक सवेदना ने बिनती को सम्हाल रखा था। चन्दर कभी बिनती की ओर देखता, कभी घडी की ओर। सुधा की ओर नही देख पाता था। दु ख अपनी पूरी चोट करने के वक़्त अकसर आदमी की आत्मा और मन को क्लोरोफ़ार्म सुंघा देता है। चन्दर कुछ भी सोच नही पा रहा था। सज्ञा-हत, नीरव, निश्चेष्ट ''

घडी की सूई अविराम गति से चल रही थी। सर्जन कई दफ़े आये। नर्स ने आ कर टेम्परेचर लिया। रात को ग्यारह बजे टेम्परेचर उतरने लगा। डॉक्टर शुक्ला की आँखें चमक उठी। ठीक बारह बज कर पांच मिनिट पर सुधा ने आँखें खोल दी। चन्दर ने बिनती का हाथ मारे खुशी से दबा दिया। सुधा ने आँख घुमा कर देखा। पापा को देखते ही मुसकरा पडी।

"बिनती कहाँ है ?" बड़े क्षीण स्वर में पूछा।

बिनती और चन्दर उठ कर आ गये।

"आहा, चन्दर तुम आ गये ! हमारे लिए क्या लाये ?"

"पगली कहीं की !" मारे खुशी के चन्दर का गला भर गया।

"लेकिन तुम इतनी देर में क्यों आये चन्दर !"

"कल रात को ही आ गये थे हम।"

"चलो ! झूठ बोलना तो तुम्हारा धर्म बन गया है। कल रात को आ गये होते तो अभी तक हम अच्छे भी हो गये होते।" और वह हाँफने लगी।

सर्जन आया—" बात मत करो • " उस ने कहा।

उस ने एक मिक्श्चर दिया। फिर आला लगा कर देखा, और डॉक्टर शुक्ला को अलग ले जा कर कहा—"अभी दो घण्टे और खतरा है। लेकिन परेशान मत होइए। अब सत्तर प्रतिशत आशा है। मरीज़ जो कहे उस में बाधा मत दीजिएगा। उसे ज़रा भी परेशानी न हो।"

सुधा ने चन्दर को बुलाया—"चन्दर, पापा से मत कहना। अब मैं बचूँगी नहीं। अब कहीं मत जाना, यहीं बैठो।"

"छि पगली ! डॉक्टर कह रहा है अब खतरा नहीं है।" चन्दर ने बहुत प्यार से कहा—"अभी तो तुम हमारे लिए ज़िन्दा रहोगी न ?"

"कोशिश तो कर रही हूँ चन्दर, मौत से तो लड़ रही हूँ ! चन्दर, उन्हें तार दे दो ! पता नहीं देख पाऊँ या नहीं।"

"दे दिया सुधा !" चन्दर ने कहा और सिर झुका कर सोचने लगा।

"क्या सोच रहे हो चन्दर ! उन्हें इसलिए देखना चाहती हूँ कि मरने के पहले उन्हें क्षमा कर दूँ, उन से क्षमा माँग लूँ ! "चन्दर, तुम तकलीफ का अन्दाज़ा नहीं कर सकते।"

डॉक्टर शुक्ला आये। सुधा ने कहा—"पापा, आज तुम्हारी गोद में लेट लें।" उन्होंने सुधा का सिर गोद में रख लिया। "पापा, चन्दर को

समझा दो, ये अब अपना ब्याह तो कर लें।''' हाँ पापा, हमारी भागवत मँगवा दो—''

''शाम को मँगवा देंगे बेटी, अब एक बज रहा है' ' ''

''देखा '' सुधा ने कहा—''विनती, यहाँ आओ !''

विनती आयी। सुधा ने उस का माथा चूम कर कहा—''रानी, जो कुछ तुझे आज तक समझाया वैसा ही करना, अच्छा ! पापा तेरे जिम्मे हैं।''

विनती रो कर बोली—''दीदी, ऐसी बातें क्यो करती हो ''

सुधा कुछ न बोली। गोद से हटा कर सिर तकिये पर रख लिया।

''जाओ पापा, अब सो रहो तुम।''

''सो लूँगा बेटी ' ''

''जाओ। नही फिर हम अच्छे नही होगे ! जाओ''''''

सर्जन का आदेश था कि मरीज के मन के विरुद्ध कुछ नही होना चाहिए—डॉक्टर शुक्ला चुपचाप उठे, और बाहर बिछी पलग पर लेट रहे।

सुधा ने चन्दर को बुलाया—बोली—''मैं झुक नही सकती—विनती यहाँ आ—हाँ चन्दर के पैर छू '' अरे अपने माथे में नही पगली मेरे माथे में लगा दे। मुझ से झुका नही जाता।'' विनती ने रोते हुए सुधा के माथे में चरण-धूल लगा दी—''रोती क्यो है पगली ! मैं मर जाऊँ तो चन्दर तो है ही। अब चन्दर तुझे कभी नही रुलायेंगे ' चाहे पूछ लो ! इधर आओ चन्दर ! बैठ जाओ, अपना हाथ मेरे होठो पर रख दो ऐसे'''' अगर मैं मर जाऊँ तो रोना मत चन्दर ! तुम ऊँचे बनोगे तो मुझे बहुत चैन मिलेगा। मैं जो कुछ नही पा सकी वह शायद तुम्हारे ही माध्यम से मिलेगा मुझे। और देखो, पापा को दिल्ली में अकेले न छोडना ' लेकिन मैं मरूँगी नही चन्दर यह नरक भोग कर भी तुम्हें प्यार करूँगी मैं मरना नही चाहती, जाने फिर कभी तुम मिलो या न मिलो चन्दर''' उफ़् कितनी तकलीफ है चन्दर ! हम लोगो ने कभी ऐसा नही सोचा था अरे

हटो " हटो " चन्दर !" सहसा सुधा की आँखो में फिर अँधेरा छा गया—"भागो चन्दर ! तुम्हारे पीछे कौन खडा है ?" चन्दर घबडा कर उठ गया—पीछे कोई नही था"""अरे चन्दर, तुम्हें पकड रहा है—चन्दर, तुम मेरे पास आओ ! इधर आ जाओ।" सुधा ने चन्दर का हाथ पकड लिया—बिनती भाग कर डॉक्टर साहब को बुलाने गयी। नर्स भी भाग कर आयी—सुधा चीख रही थी—"तुम हो कौन ? चन्दर को नही ले जा सकते—मैं चल तो रही हूँ। चन्दर, मैं जाती हूँ इस के साथ, घबडाना मत। मैं अभी आती हूँ ! तुम तब तक चाय पी लो—नही मैं तो तुम्हें उस नरक में नही जाने दूँगी, मैं जा तो रही हूँ—बिनती मेरी चप्पल ले आ—अरे पापा कहाँ हैं—पापा "

और सुधा का सिर चन्दर की बाँह पर लुढ़क गया—बिनती को नर्स ने सम्हाला और डॉक्टर शुक्ला पागल की तरह सर्जन के बँगले की ओर दौडे ' 'घडी ने टन-टन दो बजाये""

जब अम्बुलेन्स कार पर सुधा का शव बँगले पहुँचा तो शंकर बाबू आ गये थे—बहू को विदा कराने""

उपसंहार

ज़िन्दगी का यन्त्रणा-चक्र एक वृत्त पूरा कर चुका था। सितारे एक क्षितिज से उठ कर, आसमान पार कर, दूसरे क्षितिज तक पहुँच चुके थे। साल-डेढ़ साल पहले सहसा ज़िन्दगी की लहरों में उथल-पुथल मच गयी थी और विक्षुब्ध महासागर की तरह भूखी लहरों की बाँहें पसार कर वह किसी को दबोच लेने के लिए हुंकार उठी थी। अपनी भयानक लहरों के शिकंजे में सभी को झकझोर कर, सभी के विश्वासों और भावनाओं को चकनाचूर कर अन्त में सब से प्यारे, सब से मासूम और सब से सुकुमार व्यक्तित्व को निगल कर अब धरातल शान्त हो गया था—तूफ़ान थम गया था, बादल खुल गये थे और सितारे फिर आसमान के घोंसलों से भयभीत विहग-शावकों की तरह झाँक रहे थे।

डॉक्टर शुक्ला छुट्टी ले कर प्रयाग चले आये थे। उन्होंने पूजा-पाठ छोड़ दिया था। उन्हें कभी किसी ने गाते हुए नहीं सुना था। अब वह सुबह उठ कर लॉन पर टहलते और एक भजन गाते—"जागहु री वृषभानु दुलारी‥" एक पंक्ति के अलावा वह दूसरी पंक्ति नहीं गाते थे। बिनती जो इतनी सुन्दर थी, अब केवल खामोश पीड़ा और अवशेष स्मृति की छाया मात्र थी। चन्दर शान्त था, पत्थर हो गया था, लेकिन उस के माथे का तेज बुझ गया था और वह बूढ़ा-सा लगने लगा था और यह सब केवल पन्द्रह दिनों में!

जेठ दशहरे के दिन डॉक्टर साहब बोले—"चन्दर, आज जाओ, उस के फूल छोड़ आओ, लेकिन देखो, शाम को जाना जब वहाँ भीड़-भाड़ न

हो, अच्छा !" और चुपचाप टहल कर गुनगुनाने लगे।

शाम को चन्दर चला तो बिनती भी चुपचाप साथ हो ली, न बिनती ने आग्रह किया—न चन्दर ने स्वीकृति दी। दोनों खामोश चल दिये! कार पर चन्दर ने बिनती की गोद में गठरी रख दी। त्रिवेणी पर कार रुक गयी। हलकी चाँदनी मैले क़फ़न की तरह लहरों की लाश पर पड़ी हुई थी। दिन-भर कमा कर मल्लाह थक कर सो रहे थे। एक बूढ़ा बैठा चिलम पी रहा था। चुपचाप उस की नाव पर चन्दर बैठ गया। बिनती उस के बग़ल में बैठ गयी। दोनों खामोश थे, सिर्फ पतवारों की छप्-छप् सुन पड़ती थी। मल्लाह ने तख्त के पास नाव बाँध दी और बोला—"नहा लें बाबू!" वह समझता था बाबू सिर्फ घूमने आये हैं।

"जाओ!"

वह जा कर दूर तख्तों की कतार के उस छोर पर जा कर सो गया। फिर दूर-दूर तक फैला संगम और सन्नाटा...चन्दर सिर झुकाये बैठा रहा—बिनती सिर झुकाये बैठी रही। थोड़ी देर बाद बिनती सिसक पड़ी। चन्दर ने सिर उठाया और फौलादी हाथों से बिनती का कन्धा झकझोर कर कहा—"अगर रोयी तो यहीं फेंक देंगे उठा कर कमबख्त, अभागी!"

बिनती चुप हो गयी।

चन्दर चुपचाप बैठा तख्त के नीचे से गुजरती हुई लहरों को देखता रहा। थोड़ी देर बाद उस ने गठरी खोली फिर रुक गया, शायद फेंकने का साहस नहीं हो रहा था बिनती ने पीछे से आ कर एक मुट्ठी राख उठा ली और अपने आँचल में बाँधने लगी। चन्दर ने चुपचाप उस की ओर देखा, फिर झपट कर उस ने बिनती का आँचल पकड़ कर राख छीन ली और गुर्राता हुआ बोला—"बदतमीज़ कहीं की! ...राख ले जायेगी—अभागी!" और झट से कपड़े-सहित राख फेंक दी और आग्नेय दृष्टि से बिनती की ओर देख कर फिर सिर झुका लिया। लहरों में राख एक ज़हरीले पनियाले साँप की तरह लहराती हुई चली जा रही थी।

विनती चुपचाप सिसक रही थी।

"नही चुप होगी !" चन्दर ने पागलो की तरह कहा और विनती को ढकेल दिया—विनती ने बांस पकड लिया और चीख पडी।

चीख से चन्दर जैसे होश में आ गया। थोडी देर चुपचाप रहा फिर झुक कर अजलि मे पानी ले कर मुंह धोया और विनती के आंचल से पोछ कर वहुत मधुर स्वर में वोला—"विनती रोओ मत ! मेरी समझ में नही आता कुछ भी ! रोओ मत !" चन्दर का गला भर आया और आंख में आंसू छलक आये—"चुप हो जाओ रानी ! मैं अव इस तरह कभी नही करूँगा—उठो ! अव हमी दोनो को निभाना है विनती !" चन्दर ने तख्त पर छीना-झपटी में विखरी हुई राख चुटकी में उठायी और विनती की मांग में भर कर मांग चूम ली। उस के होठ राख से सन गये।

सितारे टूट चुके थे। तूफान खत्म हो चुका था।

नाव किनारे पर आ कर लग गयी थी—"मल्लाह को चुपचाप रुपये दे कर विनती का हाथ थाम कर चन्दर ठोस धरती पर उतर पडा मुरदा चांदनी में दोनो छायाएं मिलती-जुलती हुई चल दी।"

गगा की लहरो में बहता हुआ राख का सांप टूट-फूट कर विखर चुका था और नदी फिर उसी तरह वहने लगी थी जैसे कभी कुछ हुआ ही न हो।



समझी ! और मुझ पर अहसान मत जताओ ! मैं मर जाऊँ, मैं पागल हो जाऊँ, किसी का साझा ? क्यों तुम मुझ पर इतना अधिकार समझने लगी—अपनी सेवा के बल पर। मैं इस की रत्ती-भर परवाह नहीं करता, जाओ, यहाँ से !" और उस ने विनती को ढकेल दिया, तेल की शीशी उठा कर बाहर फेंक दी।

विनती रोती हुई चली गयी। चन्दर उठा और कपड़े पहन कर बाहर चल दिया। "हूँ, ये लड़कियाँ समझती हैं अहसान कर रही हैं मुझ पर !"

विनती के जाने की तैयारी हो गयी थी। और लिया-दिया जाने-वाला सारा सामान पैक हो रहा था। डॉक्टर साहब भी महीने-भर की छुट्टी लेकर साथ जा रहे थे। उस दिन की घटना के बाद फिर विनती चन्दर से बिलकुल ही नहीं बोली थी। चन्दर भी कभी नहीं बोला।

ये लोग कार पर जाने वाले थे। सारा सामान पीछे-आगे लादा जाने वाला था। डॉक्टर साहब कार ले कर बाजार गये थे। चन्दर उन का होल्डॉल सम्हाल रहा था। विनती आयी और बोली—"मैं आप से बातें कर सकती हूँ ?"

'हाँ, हाँ ! तुम उस दिन की बात का बुरा मान गयी ! अमूमन लड़कियाँ सच्ची बात का बुरा मान जाती हैं ! बोलो क्या बात है ?" चन्दर ने इस तरह कहा जैसे कुछ हुआ ही न हो।

विनती की आँख में आँसू थे, "चन्दर आज मैं जा रही हूँ !"

"हाँ, यह तो मालूम है, उसी का इन्तज़ाम तो कर रहा हूँ !"

"पता नहीं मैं ने क्या अपराध किया चन्दर कि तुम्हारा स्नेह खो बैठी। ऐसा ही था चन्दर तो आते-ही-आते इतना स्नेह तुम ने दिया ही क्यों था ?" "मैं तुम से कभी भी दीदी का स्थान नहीं माँग रही थी तुम ने मुझे ग़लत क्यों समझा ?"

"नहीं विनती ! मैं अब स्नेह इत्यादि पसन्द नहीं करता हूँ। मैं पूर्ण

परिपक्व मनुष्य हूँ और यह सब भावनाएँ अब अच्छी नही लगती मुझे। स्नेह वगैरह की दुनिया अब मुझे बडी उथली लगती है।"

"तभी चन्दर! इतने दिन मैंने रोते-रोते विताये। तुम ने एक बार पूछा भी नही। जिन्दगी में सिवा दीदी और तुम्हारे, मेरा कौन था? तुम ने मेरे आंसुओ की परवाह नही की। मैं तुम्हें कसूर नही देती, कसूर मेरा ही होगा चन्दर!"

"नही क़सूर की वात नही विनती! औरतो के रोने की कहाँ तक परवाह की जाये, वे कुत्ते, विल्ली तक के लिए उतने ही दुख से रोती हैं!"

"खैर चन्दर! ईश्वर करे तुम जीवन-भर इतने मज़बूत रहो। मैंने अगर कभी तुम्हारे लिए कुछ किया वैसे किया भी क्या लेकिन अगर कुछ भी किया तो सिर्फ़ इसलिए कि मेरे मन की जाने कितनी ममता तुम ने जीत ली थी, मैं हमेशा इस वात के लिए पागल रहती थी कि तुम्हें जरा-सी भी ठेस न पहुँचे, मैं क्या कर डालूँ तुम्हारे लिए। तुम ने, तुम्हारे व्यक्तित्व ने मुझे जादू में बाँध लिया था। तुम मुझ से कुछ भी करने के लिए कहते तो मैं हिचक नही सकती थी—लेकिन खैर तुम्हें मेरी जरूरत नही थी, तुम पर भार हो उठी थी। मैं ने अपने को खीच लिया, अब कभी तुम्हारे जीवन मे आने का साहस न करूँगी। यह भी कैसे कहूँ कि कभी तुम्हें मेरी जरूरत पडेगी। मैं जानती हूँ कि तुम्हारे तूफ़ानी व्यक्तित्व के सामने मैं वहुत तुच्छ हूँ, तिनके से भी तुच्छ। लेकिन आज जा रही हूँ, अब कभी यहाँ आने का साहस न करूँगी। लेकिन क्या चलते वक़्त आशीर्वाद भी न दोगे? कुछ आगे का रास्ता न वताओगे?"

विनती ने झुक कर चन्दर के पैर पकड लिये और सिसक-सिसक रोने लगी। चन्दर ने विनती को उठाया और पास की कुरसी पर विठा दिया और सिर पर हाथ रखकर वोला—"आशीर्वाद देवताओ से माँगा जाता है। मैं अब प्रेत हो चुका हूँ, विनती!"

चन्दर एक एकान्त चाहता था और वह चन्दर को मिल गया था। पूरा घर खाली, एक महराजिन, माली और नौकर। और सारे घर में सिर्फ सन्नाटा और उस सन्नाटे का प्रेत चन्दर। चन्दर चाहे जितना टूट जाये, चाहे जितना बिखर जाये, लेकिन चन्दर हारने वाला नहीं था। वह हार भी जाये लेकिन हार स्वीकार करना उसे नहीं आता था। उस के मन में अब सन्नाटा था, अपने मन के पूजागृह में स्थापित सुधा की पावन, प्राजल देवमूर्ति को उस ने कठोरता से उठा कर बाहर फेंक दिया था, मन्दिर की मूर्तिमती पवित्रता, बिनती को अपमानित कर दिया था और मन्दिर के पूजा-उपकरणों को, अपने जीवन के आदर्शों और मानदण्डों को उस ने चूर-चूर कर डाला था, और बुतशिकन विजेता की तरह क्रूरता से हँसते हुए मन्दिर के भग्नावशेषों पर क़दम रख कर चल रहा था। उस का मन टूटा हुआ खण्डहर था जिस के उजाड़, बेछत के कमरों में चमगादड़ बसेरा करते हैं और जिस के ध्वसावशेषों पर गिरगिट पहरा देते हैं। काश कि कोई उन खण्डहरों की ईंटें उलट कर देखता तो हर पत्थर के नीचे पूजामन्त्र सिसकते हुए मिलते, हर धूल की पर्त में घण्टियों की बेहोश ध्वनियां मिलतीं, हर क़दम पर मुरझाये हुए पूजा के फूल मिलते और हर शाम-सवेरे भग्न देवमूर्ति का करुण रोदन दीवारों पर सिर पटकता हुआ मिलता···लेकिन चन्दर ऐसा-वैसा दुश्मन नहीं था। उसने मन्दिर को चूर-चूर कर उस पर अपने गर्व का पहरा लगा दिया था कि कभी भी कोई उस खण्डहर के अवशेष कुरेद कर पुराने विश्वास, पुरानी अनुभूतियां, पुरानी पूजाएँ फिर से न जगा दे। बुतशिकन तो मन्दिर तोड़ने के बाद सारा शहर जला देता है, ताकि शहर वाले फिर

उस मन्दिर को न बना पावे—ऐसा था चन्दर। अपने मन को सुनसान कर लेने के बाद उस ने अपनी ज़िन्दगी, अपना रहन-सहन, अपना मकान और अपना वातावरण भी सुनसान कर लिया था। अगहन आ गया था, लेकिन उसके चारो ओर जेठ की दोपहरी से भी भयानक सन्नाटा था।

बिनती जब से गयी उस ने कोई ख़त नही भेजा था। सुधा के भी पत्र बन्द हो चुके थे। पम्मी के दो ख़त आये। पम्मी आज कल दिल्ली घूम रही थी, लेकिन चन्दर ने पम्मी का कोई जवाब नही दिया। अकेला अकेला बिलकुल अकेला • सहारा मरुस्थल की नीरस भयावनी शान्ति और वह भी तब जब कि कांपता हुआ लाल सूरज बालू के क्षितिज पर अपनी आखिरी सांसे तोड रहा हो और बालू के टीलो की अधमरी छायाएँ लहरदार बालू पर धीरे-धीरे रेंग रही हो।

बिनती के ब्याह को पन्द्रह दिन रह गये थे कि सुधा का एक पत्र आया ••

"मेरे देवता, मेरे नयन, मेरे पन्थ, मेरे प्रकाश!

आज कितने दिनो बाद तुम्हें कुछ लिखने का मौक़ा मिल रहा है। सोचा था बिनती के ब्याह के महीने-भर पहले गाँव आ जाऊँगी। तो एक दिन के लिए तुम्हें आ कर देख जाऊँगी लेकिन इरादे इरादे हैं और ज़िन्दगी ज़िन्दगी। अब सुधा अपने जेठ और सास और सास के लडके की गुलाम है। ब्याह के दूसरे दिन ही चला जाना होगा। तुम्हें यहाँ बुला लेती, लेकिन यहां बन्धन और परदा तो ससुराल से भी बदतर है।

मैं ने बिनती से तुम्हारे बारे मे बहुत पूछा। वह कुछ भी नही बताती। पापा से इतना मालूम हुआ कि तुम्हारी थीसिस छपने गयी है। कन्वोकेशन नज़दीक है। तुम्हें याद है, वायदा था कि तुम्हारा गाउन पहन कर मैं फ़ोटो खिचाऊँगी। वह दिन याद करती हूं तो मन जाने कैसा होने लगता है। एक कन्वोकेशन की फोटो खिचवा कर ज़रूर भेजना।

क्या तुमने बिनती का कुछ मन दुखा दिया था? बिनती हरदम

तुम्हारी वात पर आँसू भर लाती हूँ। मैंने तुम्हारे भरोसे विनती को वहाँ छोडा था। मैं उस से दूर, माँ का सुख उसे मिला नही, पिता मर गये। क्या तुम उसे इतना भी प्यार नही दे सकते थे? मै ने तुम्हें वार-वार सहेज दिया था। मेरी तन्दुरुस्ती अव कुछ-कुछ ठीक है लेकिन जाने कैसी है। कभी-कभी सिर मे दर्द होने लगता है। जी मिचलाने लगता है। आज-कल वह वहुत ध्यान रखते हैं। लेकिन वे मुझ को समझ नही पाये। सारे सुख और आजादी के वीच में मैं कितनी असन्तुष्ट हूँ। मैं कितनी परेशान हूँ। लगता है हजारो तूफान हमेशा नसो मे घहराया करते हैं।

"चन्दर, एक वात कहूँ, अगर वुरा न मानो तो। आज शादी के छह महीने वाद भी मैं यही कहूँगी चन्दर तुमने अच्छा नही किया। मेरी आत्मा सिर्फ तुम्हारे लिए वनी थी, उस के रेशे में वह तत्त्व है जो तुम्हारी ही पूजा के लिए थे। तुम ने मुझे दूर फेंक दिया, लेकिन इस दूरी के अँधेरे में भी जन्म-जन्मान्तर तक मैं भटकती हुई सिर्फ तुम्ही को ढूँढूँगी, इतना याद रखना। और इस वार अगर तुम मिल गये तो जिन्दगी की कोई ताक़त, कोई आदर्श, कोई सिद्धान्त, कोई प्रवचना मुझे तुझ से अलग नही कर सकेगी। लेकिन मालूम नही पुनर्जन्म सच है या झूठ। अगर झूठ है तो, सोचो चन्दर कि इस अनादि काल के प्रवाह मे सिर्फ एक वार'' सिर्फ एक वार मैंने अपनी आत्मा का सत्य ढूँढ पाया था और अव अनन्तकाल के लिए उसे खो दिया। अगर पुनर्जन्म नही है तो वताओ मेरे देवता फिर क्या होगा? करोडों सृष्टियाँ होंगी, प्रलय होंगे और मैं अतृप्त चिनगारी की तरह असीम आकाश मे तडपती हुई अन्धेरे की हर परत से टकराती रहूँगी, न जाने कव तक के लिए। ज्यो-ज्यो दूरी वढती जा रही है त्यो-त्यो पूजा की प्यास वढती जा रही है, काश, मैं सितारो के फूल और सूरज की आरती से तुम्हारी पूजा कर पाती! लेकिन जानते हो मुझे क्या करना पड रहा है? मेरे छोटे भतीजे नीलू ने पहाडी चूहे पाले हैं। उन के पिंजडे के अन्दर

एक पहिया लगा है और ऊपर घण्टियाँ लगी हैं। अगर कोई अभागा चूहा उस चक्र मे उलझ जाता है तो ज्यो-ज्यो छूटने के लिए वह पैर चलाता है त्यो-त्यो चक्र घूमने लगता है, घण्टियाँ बजने लगती हैं। नीलू बहुत खुश होता है लेकिन चूहा थक कर बेदम हो कर नीचे गिर पडता है। कुछ ऐसे ही चक्र में मैं फँस गयी हूँ चन्दर! सन्तोष सिर्फ इतना है कि घण्टियाँ बजती हैं तो शायद तुम उन्हें पूजा के मन्दिर की घण्टियाँ समझते होंगे। लेकिन खैर! सिर्फ़ इतनी प्रार्थना है चन्दर! कि अब थक कर जल्दी ही गिर जाऊँ!

मेरे भाग्य! खत का जवाब जल्दी ही देना! पम्मी अभी आयी या नही?

तुम्हारी, जन्म-जन्म की प्यासी, सुधा"

चन्दर ने खत पढा और फ़ौरन लिखा—

"प्रिय सुधा,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनो के बाद मिला। तुम्हारी भाषा वहाँ जा कर बहुत निखर गयी है। मैं तो समझता हूँ कि अगर खत कही छपा दिया जाये तो लोग इसे किसी रोमाण्टिक उपन्यास का अश समझें; क्योकि उपन्यासो के ही पात्र ऐसे खत लिखते हैं, वास्तविक जीवन के नही!

"खैर, मैं अच्छा हूँ। हरेक आदमी जिन्दगी से समझौता कर लेता है किन्तु मैं ने जिन्दगी से समर्पण करा कर उस के हथियार रखा लिये हैं। अब किले के बाहर से आने वाली आवाज़े अच्छी नही लगती, न खतो के पाने की उत्सुकता, न जवाब लिखने का आग्रह। अगर मुझे अकेला छोड दो तो बहुत अच्छा होगा! मैं विनती करता हूँ मुझे खत मत लिखना—आज विनती करता हूँ क्योकि आज्ञा देने का अब साहस भी नही, अधिकार भी नही, व्यक्तित्व भी नही। खत तुम्हारा तुम्हें भेज रहा हूँ।

कभी ज़िन्दगी में कोई जरूरत आ पड़े तो जरूर याद करना—बस इस के अलावा कुछ नही।

अपने में सन्तुष्ट
चन्द्रकुमार कपूर"

उस के बाद फिर वही सुनसान ज़िन्दगी का ढर्रा। खण्डहर के सन्नाटे मे भूल कर आयी हुई बाँसुरी की आवाज़ की तरह सुधा का पत्र, सुधा का ध्यान आया और चला गया। खण्डहर का सन्नाटा, सन्नाटे के उल्लू, गिरगिट और पत्थर काँपे और फिर मुस्तैदी से अपनी जगह पर जम गये और उस के बाद फिर वही उदास सन्नाटा, टूटता हुआ-सा अकेलापन और मूर्च्छित दोपहरी के फूल-सा चन्दर • •

नवम्बर का एक खुशनुमा विहान, सोने के कांपते तारे सुबह की ठण्डी हवाओ में उलझे हुए थे। आकाश एक छोटे बच्चे के नीलम नयनो की तरह भोला और स्वच्छ लग रहा था। क्यारियाँ शरद् के फूलो से भर गयी थी और एक नयी ताजगी मौसम और मन मे पुलक उठी थी। चन्दर अपना पुराना कत्थई स्वेटर पीले रग के पशमीने का लम्बा कोट पहने लॉन पर टहल रहा था। दो छोटे-छोटे पिल्ले दूब पर किलोल कर रहे थे। सहसा एक कार आ कर रुकी और पम्मी उस में से कूद पड़ी और क्वाँरी हिरणी की तरह दौड कर चन्दर के पास पहुँच गयी—"हलो माई ब्वॉय, मैं आ गयी!'

चन्दर कुछ नही बोला—"आओ ड्राइड् रूम मे बैठो!" उस ने उसी

मुरदा-सी आवाज़ में कहा। उसे पम्मी के आने की कोई प्रसन्नता नही थी। पम्मी उस के उदास चेहरे को देखती रही फिर उस के कन्धे पर हाथ रख कर बोली—"क्यो कपूर, कुछ बीमार हो क्या ?"

"नही तो, आज कल मुझे मिलना-जुलना अच्छा नही लगता। अकेला घर भी है।" उस ने उसी फीकी आवाज़ में कहा।

"क्यो मिस सुधा कहाँ है ? और डॉक्टर शुक्ला।"

"वे लोग मिस बिनती की शादी में गये है।"

"अच्छा उस की शादी भी हो गयी, डैम इट। जैसे ये लोग सब पागल हो गये हैं, बर्टी, सुधा, बिनती। क्यो, मिलते-जुलते क्यो नही तुम ?"

"यो ही, मन नही होता।"

"समझ गयी, जो मुझे तीन-चार साल पहले हुआ था, कुछ निराशा हुई है तुम्हें।" पम्मी बोली।

"नही ऐसी तो कोई बात नही ?" चन्दर बोला।

"कहना मत अपनी ज़बान से, स्वीकार कर लेने से पुरुष का गर्व टूट जाता है। यही तो तुम्हारे चरित्र मे मुझे प्यारा लगता है। खैर, वह ठीक हो जायेगा। मैं तुम्हें ऐसे नही रहने दूँगी।"

"मन्सूरी में इतने दिन क्या करती रही ?" चन्दर ने पूछा।

"योग-साधन।" पम्मी ने हँस कर कहा। "जानते हो आज कल मन्सूरी में बरफ पड रहा है। मैं ने कभी बरफ के पहाड नही देखे थे, अँगरेज़ी उपन्यासो में बरफ पडने का ज़िक्र सुना बहुत था। सोचा देखती आऊँ। क्यो कपूर। तुम खत क्यो नही लिखते थे ?"

"मन नही होता था। अच्छा बर्टी की शादी कब होगी ?" चन्दर ने बात टालने के लिए कहा।

"हो भी गयी। मैं आ भी नही पायी कि सुनते है जेनी एक दिन बर्टी को पकड कर खीच ले गयी और पादरी से बोली, 'अभी शादी करा

दो।' उस ने शादी करा दी। लौट कर जेनी ने वर्टी का शिकारी सूट फाड डाला और अच्छा-सा सूट पहना दिया। बडे विचित्र हैं दोनों। एक दिन सर्दी के वक़्त वर्टी स्वेटर उतार कर जेनी के कमरे में गया तो मारे गुस्से के जेनी ने सिवा पतलून के सारे कपडे उतार कर वर्टी को कमरे के बाहर निकाल दिया। मैं तो जब से आयी हूँ, रोज नाटक देखती हूँ। हाँ, देखो यह तो मैं भूल ही गयी थी ..." और उस ने अपने जेब से एक पीतल की छोटी-सी मूर्ति निकाल कर मेज़ पर रखी—"एक भोटिया औरत इसे बेच रही थी। मैं ने इसे माँगा तो वह बोली—'यह सिर्फ़ मरदों के लिए है।' मैं ने पूछा 'क्यों ?' तो बोली—'इसे अगर मरद पहन ले तो उस पर किसी औरत का जादू नहीं चलता। वह औरत या तो मर जाती है या भाग जाती है या उस का ब्याह किसी दूसरे से हो जाता है।' तो मैं ने सोचा तुम्हारे लिए लेती चलूँ।"

चन्दर ने देखा वह अवलोकितेश्वर की महायानी मूर्ति थी। उस ने हँस कर उसे ले लिया फिर बोला—"और क्या लायी अपने लिए ?"

"अपने लिए एक नया रहस्य लायी हूँ।"

"क्या ?"

"इधर देखो मेरी ओर, मैं सुन्दर लगती हूँ ?"

चन्दर ने देखा। पम्मी अठारह साल की लडकी-सी लगने लगी है। चेहरे के कोने भी जैसे गोल हो गये थे और मुँह पर बहुत ही भोलापन आ गया था, आँखों में क्वाँरापन आ गया था, चेहरे पर सोना और केसर, चम्पा और हरसिंगार घुल-मिल गये थे।

"सचमुच पम्मी, लगता है जैसे कौमार्य लौट आया है तुम पर तो! किसी परियों के कुंज से अपना बचपन फिर चुरा लायी क्या ?"

"नहीं कपूर, यही तो रहस्य लायी हूँ, हमेशा सुन्दर बने रहने का। और परियों के कुंजों से नहीं, गुनाहों के कुंजों से। मैं ने हिमालय की छाँह में एक नया संगीत सुना कपूर, मांसलता का संगीत। मन्सूरी के समाज

में घुल-मिल गयी और मादक अनुभूतियाँ बटोरती रही—बिना किसी पश्चात्ताप के और मैं ने देखा कि दिनोदिन निखरती जा रही हूँ। कपूर, सेक्स इतना बुरा नही जितना मै समझती थी। तुम्हारी क्या राय है?"

"हाँ, मैं देख रहा हूँ सेक्स लोगो को उतना बुरा नही लगता, जितना मैं समझता था।"

"नही चन्दर, सिर्फ़ इतना ही नही, अच्छा मान लो जैसे तुम आज-कल उदास हो और मैं तुम्हारा सिर इस तरह अपनी गोद में रख लूँ तो कुछ सन्तोष नही होगा तुम्हें।" और पम्मी ने चन्दर का सिर सचमुच अपने श्वासान्दोलित वक्ष से चिपका लिया। चन्दर झल्ला कर अलग हट गया। कैसी अजीब लडकी है। थोडी देर चुप बैठा रहा, फिर बोला—

"क्यो पम्मी, तुम एक लडकी हो, मैं तुम्ही से पूछता हूँ—क्या लड-कियो के प्रेम में सेक्स अनिवार्य है?"

"हाँ।" पम्मी ने स्पष्ट स्वर में जोर दे कर कहा।

"लेकिन पम्मी, मैं तुम से नाम तो नही बताऊँगा लेकिन एक लडकी है जिस को मैं ने प्यार किया है लेकिन शायद वह मुझ से शादी नही कर पायेगी। मेरे उस के कोई शारीरिक सम्बन्ध भी नही हैं। क्या तुम इसे प्यार नही कहोगी?"

"कुछ दिन बाद जब उस की शादी हो जाये तब पूछना, तुम्हारा सारा प्रेम मर जायेगा। पहले मैं भी तुम से कहती थी पुरुष और नारी के सम्बन्धो में एक अन्तर जरूरी है। अब लगता है यह सब एक भुलावा है अपने को।" पम्मी बोली।

"लेकिन दूसरी बात तो सुनो, उसी की एक सखी है। वह जानती है कि मैं उस की सखी को प्यार करता हूँ, उसे नही कर सकता। कही सेक्स की तृप्ति का सवाल नही, फिर भी वह मुझे बहुत प्यार करती है। इसे तुम क्या कहोगी?" चन्दर ने पूछा।

"और यह दूसरे ढंग की परिस्थिति है। देखो कपूर, तुमने हिप्नो-

टिज्म के बारे मे नही पढ़ा। ऐसा होता है कि अगर कोई हिप्नोटिज्म एक लडकी को हिप्नोटाइज़ कर रहा है और बग़ल में एक दूसरी लडकी बैठी है जो चुपचाप यह देख रही है तो वातावरण के प्रभाव से अक्सर ऐसा देखा जाता है कि वह भी हिप्नोटाइज़ हो जाती है। लेकिन वह एक क्षणिक मानसिक मूर्च्छा होती है जो टूट जाती है।" पम्मी ने कहा।

चन्दर को लगा जैसे बहुत कुछ सुलझ गया। एक क्षण में उस के मन का बहुत-सा भार उतर गया।

"पम्मी, मुझे तुम्ही एक लडकी मिली जो साफ बातें करती हो और एक शुद्ध तर्क और बुद्धि के धरातल से। बस मैं आजकल बुद्धि का उपासक हूँ, भावना से चिढ़ है।"

"बुद्धि और शरीर बस यही दो आदमी के मूल तत्त्व हैं। हृदय तो दोनो के अन्त सघर्ष की उलझन का नाम है।" पम्मी बोली और सहसा घडी देखते हुए बोली—"नौ बज रहे हैं, चलो साढ़े नौ से मैटिनी है। आओ देख आयें!"

"मुझे कॉलिज जाना है, मैं जाऊँगा नही कही!"

"आज इतवार है, प्रोफेसर कपूर!" पम्मी चन्दर को उठा कर बोली—"मैं तुम्हें उदास नही रहने दूँगी, मेरे मीठे सपने! तुमने भी मुझे इस उदासी के इन्द्रजाल से छुडाया था, याद है न?" और चन्दर के माथे पर अपने गरम मुलायम होठ रख दिये।

माथे पर पम्मी के होठो की गुलाबी आग चन्दर के नसों को गुदगुदा गयी। वह क्षण-भर के लिए अपने को भूल गया—पम्मी के रेशमी फ्राक के गुदगुदाते हुए स्पर्श, उस के वक्ष की अलभ्य गरमाई और उस के स्पर्श के जादू में खो गया। उस के अग-अग मे सुबह की शबनम ढलकने लगी। पम्मी उस के बालो को अगुलियों से सुलझाती रही। फिर कपूर के गाल थपथपा कर बोली—"चलो!" कपूर जा कर बैठ गया—"तुम ड्राइव करो।" पम्मी बोली। चन्दर ड्राइव करने लगा और पम्मी कभी

उस के कालर, कभी उस के वाल, कभी उस के होठो से खेलती रही ।

सात चांद की रानी ने आखिर अपनी निगाहो के जादू से सन्नाटे के प्रेत को जीत लिया। स्पर्शों के सुकुमार रेशमी तारो ने नगर की आग को शबनम से सींच दिया। ऊबड-खाबड खण्डहर को अगो के गुलाब की पांखुरियो से ढंक दिया और पीडा के अँधियारे को सीपिया पलको से झरने वाली दूधिया चांदनी से धो दिया। एक सगीत की लय थी जिस में स्वर्गभ्रष्ट देवता खो गया, सगीत की लय थी या उद्दाम यौवन का उभरा हुआ ज्वर था जो चन्दर को एक मासूम फूल की तरह बहा ले गया""जहाँ पूजा-दीप बुझ गया था वहाँ तरुणाई की साँस की इन्द्रधनुषी शमा झिल-मिला उठी, जहाँ फूल मुरझा कर धूल में मिल गये थे वहाँ पुखराजी स्पर्शों के सुकुमार हरसिंगार झर पडे 'आकाश के चांद के लिए जिन्दगी के आँगन में मचलता हुआ कन्हैया, थाली के प्रतिविम्ब मे ही भूल गया'"

चन्दर की शामें पम्मी के अदम्य रूप की छाँह में मुसकरा उठी। ठीक चार वजे पम्मी आती, कार पर चन्दर को ले जाती और चन्दर आठ वजे लौटता। प्यार के विना कितने ही महीने कट गये, पम्मी के विना एक शाम नही वीत पाती, लेकिन अव भी चन्दर ने अपने को इतना दूर रखा था कि कभी पम्मी के होठो के गुलावो ने चन्दर के होठो के मूंगे से वातें भी नही की थी।

एक दिन रात को जव वह लौटा तो देखा कि अपनी कार आ गयी है। उस का मन फूल उठा। जैसे कोई अनाथ भटका हुआ वच्चा अपने

सरक्षक की गोद के लिए तडप उठता है वैसे ही वह पिछले डेढ महीने से डॉक्टर साहब के लिए तरस गया था। जहाँ इस वक़्त उस के जीवन में सिर्फ नशा और नीरसता थी, वही हृदय के एक कोने मे सिर्फ एक सुकुमार भावना शेष रह गयी थी, वह थी डॉक्टर शुक्ला के प्रति। वह भावना कृतज्ञता की भावना नही थी, डॉक्टर शुक्ला इतने दूर नही थे कि अब वह उन के प्रति कृतज्ञ हो, इतने बडे हो जाने पर भी वह जब कभी डॉक्टर साहब को देखता था तो लगता था जैसे कोई नन्हा बच्चा अपने अभिभावक की गोद में आ कर निश्चिन्त हो जाता हो।

उस ने पास आ कर देखा, डॉक्टर साहब बरामदे में टहल रहे थे। चन्दर दौड कर उन के पाँव पर गिर पडा। डॉक्टर साहब ने उसे उठा कर गले से लगा लिया और बडे प्यार से उस की पीठ पर हाथ फेरते हुए बोले—

"कन्वोकेशन हो गया ? डिग्री जीत लाये !"

"जी हाँ !" बडी विनम्रता से चन्दर ने कहा।

"बहुत ठीक, अब डी० लिट्० की तैयारी करो। तुम्हें जल्दी ही सेण्ट्रल गवर्नमेंट में जाना है।" डॉक्टर साहब बोले—"मैं तो पन्द्रह जनवरी को दिल्ली जा रहा हूँ, कम से कम साल-भर के लिए ?"

"इतनी जल्दी, ऑफर कब आया ?" चन्दर ने अचरज से पूछा।

'मैं उन दिनो दिल्ली गया था न, तभी एजुकेशन मिनिस्टर से बात हुई थी !" डॉक्टर साहब ने चन्दर को देखते हुए कहा—"अरे तुम कुछ दुबले हो रहे हो ! क्यो महराजिन ने ठीक से काम नही किया ?"

"नही !" चन्दर हँस कर बोला—"बिनती की शादी ठीक-ठाक हो गयी ?"

"बिनती की शादी !" डॉक्टर साहब ने सिर झुकाये हुए, टहलते हुए, एक बडी फीकी हँसी हँस कर कहा—"बिनती और तुम्हारी बुआ जी दोनो अन्दर हैं।"

"अन्दर है !" चन्दर को यह रहस्य कुछ समझ में ही नही आता था। "इतनी जल्दी बिनती लौट आयी ?"

"बिनती गयी ही कहाँ ?" डॉक्टर साहब ने बहुत चुपचाप सिर झुका कर कहा और बहुत करुण उदासी उन के मुँह पर छा गयी। वह बेचैनी से बरामदे में टहलने लगे। चन्दर का साहस नही हुआ कुछ पूछने का। कुछ अमगल अवश्य हुआ है।

वह अन्दर गया। बुआजी अपनी कोठरी मे सामान रख रही थी, और बिनती बैठी सिल पर उरद की भीगी दाल पीस रही थी। बिनती ने चन्दर को देखा, दाल में सने हुए हाथ जोड कर प्रणाम किया, सिर को आँचल से ढँक कर चुपचाप दाल पीसने लगी, कुछ बोली नही। चन्दर ने प्रणाम किया और जा कर बुआ के पैर छू लिये।

"अरे चन्दर है, आओ बेटवा, हम तो लुट गये !" और बुआ वही देहरी पर सिर थाम कर बैठ गयी।

"क्या हुआ बुआ जी ?"

"होता का भइया ! जौन बदा रहा भाग में ओ ही भवा।" और बुआजी अपनी धोती से आँसू पोछ कर बोली—"ई हमरी छाती पर मूँग दरै के लिए बदी रही तौन जमी है। भगवान् कौनो को ऐसी कलंकिनी बिटिया न दे। तीन भाँवरी के बाद बारात उठ गयी भइया ! हमरा तो कुल डूब गवा।" और बुआजी ने उच्च स्वर में रोदन शुरू किया। बिनती ने चुपचाप हाथ धोये और उठ कर छत पर चली गयी।

"चुप रहो हो। अब रोय-रोय के काहे जिउ हलाकान करत हउ। गुनवन्ती बिटिया बाय, हज्जारन आय के बिटिया के लिए गोडे गिरिहैं। अपना एकान्त होइ के बैठो !" महराजिन ने पूडी उतारते हुए कहा।

"आखिर बात क्या हुई महराजिन !" चन्दर ने पूछा।

महराजिन ने जो बताया उस से पता लगा कि लडके वाले बहुत ही संकीर्णमना और स्वार्थी थे। पहले मालूम हुआ कि लडका उन्होंने

ग्रेजुएट वताया था। वह था इण्टर फेल। फिर दरवाजे पर झगडा किया उन्होंने। डॉक्टर साहव वहुत विगड गये, अन्त में मडवे मे लोगो ने देखा कि लडके के वाये हाथ की अँगुलियाँ गायव है। डॉक्टर साहव इस वात पर विगडे और उन्होने मडवे से विनती को उठवा दिया। फिर वहुत लडाई हुई। लाठी तक चलने की नौवत आ गयी। जैसे-तैसे झगडा निपटा। तीन भाँवरों के वाद व्याह टूट गया।

"अव वताओ भइया!" सहसा बुआ आँसू पोछ कर गरज उठी—"ई इन्हें का हुइ गवा रहा, इन की मति मारी गयी। गुस्से मे आय के विनती को उठवाय लिहिन। अव हम एत्ती वडी विटिया लै के कहाँ जाई? अव हमरो विरादरी मे कौन पूछी एको। एत्ता पढ-लिख के इन्हें का सूझा। अरे लडकी-वाले को हमेशा दव के चलै चाही!"

"अरे तो क्या आँख वन्द कर लेते। लँगडे लूले लडके से कैसे व्याह कर देते वुआ! तुम भी गजव करती हो।" चन्दर वोला।

"भइया, जेके भाग में लँगडे-लूला वदा होई ओको ओही मिली। लडकियन को निवाह करै चाही कि सकल देखै चाही। अवहिन व्याह के वाद कौनो के हाथ-गोड टूट जाये तो औरत अपने आदमी को छोड के गली-गली की हांडी चाटै। हम रहे तो जव विनती तीन वरस की हुइ गयी, तव उन की सकल उजेले मे देखा रहा। जैसा भाग में रहा तैसा होता।"

चन्दर ने विचित्र हृदय-हीन तर्क को सुना और वह आश्चर्य से वुआ की ओर देखने लगा। " बुआ जी वकती जा रही थी—

"अव कहत हैं कि विनती को पढउबै! व्याह न करबै! रही सही इज्जत भी वेच रहे हैं। हमार तो किस्मत फूट गयी" और वे फिर रोने लगी, "पैदा होतै काहे नही मर गयी कुलवोरनी ... कुलच्छनी अभागिन!"

सहसा विनती छत से उतरी और आँगन में जाकर खडी हो गयी,

उस की आँखो मे आग भरी थी—"बस करो माँ जी !" वह चीख कर बोली—"बहुत सुन लिया मैं ने। और अब बरदाश्त नही होता। तुम्हारे कोसने से अब तक नही मरी, न मरूँगी। अब मैं सुनूँगी नही, मैं साफ कह देती हूँ। तुम्हें मेरी सकल अच्छी नही लगती तो जाओ तीरथ-यात्रा में अपना परलोक सुधारो ! भगवान् का भजन करो। समझी कि नही !"

चन्दर ने ताज्जुब से विनती की ओर देखा। यह वही विनती है जो माँजी की जरा-जरा-सी बात से लपट कर रोया करती थी। विनती का चेहरा तमतमाया हुआ था और गुस्से से बदन काँप रहा था। बुआ उछल कर खडी हो गयी और दुगुनी चीख कर बोली—"अब बहुत जबान चलै लगी है। कौन है तोर जे के बल पर ई चमक दिखावत है। हम काट के घर देवै, तो के बताये देइत हइ। मुँहझौंसी ! ऐसी न होती तो काहे ई दिन देखै पडत। उन्हें तो खाय गयी, हमहूँ का खाय लेव !" अपना मुँह पीट कर बुआ बोली।

"तुम इतनी मीठी नही हो माँ जी कि तुम्हें खा लूँ !" विनती ने और तडप कर जवाब दिया।

चन्दर स्तब्ध हो गया। यह विनती पागल हो गयी है। अपनी माँ को क्या कह रही है।

"छि, विनती ! पागल हो गयी हो क्या ? चलो इधर !" चन्दर ने डाँट कर कहा।

"चुप रहो चन्दर ! हम भी आदमी है, हम ने जितना बरदाश्त किया है हमी जानते है। हम क्यो बरदाश्त करें ! और तुम से क्या मतलब ? तुम कौन होते हो हमारे बीच मे बोलने वाले ?"

"क्या है यह सब ? तुम लोग सब पागल हो गये हो क्या ? विनती, यह क्या हो रहा है ?" सहसा डॉक्टर साहब ने आ कर कहा।

विनती दौड कर डॉक्टर साहब से लिपट गयी और रो कर बोली—"मामाजी, मुझे दीदी के पास भेज दीजिए ! मै यहाँ नही रहूँगी।"

"अच्छा बेटी ! अच्छा ! जाओ चन्दर !" डॉक्टर साहब ने कहा। विनती चली गयी तो बुआजी से बोले—"तुम्हारा दिमाग़ खराब हो गया है। उस पर गुस्सा उतारने से क्या फ़ायदा ? हमारे सामने ये सब बातें करोगी तो ठीक नहीं होगा।"

"अरे हम काहे बोलवै ! हम तो मर जाई तो अच्छा है···" बुआजी पर जैसे देवी माईजी आ गयी हो इस तरह से वह झूम-झूम कर रो रही थी··· "हम तो वृन्दावन जाय के डूब मरी ! अब हम तुम लोगन की सकल न देखवै। हम मर जाई तो चाहे विनती को पढायो चाहे नचायो-गवायो। हम अपनी आँख से न देखवै।"

उस रात को किसी ने खाना नहीं खाया। एक विचित्र-सा विषाद सारे घर पर छाया हुआ था। जाड़े की रात का गहन अँधेरा, खामोश छाया हुआ था, महज एक अमंगल छाया की तरह कभी-कभी बुआजी का रोदन अँधेरे को झकझोर जाता था।

सभी चुपचाप भूखे सो गये·

दूसरे दिन विनती उठी और महराजिन के आने के पहले ही उस ने चूल्हा जला कर चाय चढा दी, थोड़ी देर में चाय बना कर, और टोस्ट भून कर वह डॉक्टर साहब के सामने रख आयी, डॉक्टर साहब कल की बातों से बहुत ही व्यथित थे। रात को भी उन्होंने खाना नहीं खाया था, इस वक़्त भी उन्होंने मना कर दिया। विनती चन्दर के कमरे में गयी—"चन्दर, मामाजी ने कल रात को भी कुछ नहीं खाया, तुम ने भी नहीं

खाया, चलो चाय पी लो !"

चन्दर ने भी मना किया तो विनती बोली—"तुम पी लोगे तो मामाजी भी शायद पी ले।" चन्दर चुपचाप गया। बिनती थोडी देर में गयी तो देखा दोनो चाय पी रहे हैं। वह आ कर मेवा निकालने लगी।

चाय पीते-पीते डॉक्टर साहब ने कहा—"चन्दर, यह पास-बुक लो। पांच-सौ निकाल लो और दो-हजार का हिसाब अलग करवा दो।··· अच्छा, देखो मैं तो चला जाऊँगा दिल्ली, विनती को शाहजहांपुर भेजना ठीक नही है। वहां चार रिश्तेदार है बीस तरह की बातें होगी। लेकिन मैं चाहता हूं अब आगे जब तक यह चाहे पढे। अगर कहो तो यहां छोड जाऊं, तुम पढाते रहना !"

विनती आ गयी थी और तश्तरी में भुना मेवा रख कर उस में नमक मिला रही थी। चन्दर ने एक स्लाइस उठायी और उस पर नमक लगाते हुए बोला—"वैसे आप यहां छोड जायें कोई बात नही है, लेकिन अकेले घर में अच्छा नही लगता। दो-एक रोज की बात दूसरी होती ह। एकदम से साल-भर के लिए····आप समझ लें।"

"हां बेटा, कहते तो तुम ठीक हो ! अच्छा कॉलेज के होस्टल में अगर रख दिया जाये।' डॉक्टर साहब ने पूछा।

"मैं लडकियों को होस्टल में रखना ठीक नही समझता हूँ।" चन्दर बोला—"घर के वातावरण और वहां के वातावरण में बहुत अन्तर होता है।"

"हां यह भी ठीक है। अच्छा तो इस साल मैं इसे दिल्ली लिये जा रहा हूं। अगले साल देखा जायेगा चन्दर, इस महीने-भर में मेरा सारा विश्वास हिल गया। सुधा का विवाह कितनी अच्छी जगह किया गया, मगर सुधा पीली पड गयी है। कितना दु ख हुआ देख कर। और विनती के साथ यह हुआ। यह सचमुच जाति, विवाह, सभी परम्पराएँ बहुत ही बुरी है। बुरी तरह सड गयी है। उन्हें तो काट फेंकना चाहिए। मेरा

तो वैसे इस अनुभव के बाद सारा आदर्श ही बदल गया।"

चन्दर बहुत अचरज से डॉक्टर साहब की ओर देखने लगा। यही जगह थी, इसी तरह बैठ कर डॉक्टर साहब ने जाति-बिरादरी, विवाह आदि सामाजिक परम्पराओ की कितनी प्रशसा की थी। जिन्दगी की लहरो ने हरेक को दस महीने मे कहाँ से कहाँ ला कर पटक दिया है। डॉक्टर साहब कहते गये "हम लोग जिन्दगी मे दूर रह कर सोचते हैं कि हमारी सामाजिक सस्थाएँ स्वर्ग हैं, यह तो जब उन मे फँसो तब उन की गन्दगी मालूम होती है। चन्दर, तुम कोई गैर जात का अच्छा सा लडका ढूँढो। मैं बिनती की शादी दूसरी बिरादरी मे कर दूँगा।"

बिनती जो और चाय ला रही थी, फौरन बडे दृढ स्वरो मे बोली—"मामाजी, आप जहर दे दीजिए लेकिन मैं शादी नही करूँगी। क्या आप को मेरी दृढता पर विश्वास नही ?"

"क्यो नही बेटा। अच्छा जब तक तेरी इच्छा हो पढ।"

दूसरे दिन डॉक्टर साहब ने बुआजी को बुलाया और रुपये दे दिये। "लो यह पाँच-सौ पहले खर्चे के हैं और दो-हजार मे से तुम्हें धीरे-धीरे मिलता रहेगा।"

दो-तीन दिन के अन्दर बुआ ने जाने की सारी तैयारी कर ली, लेकिन तीन दिन तक बराबर रोती रही। उन के आँसू थमे नही। बिनती चुपचाप थी। वह भी कुछ नही बोली। चौथे दिन जब वह सामान मोटर पर रखवा चुकी तो उन्होने चन्दर से बिनती को बुलवाया। बिनती आयी तो उन्होने बिनती को गले से लगा लिया—और बेहद रोयी। लेकिन डॉक्टर साहब को देखते ही फिर बोल उठी—"हमरी लडकी का दिमाग तुम ही बिगाडे हो। दुनिया मे आदमी आपन नै होत। अपनी लडकी को बियाह दियो। हमरी लडकी " फिर बिनती को चिपटा कर रोने लगी।

चन्दर चुपचाप खडा सोच रहा था, अभी तक बिनती नाराज थी।

अब डॉक्टर साहब खराब हो गये। बुआ ने रुपये सम्हाल कर रख लिये और मोटर पर बैठ गयी। समस्त लाछनो के बावजूद डॉक्टर साहब उन्हे पहुँचाने स्टेशन तक गये।

बिनती बहुत ही चुप-सी हो गयी थी। वह किसी से कुछ नही बोलती और चुपचाप काम किया करती थी। जब काम से फुरसत पा लेती तो सुधा के कमरे में जा कर लेट जाती और जाने क्या सोचा करती। चन्दर को बड़ा ताज्जुब होता था बिनती को देख कर। जब बिनती खुश थी, बोलती-चालती थी तो चन्दर बिनती से चिढ़ गया था, लेकिन बिनती के जीवन का यह नया रूप देख कर पहले की सभी बातें भूल गया। और उन से फिर बात करने की कोशिश करने लगा। लेकिन बिनती ज्यादा बोली ही नही।

एक दिन दोपहर को चन्दर युनिवर्सिटी से लौट कर आया और उस ने रेडियो खोल दिया। बिनती एक तश्तरी में अमरूद काट कर ले आयी और रख कर जाने लगी। "सुनो बिनती, क्या तुमने मुझे माफ़ नही किया! मैं कितना व्यथित हूँ, बिनती! अगर तुम को भूल से कुछ कह दिया तो तुम उस का इतना बुरा मान गयी कि दो-तीन महीने बाद भी उसे नही भूली।"

"नही बुरा मानने की क्या बात है चन्दर!" बिनती एक फीकी हँसी हँस कर बोली—"आखिर नारी का भी एक स्वाभिमान है, मुझे माँ बचपन से कुचलती रही, मैं ने तुम्हें दीदी से भी बढ़ कर माना। तुम भी ठोकरें लगाने से बाज़ नही आये, फिर भी मैं सब सहती गयी। उस दिन जब मण्डप के नीचे मामाजी ने जबरदस्ती हाथ पकड़ कर खड़ा कर दिया तो मुझे उसी क्षण लगा कि मुझ मे भी कुछ सत्व है, मैं इस लिए नहीं बनी हूँ कि दुनिया मुझे कुचलती ही रहे। अब मैं विरोध करना, विद्रोह करना भी सीख गयी हूँ। जिन्दगी में स्नेह की जगह है, लेकिन स्वाभिमान भी कोई चीज है। और तुम्हे अपनी जिन्दगी में किसी की

हटो चन्दर, छूना मत मुझे !" और जैसे उस में जाने कहाँ की ताक़त आ गयी हो, उस ने अपने को छुडा लिया।

चन्दर ने दबी जबान कहा—"छि सुधा ! यह तुम से उम्मीद नही थी मुझे। यह भावुकता तुम्हें शोभा नही देती। और बातें कैसी कर रही हो तुम ! हम वही चन्दर हैं न !"

"हाँ वही चन्दर हो ! और तभी तो ! इस सारी दुनिया मे तुम्ही एक रह गये थे मुझे फोटो दिखा कर पसन्द कराने को।" सुधा सिसक-सिसक कर रोने लगी—"पापा ने भी धोखा दे दिया। हमें पापा से यह उम्मीद नही थी।"

"पगली ! कौन अपनी लडकी को हमेशा अपने पास रख पाया है !" चन्दर बोला।

"तुम चुप रहो चन्दर। हमें तुम्हारी बोली जहर लगती है। 'सुधा यह फ़ोटो तुम्हें पसन्द है ?' तुम्हारी जुबान हिली कैसे ? शरम नही आयी तुम्हें। हम कितना मानते थे पापा को, कितना मानते थे तुम्हे ? हमें यह नही मालूम था कि तुम लोग ऐसा करोगे !" थोडी देर चुपचाप सिसकती रही सुधा और फिर धधक कर उठी—"कहा है वह फोटो ? लाओ अभी मैं जाऊँगी पापा के पास ! मैं कहूँगी उन से, हाँ, मै इस लडके को पसन्द करती हू। वह बहुत अच्छा है, बहुत सुन्दर है लेकिन मैं उस से शादी नही करूँगी, मैं किसी से शादी नही करूँगी ! झूठी बात है... ..." और उठ कर पापा के कमरे की ओर चली।

"खबरदार जो कदम बढ़ाया !" चन्दर ने डॉट कर कहा। "बैठो इधर।"

"मैं नही रुकूँगी !" सुधा ने अकड कर कहा।

"नही रुकोगी !"

"नही रुकूँगी !"

और चन्दर का हाथ तैश मे उठा और एक भरपूर तमाचा सुधा के

गाल पर पड़ा। सुधा के गाल पर नीली उँगलियाँ उपट आयी। वह स्तब्ध ! जैसे पत्थर बन गयी हो। आँख में आँसू जम गये। पलकों में निगाहें जम गयी। होठ में आवाज़ें जम गयी और सीने में सिसकियाँ जम गयी।

चन्दर एक बार सुधा की ओर देखा और कुरसी पर जैसे गिर पडा और सिर पटक कर बैठ गया। सुधा कुरसी के पास ज़मीन में बैठ गयी। चन्दर के घुटनों पर सिर रख दिया। बड़ी भारी आवाज़ में बोली—"चन्दर, देखें तुम्हारे हाथ में चोट तो नहीं आयी।"

चन्दर ने सुधा की ओर देखा एक ऐसी निगाह से जिस में कब्र मुँह फाड कर जमुहाई ले रही थी। सुधा एकाएक फिर सिसक पडी और चन्दर के पैरों पर सिर रख कर बोली—"चन्दर, सचमुच मुझे अपने आश्रय से निकाल कर ही मानोगे। चन्दर। मज़ाक़ की बात दूसरी है, जिन्दगी में तो दुश्मनी मत निकाला करो।"

चन्दर एक गहरी साँस लेकर चुप हो गया। और सिर थाम कर बैठ गया। पांच मिनिट बीत गये। कमरे में सन्नाटा, गहन खामोशी। सुधा चन्दर के पांवों को छाती से चिपकाये सूनी-सूनी निगाहों से जाने कुछ देख रही थी दीवारों के पार, दिशाओं के पार, क्षितिजों से परे· दीवार पर घडी चल रही थी टिक· टिक ·

चन्दर ने सिर उठाया और कहा—"सुधा, हमारी तरफ देखो—" सुधा ने सिर ऊपर उठाया, चन्दर बोला—"सुधा, तुम हमें जाने क्या समझ रही होगी, लेकिन अगर तुम समझ पाती कि मैं क्या सोचता हूँ। क्या समझता हूँ।" सुधा कुछ नहीं बोली—चन्दर कहता गया—"मैं तुम्हारे मन को समझता हूँ सुधा। तुम्हारे मन ने जो तुम से भी नहीं कहा, वह मुझ से कह दिया था—लेकिन सुधा हम दोनों एक दूसरे की जिन्दगी में क्या इसी लिए आये कि एक दूसरे को कमज़ोर बना दे या हम लोगों ने स्वर्ग की ऊँचाइयों पर साथ बैठ कर आत्मा का संगीत सुना